राजनीतिक अर्थशास्त्र के मूल सिद्धान्त

FUNDAMENTALS OF POLITICAL ECONOMY

राजनीतिक अर्थशास्त्र के मूल सिद्धान्त

सरल पाठ्यक्रम

पी निकितिन

पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा०) लिमिटेड
रानी झांसी रोड, नई दिल्ली १

हिदी सस्करण जनवरी १९६६

अनुवादक गिरीश मिश्र

सोवियत सघ की विज्ञान अकादमी के सामाजिक-आर्थिक साहित्य प्रकाशन-गृह ने १९५९ मे राजनीतिक अथशास्त्र सम्बधी सरल पाठ्यपुस्तक की एक प्रतियोगिता का आयोजन किया जिसमे इस सशोधित सस्करण के मूल पाठ को पुरस्कृत किया गया ।

मूल्य ४ रुपये

नवीन प्रेस नेताजी सुभाष माग (दरियागज),
दिल्ली ६ मे मुद्रित ।

विषयसूची

उत्पादन की कम्युनिस्ट पद्धति

राजनीतिक अर्थशास्त्र की विषय-वस्तु

विश्व का ज्ञान प्राप्त करना अनेक विज्ञानों का लक्ष्य है। कुछ विज्ञान प्रकृति के व्यापारों का अध्ययन करते हैं और कुछ विज्ञान समाज का अध्ययन करते हैं। प्रकृति का अध्ययन करने वाले विज्ञान प्राकृतिक विज्ञान कहलाते हैं। जो विज्ञान सामाजिक विकास के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन करते हैं वे सामाजिक विज्ञान कहलाते हैं। राजनीतिक अर्थशास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है।

मार्क्सवादी लेनिनवादी राजनीतिक अर्थशास्त्र मार्क्सवाद लेनिनवाद के समन्वित विज्ञान का एक हिस्सा है।

मार्क्सवाद लेनिनवाद समाज विकास के नियमों समाजवादी क्रान्ति और सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व और समाजवादी एवं कम्युनिस्ट समाज के निर्माण से सम्बन्धित विज्ञान है। यह तीन तत्वों का—दर्शन, राजनीतिक अर्थशास्त्र और वैज्ञानिक कम्युनिज्म के सिद्धान्त का एक समन्वित विज्ञान है। राजनीतिक अर्थशास्त्र मार्क्सवाद लेनिनवाद का एक महत्वपूर्ण अंग है, क्योंकि वह मानव समाज की जिन्दगी की बुनियाद के बारे में विचार करता है।

भौतिक सम्पदा का उत्पादन सामाजिक जीवन का आधार

युगों से लोग मानव समाज के विकास के कारणों पर विचार करते आये हैं। कई दृष्टिकोण सामने रखे गये हैं। धार्मिक प्रवक्ताओं ने सदा यह दावा किया है कि सभी तरह के विकास ईश्वरेच्छा के परिणाम हैं। पर विज्ञान और व्यवहार ने यह सिद्ध कर दिया है कि कोई अलौकिक शक्तियां नहीं हैं। पहले एक ऐसा भी विचार था और जिसे आज भी बहुतेरे पूंजीवादी विद्वान मानते हैं वह यह है कि समाज का विकास निर्णायक तौर पर भौगोलिक वातावरण यानी निश्चित प्राकृतिक स्थितियां (जलवायु मिट्टी खनिज पदार्थ आदि) पर निर्भर होता है। किन्तु

तकसगत बात यह है कि भौगोलिक वातावरण समाज विकास की निर्णायक स्थिति नही, बल्कि एक आवश्यक स्थिति मात्र है। पिछले तीन हजार वर्षों के दौरान यूरोप मे क्रमिक रूप से तीन समाज व्यवस्थाओ और मध्य एव पूर्वी यूरोप म चार समाज व्यवस्थाओ का अस्तित्व रहा है, यद्यपि इस अवधि म वहा की भौगोलिक स्थितिया या तो बदली ही नही हैं या इतनी कम बदली हैं कि भूगोलवेत्ता उन पर ध्यान तक नहीं देते। कुछ लोग सोचते हैं कि इतिहास की धारा की दिशा सिफ महान हस्तियो की—राजनीतिज्ञो, सेनाधिकारियो की इच्छा पर ही निभर है। वास्तविकता यह है कि ये हस्तिया घटनाओ की गति का निश्चित तौर पर तीव्र या म द कर देती हैं लेकिन ये इतिहास की धारा को मोडने म असमथ हैं।

तब कौन सी बात समाज विकास की दिशा को निर्धारित करती है? मावस ही पहले व्यक्ति थे जिन्होने इस प्रश्न का सही उत्तर दिया।

जिन्दा रहने के लिए लोगो को खाना, कपडा, घर तथा अन्य भौतिक साधनों की जरूरत होती है और इनको प्राप्त करने के लिए लोगों को इनका उत्पादन करना पडता है। तात्पय यह कि लोगो को काम करना पडता है। कोई भी समाज यदि भौतिक सम्पदा का उत्पादन बन्द कर दे तो वह ढह जायेगा। अत मावस का कहना है कि भौतिक सम्पदा का उत्पादन ही जीवन और समाज के विकास की बुनियाद है।

भौतिक सम्पदा के उत्पादन का क्या अथ है? भौतिक सम्पदा के उत्पादन की प्रक्रिया मे मानव श्रम श्रम के साधन और श्रम के विषय शामिल हैं।

श्रम भौतिक सम्पदा के उत्पादन के लिए की गयी उद्देश्यपूण क्रिया है। श्रम की प्रक्रिया मे मनुष्य प्रकृति की वस्तुओ को अपनी आवश्यकतानुकूल बनाने के लिए काय करता है। श्रम करना केवल मनुष्य का ही गुण है। यह एक शाश्वत स्वाभाविक आवश्यकता और मनुष्य जीवन के अस्तित्व के लिए प्राथमिक बात है। जसा कि एगल्स ने कहा है स्वय मनुष्य की उत्पत्ति श्रम द्वारा हुई है।

श्रम के साधनों के बिना उत्पादन की प्रक्रिया की कल्पना भी नहा की जा सकती। "श्रम के साधन शब्दावली का प्रयोग उन सभी वस्तुओ को सूचित करने के लिए होता है जिनकी सहायता से लोग श्रम के विषयो पर काम कर उन्हे रूपान्तरित करते हैं। श्रम के साधनो के अन्तगत मशीन और साज सामान, औजार और सम्बद्ध साधन उत्पादन के काय के लिए उपयोग म आने वाले मकान परिवहन की सुविधाए नहर विद्युत सचार की लाइनें आदि आती हैं। भूमि भी श्रम का एक सवव्यापी साधन है। श्रम के साधनो म उत्पादन

के उपकरण निर्णायक हिस्सा अदा करते हैं। प्रकृति को प्रभावित करने वाली मनुष्य की शक्ति उसके द्वारा प्रयोग किये जाने वाले उपकरणों पर निर्भर है। आदिम समाज में मनुष्य पत्थरों और डंडों को उत्पादन के साधनों के रूप में इस्तेमाल किया करता था। अतएव प्रकृति के सामने वह बहुत ही असहाय था। आज का मानव शक्तिशाली यंत्रों की सहायता से काम करता है और प्रकृति पर उसका अधिकार बेहद बढ़ गया है। मार्क्स ने बतलाया कि आर्थिक युगों को एक दूसरे से अलग इस आधार पर नहीं किया जाता कि किस युग में क्या उत्पन्न होता है, बल्कि भौतिक सम्पदा के उत्पादन के लिए प्रयुक्त उपकरणों के आधार पर अलग किया जाता है।

लोग अपने उत्पादन के उपकरणों के द्वारा श्रम के विषयों पर (यानी उन सभी चीजों पर जिन पर मनुष्य अपना श्रम लगाता है) काम करते हैं। चूंकि इस श्रम का प्रयोग वे अपने इर्द गिर्द की प्रकृति पर करते हैं, इसलिए प्रकृति (भूमि और भूगर्भ) स्वयं श्रम का एक सर्वव्यापी विषय है। श्रम के सभी प्राथमिक विषय प्रकृति में मौजूद हैं। मनुष्य को उन्हें अपनी आवश्यकताओं के अनुकूल बनाना होता है।

श्रम के साधन और श्रम के विषय के सम्मिलित रूप को उत्पादन का साधन कहते हैं। स्पष्ट है कि उत्पादन के साधन स्वयं भौतिक सम्पदा का उत्पादन नहीं कर सकते। अगर इस्तेमाल करने वाले लोग न हों तो उत्कृष्ट तकनीकी उपकरण भी बेकार हैं। इन सभी प्रकार के उत्पादनों में निश्चयात्मक तत्व स्वयं मनुष्य है, उसका श्रम शक्ति है।

उत्पादन के विकास का जो भी स्तर हो, पर उत्पादन के सदा दो पहलू होते हैं उत्पादक शक्तियां और उत्पादन के सम्बंध। उत्पादक शक्तियों के अन्तर्गत समाज द्वारा निर्मित उत्पादन के साधन, जिनमें श्रम के उपकरण मुख्य हैं और भौतिक सम्पदा उत्पन्न करने वाले लोग भी आते हैं। लोग ही अपने अर्जित ज्ञान, अनुभव और श्रम दक्षता के द्वारा उत्पादन के उपकरणों को व्यवहार में लाते हैं, उन्हें उन्नत बनाते हैं मशीनों का आविष्कार करते हैं तथा अपने ज्ञान में वृद्धि करते हैं। इस तरह से उत्पादक शक्तियों का विकास सुनिश्चित होता है और भौतिक सम्पदा की उत्तरोत्तर बढ़ती हुई मात्रा प्राप्त होती है।

(हाशिये में: उत्पादक शक्तियां और उत्पादन के सम्बंध)

लेकिन लोग एक-दूसरे से अलग काम करके भौतिक सम्पदा का उत्पादन नहीं करते, बल्कि सामाजिक तौर पर समूहों में रहकर काम करते हैं। उदाहरण के लिए जूते के एक आधुनिक कारखाने को ले लें। वहां हम कितने

लोगों को एक ही वस्तु, जूते के उत्पादन के लिए काम करते हुए पाते हैं? सकडो या हजारों से भी अधिक दूसरे लोग उस कारखाने के लिए मशीन, चमडा धागा, सुई इत्यादि उत्पन्न करने में लगे हैं। छोटा किसान भी दुनिया से अलग रहकर अनाज का उत्पादन नहीं करता। किसान को हल की जरूरत होती है। हल गाव का दस्तकार बनाता है या कारखाने में बनता है। किसान को नमक दियासलाई साबुन इत्यादि की आवश्यकता होती है जिन्हे दूसरे लोग उत्पन्न करते हैं। फलस्वरूप भौतिक सम्पदा के उत्पादन की प्रक्रिया में लोग एक दूसरे से सम्बद्ध या एक दूसरे पर अवलम्बित होते हैं और एक दूसरे से निश्चित सम्बधो द्वारा जुडे होते हैं।

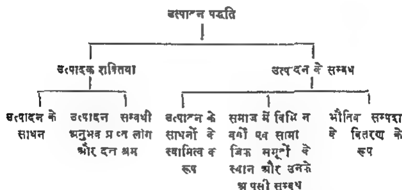
भौतिक सम्पदा के उत्पादन, वितरण और विनिमय की प्रक्रिया मे लोगों के बीच जो सम्बध बनते हैं, उन्हे मार्क्स ने उत्पादन सम्बधो या आर्थिक सम्बधों का नाम दिया। शोषण से यानी मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण से मुक्त लोगों के बीच उत्पादन सम्बध सहयोग या पारस्परिक सहायता का रूप ले सकते हैं। उत्पादन सम्बधो का स्वरूप इस बात पर निर्भर करता है कि उत्पादन के साधनों—भूमि और उसकी खनिज सम्पदा, वन कारखाने और वर्कशाप, श्रम के उपकरण, इत्यादि पर किसका स्वामित्व है। जब उत्पादन के साधनों पर सम्पूर्ण समाज का नहीं अपितु अलग अलग व्यक्तियों सामाजिक समूहों या वर्गों का निजी स्वामित्व रहता है तब जो सम्बध बनते हैं वे मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण आधिपत्य तथा अधीनता के होते हैं। चूंकि पूजीवाद के अन्तर्गत मजदूर उत्पादन के साधनों से वचित होते हैं इसलिए उन्हे पूजीपतियों के लिए काम करने को मजबूर होना पडता है। समाजवाद मे उत्पादन के साधनों पर सामाजिक स्वामित्व होता है। परिणामस्वरूप मनुष्य द्वारा मनुष्य का कोई शोषण नहीं होता और लोगों के बीच सौहार्दपूर्ण सहयोग और समाजवादी सहायता के सम्बध होते हैं।

उत्पादन के साधनों से लोगों का सम्बध ही उत्पादन में उनके स्थान एव श्रम के उत्पादन के वितरण के तरीके का निर्धारित करता है। उदाहरण के तौर पर पूजीवाद को लें। पूजीवाद में पूजीपति वर्ग जिसका उत्पादन के साधनों पर स्वामित्व होता है मजदूरों का सम्पूर्ण उत्पादन हडप जाता है जबकि दूसरी ओर बहुसख्यक मजदूर गरीबी की जिन्दगी बसर करते हैं। समाजवाद में जहा उत्पादन के साधनों पर जनता का अधिकार होता है (यानी जहा वे समाज की सम्पत्ति होते हैं) उपभोक्ता वस्तुओं का वितरण उत्पादन की प्रक्रिया में लोगों द्वारा लगाये गये श्रम के अनुपात में होता है। वहा समस्त मेहनतकश जनता के जीवनयापन के भौतिक और सांस्कृतिक स्तर

मे निरंतर वृद्धि सुनिश्चित होती है। लोगो के आपसी उत्पादन (या आर्थिक) सम्बधो का यही मतलब है।

मानव इतिहास को पाच तरह के बुनियादी उत्पादन सम्बध ज्ञात है। वे हैं आदिम समाज, दासता, सामंतवाद, पूजीवाद और कम्युनिज्म के प्रथम चरण समाजवाद के उत्पादन सम्बध। इनमे से प्रत्येक की विशेषता होती है उत्पादन के साधनो और उपकरणो पर स्वामित्व का निश्चित स्वरूप। इस प्रकार दासता सामंतवाद और पूजीवाद म उत्पादन सम्बधो का आधार उत्पादन के साधनो पर निजी स्वामित्व है। निजी स्वामित्व न समाज को सदा दो परस्पर विरोधी वर्गो—शोषको और शोषितो मे बाटा है और अब भी बाट रहा है। इसीलिए हिंसापूर्ण वग सघर्ष दासता, सामंतवाद और पूजीवाद का एक बुनियादी लक्षण है। सिर्फ समाजवाद म ही, जहा उत्पादन सम्बधो का आधार उत्पादन के साधनो पर सामूहिक, समाजवादी स्वामित्व होता है और जहा वग सघर्ष नही होता, समाज मत्रीपूर्ण वर्गो—मजदूरो और किसानो तथा सामाजिक श्रेणी के रूप म बुद्धिजीवियो को लेकर बना होता है।

उत्पादक शक्तियो और उत्पादन सम्बधो के योग को उत्पादन पद्धति कहा जाता है।



यद्यपि उत्पादन पद्धति म उत्पादक शक्तिया और उत्पादन सम्बध दोनो शामिल होते है तथापि ये दोनो उत्पादन पद्धति के दो अलग अलग पहलू होते हैं। इन दोनों का एक दूसरे पर प्रभाव पडता है और उनकी एक दूसरे पर प्रतिक्रिया होती है। उत्पादक शक्तिया और उत्पादन सम्बध उत्पादन के विकास की प्रक्रिया क दौरान विकसित होते हैं।

उत्पादन पद्धति में उत्पादन की शक्तियां अत्यन्त गतिशील तत्व होती हैं। चूंकि लोग श्रम के उपकरणों में निरन्तर विकास कर रहे हैं और उत्पादन के नये अनुभव प्राप्त कर रहे हैं, इसलिए उत्पादक शक्तियां भी सदा परिवर्तित हो रही हैं। उत्पादन सम्बन्ध उत्पादक शक्तियों में होने वाले विकास के स्तर के अनुसार परिवर्तित होते हैं और इस विकास को प्रभावित भी करते हैं।

जब उत्पादन सम्बन्ध उत्पादक शक्तियों के विकास के स्तर के अनुरूप होते हैं, तब उत्पादक शक्तियां निर्बाध गति से विकसित होती हैं। समाजवादी देश उत्पादन सम्बन्धों के उत्पादक शक्तियों के स्तर के अनुरूप होने का उदाहरण पेश करते हैं। वहां बिना संकट और बेरोजगारी के उत्पादन का विकास होता है क्योंकि वह उत्पादन के साधनों के सामाजिक स्वामित्व पर आधारित होता है।

जब उत्पादन सम्बन्ध उत्पादक शक्तियों के विकास के स्तर के अनुरूप नहीं होते, तब उत्पादन सम्बन्ध उत्पादन के लिए अवरोधक बन जाते हैं। पूंजीवादी देश उत्पादन सम्बन्धों के उत्पादक शक्तियों के विकास के स्तर के अनुरूप नहीं होने का उदाहरण पेश करते हैं। पूंजीवादी देशों में उत्पादन अपेक्षाकृत *मन्द गति से बढ़ता है, यहां तक कि आर्थिक संकटों के दौरान पीछे भी धकेल* दिया जाता है और लाखों मजदूर निठल्ले होकर बेरोजगारों की कतारों में पहुंच जाते हैं। ऐसा इसलिए होता है कि पूंजीवादी समाज में उत्पादन के साधनों पर निजी पूंजीवादी स्वामित्व का बोलबाला रहता है जो उत्पादक शक्तियों के *भावी विकास को रोकता है।*

उत्पादक शक्तियों के एक निश्चित स्तर के लिए अनुकूल उत्पादन सम्बन्धों की आवश्यकता होती है। यही मार्क्स द्वारा प्रतिपादित आर्थिक नियम है जो यह बताता है कि उत्पादन सम्बन्ध उत्पादक शक्तियों के स्वभाव के अनुकूल होते हैं। यह नियम सामाजिक क्रान्ति के आर्थिक आधार को बतलाता है। जब उत्पादन के सम्बन्ध उत्पादक शक्तियों के विकास से पीछे रह जाते हैं पुराने पड़ जाते हैं और उनके विकास में बाधा डालते हैं तब वे अवश्यम्भावी रूप से नये सम्बन्धों द्वारा बदल दिये जाते हैं। परस्पर विरोधी वर्गों में बंटे हुए समाज में उत्पादन के पुराने सम्बन्धों की जगह सामाजिक क्रान्ति के द्वारा नये सम्बन्धों की स्थापना होती है।

जिन वर्गों को उत्पादन के पुराने सम्बन्धों से फायदा होता है वे स्वेच्छा से उनमें परिवर्तन नहीं करते। अमरीकी पूंजीपतियों को ही लें। क्या वे कभी अपनी इच्छा से अपने कारखाने, फार्म, रेलवे इत्यादि को छोड़ देंगे? नहीं, वे अपनी इच्छा से उन्हें कभी नहीं छोड़ेंगे क्योंकि निजी सम्पत्ति के द्वारा ही वे मेहनतकश जनता का शोषण करते और शानोशौकत की जिन्दगी बसर करते हैं।

पुराने सड़े-गले उत्पादन सम्बंध उत्पादक शक्तियों के विकास के मार्ग में रुकावट डालते हैं। उनको बदलने के लिए एक ऐसी सामाजिक शक्ति की जरूरत है जो मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण को खत्म करे। पूंजीवादी समाज में मजदूर वर्ग ऐसी ही एक शक्ति है। अपने मित्र किसानों के साथ मिलकर मजदूर वर्ग शोषण को समाप्त करने के लिए प्रयत्नशील है।

सिर्फ समाजवादी समाज में ही जहां कोई परस्पर विरोधी वर्ग नहीं होते, उत्पादन के सम्बंध सामाजिक क्रान्ति के द्वारा नहीं, बल्कि उत्पादक शक्तियों के विकास के अनुकूल उनको नियोजित ढंग से परिवर्तित करने से विकसित होते हैं।

उत्पादन पद्धति को समाज के आधार से अलग करके देखना चाहिए। किसी भी समाज में उत्पादक शक्तियों के तत्कालीन स्तर के अनुकूल उत्पादन सम्बंधों का कुल योग ही आधार कहा जाता है। समाज का आधार या तो विग्रहपूर्ण या अविग्रहपूर्ण होता है। दास सामन्तवादी और पूंजीवादी समाज स्वभावतः मौलिक रूप से विग्रहपूर्ण होते हैं, क्योंकि वे उत्पादन के साधनों के निजी स्वामित्व, आधिपत्य तथा अधीनता और मनुष्य का मनुष्य द्वारा शोषण पर आधारित होते हैं। समाजवादी समाज अविग्रहपूर्ण होता है क्योंकि वह शोषण की अनुपस्थिति में उत्पादन के साधनों के सामाजिक स्वामित्व पर आधारित होता है।

आधार अपने अनुकूल ही ऊपरी ढांचे को जन्म देता है और इसके विकास को निर्धारित करता है। ऊपरी ढांचे का मतलब समाज के राजनीतिक, दार्शनिक, न्यायिक, कलात्मक, धार्मिक तथा अन्य विचारों एवं उनके अनुरूप संस्थाओं से है। वर्ग समाज में ऊपरी ढांचे का भी एक वर्ग चरित्र होता है। शासक वर्ग अपने विचारों के अनुरूप अपने वर्ग स्वार्थों की रक्षा के लिए संस्थाओं का निर्माण करता है।

आधार और ऊपरी ढांचा दोनों एक निश्चित अवधि तक ही मौजूद रहते हैं। जब आधार बदलता है, तो उसका ऊपरी ढांचा भी बदलता है। अतः सामन्तवादी आधार में परिवर्तन और उसके स्थान पर पूंजीवाद के आगमन के परिणामस्वरूप सामन्तवादी ऊपरी ढांचे का स्थान पूंजीवादी ऊपरी ढांचे ने ले लिया। समाजवादी आधार के उदय के साथ समाजवाद के ऊपरी ढांचे का आगमन हुआ और उसने पूंजीवादी ऊपरी ढांचे को विनष्ट कर दिया। यद्यपि ऊपरी ढांचे को पूर्ण रूप में आधार ही जन्म देता है तथापि पुराने समाज में नये ऊपरी ढांचे के विभिन्न तत्व उदित हो सकते हैं, क्योंकि पुराने समाज में ही उन्नत वर्ग के विचार और दृष्टिकोण जन्म ले लेते हैं। उदाहरण के तौर पर

पूंजीवाद का रूप। मजदूरों का वर्ग इस समाज का एक नया क्रान्तिकारी वर्ग है। इस वर्ग की विचारधारा पूंजीवाद में ही जन्म ले लेती है।

आधार ही ऊपरी ढांचे को जन्म देता है किन्तु जन्म लेने के बाद ऊपरी ढांचा निष्क्रिय नहीं रहता, बल्कि आधार का अपरिवर्तित रखने के लिए काम करता है। ऊपरी ढांचा आधार को मजबूत बनाने और अंतिम रूप ग्रहण करने में मदद करता है। ऊपरी ढांचा प्रतिक्रियावादी और प्रगतिशील दोनों तरह की भूमिका अदा कर सकता है। मिसाल के लिए पूंजीवादी आधार पर पनपा ऊपरी ढांचा अभी स्पष्ट रूप से प्रतिक्रियावादी भूमिका अदा कर रहा है क्योंकि वर्तमान युग में पूंजीवाद उत्पादन शक्तियों के विकास के मार्ग में बाधक बन गया है। दूसरी ओर समाजवादी आधार पर पनपा ऊपरी ढांचा प्रगतिशील भूमिका अदा कर रहा है, क्योंकि समाजवादी व्यवस्था के अन्तर्गत राजनीतिक सत्ता समाज की उत्पादन शक्तियों के विकास को प्रोत्साहित करती है और नये समाज के निर्माण के दौरान देश के सामने आने वाली समस्याओं का हल करने में सहायता देती है।

भौतिक सम्पदा की उत्पादन पद्धति उत्पादक शक्तियों और उत्पादन के सम्बंधों का एकीकृत रूप होने के कारण अपने अनुरूप ऊपरी ढांचे से मिलकर सामाजिक आर्थिक संरचना कहलाती है।

इतिहास में पांच प्रकार की सामाजिक आर्थिक संरचनाएं ज्ञात हैं आदिम सामुदायिक दास, सामन्तवादी पूंजीवादी और कम्युनिस्ट (समाजवाद कम्युनिज्म का पहला चरण है)। इनमें से प्रत्येक संरचना की अपनी विशेष अर्थव्यवस्था, दृष्टिकोण विचार और संस्थाएं हैं। सामाजिक आर्थिक संरचना निम्नतर से उच्चतर की ओर आगे बढ़ती है। मिसाल के लिए सामन्तवाद ने पूंजीवाद के लिए स्थान खाली किया और पूंजीवाद ने कम्युनिज्म के पहले चरण समाजवाद के लिए। सामाजिक आर्थिक संरचनाओं का उदय विकास और पतन सामाजिक विकास के नियमों के अधीन होता है।

मार्क्सवाद लेनिनवाद बतलाता है कि प्रकृति और समाज को पृथक और असम्बद्ध घटनाओं का आकस्मिक योग नहीं मान लेना चाहिए। असलियत ठीक इसके विपरीत है। सभी प्राकृतिक और सामाजिक घटनाएं एक दूसरे से सम्बद्ध हैं और एक दूसरे को प्रभावित करती हैं। गहराई से जड़ जमाये हुए इस सम्बंध की अभिव्यक्ति प्राकृतिक और सामाजिक विकास के नियमों में होती है। विज्ञान का काम इन नियमों का पता लगाना है।

सामाजिक विकास के आर्थिक नियम

आर्थिक नियम समाज के विकास के आधार होते हैं। ये नियम लोगों के बहुविध पारस्परिक सामाजिक आर्थिक सम्बधो यानी उत्पादन, वितरण, विनिमय और उपभोग के क्षेत्र म बनने वाले सम्बधो को निर्धारित करते हैं। सामाजिक विकास के आर्थिक नियमों का अन्वेषण विज्ञान के रूप म राजनीतिक अर्थशास्त्र के लिए बडे ही महत्व का है।

प्रकृति और समाज के नियम वस्तुगत होते हैं, यानी उनका उदय और परिचालन हमारी भिन्नता और अनभिज्ञता से परे तथा हमारी इच्छाओं और अनिच्छाओं से स्वतन्त्र है। इसका मतलब है कि लोग इन नियमों में कोई हेर फेर और परिवर्तन नहीं कर सकते हैं। वे न इनका निराकरण कर सकते हैं, न नये नियमों का सृजन ही। इन नियमों के वस्तुगत होने का यह मतलब नहीं है कि लोग इनके सामने निस्सहाय हैं। ये इन्हे जान सकते हैं और इनका उपयोग समाज के हित म कर सकते हैं। समाजवादी देशों के सर्वहारा वर्ग ने इस नियम को समझ लिया कि उत्पादन के सम्बध उत्पादक शक्तियों के स्वभाव के अनुकूल होते है। इसके बाद उसने किसानों के साथ एकजुट होकर कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियों के नेतृत्व म शोषकों की सत्ता को उखाड फेंका और एक नये समाज का निर्माण प्रारम्भ किया।

आर्थिक नियमों के ऐसे भी लक्षण हैं जिनका प्रकृति के नियमों मे होना जरूरी नहीं है। पहला लक्षण यह है कि व अपेक्षाकृत अल्पकालीन होते हैं और एक निश्चित ऐतिहासिक अवधि मे ही परिचालित होते हैं। निश्चित आर्थिक स्थितियाँ, या यो कहे कि वे उत्पादन सम्बध जिन पर समाज आधारित है, आर्थिक नियमों के परिचालन के आधार होते हैं। एक सरचना से दूसरी सरचना की ओर सक्रमण के दौर मे उत्पादन के पुराने सम्बधो का उन्मूलन होता है और नये सम्बध उनकी जगह लेते हैं। इसी कारण एक प्रकार के आर्थिक नियम लुप्त होने और दूसरे प्रकार के आर्थिक नियम उदित होते हैं।

पूजीवाद के अन्तर्गत उत्पादन सम्बधो का आधार उत्पादन के साधनो पर निजी स्वामित्व होना है। इसलिए पूजीपति मजदूर वर्ग का शोषण करने तथा अपनी समृद्धि बढाने और अधिकाधिक मुनाफा जोडने के उद्देश्य से उत्पादन का विकास करते हैं। इसी कारण अधिशेष मूल्य का उत्पादन पूजीवाद का एक वस्तुगत आर्थिक नियम है।

इतना ही नहीं, उत्पादन के साधनों पर निजी स्वामित्व होने के कारण पूजीपति उत्पादन की उन्हीं शाखाओं का विकसित करता है जिनमे उसे अधिक मुनाफा मिल सके। इस तरह पूजीवाद के अन्तर्गत नियोजित आर्थिक विकास के लिए कोई सम्भावना नहीं रह जाती। पूजीवादी अर्थव्यवस्था प्रतियोगिता

और उत्पादन की अराजकता के आधार पर विकसित होती है। फलस्वरूप, प्रतियोगिता और उत्पादन की अराजकता भी पूंजीवाद का एक वस्तुगत नियम है।

उत्पादन के साधनों पर से निजी पूंजीवादी स्वामित्व को खत्म करने के बाद, पूंजीवाद के आर्थिक नियम काम करना बन्द कर देते हैं। समाजवादी देशों में उत्पादन के साधनों पर से पूंजीवादी निजी स्वामित्व के खात्मे के बाद नये आर्थिक नियमों का जन्म हुआ और पुराने नियमों ने काम करना बन्द कर दिया।

उत्पादन के समाजवादी सम्बंध उत्पादन के साधनों पर सार्वजनिक समाजवादी स्वामित्व पर आधारित होते हैं। समाजवाद के अंतर्गत स्वयं मेहनतकश जनता ही उत्पादन के साधनों की स्वामी होती है। वह अपने और समाज के हित के लिए कार्य करती है। इसीलिए समाजवादी देशों में उत्पादन के विकास का उद्देश्य समाज की भौतिक एवं सांस्कृतिक आवश्यकताओं की अधिकाधिक पूर्ति करना होता है। समाज की भौतिक एवं सांस्कृतिक आवश्यकताओं की उत्तरोत्तर पूर्ण संतुष्टि समाजवाद का एक वस्तुगत आर्थिक नियम है।

उत्पादन के साधनों का सार्वजनिक समाजवादी स्वामित्व सम्पूर्ण समाजवादी अर्थव्यवस्था को एक सूत्र में पिरो देता है। ऐसी अर्थव्यवस्था योजनाबद्ध होकर ही विकसित हो सकती है। राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का संतुलित रूप से नियोजित विकास समाजवाद का एक वस्तुगत नियम है।

प्रत्येक सामाजिक-आर्थिक संरचना में बहुत से आर्थिक नियम काम करते हैं। जो नियम सिर्फ एक ही संरचना विशेष में लागू होते हैं, उन्हें विशिष्ट नियम कहा जाता है। उनमें से भी हम बुनियादी नियमों को अलग कर सकते हैं जो समाज के मुख्य लक्ष्य और उसे प्राप्त करने के उपाय और साधन को निर्धारित करते हैं।

इन विशिष्ट आर्थिक नियमों के अतिरिक्त अन्य नियम भी होते हैं जो आम तौर पर सभी सामाजिक आर्थिक संरचनाओं पर लागू होते हैं। इनमें वह नियम भी है जिसके अनुसार उत्पादन सम्बंध उत्पादक शक्तियों की प्रकृति के अनुकूल होते हैं। यह सामाजिक उत्पादन के दोनों पहलुओं, यानी उत्पादक शक्तियों और उत्पादन सम्बंधों के बीच के आवश्यक रिश्ते और उनकी एक दूसरे पर निर्भरता को व्यक्त करता है।

आर्थिक नियमों का दूसरा लक्षण उनका सामाजिक हित में प्रयोग किये जाने से सम्बंधित है। इसका अभिप्राय है कि प्राकृतिक विज्ञान के नियमों (जहां किसी भी नये नियम का अन्वेषण और प्रयोग कमोबेश आसानी से होता

है) के प्रतिकूल आर्थिक नियमों का अन्वेषण और प्रयोग पुरानी पड़ गयी शक्तियों के जबरदस्त विरोध के बावजूद होता है। वर्ग समाज में आर्थिक नियमों के प्रयोग का एक वर्ग चरित्र भी होता है।

ये आर्थिक नियमों को प्राकृतिक नियमों से अलग करने वाले विशेष लक्षण हैं।

उत्पादन की सभी पद्धतियों में आर्थिक नियम स्वतः परिचालित हो सकते हैं या "मान्य आवश्यकताओं" के रूप में जानबूझ कर प्रयुक्त किये जा सकते हैं।

विग्रहपूर्ण सामाजिक-आर्थिक संरचनाओं में जहां उत्पादन के साधनों पर निजी स्वामित्व होता है, आर्थिक नियम बिना अपनी मान्यता का विचार किये अन्धाधुन्ध रूप में परिचालित होते हैं। मिसाल के तौर पर पूंजीवाद में उत्पादन की प्रक्रिया का चरित्र सामाजिक है और उसकी सभी शाखाएं एक-दूसरे से सम्बन्धित और अन्योन्याश्रित हैं। लेकिन उत्पादन का यह सामाजिक चरित्र निजी सम्पत्ति पर आधारित है। इसका मतलब है कि प्रत्येक पूंजीपति अपने उद्यम में समृद्धिशाली होने के अपने स्वार्थपूर्ण उद्देश्य की प्राप्ति के लिए ही प्रयत्नशील रहता है और अधिकतम मुनाफा कमाना चाहता है। उत्पादन की विभिन्न शाखाओं में आवश्यक सम्बन्ध और अनुपात स्वतःस्फूर्त ढंग से अनन्त एवं निरंतर विचलनों के द्वारा स्थापित होते हैं। कभी ढेर सारी वस्तुओं का उत्पादन होता है तो कभी बहुत ही थोड़ी वस्तुओं का। अतः आर्थिक नियम पूंजीपति के नियंत्रण से परे काम करते हैं। यह सच है कि कुछ पूंजीपति पूंजीवाद के आर्थिक नियमों की समझदारी हासिल कर सकते हैं, पर वे भी उनके परिचालन के स्वतःस्फूर्त चरित्र को बदल नहीं सकते।

समाजवाद में आर्थिक नियमों की सही समझदारी प्राप्त होती है और उनका प्रयोग सोच समझकर समाज के हित में किया जाता है। यह उत्पादन के साधनों पर सामाजिक स्वामित्व होने के कारण ही सम्भव है।

समाजवाद के अन्तर्गत काम करने वाले अधिकांश वस्तुगत आर्थिक नियमों की स्थापना सभी मेहनतकशों के चेतन, संगठित और सक्रिय कार्यों के आधार पर होती है। समाजवादी देशों में कम्युनिस्ट निर्माण कार्य के लिए वस्तुगत आर्थिक नियमों का ज्ञान प्राप्त करने और इस्तेमाल करने में कम्युनिस्ट एवं मजदूर पार्टियां बहुत बड़ी भूमिका अदा करती हैं।

राजनीतिक अर्थशास्त्र सामाजिक विकास के आधार के ऊपर विचार करने वाला विज्ञान है। यह आधार है भौतिक सम्पदा का उत्पादन या उत्पादन पद्धति। राजनीतिक अर्थशास्त्र उत्पादन की प्रक्रिया में लोगों के बीच

राजनीतिक अर्थशास्त्र की विषय-वस्तु

बनने वाले सम्बंधों की दृष्टि से ही उत्पादन का अध्ययन करता है। वह समाज के आधार के विषय में अन्वेषण करता है। लेनिन के अनुसार राजनीतिक अर्थशास्त्र का सम्बन्ध उत्पादन से नहीं बल्कि 'उत्पादन करने वाले लोगों के सामाजिक सम्बन्धों यानी उत्पादन की सामाजिक पद्धति से होता है।'[1] दूसरी तरफ राजनीतिक अर्थशास्त्र उत्पादक शक्तियों और उत्पादन सम्बन्धों के बीच के सम्बन्ध पर विचार किये बिना नहीं रह सकता और न ही वह ऊपरी ढांचे को पूरी तरह छोड़ सकता है क्योंकि वह आधार से ही पैदा होता है और उसे जबदस्त रूप से प्रभावित करता है।

अतः राजनीतिक अर्थशास्त्र की विषय वस्तु लोगों के बीच का उत्पादन (आर्थिक) सम्बन्ध होता है। इसके अन्तर्गत उत्पादन के साधनों के स्वामित्व के प्रकार, उत्पादन की प्रक्रिया में विभिन्न सामाजिक श्रेणियों का स्थान और उनके आपसी सम्बंध तथा भौतिक सम्पन्न के वितरण के प्रकार आते हैं।

दूसरे शब्दों में राजनीतिक अर्थशास्त्र लोगों के बीच सामाजिक उत्पादन (यानी आर्थिक) सम्बन्धों के विकास का विज्ञान है। यह उन नियमों की व्याख्या करता है जो मानव समाज में उसके विकास की विभिन्न मंजिलों में भौतिक सम्पदा के उत्पादन और वितरण को नियमित करते हैं।

राजनीतिक अर्थशास्त्र की इस परिभाषा से स्पष्ट है कि यह एक ऐतिहासिक विज्ञान है। इससे पता चल जाता है कि किस प्रकार समाज निम्नतर अवस्था से उच्चतर अवस्था की ओर विकसित होता है और किस प्रकार एतिहासिक विकास का सम्पूर्ण क्रम अवश्यम्भावी रूप से उत्पादन की कम्युनिस्ट पद्धति की विजय का मार्ग प्रशस्त करता है।

राजनीतिक अर्थशास्त्र एक वर्गगत और पक्षधर विज्ञान है। यह व्यक्तियों एवं वर्गों के आपसी सम्बंधों के सवालों पर विचार करता है और उनके महत्त्वपूर्ण हितों से सम्बंधित है।

क्या पूंजीवाद का पतन और कम्युनिज्म की विजय अवश्यम्भावी है? पूंजीवादी राजनीतिक अर्थशास्त्र स्वाभाविक रूप से इस प्रश्न का नकारात्मक उत्तर देता है क्योंकि वह ऐसी व्यवस्था के हितों का प्रतिनिधि है जो बहुत लम्बे समय से सामाजिक विकास के मार्ग में बाधक है और जिसका पतन अवश्यम्भावी है।

---

१ लेनिन, "संगृहीत रचनाएं", खंड ३, मास्को पृष्ठ ६२-६३।

जब तक पूंजीपति वर्ग एक उन्नतिशील वर्ग था और पूंजीवाद का विकास सामाजिक प्रगति के हित में था तब तक पूंजीवादी अर्थशास्त्री समाज का वस्तुगत विश्लेषण किया करते थे। लेकिन वह समय अब गुजर गया। जब से सर्वहारा वर्ग पूंजीपति वर्ग के मुकाबले एक स्वतंत्र शक्ति के रूप में सामने आया और वर्ग संघर्ष का विकास ऐसी मंजिल पर पहुंच गया जहां उसने पूंजीवाद के पतन की पूर्व सूचना देना प्रारम्भ कर दिया, तब से पूंजीवादी राजनीतिक अर्थशास्त्र ने अपना वैज्ञानिक चरित्र खो दिया। अब इसका काम सिर्फ दकियानूसी पूंजीवादी व्यवस्था की सभी प्राप्त साधनों से रक्षा करना और मजदूर वर्ग की विचारधारा का विरोध करना रह गया है।

मजदूर वर्ग के नेताओं—मार्क्स, एंगेल्स और लेनिन ने सही वैज्ञानिक आधार पर राजनीतिक अर्थशास्त्र को विकसित किया।

लेनिन से पहले मार्क्सवाद ने राजनीतिक अर्थशास्त्र में जो कुछ भी योगदान किया, वह सब मार्क्स की महान कृति पूंजी में निहित है। यह कृति पूंजीवादी व्यवस्था के सूक्ष्म विश्लेषण पर आधारित है और वैज्ञानिक दृष्टि से पूंजीवाद के अवश्यम्भावी पतन सर्वहारा अधिनायकत्व की स्थापना और कम्युनिज्म की विजय को सिद्ध करती है।

नयी ऐतिहासिक परिस्थितियों में लेनिन ने मार्क्स और एंगेल्स के काम को जारी रखा और राजनीतिक अर्थशास्त्र को ऊंचे स्तर पर पहुंचाया। लेनिन ने सबसे बड़ा काम पूंजीवाद के उच्चतम और अंतिम चरण—साम्राज्यवाद का वैज्ञानिक विश्लेषण करने का किया। साम्राज्यवाद का यह विश्लेषण और मुख्यतः साम्राज्यवादी युग में पूंजीवाद के विषम आर्थिक और राजनीतिक विकास के नियम का अन्वेषण सर्वहारा क्रांति के नये सिद्धान्त का आधार बना।

लेनिन ने दिखलाया कि क्रांति की विजय सर्वप्रथम एक देश या कुछ देशों में होगी। महान अक्तूबर समाजवादी क्रांति की तैयारी, उसके सफल संचालन और उसके बाद सोवियत संघ में समाजवाद की विजय के लिए किये जाने वाले संघर्ष के दौरान कम्युनिस्ट पार्टी की राजनीति एवं कार्यनीति इसी महान अन्वेषण पर आधारित थी। समाजवाद का राजनीतिक अर्थशास्त्र लेनिन के नाम के साथ जुड़ा हुआ है।

मार्क्सवादी लेनिनवादी आर्थिक सिद्धान्त का रचनात्मक विकास सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी तथा अन्य देशों की कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियों के निर्णयों एवं लेनिन के शिष्यों की कृतियों में हुआ है। आम तौर पर मार्क्स

ाद लेनिनवादी और खास तौर पर मार्क्सवादी लेनिनवादी राजनीतिक अर्थ-
ास्त्र के सृजनात्मक विकास का उदाहरण हम सोवियत संघ की कम्युनिस्ट
ार्टी की २२वीं कांग्रेस में अनेक महत्वपूर्ण प्रश्नों पर विचार के दौरान देखने
ो मिला। वे प्रश्न थे कम्युनिस्ट समाज के दो चरण और समाजवाद से
म्युनिज्म में विकसित होने के नियम कम्युनिज्म के भौतिक एवं तकनीकी
ाधार का निर्माण, समाजवादी सम्पत्ति का विकास और उसके दो रूपों में
मन्वय, वर्ग विभेद का उन्मूलन और पूर्ण सामाजिक समता की स्थापना,
म्युनिस्ट सामाजिक सम्बंधों का निर्माण, कम्युनिज्म के बुनियादी सिद्धांत—
प्रत्येक से उसकी योग्यता के अनुसार और प्रत्येक को उसकी आवश्यकता के
नुसार" का कार्यान्वयन सांस्कृतिक क्रांति की पूर्णता और नये आदमी का
निर्माण। कम्युनिज्म में संतरण के दौर में समाज के राजनीतिक संगठन की
मस्याओं का भी इसमें विशेष विवेचन किया गया।

तब राजनीतिक अर्थशास्त्र का क्या महत्व है ?

यह मजदूर वर्ग और सभी मेहनतकशों को समाज के आर्थिक विकास
े नियमों से अवगत कराता और उन्हें इन नियमों को सफलतापूर्वक समझने
े समर्थ बनाता है। पूंजीवादी देशों के मेहनतकशों को यह उनकी गुलामी,
ग़रीबी और अभाव के कारण बतलाता है। यह बतलाता है कि मजदूर वर्ग
और समस्त मेहनतकश जनता के उत्पीडन और गरीबी का कारण कोई आक-
स्मिक घटना या व्यक्तिगत पूंजीपतियों का मनमाना शासन नहीं है बल्कि
सम्पूर्ण पूंजीवादी व्यवस्था है। अतएव निर्मम वर्ग संघर्ष पूंजीवाद का उन्मूलन
और सर्वहारा अधिनायकत्व की स्थापना ही मेहनतकश जनता को शोषण से
मुक्त कर सकते हैं।

आर्थिक रूप से पिछड़े हुए जनगण को मार्क्सवादी लेनिनवादी राज-
नीतिक अर्थशास्त्र उनके पिछड़ेपन और गरीबी का कारण बतलाता है। यह
बताता है कि उपनिवेशों एवं गुलाम देशों में जनगण के शोषण और लूट के
लिए साम्राज्यवाद और औपनिवेशिक व्यवस्था जिम्मेदार है। सदियों से मुट्ठी
भर साम्राज्यवादी देशों ने हिंसा और धोखेबाजी से मानवजाति के विशाल बहु-
मत को उपनिवेशों में अपनी अधीनता की स्थिति में रखा है या यों कहें कि
वास्तव में उन्हें अपना गुलाम बना रखा है। साम्राज्यवाद और उसके अन्य
रूपों के विरुद्ध सुदृढ़ संघर्ष ही इन लोगों को राष्ट्रीय स्वतंत्रता एवं प्रगति के
पथ पर अग्रसर कर सकता है।

राजनीतिक अर्थशास्त्र पूंजीवाद के चंगुल से मुक्त देशों को समाजवाद और कम्युनिज्म की दिशा बतलाता है। यह बतलाता है कि समाजवादी अर्थव्यवस्था पूंजीवादी अर्थव्यवस्था की तुलना में क्या लाभप्रद है। यह कम्युनिज्म की विजय की अनिवार्यता को भी सिद्ध करता है। समाजवादी अर्थव्यवस्था के नियमों की जानकारी जनता को कम्युनिज्म के निर्माण कार्य में चेतन-मन से शामिल होने का अवसर प्रदान करती है, मेहनतकश जनता को पहल करने के लिए प्रोत्साहित करती है, अधिक उत्पादक काम करने की शिक्षा देती है और सभी मेहनतकशों को कम्युनिस्ट समाज के सक्रिय निर्माता बनने के लिए प्रोत्साहित करती है।

सर्वहारा वर्ग और समस्त मेहनतकश जनता के हाथों में मार्क्सवादी लेनिनवादी राजनीतिक अर्थव्यवस्था शान्ति, जनवाद और समाजवाद के लिए संघर्ष में एक शक्तिशाली उपकरण है।

अध्याय ?

पूंजीवाद से पहले की उत्पादन की पद्धतियां

इस अध्याय में हम संक्षेप में आदिम सामुदायिक दास और सामन्तवादी उत्पादन पद्धति के उदय, विकास और पतन पर विचार करेंगे।

१ उत्पादन की आदिम सामुदायिक उत्पादन पद्धति

करीब ९ करोड़ वर्ष पहले धरती पर जिंदगी की शुरूआत हुई। प्रथम मानव का जन्म करीब १० लाख वर्ष पहले हुआ।

विज्ञान बतलाता है कि किस प्रकार आदमी धरती पर आया। यूरोप एशिया और अफ्रीका के विभिन्न भागों में जहां उष्ण जलवायु थी वहां विकसित प्रकार या जाति के नरवानर रहते थे। बहुत लम्बे विकास के क्रम में इन्हीं नरवानरों से मनुष्य का उदय हुआ। जानवर और आदमी के बीच बुनियादी फर्क तब आया जब आदमी श्रम करने के लिए औजार (शुरू शुरू में बहुत ही आदिम किस्म के) बनाने लगा। श्रम करने के लिए औजारों के बनने के साथ मानवीय श्रम का उदय हुआ। इसी श्रम के कारण नरवानर के अगले पर धीरे धीरे आदमी के बाहुओं के रूप में परिवर्तित हो गये। श्रम करने के लिए बाहुओं और हाथों के स्वतन्त्र हो जाते ही आदमी के आदिम पुरखे सीधे खड़े होकर चलने लगे। औजारों के बनते ही आदिम मानवों के बीच एक दूसरे से (श्रम करने के औजारों के इस्तमाल के दौरान) बातचीत करने की आवश्यकता प्रतीत हुई। अतएव मुखर भाषा ने जन्म लिया। श्रम और मुखर भाषा का मस्तिष्क के विकास में निर्णायक प्रभाव रहा। स्पष्ट है कि श्रम ने ही आदमी को जन्म दिया और वही मानव समाज के जन्म और विकास का मुख्य स्रोत है।

प्रथम सामाजिक आर्थिक सरचना आदिम सामुदायिक व्यवस्था थी जो सकडा हजारा वर्षों तक विद्यमान रही। वह मानव समाज के उदय का द्योतक थी। प्रारम्भ म मनुष्य अर्द्ध जगर अवस्था मे थे। व प्राकृतिक शक्तियो के समक्ष निरीह थे। वे कन्द जगली फल, वर पौधा की जड, इत्यादि जमा करते थे। मुख्य रूप मे वे शाकाहारी भोजन पर ही जीवन व्यतीत करते थे।

मनुष्य के प्रारम्भिक उपकरण खुरदर कटे हुए पत्थर और डडे थ। आग चलकर लोगो ने अपने अनुभवा से आक्रमण करने, काटने और खोदने के लिए सरल औजार बनाना सीखा।

अग्नि का अन्वेषण प्रकृति के विरुद्ध सघष म आदिम मनुष्यो के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ। आग की सहायता से वे अपने भोजन म विविधता लान मे समय हो सके। धनुष और तीर का आविष्कार उनके हथियारो को उन्नत करने और आदिम समाज की उत्पादक शक्तियो को विकसित करने की दिशा मे एक नया सफल कदम था। अब लोग जगली जानवरो का *शिकार अधिक करने लगे। जगली जानवरो का मास उनके तत्कालीन भोजन* का एक महत्वपूर्ण अग बन गया। आखेट के विकास ने पशु पालन को जन्म दिया। शिकारियो ने पशु पालन प्रारम्भ किया।

कृषि का उदय उत्पादक शक्तियो के विकास की दिशा म एक बडी छलाग थी। बहुत समय तक कृषि अत्यन्त आदिम थी। भार वहन के लिए पशुओ के इस्तेमाल न कृषि श्रम का अधिक उत्पादक बनाया तथा जुताई का काय शुरू हुआ। आदिम लोगो ने जिन्दगी का व्यवस्थित ढग अपनाना प्रारम्भ किया।

आदिम समाज म उत्पादन के सम्बधा का निर्धारण उत्पादक शक्तियो की स्थिति के अनुसार होता था। उत्पादन के सम्बधा का आधार श्रम के उपकरणा और उत्पादन के साधनो पर सामुदायिक स्वामित्व था। सामूहिक स्वामित्व और उत्पादक शक्तियो के विकास के स्तर मे सगति थी। श्रम के उपकरण इतने अपरिष्कृत थे कि आदिम मनुष्य उनसे अकेले प्रकृति और जगली जानवरो के विरुद्ध सघष नही कर सकता था। लोगो को एक साथ समुदायो (कम्यूनो) म रहना पडता था और मिल्जुल कर अपनी अर्थव्यवस्था (शिकार करना मछली मारना और भोजन पकाना) चलानी पडती थी।

उत्पादन के साधनो पर सामुदायिक स्वामित्व के साथ ही साथ व्यक्तिगत सम्पत्ति भी विद्यमान थी। यह समुदाय के व्यक्तिगत सदस्या के अधिकार म रहने वाले श्रम के उपकरणा के रूप मे थी जिनका प्रयोग वे जगली जानवरो स अपनी रक्षा के लिए करते थे।

आदिम समाज में श्रम की उत्पादकता बहुत कम थी और जीवन की अनिवार्य आवश्यकताओं को सन्तुष्ट करने के बाद कोई अधिशेष नहीं बचता था। श्रम साधारण सहयोग पर आधारित था। बहुत से लोग एक ही तरह का काम करते थे। मनुष्य द्वारा मनुष्य का कोई शोषण नहीं होता था। खाद्य पदार्थों की मात्रा बहुत कम होती थी, लेकिन उसे समुदाय के सदस्यों के बीच समान रूप से बांट दिया जाता था।

जब मनुष्य पशु जगत से बाहर निकल रहे थे, तब वे झुंडों में रहते थे। बाद में संयुक्त अर्थव्यवस्था के उदय के साथ समाज के कुल संगठन ने जन्म लिया। कुल संगठन में सिर्फ रिश्तेदार ही मिलजुल कर काम करते थे। प्रारम्भ में कुल एक समूह के रूप में था जिसके सदस्यों की संख्या कुछ दर्जनों से अधिक नहीं होती थी। समय के बीतने के साथ ही यह संख्या सैकड़ों पर पहुंच गयी। श्रम के उपकरणों के विकसित होने के साथ कुल में श्रम का स्वाभाविक विभाजन—मर्द और औरत, प्रौढ़, बालक और वृद्ध के बीच—होने लगा। मर्द मुख्य रूप से आखेट का काम करने लगे और औरतें शाका-हारी खाद्य पदार्थों को एकत्र करने में लग गयीं। फलस्वरूप श्रम उत्पादकता में एक निश्चित वृद्धि हुई।

कुल समाज के प्रारम्भिक काल में नारी की प्रमुख भूमिका थी। वह खाने के लिए फल मूल, साग सब्जी जमा करती तथा घर की व्यवस्था देखती थी। कुल मातृसत्तात्मक या मातृप्रधान था। बाद में चलकर जब पशु पालन और खेती मर्दों के काम बन गये तब मातृप्रधान कुल पितृप्रधान कुल बन गया। कुल में प्रधान भूमिका औरतों के बदले पुरुषों की हो गयी।

पशु पालन और कृषि के विकास के साथ श्रम का सामाजिक विभाजन भी हुआ। समाज के एक हिस्से ने कृषि को अपनाया तो दूसरे ने पशु-पालन पर जोर दिया। कृषि से पशु-पालन का अलगाव इतिहास में पहला महत्वपूर्ण सामाजिक श्रम विभाजन था।

इस कारण उत्पादकता बढ़ी। आदिम समुदायों ने तब यह महसूस किया कि उनके पास कुछ वस्तुओं की बहुत बड़ी मात्रा है जबकि अन्य वस्तुएं अपर्याप्त मात्रा में हैं। पशु पालन और खेती में लगी जातियां आपस में अपनी वस्तुओं का विनिमय करने लगीं। समय के बीतने के साथ ही लोगों ने धातुओं—ताम्बा और टीन—को पिघलाना सीखा (लौह निष्कर्षण में बाद में दक्षता हासिल की)। कांसे के श्रम उपकरण बनाना, हथियार तैयार करना और बर्तन बनाना सीखा। हाथ करघे के आविष्कार ने वस्त्र उत्पादन को जन्म दिया। बाद में समुदाय के कुछ सदस्यों ने अपने शिल्प पर अपना ध्यान केंद्रित करना

प्रारम्भ किया। उनके द्वारा निर्मित वस्तुओं का दूसरी वस्तुओं के साथ अधिकाधिक विनिमय शुरू हो गया।

उत्पादक शक्तियों के विकास के साथ ही मनुष्यों की श्रम उत्पादकता और प्रकृति के ऊपर उनके अधिकार में वृद्धि हुई। वे अपनी आवश्यकताओं को और अच्छी तरह सतुष्ट करने लगे। लेकिन समाज की नयी उत्पादक शक्तियां तत्कालीन उत्पादन सम्बधों के छोटे चौखट में अधिक दिनों तक निर्बाध रूप से विकसित नहीं हो सकीं। सामुदायिक स्वामित्व के नियन्त्रित स्वभाव और श्रम की वस्तुओं के समान वितरण ने उत्पादक शक्तियों के विकास को मन्द कर दिया। संयुक्त श्रम अनिवार्य नहीं रहा और व्यक्तिगत श्रम अधिक उत्पादक होने के कारण आवश्यक बन गया। संयुक्त श्रम के लिए उत्पादन के साधनों पर सामूहिक स्वामित्व की आवश्यकता होती है और व्यक्तिगत श्रम के लिए निजी स्वामित्व जरूरी होता है। उत्पादन के साधनों पर निजी स्वामित्व स्थापित होते ही कुलों के बीच और कुलों के भीतर सम्पत्ति वितरण में विषमता का समावेश हुआ। समाज के अन्दर धनी और गरीब का भेद उत्पन्न हो गया।

उत्पादक शक्तियों के और विकसित होने के बाद मनुष्य ने जीवन यापन की अपनी आवश्यकता से अधिक उत्पादन करना प्रारम्भ कर दिया। इन स्थितियों में अधिक श्रमिकों को काम पर लगाना सम्भव हो गया। लड़ाई के द्वारा मजदूर प्राप्त किये जाने लगे। लड़ाई में बन्दी बनाये गये लोगों को गुलाम बना लिया जाता था। प्रारम्भ में दासता पितृप्रधान (घरेलू) थी। आगे चलकर यह एक नयी समाज व्यवस्था का आधार बनी। दास-श्रम ने विषमता को और ज्यादा बढ़ा दिया। जिन परिवारों ने दासों से काम लेना प्रारम्भ किया, वे जल्दी ही धनी बन गये। सम्पत्ति की विषमता के बढ़ने के साथ ही धनी लोगों ने सिर्फ बन्दियों को ही नहीं, बल्कि अपनी जाति के गरीब या ऋणग्रस्त लोगों को भी गुलाम बनाना प्रारम्भ कर दिया। परिणाम-स्वरूप समाज दो वर्गों—गुलाम रखने वालों और गुलामों के बीच बंट गया। मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण की यहीं से शुरुआत हुई। इस काल से लेकर समाजवाद के निर्माण तक मानवजाति का सम्पूर्ण इतिहास वर्ग संघर्ष और शोषकों एवं शोषितों के बीच संघर्ष का इतिहास रहा है।

लोगों के बीच बढ़ती हुई विषमता ने शोषकों द्वारा शोषित वर्गों के दमन के एक यन्त्र के रूप में राज्य को जन्म दिया। इस तरह उत्पादन की आदिम सामुदायिक पद्धति के खण्डहरों पर दास प्रथा का उदय हुआ।

आदिम समाज मे श्रम की उत्पादकता बहुत कम थी और जीवन की अनिवार्य आवश्यकताओ को संतुष्ट करने के बाद कोई अधिशेष नही बचता था। श्रम साधारण सहयोग पर आधारित था। बहुत से लोग एक ही तरह का काम करते थे। मनुष्य द्वारा मनुष्य का कोई शोषण नही होता था। खाद्य पदार्थों की मात्रा बहुत कम होती थी, लेकिन उसे समुदाय के सदस्यो के बीच समान रूप से बांट दिया जाता था।

जब मनुष्य पशु जगत से बाहर निकल रहे थे तब वे गुफा म रहते थे। बाद मे संयुक्त अर्थ-व्यवस्था के उदय के साथ समाज के कुल संगठन ने जन्म लिया। कुल संगठन म सिर्फ रिश्तेदार ही मिलजुल कर काम करते थे। प्रारम्भ मे कुल एक समूह के रूप म था जिसके सदस्यो की संख्या कुछ दजनो से अधिक नही होती थी। समय के बीतने के साथ ही यह संख्या सकडो पर पहुंच गयी। श्रम क उपकरणो के विकसित होने के साथ कुल म श्रम का स्वाभाविक विभाजन—मर्द और औरत, प्रौढ बालक और वृद्ध के बीच—होने लगा। मर्द मुख्य रूप से आखेट का काम करने लगे और औरतें शाकाहारी खाद्य पदार्थों को एकत्र करने मे लग गयी। फलस्वरूप श्रम उत्पादकता म एक निश्चित वृद्धि हुई।

कुल समाज के प्रारम्भिक काल मे नारी की प्रमुख भूमिका थी। वह खाने के लिए फल मूल साग सब्जी जमा करती तथा घर की व्यवस्था देखती थी। कुल मातृसत्तात्मक या मातृप्रधान था। बाद में चलकर जब पशु पालन और खेती मर्दों के काम बन गय तब मातृप्रधान कुल पितृप्रधान कुल बन गया। कुल म प्रधान भूमिका औरतो के बदले पुरुषो की हो गयी।

पशु पालन और कृषि क विकास के साथ श्रम का सामाजिक विभाजन भी हुआ। समाज के एक हिस्से ने कृषि को अपनाया तो दूसरे न पशु-पालन पर जोर दिया। कृषि से पशु-पालन का अलगाव इतिहास मे पहला महत्वपूर्ण सामाजिक श्रम विभाजन था।

इस कारण उत्पादकता बढी। आदिम समुदायों ने तब यह महसूस किया कि उनके पास कुछ वस्तुओ की बहुत बडी मात्रा है जबकि अन्य वस्तुए अपर्याप्त मात्रा म हैं। पशु-पालन और खेती म लगी जातियां आपस में अपनी वस्तुओ का विनिमय करने लगीं। समय के बीतने के साथ ही लोगों ने धातुओ—ताम्बा और टीन—को पिघलाना सीखा (लोह निष्कर्षण म बाद म दक्षता हासिल की)। कांसे से श्रम उपकरण बनाना हथियार तैयार करना और बरतन बनाना सीखा। हाथ करघ क आविष्कार न वस्त्र उत्पादन को जन्म दिया। बाद म समुदाय क कुछ सदस्यो न अपने शिल्प पर अपना ध्यान केन्द्रित करना

प्रारम्भ किया। उनके द्वारा निर्मित वस्तुओं का दूसरी वस्तुओं के साथ अधिकाधिक विनिमय शुरू हो गया।

उत्पादक शक्तियों के विकास के साथ ही मनुष्यों की श्रम उत्पादकता और प्रकृति के ऊपर उनके अधिकार में वृद्धि हुई। वे अपनी आवश्यकताओं को और अच्छी तरह सतुष्ट करने लगे। लेकिन समाज की नयी उत्पादक शक्तियाँ तत्कालीन उत्पादन सम्बधों के छोटे चौखट में अधिक दिनों तक निर्बाध रूप से विकसित नहीं हो सकी। सामुदायिक स्वामित्व के नियन्त्रित स्वभाव और श्रम की वस्तुओं के समान वितरण ने उत्पादक शक्तियों के विकास को मन्द कर दिया। सयुक्त श्रम अनिवार्य नहीं रहा और व्यक्तिगत श्रम अधिक उत्पादक होने के कारण आवश्यक बन गया। सयुक्त श्रम के लिए उत्पादन के साधनों पर सामूहिक स्वामित्व की आवश्यकता होती है और व्यक्तिगत श्रम के लिए निजी स्वामित्व जरूरी होता है। उत्पादन के साधनों पर निजी स्वामित्व स्थापित होते ही कुलों के बीच और कुलों के भीतर सम्पत्ति वितरण में *विषमता का समावेश हुआ। समाज के अन्दर धनी और गरीब का भेद* उत्पन्न हो गया।

उत्पादक शक्तियों के और विकसित होने के बाद मनुष्य ने जीवन यापन की अपनी आवश्यकता से अधिक उत्पादन करना प्रारम्भ कर दिया। इन स्थितियों में अधिक श्रमिकों को काम पर लगाना सम्भव हो गया। लड़ाई के द्वारा मजदूर प्राप्त किये जाने लगे। लड़ाई में बन्दी बनाये गये लोगों को गुलाम बना लिया जाता था। प्रारम्भ में दासता पितृप्रधान (घरलू) थी। आगे चलकर यह एक नयी समाज व्यवस्था का आधार बनी। दास श्रम ने विषमता को और ज्यादा बढ़ा दिया। जिन परिवारों ने दासों से काम लेना प्रारम्भ किया वे जल्दी ही धनी बन गये। सम्पत्ति की विषमता के बढ़ने के साथ ही धनी लोगों ने सिर्फ बन्दियों को ही नहीं, बल्कि अपनी जाति के गरीब या ऋणग्रस्त लोगों को भी गुलाम बनाना प्रारम्भ कर दिया। परिणाम स्वरूप समाज दो वर्गों—गुलाम रखने वालों और गुलामों में बीच बट गया। मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण की यहीं से शुरुआत हुई। इस काल से लेकर समाजवाद के निर्माण तक मानवजाति का सम्पूर्ण इतिहास वर्ग सघर्ष और शोषकों एवं शोषितों के बीच सघर्ष का इतिहास रहा है।

लोगों के बीच बढ़ती हुई विषमता ने शोषकों द्वारा शोषित वर्गों के दमन के एक यन्त्र के रूप में राज्य को जन्म दिया। इस तरह उत्पादन की आदिम सामुदायिक पद्धति के खन्डहरों पर दास प्रथा का उदय हुआ।

२ उत्पादन की दास युगीन पद्धति

दास प्रथा इतिहास में शोषण का पहला, अपरिष्कृत तथा स्पष्ट रूप है। यह प्रथा सभी जनगण में रही है।

उत्पादक शक्तियों के अधिक विकसित होने, सामाजिक श्रम विभाजन और विनिमय के विकसित होने के कारण ही आदिम समाज का दास प्रथा में संक्रमण सम्भव हुआ।

आदिम समाज में श्रम के लिए मुख्य रूप से पत्थर के उपकरणों को काम में लाया जाता था। किन्तु दास प्रथा के काल में लोहे को पिघलाने की तरकीब जान लेने के बाद, लोहे के बने उपकरण काम में आने लगे। लोहे के उपकरणों ने मानवीय श्रम के दायरे को बढ़ा दिया। उदाहरण के लिए लोहे की कुल्हाड़ी को लें। इसके प्रयोग से पेड़ों और झाड़ झंखाड़ से धरती को साफ कर जोत लायक भूमि बनायी गयी। लोहे की फाल लगे लकड़ी के हल से अपेक्षाकृत बड़े बड़े रकबों की जुताई होने लगी। कृषि से लोगों को सिर्फ रोटी और साग सब्जी मिली, बल्कि शराब और वनस्पति तेल भी मिलने लगा। धातु के औजारों के निर्माण ने मजदूरों के एक नये सामाजिक समूह—दस्तकारों को जन्म दिया। इनका धंधा बहुत कुछ स्वतन्त्र हो गया। दस्तकारी कृषि से पृथक हो गयी। यह श्रम का दूसरा महत्वपूर्ण सामाजिक विभाजन था।

दो बुनियादी शाखाओं में उत्पादन के विभाजित होने के साथ श्रम द्वारा उत्पन्न वस्तुओं का विनिमय भी बढ़ा। विनिमय के नियमित प्रक्रिया का रूप धारण करते ही मुद्रा का आविर्भाव हुआ। मुद्रा एक व्यापक वस्तु हो गयी जिसके द्वारा अन्य सभी वस्तुओं का मूल्य मापा जाने लगा। मुद्रा वस्तु विनिमय की प्रक्रिया में माध्यम का कार्य करने लगी। बढ़ते हुए श्रम विभाजन और विनिमय ने वस्तुओं की खरीद बिक्री करने वाले लोगों—व्यापारियों को जन्म दिया। व्यापारियों का आविर्भाव श्रम का तीसरा महत्वपूर्ण सामाजिक विभाजन था। व्यापारियों ने बाजार से दूर रहने वाले उत्पादकों की दूरी का फायदा उठाकर कम कीमत पर वस्तुओं को खरीदकर उपभोक्ताओं के हाथ ऊंची कीमतों पर बेचना प्रारम्भ कर दिया।

दस्तकारी और विनिमय के विकास ने नगरों को जन्म दिया। प्रारम्भ में नगरों को गांवों से अलग करना कठिन था। लेकिन धीरे धीरे दस्तकारी और व्यापार नगरों में केन्द्रित हो गये। देहातों से नगरों के अलगाव की यहीं से शुरूआत हुई।

उत्पादक शक्तियों के विस्तार और श्रम के सामाजिक विभाजन तथा विनिमय के विकास ने सम्पत्ति की विषमता को तीव्र कर दिया। भारवाही

परन्तु उत्पादन के उपकरण और मुद्रा धनी लोगों के हाथों में केन्द्रित हो गये। गरीब और भी गरीब होते गये और उन्हें बहुधा धनी लोगों के सामने कर्ज के लिए हाथ पसारने को विवश होना पड़ा। अतः सूदखोरी के साथ कर्जखोरी और महाजन के रिश्तों ने जन्म लिया। 'प्राचीन संसार में वर्ग संघर्षों ने मुख्य तौर पर कर्जखोरों और महाजनों के संघर्ष का रूप लिया जिसका अन्त रोम में प्लेबियन कर्जखोरों के विनाश में हुआ। उनका स्थान दासों ने लिया।'[1] बड़े पैमाने पर दास रखने वाली अर्थव्यवस्था का उदय हुआ। धनी दास-स्वामियों ने सैकड़ों और कभी कभी हजारों दासों को अपने अधिकार में कर लिया। उन्होंने जमीन के बड़े-बड़े हिस्सों पर कब्जा कर लिया बड़ी जायदादें बना ली जिन पर बहुत से दास काम करने लगे। प्राचीन रोम में उन्हें लटफुंडिया कहा जाता था।

दास समाज में दास स्वामियों का उत्पादन के साधनों (भूमि, श्रम के उपकरण इत्यादि) और उत्पादन करने वाले लोगों यानी दासों पर अधिकार था। इसी आधार पर दास समाज में उत्पादन के सम्बन्ध बने। दास खरीद फरोख्त की वस्तु समझा जाता था। वह पूरी तरह से अपने मालिक के अधिकार में होता था। दास को 'वाणीयुक्त औजार' भी कहा जाता था। दास स्वामियों की नजर में दास और कुल्हाड़ी या बैल में यही फर्क था कि दास बोल सकते थे। अन्य बातों में वे घरेलू पशुओं मकान, भूमि और श्रम के उपकरणों की तरह ही अपने मालिक की सम्पत्ति थे।

दासों के शोषण ने अत्यन्त क्रूर रूप ले लिया था। उनके साथ पशुओं से भी बुरा बर्ताव किया जाता था। चाबुक मार मारकर उनसे काम लिया जाता था। थोड़ी-सी चूक होने पर कड़ी सजा दी जाती थी। दास की जान ले लेने पर भी मालिक को दोषी नहीं माना जाता था। वह दास द्वारा किये गये सारे उत्पादन हड़प लेता था। दास को सिर्फ इतना ही खाना दिया जाता था जिससे वह अपने को किसी तरह जिन्दा रख सके और अपने मालिक के लिए काम कर सके।

दासों के श्रम की सहायता से प्राचीन संसार में अर्थव्यवस्था और संस्कृति की काफी तरक्की हुई। ज्ञान की कई शाखाएं—गणित, खगोल विद्या, यंत्र विज्ञान और स्थापत्य कला काफी विकसित हुए। यद्यपि इस व्यवस्था ने आदिम सामुदायिक व्यवस्था की तुलना में अनेक उपलब्धियां प्राप्त कीं तथापि उत्पादन की यह पद्धति मानवीय प्रगति में बाधक बनने लगी।

---

१ कार्ल मार्क्स, 'पूंजी', खण्ड १ मास्को, पृष्ठ १३८।

उत्पादन की इस पद्धति में गहरे और दुरूह अन्तर्विरोध पैदा हो गये जो अन्ततोगत्वा इसके विनाश के कारण बने। सबसे बड़ी बात यह हुई कि शोषण का यह रूप समाज की बुनियादी उत्पादक शक्ति—दासों को निरन्तर नष्ट करता रहा। अबाध शोषण के विरुद्ध दास बराबर बगावत करते रहे। इस अव्यवस्था को जीवित रखने के लिए दासों का निर्बाध गति से प्राप्त करना एक आवश्यक शर्त थी। अन्य राज्यों के विरुद्ध युद्ध छेड़कर ही दास प्राप्त किये जाते थे। किसान और दस्तकार युद्ध तन्त्र की रीढ़ थे। ये ही लोग सिपाहियों के रूप में लड़ते और लड़ाई के लिए साधन जुटाने के लिए करों का बोझ उठाते थे। सस्ते दासों के श्रम पर आधारित बड़े पैमाने के उत्पादन की प्रतिस्पर्धा के फलस्वरूप किसान और दस्तकार नष्ट हो गये। इस वजह से दास रखने वाले राज्यों की आर्थिक, राजनीतिक और सामरिक शक्ति कम हो गयी। विजय के बदले उनकी पराजय होने लगी। निर्बाध रूप से निरन्तर सस्ते दास प्राप्त करने का स्रोत खत्म हो गया। इन सबके कारण उत्पादन में सामान्य रूप से हर जगह ह्रास हुआ।

"व्यापक दरिद्रता, वाणिज्य, दस्तकारी, कला और आबादी का ह्रास, नगरों का पतन, कृषि का हीन स्थान—यही था रोम के विश्व-आधिपत्य का अन्तिम परिणाम।"[1]

प्रारम्भ में दास व्यवस्था ने उत्पादक शक्तियों के विकास में योग दिया। लेकिन इसके आगे का विकास उत्पादक शक्तियों के विनाश का कारण बना। दास श्रम पर आधारित उत्पादन के सम्बन्ध समाज की उत्पादक शक्तियों के विकास में बाधक बने। दासों को अपने श्रम के फल में कोई दिलचस्पी नहीं थी। उनकी मेहनत अब उतनी उपयोगी नहीं रही। दासों के स्वामित्व पर *आधारित उत्पादन सम्बन्धों के बदले दूसरे प्रकार के सम्बन्धों को स्थापित करने* की ऐतिहासिक आवश्यकता उत्पन्न हो गयी जिससे कि समाज की मुख्य उत्पादक शक्ति—दासों की स्थिति बदल जाये।

दास श्रम पर आधारित बड़ी बड़ी लाटफूंडियों के पतन के बाद छोटे छोटे घरेलू उत्पादन अधिक लाभप्रद बन गये। मुक्त दासों की संख्या बढ़ी। बड़े बड़े जागीर छोटे छोटे टुकड़ों में बंट गये। कोलोनी उन्हें जोतने लगे। कोलोनस अब दास न रहा बल्कि काश्तकार हो गया। उसे जीवन पर्यन्त इस्तेमाल के लिए जमीन का एक टुकड़ा मिला। इसके लिए उसे या तो मुद्रा की एक निश्चित मात्रा अदा करनी पड़ती थी या उत्पादन कार्य करना पड़ता था। वह

१ फ्रेडरिक एंगेल्स 'परिवार, व्यक्तिगत सम्पत्ति और राजसत्ता की उत्पत्ति', मार्क्स और एंगेल्स 'संगृहीत रचनाएं', खंड २, मास्को, पृष्ठ २६६।

स्वतंत्र रैयत नही था। वह अपने खेत के साथ बंधा हुआ था, उसे छोड नही सकता था। उसे उसकी जमीन के टुकडे के साथ बेचा जा सकता था। कालोनी मध्ययुगीन कमियो (Serfs) के पूववर्ती थे।

इस तरह पुरानी दास व्यवस्था के गभ म उत्पादन की नयी सामन्तवादी पद्धति ने आकार धारण करना शुरू किया।

दास-स्वामी अथव्यवस्था के विकसित होने के साथ साथ शोषकों के विरुद्ध दासो का सघष भी तेज होता गया। दास स्वामियो के खिलाफ दासो के विद्रोह हुए। बडे भूस्वामियो और राज्य द्वारा सताये गये स्वतंत्र किसानो एव दस्तकारो ने दासों का साथ दिया। इन अनेक विद्रोहो मे स्पाटकस (ईसा पूव ७४ ७१) के नेतृत्व मे हुआ विद्रोह विशेष महत्वपूण था। दास व्यवस्था को भीतर और बाहर से धक्के लगने लगे और अन्तिम तौर पर दास व्यवस्था ढह गयी।

३ उत्पादन की सामन्तवादी पद्धति

प्राय सभी देशो मे सामन्तवादी पद्धति एक या दूसरे प्रकार के लक्षणो के साथ कायम रही है। सामन्तवाद का युग काफी लम्बा रहा है। चीन मे सामन्तवादी व्यवस्था दो हजार वर्षों से भी अधिक काल तक रही। पश्चिम यूरोप मे रोमन साम्राज्य के पतन (५वी सदी) से इगलड (१७वी सदी) और फ्रास (१८वी सदी) की पूजीवादी क्रांतियां तक सामन्तवाद का बोलबाला रहा। रूस मे इसका दौर ९वी सदी से १८६१ मे कमिया प्रथा के उन्मूलन के समय तक चलता रहा।

सामन्तवादी समाज के उत्पादन सम्बध सामन्तो के निजी भूस्वामित्व और कमियो के ऊपर उनके अपूण सम्पत्ति अधिकार पर आधारित थे। कमिया दास नही था। उसकी अपनी जमीन थी। सामन्ता की सम्पत्ति के अतिरिक्त समाज मे किसानो और दस्तकारों की सम्पत्ति थी। उत्पादन के उपकरणो और जमीन के छोटे टुकडो पर उनका अधिकार था। लघु कृषक अथव्यवस्था और छोट स्वतंत्र दस्तकारो द्वारा उत्पादन व्यक्तिगत श्रम पर आधारित थे। सभी उत्पादन मुख्यत वस्तुओं के रूप मे होते थे। तात्पय यह कि उत्पादन मुख्य रूप से परिवारो के उपभोग के लिए होता था, विनिमय के लिए नही।

सामन्ता द्वारा किसानो के शोषण का आधार बडे पमाने की सामन्तवादी भूसम्पत्ति थी। सामन्त का अपना डेमसेन जमीन के एक भाग म होता था। वह बाकी हिस्से को कडी शर्तों पर किसानो को इस्तेमाल के लिए देता था। इसके बदले ही वह श्रम शक्ति प्राप्त करता था। जमीन पर पतृक

अधिकार होता है। इस कारण किसान को सामन्त के लिए काम करना अनिवार्य था। उसे अपने साज सामान और ढोर (श्रम लगान या बारबा) के द्वारा जमीन जोतना पड़ता था या सामन्त को अपने उत्पादन का एक हिस्सा देना पड़ता था या दोनों तरह के भू-लगान अदा करने पड़ते थे। इस व्यवस्था में पहले तो सिर्फ परोक्ष रूप से शोषण होता था किन्तु किसान व्यक्तिगत रूप से सामन्त पर आश्रित हो गया था। सामन्त किसान की जान नहीं ले सकता था पर वह उसे बेच सकता था।

कमियों के काम करने के समय का विभाजन आवश्यक और अतिरिक्त समय के रूप में होता था। आवश्यक समय के दौरान किसान अपने तथा अपने परिवार के जीवन-यापन के लिए आवश्यक उत्पादन करता था और अतिरिक्त समय के दौरान वह अतिरिक्त उत्पादन करता था जिसे सामन्त भू-लगान (श्रम-लगान उत्पादन के रूप में लगान और मुद्रा लगान) के रूप में हड़प जाता था। भू लगान के रूप में किसानों का सामन्तों द्वारा शोषण सभी प्रकार के सामन्तवाद की मुख्य विशेषता रही है।

शहरी जनसंख्या में मुख्य रूप से दस्तकार और व्यापारी होते थे। शहरों पर उन सामन्तों के अधिकार थे जिनकी जमीन पर ये बसे होते थे। शहरी लोग अपनी स्वतन्त्रता के लिए लड़ते थे और बहुधा उनकी जीत भी होती थी।

नगर तथा व्यापार के विकास ने सामन्ती गावों को बहुत प्रभावित किया। सामन्तवादी अर्थव्यवस्था बाजार से प्रभावित होने लगी। विलास की वस्तुओं को खरीदने के लिए सामन्तों को मुद्रा की जरूरत पड़ी। इसलिए उन्होंने किसानों से श्रम-लगान और वस्तुओं में लगान लेने के बदले मुद्रा के रूप में लगान लेना प्रारम्भ कर दिया। इससे सामन्ती शोषण तीव्र हो गया और सामन्त तथा किसानों के बीच के संघर्ष ने जोर पकड़ा।

४ सामन्तवाद का विघटन और पतन। सामन्तवादी व्यवस्था के अन्तर्गत पूंजीवादी सम्बन्धों का उदय

सामन्तवाद के अन्तर्गत दास व्यवस्था की तुलना में उत्पादक शक्तियां एक ऊंचे स्तर पर पहुंच गयी। कृषि के उत्पादन के तरीके उन्नत हुए लोहे के हल और श्रम के अन्य लौह उपकरण बड़े पैमाने पर इस्तेमाल किये जाने लगे। भूकर्षण की अन्य शाखाओं का उदय हुआ। अंगूर का उत्पादन मदिरा उत्पादन और बाजार के लिए बागबानी का बहुत विकास हुआ। पशु पालन तथा अन्य सहायक शाखाओं—मक्खन और पनीर के उत्पादन में सुधार हुए। हरी भूमि और चरागाह का विस्तार और विकास हुआ।

धीरे धीरे दस्तकारो के श्रम यत्रो म और बच्चे माला के शोधन करने के तरीकों मे सुधार हुआ। दस्तकारियो मे विशेषीकरण हुआ। समय बीतने के साथ नयी दस्तकारिया—हथियार, कील चाकू, ताला, जूता, जीन, आदि बनाने की—भी पनपी। लोहा पिघलाने तथा शोधन की प्रक्रिया म सुधार हुआ। पहली बार धमन भट्टिया १५वी सदी म बनी। महान भौगोलिक अन्वेषण भी इसी काल म हुए।

सामन्तवादी व्यवस्था म नयी उत्पादक शक्तिया अब तक विकसित हो चुकी थी। लेकिन यह व्यवस्था उनके आगे के विकास मे बाधक बनने लगी। उत्पादक शक्तिया और सामन्तवादी उत्पादन सम्बधो के तग चौखटे म विरोध पैदा हो गया। सामन्तवादी शोषण के जुए म जुता हुआ किसान उत्पादन नही बढा सकता था, क्योकि कमियो की उत्पादकता बहुत ही कम थी। शहरो मे दस्तकारो की बढती हुई उत्पादकता को गिल्ड नियमो द्वारा डाली जाने वाली बाधा का सामना करना पडा। इसलिए यह जरूरी हो गया कि उत्पादन के पुराने सम्बधो का उन्मूलन हो और उनकी जगह सामन्तवादी जजीरो से मुक्त नये सम्बध लें। सामन्तवादी व्यवस्था के गर्भ मे ही उत्पादन के पूजीवादी सम्बधो ने जन्म लेना शुरू किया।

आगे चलकर साधारण वस्तु उत्पादन (यानी उत्पादन के साधनो के निजी स्वामित्व और व्यक्तिगत श्रम पर आधारित विनिमय के लिए वस्तुओ का उत्पादन) धीरे धीरे विस्तृत होने लगा। वस्तुओ के उत्पादक एक दूसरे के साथ जबदस्त प्रतिद्वन्द्विता म जुट गये। फलस्वरूप धनी-गरीब और शहर देहात के विभेद का जन्म हुआ। बाजार के विस्तार के साथ बडे वस्तु उत्पादक बहुधा गरीब किसानो और दस्तकारों को भाड़े पर रखकर काम कराने लगे।

पूजीवाद का विकास एक अन्य तरह से भी हुआ। वणिक पूजी जिसका प्रतिनिधित्व व्यापारी करते थे, प्रत्यक्ष रूप से किसानो और दस्तकारो के उत्पादन को नियत्रित करने लगी। वणिक पूजी सबसे पहले छोटे उत्पादको की वस्तुओ के विनिमय मे माध्यम के रूप मे प्रकट हुई। आगे चलकर व्यापारियो ने नियमित रूप से छोटे उत्पादको से वस्तुओ को खरीदना और उन्हें कच्चे माल तथा अग्रिम धन देना प्रारम्भ कर दिया। इस तरह से छोटे उत्पादक आर्थिक दृष्टि से व्यापारियो पर अवलम्बित हो गये। दूसरा कदम जो वणिक पूजी ने उठाया, वह था बिखरे हुए दस्तकारो को एक छप्पर के नीचे एक कारखाने म इकट्ठा करना जहा वे मजदूरी के लिए काम करें। इस तरह से वणिक पूजी औद्योगिक पूजी म बदल गयी और व्यापारी औद्योगिक पूजीपति हो गया।

गावो में भी उस समय पूजीवाद विकसित हो रहा था। वस्तु-उत्पादन के विकास के साथ मुद्रा की शक्ति भी बढ़ी। किसानो ने सामन्त को वस्तु के बदले मुद्रा म भुगतान करना शुरू कर दिया। मुद्रा सम्बधो के विकास ने किसानो को ग्रामीण पूजीपति और गरीब किसान मे बाट दिया।

अत दोनो जगहा—शहरो और देहातो मे सामन्तवादी व्यवस्था के अन्तगत पूजीवादी उत्पादन ने जन्म लिया। सामन्तवाद का उन्मूलन एक ऐतिहासिक आवश्यकता बन गया।

सामन्तवाद का सम्पूण इतिहास किसानो और सामन्तो के बीच कटु वग सघष का रहा। उस युग के अन्तिम काल मे यह सघष अत्यन्त तीव्र हो गया था। किसानो के विद्रोहो ने सामन्तवादी व्यवस्था की जड़ें हिला दी और उस व्यवस्था का अन्तिम तौर पर खात्मा हो गया। पूजीपति वग ने सामन्तवाद विरोधी सघष का नेतृत्व किया और सामन्तो के खिलाफ कमिया वग के विद्रोह से फायदा उठाया और फिर सत्ता को हथियाकर शासक वग बन बठा।

उत्पादन की पूंजीवादी पद्धति

जैसा कि हम जानते हैं, उत्पादन की पूंजीवादी पद्धति का जन्म सामन्तवाद के गर्भ में हुआ। अपने विकास के क्रम में पूंजीवाद दो चरणों से गुजरता है एकाधिकारी पूंजीवाद से पहले का चरण और एकाधिकारी पूंजीवाद का चरण (साम्राज्यवाद)। इन दोनों चरणों का एक ही आर्थिक आधार है—उत्पादन के साधनों पर निजी पूंजीवादी स्वामित्व और भाड़े पर लगाये गये मजदूरों का शोषण। एकाधिकारी पूंजीवाद के पूर्व के चरण और साम्राज्यवाद में अन्तर भी है। एकाधिकारी पूंजीवाद के पहले के काल में मुक्त प्रतियोगिता थी और उत्पादक शक्तियां कमोबेश बेरोक टोक बढ़ीं। अमरीका, ब्रिटेन और फ्रांस तथा आर्थिक रूप से विकसित अन्य देशों में १९वीं सदी के अन्तिम कुछ दशकों तक एकाधिकारी पूंजीवाद के पहले का काल था। इस दौरान पूंजीवादी देशों में आर्थिक विकास की प्रक्रिया ने पूंजीवाद में एक गुणात्मक परिवर्तन किया। मुक्त प्रतियोगिता के स्थान पर एकाधिकारों का बोलबाला हो गया। इजारेदारियां पूंजीवादी देशों के आर्थिक मामलों में निर्णायक भूमिका अदा करने लगीं। इस शताब्दी के शुरू में एकाधिकार पूंजीवाद का पहला चरण समाप्त हो गया और पूंजीवादी विकास के अन्तिम चरण—साम्राज्यवाद का आगमन हुआ।

•

क एकाधिकारी पूजीवाद से पहले का चरण

अध्याय २

वस्तु-उत्पादन, वस्तु और मुद्रा

मार्क्स ने पूजीवाद का अपना विश्लेषण वस्तु से प्रारम्भ किया। पूजीवादी व्यवस्था मे प्रत्येक चीज—एक आल्पीन से लेकर एक बड़े कारखाने तक और यहा तक कि मानव श्रम शक्ति भी—खरीदी और बेची जाती है। इस तरह ये चीजें वस्तुओ का रूप ले लेती हैं। समाज मे लोगो के आपसी सम्बध वस्तुओ के सम्बध के रूप मे प्रकट होते हैं। मार्क्स के अनुसार वस्तु पूजीवादी समाज का आर्थिक प्रतिरूप है। जिस प्रकार एक बूद पानी मे इर्द गिर्द की चीजो का बिम्ब झलकता है उसी तरह से वस्तु पूजीवाद के सभी बुनियादी अतर्विरोधो को प्रदर्शित करती है।

मार्क्स ने वस्तु और वस्तु-उत्पादन का अध्ययन किया जिससे कि वह पूजीवादी सम्बधो के मूल तत्वो की व्याख्या कर सके।

१ वस्तु-उत्पादन का सामान्य विवरण

वस्तु उत्पादन का मतलब व्यक्तिगत इस्तेमाल के लिए सामग्रियो के होने वाले उत्पादन से नही है बल्कि विक्रय और बाजार मे विनिमय के उद्देश्य से होने वाले उत्पादन से है। लेनिन ने कहा कि

वस्तु-उत्पादन की अवधारणा

वस्तु उत्पादन का मतलब सामाजिक अर्थव्यवस्था के उस सगठन से है जिसमे वस्तुओ का उत्पादन एक दूसरे से अलग रहने वाले वस्तु विशेष मे विशेषता

प्राप्त उत्पादकों द्वारा पृथक पृथक होना है। परिणामस्वरूप समाज की आवश्यकताओं की संतुष्टि के लिए उत्पादन को बाजार में खरीदना और बेचना आवश्यक होता है। (इस तरह से उत्पादित सामग्रियाँ वस्तुओं का रूप लेती हैं।)"[1]

वस्तु उत्पादन का जन्म आदिम सामुदायिक व्यवस्था के विघटन के काल के दौरान हुआ। वस्तु उत्पादन दास समाज और सामन्तवादी समाज में भी विद्यमान था, यद्यपि उस समय प्राकृतिक अर्थव्यवस्था की ही प्रधानता थी। इस अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत समाज समरूप इकाइयों का समूह था। प्रत्येक इकाई में कई तरह के कच्चे मालों को प्राप्त करने से लेकर उनको उपभोग के लिए उपयुक्त सामग्रियों में परिवर्तित करने तक के सभी काम होते थे। इस तरह की अर्थव्यवस्था जिसमें मुख्य तौर पर अधिशेष उत्पादन का विनिमय किया जाता था पूजीवाद के उदय तक बनी रही।

पूजीवाद के उदय ने प्राकृतिक अर्थव्यवस्था पर जबदस्त प्रहार किया। पूजीवाद के अन्तर्गत मानव की श्रम शक्ति समेत सभी चीजों ने वस्तुओं का रूप धारण कर लिया। श्रम शक्ति के वस्तु के रूप में परिवर्तित हो जाने से वस्तु-उत्पादन प्रधान और व्यापक हो गया।

वस्तु उत्पादन का बोलबाला होते ही उत्पादन की प्रक्रिया में लोगों के बीच बने सम्बंधों (यानी उनके उत्पादन सम्बंधों) ने वस्तु सम्बंधों का रूप ले लिया। इसे स्पष्ट करने के लिए हम पूजीवादी समाज के बुनियादी उत्पादन सम्बंध (पूजीपति वर्ग द्वारा सर्वहारा वर्ग के शोषण) पर विचार करें। मजदूर का शोषण करने के लिए यह आवश्यक है कि वह जब अपनी श्रम शक्ति (जो अब एक वस्तु बन गयी है) बेचने के लिए मजबूर हो तब पूजीपति उसे भाड़े पर लेकर काम पर लगाये। पूजीपति मजदूर को मजदूरी देता है। मजदूर मजदूरी के पैसों से निर्वाह के साधन (वस्तुए) खरीदता है। इस तरह मजदूर और पूजीपति के आपसी सम्बंध प्रत्यक्ष रूप से अभिव्यक्त न होकर वस्तुओं के माध्यम से अभिव्यक्त होते हैं। उनके आपसी सम्बंध वस्तु-सम्बंधों का रूप ले लेते हैं।

पूजीपति एक दूसरे को अपनी वस्तु बेचते हैं तथा एक-दूसरे से कच्चे माल, साज-सामान तथा अन्य सामग्रियाँ खरीदते हैं। पूजीपतियों के ये आपसी सम्बंध वस्तु सम्बंधों का रूप ले लेते हैं।

---

१ लेनिन, "संग्रहीत रचनाएं", खंड १, पृष्ठ ६३।

फलस्वरूप पूँजीवादी समाज में वस्तु उत्पादन प्रधान और व्यापक चरित्र ग्रहण कर लेता है और लोगों के पारस्परिक सम्बन्ध चीजों और वस्तुओं के आपसी सम्बन्धों के रूप में परिवर्तित होते हैं।

वस्तु उत्पादन का वहीं उदय होता है जहां कतिपय निश्चित स्थितियां मौजूद रहती हैं। वस्तु उत्पादन के उदय और अस्तित्व के लिए सबसे महत्वपूर्ण स्थिति है—श्रम का सामाजिक विभाजन। तात्पर्य यह कि वस्तुओं का उत्पादन काम अलग-अलग लोगों या जन समूहों में बटा हुआ हो। मिसाल के लिए, लोगों का एक समूह कपड़ा बुनता है, दूसरा जूते बनाता है, तीसरा घरेलू वस्तुओं का उत्पादन करता है तो चौथा औजार बनाता है। स्पष्ट है कि लोगों के लिए अपनी व्यक्तिगत जरूरतों की सन्तुष्टि के लिए अपने श्रम फल का आपस में विनिमय करना जरूरी होता है। इस तरह से सभी उत्पादकों को मिलाकर एक बहुत बड़ी उत्पादन इकाई बनती है जिसके सदस्य आपस में एक-दूसरे पर निर्भर होते हैं।

वस्तु उत्पादन के उदय की स्थितियां

लेकिन श्रम का सामाजिक विभाजन वस्तु उत्पादन के अस्तित्व के लिए सिर्फ एक स्थिति है। दूसरी आवश्यक स्थिति है—समाज में उत्पादन के साधनों के विभिन्न स्वामियों का होना। एक उदाहरण लें। मान लें कि किसी व्यक्ति ने कोई वस्तु बनायी है। वह उस वस्तु को किसी के हाथ बेचना चाहता है। प्रश्न है कि क्या वह ऐसा कर सकता है ? उत्तर हां में है। लेकिन इसके साथ एक बात है कि उसे उस वस्तु के उत्पादन के लिए उत्पादन के जरूरी साधनों का स्वामी होना चाहिए। ऐसा होने पर ही वस्तु पर उसका अधिकार हो सकता है। उदाहरणस्वरूप, आदिम-समुदायों में श्रम विभाजन होने पर भी कोई वस्तु उत्पादन या वस्तु विनिमय नहीं होता था। समुदाय के सदस्य अपने श्रम के उत्पादनों की आपस में अदला बदली करते थे लेकिन बेचते नहीं थे। वे ऐसा इसलिए भी नहीं कर सकते थे कि उत्पादन के साधनों और श्रम के उत्पादनों पर सम्पूर्ण समुदाय का अधिकार था। यह अलग बात थी कि एक समुदाय की वस्तुओं का दूसरे समुदाय की वस्तुओं के साथ विनिमय होता था। स्वामित्व में परिवर्तन होने के कारण ही श्रम के उत्पादन ने वस्तु का रूप ले लिया।

अतः वस्तु उत्पादन का आधार श्रम का सामाजिक विभाजन और समाज में उत्पादन के साधनों के विभिन्न स्वामियों की उपस्थिति होता है। जब ये दोनों स्थितियां मौजूद रहती हैं तभी वस्तु उत्पादन और उत्पादकों का विनिमय क्रय विक्रय के रूप में जन्म लेता है।

साधारण वस्तु उत्पादन के आधार पर और निश्चित सामाजिक स्थितियों की मौजूदगी में ही पूंजीवादी वस्तु उत्पादन पनपता है।

साधारण वस्तु उत्पादन और पूंजीवादी वस्तु उत्पादन

साधारण वस्तु-उत्पादन के सबसे उपयुक्त प्रतिनिधि छोटे किसान और दस्तकार हैं। उनके उत्पादन का आधार उनका व्यक्तिगत श्रम है। वे अपने आप काम करते हैं। वे दूसरे का शोषण नहीं करते। प्रत्येक साधारण वस्तु उत्पादक अपने उत्पादन के साधनों का स्वामी होता है। वह अपने उपभोग के लिए नहीं, बल्कि बाजार में बिक्री के लिए वस्तुओं का उत्पादन करता है।

साधारण वस्तु उत्पादन का चरित्र दोहरा होता है। एक ओर निजी स्वामित्व पर आधारित होने के कारण छोटा किसान या दस्तकार सम्पत्ति वाला व्यक्ति होता है और वह पूंजीपति के नजदीक पड़ता है। दूसरी तरफ, साधारण वस्तु उत्पादन के व्यक्तिगत श्रम पर आधारित होने के कारण वह एक मेहनतकश भी होता है और वह सर्वहारा वर्ग के नजदीक पड़ता है। सर्वहारा वर्ग का भी उसकी तरह उत्पादन के साधनों पर अधिकार नहीं होता। स्पष्ट है कि इस मामले में सर्वहारा वर्ग और किसानों के हित समान होते हैं, फलस्वरूप उनकी एक दूसरे से मैत्री हो सकती है।

कुछ सामाजिक स्थितियों के अन्तर्गत साधारण वस्तु उत्पादन पूंजीवादी उत्पादन के उदय के लिए प्रस्थान बिन्दु और आधार हो सकता है। इसके लिए दो स्थितियों का होना आवश्यक है। पहली स्थिति है **उत्पादन के साधनों पर निजी स्वामित्व।** हमें मालूम है कि यह स्थिति आदिम समाज के अवसान काल में पैदा हुई। दूसरी स्थिति है **श्रम-शक्ति का वस्तु के रूप में परिवर्तन।** यह स्थिति सामन्तवादी समाज के विघटन-काल में उत्पन्न हुई।

साधारण वस्तु उत्पादन अस्थिर होता है क्योंकि किसानों और दस्तकारों के विभिन्न स्तरों में विभाजन की प्रक्रिया निरन्तर चलती रहती है। कुछ व्यक्ति (अल्पसंख्यक) धनी होते जाते हैं जबकि अन्य (बहुसंख्यक) गरीब होते जाते हैं। उपयुक्त स्थितियों में यह प्रक्रिया शहरों और गांवों में पूंजीपति वर्ग और सर्वहारा वर्ग को जन्म देती है।

साधारण वस्तु उत्पादन की भांति पूंजीवादी वस्तु उत्पादन भी श्रम के सामाजिक विभाजन और उत्पादन के साधनों के निजी स्वामित्व पर आधारित होता है लेकिन साथ ही वह उत्पादक के व्यक्तिगत श्रम पर आधारित न होकर उत्पादन के साधनों के मालिकों द्वारा भाड़े के मजदूरों के शोषण पर आधारित होता है। पूंजीवादी वस्तु-उत्पादन में उत्पादन के साधनों और मुद्रा राशि पर

अधिकार होने के कारण पूंजीपति स्वयं श्रम नही करता। वह मुद्रा राशि से श्रम शक्ति खरीदता है जिससे अपने उत्पादन के साधनों का इस्तेमाल कर सके। श्रम शक्ति के वस्तु के रूप में परिवर्तित होने का मतलब होता है कि पूंजीवाद के अंतर्गत वस्तु-उत्पादन और भी विकसित और व्यापक होता है। लेनिन ने लिखा कि वस्तु विनिमय 'पूंजीवादी (वस्तु) समाज का सरलतम मौलिक साधारणतम आम तौर पर और नित प्रति दिन का सम्बंध—ऐसा सम्बंध जिससे हजारों-लाखों बार वास्ता पड़ता है'[1] —प्रचलित प्रतीत होता है। अतः हमारे लिए पूंजीवादी अर्थव्यवस्था के इस प्रतिरूप—वस्तु की व्याख्या करना जरूरी है।

२ वस्तु और उसको उत्पन्न करने वाला श्रम

वस्तु का उपयोग मूल्य और मूल्य

वस्तु वह चीज है जो मानवीय आवश्यकताओं को संतुष्ट करती है और जिसका उत्पादन व्यक्तिगत उपयोग के लिए नहीं होकर विक्रय और विनिमय के लिए होता है।

अपने उपभोग के लिए सामग्रियों का उत्पादन करने वाला व्यक्ति केवल पदार्थ उत्पादित करता है वस्तु नहीं। पदार्थ तभी वस्तु बन सकता है जब वह किसी सामाजिक आवश्यकता को सन्तुष्ट करे या यों कहें कि जब समाज के अन्य सदस्यों द्वारा उस वस्तु की मांग को पूरा किया जाये।

वस्तु पर विचार करने से हम पाते हैं कि उसके दो अविच्छिन्न पहलू हैं। उसके दो गुणधर्म हैं—उपयोग मूल्य और मूल्य।

मानवीय आवश्यकता को संतुष्ट करने के गुण को उपयोग मूल्य कहते हैं। आवश्यकताएं भी कई विभिन्न रूप ले सकती हैं। कोई वस्तु प्रधान आवश्यकता हो सकती है—जैसे रोटी वस्त्र जूता। वह विलास की सामग्री भी हो सकती है—जैसे कीमती शराबें, आभूषण इत्यादि। वह उत्पादन का साधन भी बन सकती है—जैसे मशीन कोयला लोहा, इत्यादि।

किसी पदार्थ के एक से अधिक उपयोग मूल्य भी हो सकते हैं—जैसे कोयले का इस्तेमाल ईंधन के रूप में भी हो सकता है और रासायनिक पदार्थों के उत्पादन में कच्चे माल के रूप में भी।

समाज के ऐतिहासिक विकास के दौरान उत्पादक शक्तियों के विकास के फलस्वरूप उपयोग मूल्य (मनुष्य के लिए किसी चीज की उपयोगिता) का पता लगता है। कोयले को ही लें। कोयले के बारे में मनुष्य को आदिकाल

[1] लेनिन 'मार्क्स एंगेल्स मार्क्सवाद' मास्को पृष्ठ २७२।

से मालूम है, किन्तु ईंधन के रूप में इसका इस्तेमाल बहुत बाद में जाकर शुरू हुआ। विज्ञान और टेक्नालाजी के विकास में कोयले की एक और विशेषता के बारे में मालूम हुआ है। अब कोयला रसायन उद्योग में कच्चे माल के रूप में काम में लाया जा रहा है।

वस्तु उत्पादन के अन्तर्गत विभिन्न उपयोग मूल्यों का निरंतर निश्चित मात्रात्मक मात्रा में पारस्परिक विनिमय होता है। जैसे एक अनुपात में एक उपयोग-मूल्य का दूसरे उपयोग मूल्य के साथ विनिमय होता है, उसे वस्तु का विनिमय मूल्य कहते हैं। विनिमय मूल्य पर विचार करते समय दो प्रश्न उठते हैं १) किस आधार पर गुणतया भिन्न गुण वाली वस्तुओं को एक दूसरे के समतुल्य किया जाता है और २) विभिन्न वस्तुओं को एक-दूसरे के साथ क्यों एक निश्चित अनुपात—एक निश्चित मात्रा में समतुल्य किया जाता है? अगर दो असमान वस्तुओं को विनिमय के दौरान समतुल्य बनाया जा सकता है, तो इसका मतलब है कि उन दोनों वस्तुओं में कोई चीज समान रूप से उपस्थित है। ईसा पूर्व चौथी शताब्दी में प्रसिद्ध यूनानी दार्शनिक अरस्तू ने कहा था कि जिस तरह असमेय चीजों में पारस्परिक समानता स्थापित नहीं हो सकती उसी तरह बिना समानता के विनिमय असम्भव है।

साधारणतया सभी वस्तुओं में निम्नलिखित गुणधर्म विभिन्न मात्रा में मौजूद होते हैं: उपयोगिता, माग और पूर्ति का विषय बनने की क्षमता, विरलता और श्रम।

इनमें कौन-सा गुणधर्म वस्तुओं का मूल्य निर्धारित करता है?

पहली नजर में उपयोगिता ही वस्तु के मूल्य का कारण प्रतीत हो सकती है। कोई वस्तु जितनी ही उपयोगी होती है, उसका मूल्य उतना ही अधिक होता है। लेकिन वास्तव में हम हर कदम पर पाते हैं कि उपयोगिता मूल्य का निर्धारण नहीं करती। बहुधा अत्यन्त उपयोगी वस्तुओं के लिए हमें कुछ भी नहीं करना पड़ता (जैसे हवा), या बहुत कम व्यय करना पड़ता है (जैसे पानी)। दूसरी तरफ कई ऐसी वस्तुएं हैं जिनका व्यक्तिगत उपयोग नाम का है, लेकिन उनकी कीमत बहुत अधिक होती है (जैसे हीरा)। सचमुच अगर वस्तुओं का मूल्य उनकी उपयोगिता की मात्रा पर निर्भर करता, तो रोटी और पानी हीरा से भी ज्यादा मूल्यवान होते। अतः उपयोगिता या उपयोग-मूल्य मूल्य के कारण नहीं, बल्कि एक आवश्यक स्थिति मात्र हैं। मूल्य उपयोग मूल्य के बिना नहीं हो सकता लेकिन उपयोग मूल्य के लिए मूल्य का होना आवश्यक है (जैसे हवा का उपयोग मूल्य काफी अधिक है जबकि उसका कोई मूल्य नहीं है)।

तब क्या मांग और पूर्ति मूल्य निर्धारण कर सकती है ? पहली नजर में लगता है कि ऐसा सम्भव है। यह सामान्य ज्ञान की बात है कि वस्तुओं की मांग जितनी ही अधिक होती है उनका मूल्य भी उतना ही अधिक होता है और दूसरी तरफ उनकी पूर्ति जितनी ही ज्यादा होती है बाजार में उनका मूल्य उतना ही कम होता है।

अगर हम इस प्रश्न के मूल में जायें तो यह स्पष्ट हो जायेगा कि वस्तुओं का मूल्य मांग और पूर्ति पर निर्भर नहीं होता। उदाहरण के लिए पानी और नमक को ले सकते हैं। इन वस्तुओं पर मांग और पूर्ति का नियम लागू होता है। अगर उनकी मांग और पूर्ति समान है तब भी १ किलोग्राम पानी का मूल्य १ किलोग्राम नमक के मूल्य से काफी अधिक होगा। इसका मतलब है कि मांग और पूर्ति का मूल्य के साथ कोई सम्बंध नहीं है। यह सच है कि मांग और पूर्ति की मात्रा के कारण वस्तुओं की कीमतों में अन्तर आ सकता है लेकिन यह मूल्य की मात्रा को निर्धारित नहीं करती। हां मांग और पूर्ति की मात्रा किसी वस्तु के मूल्य की तुलना में उसकी बाजार-कीमत के उतार चढ़ाव को दिखलाती है। किसी वस्तु की मांग बढ़ने लेकिन पूर्ति घटने पर बाजार में उसकी कीमत उसके मूल्य से अधिक हो जाती है। इसी तरह वस्तु की मांग घटने और पूर्ति बढ़ने पर उसकी बाजार-कीमत उसके मूल्य से कम हो जाती है। जब मांग और पूर्ति बराबर हो जाती हैं तब कीमत और मूल्य भी बराबर हो जाते हैं। लेकिन इस तरह की अवस्था पूंजीवादी वस्तु उत्पादन के अन्तर्गत शायद ही आती है। इसका मतलब यह है कि मांग और पूर्ति किसी वस्तु का मूल्य निर्धारित नहीं करता।

तब क्या वस्तु की विरलता उसके मूल्य को निर्धारित कर सकती है ? हमारे व्यावहारिक उदाहरणों को देखने से लगता है कि ऐसा हो सकता है। उदाहरण के लिए सोना, हीरा और रोटी को देखें। सोना और हीरा विरल होने के साथ ही कीमती भी हैं। रोटी अधिक मात्रा में प्राप्त है। उसकी मांग भी अधिक है लेकिन तो भी वह काफी सस्ती है। किन्तु इसका यह मतलब नहीं हुआ कि विरलता ही मूल्य में कमी बेशी का कारण है। किसी अनावृष्टि वाले साल में लोग वर्षा के लिए काफी व्याकुल रहते हैं यानी वर्षा की मांग बहुत अधिक होती है। लेकिन वर्षा की विरलता उपयोगिता और मांग के बावजूद उसका मुद्रा के रूप में अभिव्यक्त हो सकने वाला कोई मूल्य नहीं होता।

अतः न उपयोगिता, न मांग और पूर्ति का विषय बनने की क्षमता और न ही विरलता वस्तु के मूल्य के कारण हैं। केवल श्रम ही मूल्य का एकमात्र वास्तविक आधार या मार्क्स के शब्दों में मूल तत्व है। किसी वस्तु के उत्पादन

के लिए श्रम की जितनी ही अधिक मात्रा की आवश्यकता होगी, उसका मूल्य उतना ही अधिक होगा, या यों कहें कि वह वस्तु उतनी ही कीमती होगी। सोना कोयले से अधिक कीमती है क्योंकि सोने के पूर्वेक्षण और उसे फालतू सम्मिश्रणों से अलग करने में कोयले की उतनी ही मात्रा के खनन-व्यय से अधिक खर्च पड़ता है।

सभी वस्तुएं मानव श्रम का परिणाम होती हैं। प्रत्येक वस्तु में श्रम की एक निश्चित मात्रा निहित होने के कारण वस्तुएं आपस में तुलनीय हैं। चूंकि वस्तुएं श्रम द्वारा उत्पन्न होती हैं इसलिए उनका मूल्य भी होता है।

मूल्य वस्तु में निहित वस्तु उत्पादकों का सामाजिक श्रम होता है। "निहित" शब्द यह सकेत करता है कि श्रम भी वस्तु में शामिल होता है। मतलब यह हुआ कि श्रम ने पदार्थ या वस्तु का रूप ले लिया है। जिन अनुपातों में वस्तुओं का विनिमय होता है वे मूल्य की अभिव्यक्ति के रूप का काम करते हैं। वे बतलाते हैं कि विनिमय की जाने वाली वस्तुओं पर श्रम की समान मात्रा लगायी गयी है और वे मूल्य की दृष्टि से समरूप हैं।

किसी वस्तु का मूल्य एक सामाजिक प्रवर्ग होता है जिसे देखा नहीं जा सकता, लेकिन जब एक वस्तु का दूसरी वस्तु के साथ विनिमय होता है या जब एक वस्तु को दूसरी वस्तु के समतुल्य किया जाता है तब उसे महसूस किया जाता है। इसीलिए लेनिन ने कहा कि "मूल्य दो व्यक्तियों के बीच का सम्बंध है ऐसा सम्बंध जो वस्तुओं के आपसी सम्बंध के रूप में छिपा है।"[1]

उपयोग मूल्य सदा रहा है और सदा रहेगा। मूल्य के आकार के रूप में वस्तु का आविर्भाव समाज विकास के एक निश्चित दौर में हुआ जब वस्तु-उत्पादन और विनिमय ने जन्म ले लिया था। वस्तु उत्पादन के लुप्त हो जाने पर वस्तु मूल्य भी नहीं रहेगा। इसका मतलब यह हुआ कि मूल्य एक साथ ही सामाजिक और ऐतिहासिक प्रवर्ग है यानी वह समाज विकास के एक निश्चित दौर में ही उपस्थित होता है।

वस्तु में यद्यपि दो पहलुओं (उपयोग मूल्य और मूल्य) का मेल होता है किन्तु यह मेल परस्पर विरोधी है।

उपयोग मूल्यों के रूप में वस्तुओं में गुणात्मक विविधता (गेहूं कपड़ा लोहा इत्यादि) दिखायी देती है किन्तु मूल्य की दृष्टि से वे एक ही चीज हैं (क्योंकि मनुष्य अपने श्रम के द्वारा सबका उत्पादन करता है)।

उपयोग मूल्यों के रूप में वस्तुओं का इस्तेमाल उपभोग के लिए और मूल्यों के रूप में उनका इस्तेमाल बिक्री के लिए होता है।

---

१ लेनिन 'मार्क्स एंगेल्स मार्क्सवाद', पृष्ठ ३३।

वस्तु उत्पादक की दिलचस्पी वस्तु के मूल्य म होती है (उपयोग मूल्य मे नही) किन्तु वस्तु के लिए मूल्य मिले इसलिए उसम उपयोग मूल्य का होना जरूरी है यानी वस्तु क लिए माग होनी चाहिए।

किसी वस्तु का उपयोग मूल्य गोचर और उसका मूल्य अगोचर होता है। किसी वस्तु के उपयोग मूल्य और मूल्य म यही अतर होता है।

हमने ऊपर यह स्पष्ट कर दिया है कि वस्तु के दो गुणधम होते हैं। उसमे उपयोग मूल्य और मूल्य का सामजस्य होता है।

अब प्रश्न उठता है कि वस्तु का यह दोहरा चरित्र किस कारण से है ?

वस्तु के दोहरे चरित्र का निर्धारण वस्तु को उत्पन्न

मूत और अमूत श्रम करने वाले श्रम के दोहरे चरित्र के कारण होता है।

वस्तु म निहित उत्पादक का श्रम एक तरफ तो मूत श्रम के रूप म और दूसरी ओर अमूत श्रम के रूप म नजर आता है।

मूत श्रम वह श्रम है जिसे एक निश्चित कालोचित और उपयोगी रूप मे व्यय किया जाता है। कोई व्यक्ति एक साथ सभी काम नही कर सकता। वह मोची, किसान खनक या इसी तरह का कोई काम करता है।

विभिन्न तरह के श्रम मे गुण, कौशल, काय विधि औजार, व्यवहृत सामान और अन्तिम परिणाम यानी उत्पादन और उपयोग मूल्य की दृष्टि से भिन्नता होती है। मूत श्रम ही किसी वस्तु के उपयोग मूल्य का सजन करता है।

अगर हम विभिन्न प्रकार के श्रम को ध्यान स देख तो हमे सबम एक समान विशेषता—मानव श्रम का व्यय (यानी मासपेशियो मस्तिष्क तत्रिकाओ इत्यादि का व्यय)—दिखायी देती है। अगर श्रम को उसके मूत रूप से अलग करके मानवीय श्रम के रूप मे देखें तो हम अमूत श्रम पायगे। अमूत श्रम ही वस्तु के मूल्य का रूप ले लेता है।

मूत श्रम जो उपयोग मूल्य का सृजन करता है सदा ससार म विद्यमान रहा है और सदा विद्यमान रहेगा। वस्तु उत्पादन की उपस्थिति या अनुपस्थिति का इसके अस्तित्व पर कोई असर नही पडता। किन्तु अमूत श्रम सिफ वस्तु उत्पादन की ही विशेषता है। वस्तु उत्पादन (जहा वस्तुओ का उत्पादन बिक्री के लिए होता है) की उपस्थिति के कारण ही विभिन्न प्रकार के मूत श्रम समरूप अमूत्त श्रम या सामान्य श्रम के रूप में परिवर्तित हो पाते हैं। मान लें कि कोई उत्पादक एक जोडे जूते बनाकर बाजार म ले जाता है तो प्रश्न यह है कि वह जूतो का रोटी के साथ किस प्रकार विनिमय करेगा ? उपयोग मूल्य की दृष्टि से इन वस्तुओ की तुलना नही हो सकती। उनकी तुलना उन पर

व्यय किये गये श्रम की दृष्टि से हो सकती है। अगर मोची एक जोड़े जूते का विनिमय १०० किलोग्राम अनाज से साथ करता है, तो इसका मतलब यह हुआ कि एक जोड़े जूते और १०० किलोग्राम अनाज के उत्पादन में अमूर्त श्रम की समान मात्रा व्यय हुई है। अगर जूते का निर्माण मोची विनिमय के लिए न कर अपने घरेलू इस्तेमाल के लिए करता है, तो उसमें निहित श्रम की मात्रा का निर्धारण अनावश्यक है। वस्तु उत्पादन की अनुपस्थिति में अमूर्त श्रम का प्रवर्ग भी लुप्त हो जायगा।

वस्तु उत्पादन के अन्तर्गत मूर्त और अमूर्त श्रम के बीच एक असाध्य अन्तर्विरोध होता है जो प्रकट रूप में निजी और सामाजिक श्रम के अन्तर्विरोध के रूप में दिखायी देता है।

वस्तु उत्पादन के अन्तर्गत प्रत्येक उत्पादक एक विशेष प्रकार की वस्तु का ही उत्पादन करता है। समाज में श्रम विभाजन रहता है और यह विभाजन जितना ही सूक्ष्म होता है उत्पादन की शाखाएं उतनी ही अधिक होती हैं तथा वस्तु उत्पादकों को आपस में सम्बद्ध करने वाली कड़ियां भी उतनी ही अधिक व्यापक होती हैं और वे एक दूसरे पर उतने ही ज्यादा निर्भर होते हैं। प्रायः प्रत्येक वस्तु के उत्पादन के लिए अलग-अलग व्यवसायों में लगे बीसियों क्या सैकड़ों लोगों की जरूरत होती है। इसका मतलब यह है कि प्रत्येक वस्तु-उत्पादक का श्रम समाज के श्रम का ही एक अंग होता है अतः उसका चरित्र सामाजिक होता है।

निजी और सामाजिक श्रम

ऐसे समाज में जहां उत्पादन के साधनों पर निजी स्वामित्व होता है, वस्तु उत्पादक एक दूसरे से स्वतंत्र उत्पादन कार्य में लगे होते हैं। उनके बीच एकता का अभाव होता है। इसलिए मूलतः सामाजिक श्रम होते हुए भी उनका श्रम निजी श्रम का रूप ले लेता है। यहां श्रम का सामाजिक चरित्र गुप्त रहता है, सिर्फ बाजार में वस्तुओं के विनिमय के समय ही वह परिलक्षित होता है। वस्तुओं के विनिमय यानी बाजार में उनके क्रय विक्रय के समय यह स्पष्ट होता है कि वस्तु-उत्पादक का निजी श्रम सामाजिक श्रम का ही एक अंग है क्योंकि समाज उसकी अपेक्षा करता है।

वस्तु उत्पादकों का श्रम प्रत्यक्षतः निजी होने के साथ ही सामाजिक भी होता है। अतः साधारण वस्तु-अर्थव्यवस्था में एक महत्वपूर्ण अंतर्विरोध—निजी और सामाजिक श्रम का अंतर्विरोध—जन्म लेता है। यह अंतर्विरोध विनिमय के दौरान प्रकट होता है। बाजार में वस्तुओं को ले जाने के बाद कुछ उत्पादक अपनी वस्तुओं को बेच लेते हैं, जबकि कई अन्य इसमें विफल होते

हैं। उनकी विफलता का कारण बाजार में उनकी वस्तुओं के लिए माग की कमी हो सकती है या उनकी वस्तुओ की ऊची कीमत हो सकती है। अगर कोई उत्पादक बाजार में अपनी वस्तु को नही बेच पाता, तो इसका मतलब है कि उसके निजी श्रम को सामाजिक मान्यता प्राप्त नही है। इससे उत्पादक को घाटा सहना पडता है। अगर यही बात बहुधा होती रहे, तो वह बर्बाद हो जाता है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि निजी और सामाजिक श्रम के अन्तर्विरोध के कारण ही कुछ उत्पादकों की बर्बादी और कुछ की समृद्धि होती है।

चूकि श्रम वस्तु में मूल्य का सृजन करता है, इसलिए उसके मूल्य का परिमाण वस्तु में निहित श्रम की मात्रा से मापा जाता है। ऐसा बहुधा देखने में आता है कि समरूप वस्तुओं के उत्पादन के लिए उत्पादक श्रम की भिन्न मात्राए लगाते हैं। अत किसी वस्तु के मूल्य का परिमाण उस वस्तु के उत्पादन के लिए उत्पादक विशेष द्वारा व्यय किये गये श्रम की मात्रा से नही मापा जा सकता। अगर किसी वस्तु के मूल्य के परिमाण को अलग अलग उत्पादकों द्वारा व्यय किये गये श्रम की मात्रा से निर्धारित किया जाये, तो उस वस्तु के मूल्य का कोई एक निश्चित परिमाण प्राप्त नही होगा। विनिमय में समरूप वस्तुओं का मूल्य समान होता है। किसी वस्तु के मूल्य का परिमाण प्रत्येक उत्पादक द्वारा व्यय किये गये व्यक्तिगत श्रम की मात्रा से निर्धारित नही होता बल्कि उस वस्तु के उत्पादन के लिए सामाजिक तौर पर आवश्यक श्रम काल से होता है।

वस्तुओं के मूल्य का परिमाण

सामाजिक तौर पर आवश्यक श्रम काल वह समय है जो उत्पादन की किसी शाखा में उत्पादन की औसत सामाजिक स्थितियों (औसत तकनीकी साज सामान उत्पादकों की औसत दक्षता और श्रम की तीव्रता) के अंतर्गत किसी वस्तु के उत्पादन के लिए आवश्यक होता है। आम तौर पर सामाजिक तौर पर आवश्यक श्रम-काल का निर्धारण उत्पादन की उन स्थितियों से होता है जिनमे किसी वस्तु विशेष की सबसे बडी मात्रा उत्पन्न की जाती है।

सामाजिक तौर पर आवश्यक श्रम काल निरंतर परिवर्तित होता रहता है, अतएव मूल्य का परिमाण भी बदलता रहता है। सामाजिक तौर पर आवश्यक श्रम काल में यह परिवर्तन श्रम की उत्पादकता में परिवर्तन आने के कारण होता है। श्रम उत्पादकता श्रम काल की किसी निश्चित इकाई के दौरान उत्पन्न वस्तु की मात्रा के रूप मे अभिव्यक्त होती है। उत्पादकता में वृद्धि का मतलब साधारण रूप से श्रम की प्रक्रिया में उस परिवर्तन से है जो

प्रति वस्तु इकाई श्रम के व्यय को कम करता है। किसी समाज मे उत्पादकता जितनी ही अधिक होगी, (यानी समय की एक निश्चित इकाई के दौरान अन्तिम तौर पर तयार वस्तुओ की मात्रा जितनी ही अधिक होगी) वस्तु का मूल्य उतना ही कम होगा। इसी तरह सामाजिक श्रम की उत्पादकता के कम होने पर किसी वस्तु के उत्पादन के लिए सामाजिक तौर पर आवश्यक वस्तु को तयार करने मे लगने वाला श्रम कम होता है। उत्पादकता जितनी ही ज्यादा होती है समय की एक निश्चित इकाई के दौरान तयार वस्तुओ की मात्रा उतनी ही अधिक होती है और वस्तुओ का मूल्य उतना ही कम होता है। दूसरी ओर सामाजिक श्रम की उत्पादकता जितनी ही कम होती है वस्तु को तयार करने के लिए सामाजिक तौर पर आवश्यक श्रम-काल उतना ही ज्यादा लगता है और वस्तु का मूल्य भी उतना ही अधिक होता है। अतएव यह कहा जाता है कि श्रम उत्पादकता और प्रत्येक वस्तु का मूल्य एक-दूसरे पर प्रति लोमत अवलम्बित होते हैं।

अगर श्रम उत्पादकता बढती है, तो वस्तु का प्रति इकाई मूल्य कम हो जाता है। इसके ठीक विपरीत अगर श्रम उत्पादकता मे कमी आती है तो वस्तु का प्रति इकाई मूल्य बढ जाता है।

श्रम उत्पादकता को श्रम की तीव्रता समझ लेना भूल है। श्रम की तीव्रता प्रति इकाई समय के दौरान व्यय किये गये श्रम की मात्रा के रूप मे अभिव्यक्त होती है। किसी निश्चित समय-अन्तराल के दौरान श्रम का जितना ही अधिक व्यय होता है वस्तुओ की उतनी ही अधिक सख्या का निर्माण होता है। पर श्रम की एक बडी मात्रा का वितरण वस्तुओं की बहुत बडी सख्या पर होने के कारण किसी एक वस्तु के मूल्य म परिवतन नही होता।

वस्तु के मूल्य का परिमाण श्रम की जटिलता की मात्रा से प्रभावित होता है। इसका मतलब यह हुआ कि मूल्य का परिमाण इस बात पर भी निभर करता है कि श्रम कुशल है या अकुशल। जिस मजदूर को कोई विशेष प्रशिक्षण प्राप्त नही होता, उसके श्रम को साधारण श्रम या अकुशल श्रम कहते हैं। जिस श्रम के लिए विशेष प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है, उस जटिल या कुशल श्रम कहते हैं। जटिल श्रम साधारण श्रम की अपेक्षा प्रति समय इकाई म अधिक मूल्य का सजन करता है। इसीलिए मार्क्स ने कहा है कि जटिल श्रम और साधारण श्रम म सिर्फ मात्रात्मक अन्तर होता है।

निजी सम्पत्ति पर आधारित वस्तु उत्पादन के अन्तगत विभिन्न प्रकार के श्रम को—भिन्न कुशलता के श्रम और भिन्न उत्पादकता वाले श्रम को—एक मापदण्ड यानी अमूत श्रम (जो वस्तु के मूल्य का सजन करता है) के रूप म

परिवर्तित करने का काय बाजार म वस्तु की बिक्री के समय अपने आप होता रहता है। मूल्य वस्तु उत्पादकों के पारस्परिक सम्बधों को, उनके क्रिया-कलापों के पारस्परिक आदान प्रदान को अभिव्यक्त करता है। पर ऊपरी तौर पर ये सम्बध चीजों के आपसी सम्बध प्रतीत होते हैं।

३ विनिमय का विकास और मूल्य के रूप

वस्तुओं के मूल्य का सजन उनको उत्पन्न करने के लिए व्यय किये गये श्रम से होता है। विनिमय की प्रक्रिया में जब एक वस्तु की तुलना दूसरी वस्तु से की जाती है, तभी उनके मूल्य अपने को अभिव्यक्त करते हैं। इस तरह मूल्य विनिमय मूल्य के रूप म अभिव्यक्त होता है। एक कुल्हाडी का मूल्य प्रत्यक्षत श्रम काल के रूप मे अभिव्यक्त नही हो सकता। उसका मूल्य दूसरी वस्तु की इकाइयों के रूप मे अभिव्यक्त हो सकता है। मान लें कि एक कुल्हाडी २० किलोग्राम अनाज के बराबर है। यहा अनाज कुल्हाडी के मूल्य की अभिव्यक्ति का माध्यम है। उपयुक्त समीकरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि २० किलोग्राम अनाज और एक कुल्हाडी के उत्पादन के लिए श्रम की बराबर मात्रा व्यय की गयी है। जब कोई वस्तु (यहा कुल्हाडी) अपना मूल्य किसी दूसरी वस्तु के माध्यम से अभिव्यक्त करती है तब इस अभिव्यक्ति को पहली वस्तु के मूल्य का सापेक्ष रूप कहते हैं। उस वस्तु (यहा अनाज) को जिसका उपयोग मूल्य किसी अन्य वस्तु के मूल्य की अभिव्यक्ति के लिए माध्यम का काम करता है मूल्य का तुल्य रूप कहते हैं।

विनिमय मूल्य—वह रूप जिसमे मूल्य अपने आपको अभिव्यक्त करता है

विनिमय मूल्य ने ऐतिहासिक विकास के लम्बे मार्ग को (मूल्य के प्रारम्भिक या आकस्मिक रूप से लेकर मौद्रिक रूप तक) तय किया है।

प्राकृतिक अर्थव्यवस्था म लोग सामग्रियों का उत्पादन विनिमय के लिए नही, बल्कि व्यक्तिगत उपभोग के लिए करते थे। केवल संयोगवश संचित अधिशेष उत्पादनों का ही विनिमय किया जाता था। विनिमय की जाने वाली सामग्रियों की मात्रा सीमित थी। एक वस्तु का विनिमय किसी दूसरी वस्तु के रूप म प्रत्यक्ष रूप से होता था। इस तरह पहली वस्तु का मूल्य दूसरी वस्तु के रूप म अभिव्यक्त होता था। उदाहरण के तौर पर, मान लें कि १ कुल्हाडी २० किलोग्राम अनाज के बराबर है या २० मीटर कपड़ा १

मूल्य का प्रारम्भिक रूप

नोट के बराबर है। जब तक विनिमय का चरित्र आकस्मिक या प्रायोगिक था, वस्तुओं के मूल्य का परिमाण समान नहीं होता था। इस स्थिति में हम मूल्य का प्रारम्भिक, एकाकी या आकस्मिक रूप पाते हैं।

आदिम समाज के अन्तर्गत प्रथम सामाजिक श्रम विभाजन—पशुचारी कबीलों के खेती में लगे लोगों से अलगाव—के बाद विनिमय के दायरे में मवेशी, अनाज, इत्यादि आये और विनिमय नियमित हो गया।

मूल्य का सम्पूर्ण या विस्तारित रूप

विनिमय के दौरान यह भी स्पष्ट हो गया कि बहुसंख्यक लोग एक वस्तु विशेष की कामना करते हैं। आम तौर पर यह वस्तु विशेष मवेशी थे। विनिमय की प्रक्रिया में मवेशियों को अन्य वस्तुओं के समतुल्य किया जाता था और फिर विनिमय होता था। मिसाल के लिए,

१ भेड़ { = ४० किलोग्राम अनाज
या
= २० मीटर कपड़ा
या
= २ कुल्हाड़ी
या
= ३ ग्राम सोना, इत्यादि।

इस रूप को जिसमें किसी एक वस्तु का मूल्य कई वस्तुओं के माध्यम से व्यक्त किया जा सकता है मूल्य का सम्पूर्ण या विस्तारित रूप कहते हैं।

वस्तु-उत्पादन और विनिमय के विकास के साथ एक वस्तु विशेष की माग बढ़ गयी। सभी वस्तुओं का मूल्य एक ही वस्तु के रूप में अभिव्यक्त होने लगा।

मूल्य का सर्वव्यापी रूप

यह वस्तु जो बहुत-सी अन्य वस्तुओं के मूल्य की अभिव्यक्ति के माध्यम का काम करती है, *सर्वव्यापी तुल्य का हिस्सा अदा करती है।* यह वस्तु मूल्य की दृष्टि से अन्य सभी वस्तुओं के बराबर होती है। सर्वव्यापी तुल्य के उदय के फलस्वरूप मूल्य के विस्तारित रूप का मूल्य के सर्वव्यापी रूप में संक्रमण हुआ। इसे इस प्रकार अभिव्यक्त किया जा सकता है

४० किलोग्राम अनाज =
या
२० मीटर कपड़ा =
या
२ कुल्हाड़ी =
या
३ ग्राम सोना, इत्यादि = }

इस संक्रमण के कारण वस्तुओं का परिचलन शुरू हुआ। विनिमय की प्रत्येक क्रिया के दो चरण होते हैं क्रय और विक्रय। अब तक सर्वव्यापी तुल्य का काम कोई एक वस्तु नहीं करती थी। कई स्थानों में मवेशी सर्वव्यापी तुल्य की भूमिका अदा करते थे और कई अन्य जगहों पर नमक और पशुओं की खालें। इसी तरह भिन्न जगहों पर भिन्न वस्तुएं सर्वव्यापी तुल्य थीं।

कई वस्तुओं के सर्वव्यापी तुल्य के रूप में प्रयुक्त होने के कारण विनिमय का विकास अवरुद्ध हो गया तथा विकासशील बाजार की आवश्यकताओं और इस पद्धति में विरोध पैदा हो गया। अतः एक तुल्य की ओर संक्रमण आवश्यक हो गया। कीमती धातुओं को—चांदी और सोना को सर्वव्यापी तुल्य का स्थान देकर इस विरोध का हल किया गया।

मूल्य का मौद्रिक रूप सर्वव्यापी तुल्य के रूप में स्वर्ण के प्रयुक्त होने के परिणामस्वरूप मूल्य का मौद्रिक रूप प्रकट हुआ। इसे इस प्रकार अभिव्यक्त किया जा सकता है

४० किलोग्राम अनाज	=	३ ग्राम सोना
या		
२० मीटर कपड़ा	=	
या		
२ कुल्हाड़ी	=	
या		
१ भेड़ इत्यादि	=	

श्रम के द्वितीय महत्वपूर्ण सामाजिक विभाजन यानी दस्तकारी का कृषि से अलगाव के बाद मूल्य का मौद्रिक रूप सामने आया। सोना और चांदी अपनी खास विशेषताओं (समजातीयता, विभाज्यता, स्थायित्व, सुगठित आकार इत्यादि) के कारण मुद्रा के रूप में दृढ़ रूप से स्थापित हो गये। मुद्रा वह वस्तु है जो सभी अन्य वस्तुओं के मूल्य की अभिव्यक्ति का सामाजिक कार्य करती है। मुद्रा के उदय के बाद अन्य सभी वस्तुओं का मूल्य मुद्रा के रूप में मापा जाने लगा।

४ मुद्रा

मुद्रा का स्वभाव और उसके कार्य वस्तु उत्पादन और विनिमय के ऐतिहासिक विकास के दौरान मुद्रा का जन्म स्वतः हुआ। ऊपर में हम देख चुके हैं कि मूल्य के रूपों के विकास में, जिसकी शुरुआत अति साधारण चीजों में हुई थी, मूल्य के मौद्रिक रूप और स्वयं मुद्रा को जन्म दिया।

सोना और चादी, धातु के ढले हुए सिक्के या उनके स्थान पर कागजी मुद्रा का प्रयोग मुद्रा के रूप मे होता है। इस मुद्रा का प्रचलन एकाएक प्रारम्भ नही हुआ। यह तो एक दीघकालीन विकास का फल था। सवप्रथम विनिमय के माध्यम के रूप म बहुधा प्रयुक्त होने वाली वस्तु को अलग कर लिया गया।

विभिन्न समयो मे जानवरो की खाल, मवेशी, चमडा अनाज, नमक, आदि का प्रयोग मुद्रा के रूप म किया गया। कभी एक और कभी दूसरी वस्तु ने मुद्रा की भूमिका अदा की। वस्तु अथव्यवस्था के लम्बे विकास के फल स्वरूप सोना ही मुद्रा का काय सम्पादित करने लगा और इस तरह स्वण के साथ मुद्रा की भूमिका सम्बद्ध हो गयी। १६वी शताब्दी के दौरान बहुसख्यक देशा म सोना मुद्रा का काय करने लगा था।

एक विकसित अथव्यवस्था मे मुद्रा निम्नलिखित काय करती है वस्तुओ के मूल्यो की माप, प्रचलन का माध्यम सचय या निसचय का माध्यम भुगतान का माध्यम और सवव्यापी मुद्रा का काय। अब हम एक एक कर इन पर विचार करेंगे।

मुद्रा का बुनियादी काय मूल्य की माप है। सभी वस्तुओ का मूल्य मुद्रा के रूप म मापा जाता है। इस काय को सम्पादित करने के लिए आवश्यक है कि मुद्रा का अपना भी कोई मूल्य हो। उदाहरण के लिए किसी वस्तु का वजन एक लोहे के बाट द्वारा मापा जा सकता है, क्योकि लोहे के बाट का भी अपना वजन होता है। इसी तरह से किसी वस्तु के मूल्य को मापने के लिए आवश्यक है कि जिस वस्तु से उसे मापा जाये उसका भी कोई मूल्य हो।

वस्तु के मूल्य की माप स्वण के माध्यम से हो सकती है। किसी वस्तु के लिए निश्चित कीमत निर्धारित करने के उद्देश्य से उसका मालिक दिमागी तौर पर (या जैसा माक्स कहते हैं वैचारिक तौर पर) उस वस्तु का मूल्य सोना के रूप म अभिव्यक्त करता है। चूकि सोने के मूल्य और किसी वस्तु के मूल्य मे सदा एक निश्चित सम्बध रहता है, इसीलिए उस वस्तु को सोने की एक निश्चित मात्रा के साथ समतुल्य करना सम्भव है। इस सम्बध का आधार होता है स्वण और उस वस्तु का उत्पन्न करने के लिए व्यय की गयी सामाजिक तौर पर आवश्यक श्रम की मात्रा।

वस्तु के मूल्य की मुद्रा के रूप मे अभिव्यक्ति को उस वस्तु की कीमत कहते हैं। अत कीमत किसी वस्तु के मूल्य की मौद्रिक अभिव्यक्ति है।

सोने और चादी की निश्चित मात्रा के रूप म वस्तु अपने मूल्य को अभिव्यक्त करती है। मौद्रिक वस्तु की इन मात्राओ की माप आवश्यक है। मुद्रा के लिए प्रयुक्त धातु की एक निश्चित मात्रा ही मुद्रा की माप की एक

इकाई होती है। अमरीका म मुद्रा की इकाई को डालर ब्रिटेन म पौंड स्टर्लिंग और फ्रास मे फ्रक कहते हैं। सुविधा के लिए इन मौद्रिक इकाइयों का विभाजन अशेष भाजक हिस्सो मे किया गया है। डालर को १०० सट के रूप मे फ्रक को १०० से टाइम्स के रूप म तथा पौंड स्टर्लिंग को २० शिलिंग और १ शिलिंग को १२ पस के रूप मे बाटा गया है।

मुद्रा की इकाई और उसके हिस्से कीमत के मानक के रूप मे काय करते है।

मुद्रा का दूसरा काय प्रचलन माध्यम का होता है। मुद्रा के जन्म के पहले वस्तुओ का साधारण विनिमय होता था। एक वस्तु का दूसरी वस्तु के साथ प्रत्यक्ष विनिमय या अदला बदली होती थी। मुद्रा के जन्म के उपरान्त मुद्रा की सहायता से एक वस्तु का दूसरी वस्तु के साथ विनिमय होने लगा। सवप्रथम वस्तु का विनिमय मुद्रा के साथ होता है और फिर मुद्रा का उपयोग किसी अन्य वस्तु को खरीदने के लिए किया जाता है। मुद्रा की सहायता से होने वाले वस्तु विनिमय को वस्तुचलन (वस्तु—मुद्रा—वस्तु) कहते हैं। यहा ध्यान देने की बात यह है कि वस्तु ग्राहक के हाथो म आते ही प्रचलन क्षेत्र को छोड देती है, लेकिन मुद्रा निर तर प्रचलन क्षेत्र मे रहती है। मुद्रा पहले चरण म तो ग्राहक के पास से निकलकर विक्रेता के हाथो म आ जाती है और दूसरे चरण म फिर विक्रेता के पास से ग्राहक के पास चली जाती है। इस तरह मुद्रा वस्तुओ के प्रचलन म माध्यम का काय करती है। इस काय को सम्पादित करने के लिए मुद्रा की वास्तविक उपस्थिति आवश्यक होती है।

प्रारम्भ म जब वस्तुओ का विनिमय शुरू हुआ, तब मुद्रा ने सोने या चादी की छडो का रूप लिया। लेकिन इससे कई कठिनाइया खडी हो गयी। हर बार छडो को तोलना होता था और उनके छोटे टुकडो को तोडकर शुद्धता की परीक्षा करनी पडती थी। अत धीरे धीरे सोने या चादी की छडो का स्थान सिक्का ने ले लिया। सिक्को की ढलाई का काम राज्य ने अपने हाथो मे ले लिया। प्रत्येक सिक्का एक निश्चित आकार और वजन वाला धातु का टुकडा होता है।

प्रचलन की प्रक्रिया मे सिक्के घिस जाते हैं और अपने मूल्य का एक हिस्सा खो देते है। लेकिन व्यवहार मे घिसे हुए सिक्को और नये सिक्को मे कोई भेद नही किया जाता। यह इसलिए होता है कि प्रचलन के माध्यम के रूप म मुद्रा क्रेता और विक्रेता के हाथा म बहुत दिना तक नही ठहरती। वस्तु उत्पादक को इस बात की फिक्र नही रहती कि उसे पूरे मूल्य की मुद्रा मिली है या नही, क्योकि उस मुद्रा को वह तुरन्त ही अपनी जरूरत की अन्य वस्तुओ

पर खर्च करना है। अतः चलन माध्यम का काय अपूर्ण मूल्य की धातु मुद्रा या कागजी मुद्रा से भी हो सकता है।

वस्तु अर्थव्यवस्था के विकास के साथ मुद्रा संचय और निसंचय के माध्यम का भी काय करने लगी। मुद्रा धन का एक सर्वव्यापी मूर्तिमान रूप है। मुद्रा के द्वारा कोई भी वस्तु प्राप्त की जा सकती है। वस्तु उत्पादक मुद्रा का संचय आवश्यकता की वस्तुओं को खरीदने के लिए करते हैं। यह काय पूर्ण मूल्य वाली मुद्रा—सोना और चांदी के सिक्का तथा सोना या चांदी की चीजों से ही हो सकता है।

मुद्रा भुगतान के माध्यम का भी काय करती है। वस्तुएं सदा नकद मुद्रा के लिए नहीं बेची जाती। वे कभी-कभी साख या विलम्बित भुगतान पर भी बेची जाती हैं। साख पर खरीदी गयी वस्तु बिना तुरंत भुगतान किये वस्तु विक्रेता द्वारा ग्राहक को दे दी जाती है। समझौते के अनुसार पैसे किसी आगामी तिथि को चुका दिये जाते हैं। भुगतान के समय मुद्रा ग्राहक के हाथों से निकलकर विक्रेता के पास आ जाती है। इस तरह मुद्रा भुगतान के माध्यम का काय करती है।

मान लें कि किसान को बसंत ऋतु में एक हल की जरूरत है। उसके पास तत्काल भुगतान करने के लिए पैसे नहीं हैं। लोहार उसके लिए हल बनाता है। किसान के पास शरद ऋतु में फसल कटने और अनाज बिकने पर पैसे हो जायेंगे। ऐसी स्थिति में किसान को लोहार से हल लेने की एक ही सूरत दीखती है कि वह हल उधार पर ले और शरद ऋतु में भुगतान करे। भुगतान के माध्यम के रूप में मुद्रा का व्यवहार कर और जमीन का लगान, आदि चुकाने के लिए भी होता है।

चलन माध्यम और भुगतान के माध्यम के रूप में मुद्रा के काय से वस्तुओं के प्रचलन के लिए मुद्रा की आवश्यक मात्रा को निर्धारित करने वाले नियम की व्याख्या करना असम्भव हो जाता है।

प्रचलन के लिए मुद्रा की आवश्यक मात्रा पहले तो प्रचलन में रहने वाली वस्तुओं की कुल कीमतों पर और उसके बाद मुद्रा के वेग पर निर्भर करती है। मुद्रा का वेग जितना ही अधिक होगा (यानी जितनी अधिक तेजी से मुद्रा प्रचलित होगी), प्रचलन के लिए मुद्रा की आवश्यक मात्रा उतनी ही कम होगी। इसी तरह मुद्रा का वेग जितना ही कम होगा, वस्तुओं के प्रचलन के लिए मुद्रा की आवश्यक मात्रा उतनी ही अधिक होगी। मान लें कि एक वर्ष के दौरान बिकी वस्तुओं की कुल कीमत १ खरब डालर है और प्रत्येक डालर का औसत

का एक नतीजा यह होता है कि सवसाधारण के जीवनयापन का स्तर गिर जाता है।

पूजीवादी देशो म कागजी मुद्रा के अतिरिक्त साख मुद्रा भी होती है। इसका ज म मुद्रा के काय भुगतान के माध्यम स हुआ। साख मुद्रा का साधारण रूप हुडी है। यह उस दस्तावेज का स्थापित रूप है जिसके द्वारा देनदार यक्ति एक निश्चित अवधि के अदर मुद्रा की एक निश्चित राशि अदा करने का

साख मुद्रा

वादा करता है। चूकि वस्तुओ की खरीद बिक्री के समय हुडी एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को हस्तातरित होती है इसलिए हुडी मुद्रा का काय सम्पन्न करती है।

शुरू शुरू म निजी यावसायिक हुडियो का व्यवहार साख मुद्रा के रूप मे होता था। इस हुडी का निर्माण वस्तुओ का क्रता करता था। चूकि निजी हुडियो को उनके लिखने वाले व्यक्तियो के जानकार लोग ही स्वीकार करते थे, इसलिए उनका प्रचलन जनता के एक छोटे दायरे मे ही होता था। आगे चल कर बक निजी हुडियो को स्वीकार करने तथा बट्टा करने लगे। बको ने उनकी जगह अपनी हुडिया चलायी जो बक नोटो के रूप म प्रसिद्ध हुइ। बक नोट बकर के ऊपर एक धनादेश है जिससे वाहक को सम्बद्ध बक से नकद मुद्रा मिल सकती है।

बैंक नोटा का किसी भी समय सोना या अ य धात्वीय मुद्रा के साथ विनिमय हो सकता है। ऐसी अवस्थाओ मे बक-नोट स्वण मुद्राओ के समान होते है और उनका मूल्य ह्रास नहीं हो सकता। पूजीवाद के विकसित होने पर प्रचलित स्वण मुद्रा की राशि म एक सापेक्षिक ह्रास हुआ। केद्रीय मुद्रा प्रचलन• बको म आरक्षित निधि के रूप मे सोने की राशि उत्तरोत्तर सचित होने लगी। प्रचलन मे सोने की जो राशि थी उसकी जगह बक नोटो और आगे चलकर कागजी मुद्रा ने ल ली। प्रारम्भ मे बक-नोटों का विनिमय सोना के साथ ही सकता था। लेकिन आगे चलकर सपरिवतनशील बक नोट जारी किये गये। इसने बक-नोटा को बहुत हद तक कागजी मुद्रा की बराबरी मे ला दिया।

५ मूल्य का नियम—वस्तु उत्पादन का एक आर्थिक नियम

प्रतिद्वन्द्विता और उत्पादन की अराजकता

जहा निजी स्वामित्व होता है वहा वस्तुओ का उत्पादन अपने आप होता है। उत्पादक किस वस्तु का उत्पादन करें और कितनी मात्रा म करें यह बतलाने वाली न कोई सस्था है और न हो सकती है। निजी उद्यम-कर्ता और किसान अपने उत्पादन का अन्य व्यवसायियों

या उपभोक्ताओ के साथ कोई तालमेल नही बिठाते। अतएव उत्पादन मे अराजकता (यानी नियोजन का अभाव और उत्पादन म गडबडी) की स्थिति बनी रहती है।

निजी वस्तु उत्पादको के बीच उत्पादन और बिक्री की अधिक लाभप्रद स्थितिया तथा अधिकतम सम्भावित मुनाफे के लिए कटु सघर्ष होता है तथा प्रतिद्वद्विता रहती है। फलस्वरूप उत्पादन की अराजकता और भी बढ जाती है। प्रतिद्वद्विता तथा उत्पादन की अराजकता निजी स्वामित्व पर आधारित वस्तु उत्पादन के नियम हैं। प्रत्येक वस्तु उत्पादक किसान, दस्तकार और पूजीपति (यह सही है कि पूजीपति स्वय वस्तुओ का उत्पादन नही करते लेकिन बाजार मे वे वस्तु-उत्पादक की तरह व्यवहार करते हैं) अपनी वस्तुओ की बिक्री से अधिकतम सम्भावित मुनाफा कमाना चाहते हैं। किन्तु व उस वस्तु की माग का ठीक अनुमान नही लगा सकते। व सिर्फ इतना ही जानत हैं कि हाल में वस्तु की माग काफी थी। वे अपनी सामर्थ्य के अनुसार उत्पादन करने की कोशिश करते हैं। अन्य वस्तु उत्पादक भी इसी तरह काम करते हैं। फलस्वरूप प्रत्येक उत्पादक जोखिम उठाकर अपने भाग्य के भरोसे काम करता है। बहुधा समाज की माग की अपेक्षा वस्तु का उत्पादन अधिक होता है।

तब प्रश्न यह उठता है कि कौन सी ताकत निजी स्वामित्व पर आधारित समाज के उत्पादन को नियमित करती है? वास्तव मे इसका नियमन मूल्य के नियम से होता है।

मूल्य का नियम

मूल्य का नियम वस्तु-उत्पादन का एक आर्थिक नियम है। इसके अनुसार वस्तुओ का नियमन उन पर व्यय की गयी सामाजिक तौर पर आवश्यक श्रम की मात्रा के आधार पर होता है। दूसरे शब्दो म मूल्य के नियम का मतलब यह है कि एक वस्तु का विनिमय दूसरी वस्तु के साथ उनके मूल्य के अनुसार होता है। तात्पर्य यह है कि जो वस्तुए एक-दूसरे के साथ विनिमय की जाती हैं उनम सामाजिक तौर पर श्रम की समान मात्रा निहित होती है। इसी तरह से वे तुल्य होती हैं। परिणामस्वरूप किसी वस्तु की कीमत (याद रखें कि मूल्य की मौद्रिक अभिव्यक्ति को ही कीमत कहते हैं) उसके मूल्य के अनुकूल होनी चाहिए। लेकिन वास्तव मे होता यह है कि वस्तुओ की कीमतें माग और पूर्ति की शक्तियो के असर के कारण अपने मूल्यो से अधिक या कम होती हैं। यह एक सर्वविदित तथ्य है कि किसी वस्तु की कम मात्रा बाजार मे रहने और उसकी माग की मात्रा पूर्ति की मात्रा से अधिक होने पर उस वस्तु की कीमत अधिक होती है। अगर पूर्ति की मात्रा माग की मात्रा से अधिक है, तो

कीमत कम होती है। तब क्या यह कहा जा सकता है कि मूल्य का नियम नहीं लागू हो रहा है ? नहीं, ऐसी बात नहीं है। किसी भी नियम की कार्य प्रणाली अनगिनत तथ्यों पर विचार करने में ही समझी जा सकती है। अगर एक लम्बे समय के दौरान किसी वस्तु के लिए अदा की गयी विभिन्न कीमतों पर विचार करें तो हम पायेंगे कि मूल्य से ऊपर या नीचे की ओर कीमतों का विचलन एक-दूसरे से सब पट जाता है फलस्वरूप औसत कीमतें मूल्य के बराबर होती हैं।

उत्पादन के साधनों के निजी स्वामित्व पर आधारित वस्तु-समाज में गड़बड़ी एवं उत्पादन की अराजकता के बावजूद अर्थव्यवस्था की विभिन्न शाखाओं में समय समय पर संतुलन की अवस्था (या उचित अनुपात) स्थापित की जा सकती है। वस्तु अर्थव्यवस्था में बाजार की प्रतिद्वंद्विता के सहारे काम करने वाले उत्पादन के नियामक—मूल्य के नियम—के कारण ही ऐसा हो पाता है। एंगेल्स ने ऐसा संकेत किया था कि "वस्तुओं का पारस्परिक विनिमय करने वाले उत्पादकों के समाज में प्रतिद्वंद्विता ही मूल्य के नियम को परि-चालित करके इन अवस्थाओं में सम्भव सामाजिक उत्पादन संगठन और व्यवस्था ला पाती है। सिर्फ वस्तुओं के अल्पमूल्यन या अतिमूल्यन के द्वारा ही व्यक्तिगत वस्तु उत्पादक के सामने यह बात स्पष्ट हो पाती है कि समाज को किन चीजों की और कितनी मात्रा में जरूरत है या जरूरत नहीं है।"[1]

उत्पादन के साधनों के निजी स्वामित्व पर आधारित वस्तु उत्पादन में मूल्य के नियम का परिचालन अपने को निम्नलिखित तरह से स्पष्ट करता है

१ मूल्य का नियम उत्पादन की शाखाओं में उत्पादन के साधनों और श्रम के वितरण को स्वतः नियमित करता है।

श्रम के सामाजिक विभाजन के लिए आवश्यक है कि उत्पादन की विभिन्न शाखाओं में एक निश्चित आनुपातिक सम्बन्ध हो। ऐसे सम्बन्ध के बिना उत्पादन हो ही नहीं सकता। कीमतों का उतार चढ़ाव और परिणामस्वरूप उत्पादन की अधिक या कम लाभदायकता ही एक ओर उत्पादन की विभिन्न शाखाओं में और दूसरी ओर कुछ विशेष शाखाओं में उत्पादन के साधनों और श्रम के प्रवाह का नियमन करती है।

इस बात को स्पष्ट करने के लिए एम इलिन की किताब स्टोरी आफ द ग्रेट प्लान से एक युक्तिपूर्ण उदाहरण दे सकते हैं। लेखक ने एक बड़ा ही

१ फ्रेडरिक एंगेल्स 'प्रीफेस टू दी फर्स्ट जर्मन एडिशन' (देखें कार्ल मार्क्स की रचना 'पावर्टी आफ फिलासफी', मास्को, पृष्ठ २१।)

मनोरञ्जक चित्र प्रस्तुत करते हुए बतलाया है कि किस प्रकार मूल्य का नियम वस्तु उत्पादन, खासकर पूंजीवादी वस्तु उत्पादन का नियमन करता है।

इलिन लिखते हैं "मान लें कि श्री फाक्स के पास कुछ पैसे हैं—१० लाख डालर हैं। वे जानते हैं कि पैसा बेकार पड़ा नहीं रहना चाहिए। श्री फाक्स अखबार पढ़ते हैं अपने दोस्तों से सलाह मशविरा करते हैं और एजेंट रखते हैं। उनके सतर्क विशेषज्ञ सुबह से शाम तक शहर में घूमते और यह पता लगाते हैं कि श्री फाक्स अपने पैसों का क्या करें।

'आखिर विनियोग के लिए एक अच्छा जरिया मिल जाता है—हैट उत्पादन। हैट के लिए अच्छा बाजार है क्योंकि लोगों की हालत दिनोंदिन बेहतर हो रही है।

'श्री फाक्स हैट बनाने के लिए कारखाना लगाते हैं।

'यही विचार श्री फाक्स, श्री काक्स और श्री नाक्स को भी एक ही समय आता है और वे सब भी हैट के कारखाने लगाते हैं।

"छः महीने के भीतर हैट के नये कारखाने बन जाते हैं। फलस्वरूप दूकानों में हैट का अम्बार लग जाता है। गोदामों में भी हैट ठसाठस भर जाते हैं। विज्ञापन बोर्ड, विज्ञापन और पोस्टर हैट हैट चिल्लाने लगते हैं। कारखाने पूरी रफ्तार से काम करते हैं।

इसी समय ऐसी स्थिति आ जाती है जिसकी उम्मीद श्री फाक्स श्री नाक्स और श्री काक्स को नहीं थी। लोग हैट खरीदना बन्द कर देते हैं। श्री नाक्स कीमत में २० सेंट की कमी कर देते हैं। श्री काक्स एक कदम आगे बढ़ते हैं और कीमत में ४० सेंट की कमी कर देते हैं। श्री फाक्स हैटों से पिण्ड छुड़ाने के लिए उन्हें घाटे पर बेचना शुरू कर देते हैं।

'किन्तु तब भी बिक्री घटती ही रहती है।

वह दिन भी आता है जब श्री फाक्स अपना कारखाना बन्द कर देते हैं। दो हजार मजदूर बर्खास्त कर दिये जाते हैं। दूसरे दिन श्री नाक्स भी अपना कारखाना बन्द कर देते हैं। एक हफ्ते के बाद करीब सारे कारखाने बन्द हो जाते हैं। हजारों मजदूर बेरोजगार हो जाते हैं। नयी मशीनों में जंग लग जाती है। कारखाने रद्दी के ढेर की तरह बिक जाते हैं।

"इसी तरह एक या दो साल बीत जाते हैं। श्री नाक्स, श्री फाक्स और श्री काक्स से खरीद गये हैट पुराने पड़ जाते हैं। लोग फिर हैट खरीदना शुरू कर कर देते हैं। हैट की दूकानों में माल कम पड़ने लगता है। धूल से भरे हैट के बक्सों को तहखाने से निकाला जाता है। हैट का अभाव हो जाता है। हैट की कीमत चढ़ जाती है।

"इस बार श्री फाक्स नहीं बल्कि श्री डूडल हैट बनाना शुरू करते हैं। वही विचार अन्य व्यापारियों—श्री बूडल श्री फूडल और श्री नूडल को भी आता है। कहानी एक बार फिर शुरू होती है।"[1]

२ मूल्य का नियम निजी वस्तु उत्पादकों को उत्पादक शक्तियों को विकसित करने के लिए प्रेरित करता है। हम मालूम है कि किसी वस्तु के मूल्य की मात्रा का निर्धारण उसमे निहित सामाजिक तौर पर आवश्यक श्रम की मात्रा से होता है। जो उत्पादक श्रेष्ठतर टेक्नोलोजी का प्रयोग करते हैं तथा जिनका उत्पादन अच्छी तरह सगठित है वे अपनी वस्तुओं को सामाजिक तौर पर आवश्यक लागत से कम पर उत्पन्न करते हैं। लेकिन उनकी वस्तुए सामाजिक तौर पर आवश्यक श्रम की मात्रा के अनुकूल कीमतो पर ही बेची जाती हैं। अत इन उत्पादको को अधिक लाभ प्राप्त होता है और वे धनी हो जाते हैं। शेष उत्पादकों को यह चुभता है और यह उन्हें भी अपने उद्यम मे तकनीकी सुधारो को व्यवहृत करने के लिए उत्साहित करता है। इस तरह समाज की टेक्नोलोजी का विकास होता है और साथ ही उत्पादक शक्तियां विकसित होती हैं।

३ निश्चित अवस्थाओ मे मूल्य के नियम का परिचालन पूजीवादी सम्बधो के उदय और विकास की शुरुआत करता है। वास्तविक मूल्य के इर्दगिर्द कीमतो का स्वत उतार चढाव वस्तु-उत्पादको की पारस्परिक विषमता और सघर्ष को तीव्र कर देता है। प्रतिद्वद्वितापूर्ण सघर्ष के कारण कुछ उत्पादक बर्बाद हो जाते हैं और कुछ धनी बन जाते हैं। मूल्य का नियम वस्तु उत्पादको को पूजीपति वर्ग और सर्वहारा वर्ग मे बाट देता है। कुछ पूजीपतियों के हाथो मे सामाजिक उत्पादन की उत्तरोत्तर बढती हुई मात्रा केन्द्रित हो जाती है और अन्य लोग बर्बाद हो जाते हैं।

हम लोगो ने यह स्पष्ट रूप से सिद्ध कर दिया है कि प्रत्येक वस्तु उत्पादक का श्रम सामाजिक होते हुए भी निजी श्रम के रूप मे दीखता है। श्रम का सामाजिक चरित्र वस्तु उत्पादको के बीच सामाजिक सम्बध और उनकी पारस्परिक निर्भरता बाजार मे ही जाहिर होती है जहा वस्तुओ का आपस मे विनिमय होता है। ऐसा लगता है कि लोगो के बीच नहीं अपितु वस्तुओ के ही बीच सम्बध होते हैं। इन स्थितियो मे वस्तुए लोगो के सामाजिक सम्बधो के वाहक का काम करती हैं। किसी वस्तु उत्पादक द्वारा निर्मित वस्तु ज्यो ही बाजार मे पहुच जाती है और

वस्तुओ की प्रतीकनिष्ठा

१ एम इलिन स्टोरी आफ द ग्रेट प्लान, मास्को पृष्ठ ७६।

उसका अन्य वस्तुओं के साथ सम्बध कायम हो जाता है, त्यों ही वह वस्तु अपने उत्पादक से स्वतन्त्र हो जाती है। उसका अस्थिर जीवन प्रारम्भ होता है। ऐसा हो सकता है कि आज कोई उत्पादक एक जोड़े जूते के लिए २० डालर प्राप्त करे और कल सिर्फ १५ डालर। परसों ऐसा भी हो सकता है कि जूते के बदले उसे कुछ भी न मिले। आगे चलकर ऐसा भी सम्भव है कि लोग जूतों के लिए धोर करें और बहुत अधिक व्यय करने के लिए तैयार हों।

बाजार में वस्तुओं के इस स्वतन्त्र और पूर्णतया सायोगिक जीवन को देखकर बहुतेरे लोग वस्तुओं में निहित नहीं रहने वाले गुणधर्मों को भी उनके साथ सम्बद्ध करने लगते हैं। लोगों के आपसी सम्बध चीजों के पारस्परिक सम्बधों के रूप में छिपे होते हैं।

उत्पादन के साधनों के निजी स्वामित्व पर आधारित वस्तु अर्थव्यवस्था के लिए उत्पादन सम्बधों का वस्तुकरण स्वाभाविक है। इसे मार्क्स ने वस्तुओं की प्रतीकनिष्ठा[1] कहा है।

वस्तु उत्पादन के विकास के साथ वस्तुओं की प्रतीकनिष्ठा भी बढ़ती है और अधिक व्यापक हो जाती है। मुद्रा ने जन्म लेते ही अपने सम्पूर्ण रूप— मुद्रा की प्रतीकनिष्ठा को ग्रहण कर लिया। सभी चीजें सोने के द्वारा खरीदी जा सकती हैं। लोगों की नजर में यह मुद्रा और सोने का स्वाभाविक गुणधर्म प्रतीत होता है जबकि वास्तव में वह निश्चित सामाजिक सम्बधों और वस्तु उत्पादन के सम्बधों का फल है।

मार्क्स पहले व्यक्ति थे जिन्होंने वस्तुओं की प्रतीकनिष्ठा का रहस्योद्घाटन किया। उत्पादन के साधनों पर से निजी स्वामित्व के उन्मूलन के बाद ही वस्तुओं की प्रतीकनिष्ठा लुप्त हो सकती है।

---

[1] "प्रतीकनिष्ठा" शब्द का मतलब वस्तुओं में धार्मिक देवत्वारोपण से है। प्रतीक लोगों की स्वयं की कृति है। अन्धविश्वासी लोगों के अनुसार इस प्रतीक को अलौकिक और जादू करने की शक्तियां प्राप्त होती हैं।

अध्याय 3

पूंजी और अधिशेष मूल्य तथा पूंजीवाद के अन्तर्गत मजूरी

सामाजिक विकास के एक निश्चित चरण में वस्तु उत्पादन पूंजीवाद को जन्म देता है। पूंजीवाद से हम क्या समझते हैं ? लेनिन ने पूंजीवाद की एक बहुत ही सरल और स्पष्ट परिभाषा दी। उन्होंने लिखा

'पूंजीवाद उस समाज व्यवस्था का नाम है जिसके अन्तर्गत भूमि, कारखाने औजार इत्यादि थोड़े से भूस्वामियों और पूंजीपतियों के अधिकार में होते हैं और जनसाधारण के पास कोई सम्पत्ति नहीं होती या बहुत थोड़ी सम्पत्ति होती है। अतः वे मजदूरों के रूप में भाड़े पर काम करने के लिए मजबूर होते हैं।'[१]

पूंजीवाद के अन्तर्गत लोगों को व्यक्तिगत स्वतन्त्रता तो प्राप्त होती है लेकिन उत्पादन के साधनों से वंचित होने के कारण वे जीवन निर्वाह के साधनों से भी वंचित होते हैं। इसी कारण वे पूंजीपतियों के वास्ते काम करने के लिए मजबूर होते हैं।

आखिर ऐसी स्थितियां कैसे उत्पन्न होती हैं जिनमें उत्पादन के साधन थोड़े से लोगों के हाथों में केन्द्रित हो जाते हैं ?

१ पूंजी का आदिम संचय

पूंजीवादी सिद्धान्तकार जानबूझकर पूंजीपति वर्ग और सर्वहारा वर्ग के उदय के इतिहास को विकृत करते हैं। वे अपनी पूरी शक्ति लगाकर भौतिक

१ लेनिन, "संग्रहीत रचनाएं", खण्ड ४, पृष्ठ ३११।

पूंजीवाद के उदय की स्थितियां

सम्पदा के अन्यायपूर्ण वितरण को न्यायोचित बतलाने की कोशिशें करते हैं। वे समाज के धनी गरीब में बट जाने के सम्बंध में झूठी कहानियां गढ़कर प्रचारित करते हैं। जमाने से कई प्रकार के लोग संसार में बसते आये हैं। उनका दावा है कि इनमें से कुछ लोग अध्यवसायी तथा मितव्ययी होते हैं और कुछ लोग सुस्त होते हैं। कालक्रम में अध्यवसायी और मितव्ययी लोगों ने सभी प्रकार के धन इकट्ठे कर लिये जबकि अन्य लोग भिखमंगे बने रहे। पूंजीवाद की उत्पत्ति की इस व्याख्या का तथ्यों से कोई वास्ता नहीं है।

पूंजीवाद के उदय के लिए दो बुनियादी स्थितियां आवश्यक हैं। पहली, समाज में ऐसे लोगों का रहना आवश्यक है जिन्हें व्यक्तिगत स्वतंत्रता प्राप्त हो लेकिन उन्हें न तो उत्पादन के साधन प्राप्त हों, न जीवन निर्वाह के साधन। अतः उन्हें अपनी श्रम-शक्ति को बेचना आवश्यक हो जाये। दूसरी, यह जरूरी है कि कुछ व्यक्तियों के हाथों में उत्पादन के साधन और मुद्रा की बहुत बड़ी राशि केन्द्रित हो।

ये दो स्थितियां सामन्तवाद के अन्तर्गत छोटे वस्तु-उत्पादकों के बीच स्तरीकरण की प्रक्रिया के दौरान आयीं। भूस्वामियों, नवोदित पूंजीपति वर्ग तथा राजसत्ता के संगठनों ने जनसाधारण के विरुद्ध बलप्रयोग के अपरिष्कृत तरीकों का इस्तेमाल कर उत्पादन की पूंजीवादी पद्धति की स्थापना की गति तेज की।

उत्पादक का उत्पादन के साधनों से अलगाव। चन्द लोगों के हाथों में धन का संचय

आदिम संचय की प्रक्रिया में पूंजीवाद के उदय के लिए आवश्यक स्थितियों का निर्माण निहित था। मार्क्स ने लिखा है 'आदिम संचय उत्पादक के उत्पादन के साधनों से अलगाव की ऐतिहासिक प्रक्रिया के अतिरिक्त और कुछ नहीं है।'[1]

यह प्रक्रिया ही पूंजीवाद का पूर्व इतिहास है। पूंजी के आदिम संचय ने इंगलैण्ड में अत्यन्त प्रकारात्मक रूप लिया। वहां भूस्वामियों ने किसानों की सामूहिक भूमि को जबर्दस्ती दखल कर लिया और कहीं-कहीं तो उन्हें अपने घरों से भी उजाड़ दिया। भूस्वामियों ने किसानों से छीनी गयी जमीन को भेड़ों के लिए चारागाह बना दिया या किसानों को ही पट्टे पर दे दिया। उस समय विकासोन्मुख वस्त्रोद्योग के लिए ऊन की बहुत अधिक मांग थी।

---

१ कार्ल मार्क्स, 'पूंजी', खंड १, पृष्ठ ७१४।

क्योंकि पूंजीपति वर्ग ने राजकीय जमीन को भी हड़प लिया तथा गिरजाघरों की सम्पत्ति को लूटा। बहुत बड़ी संख्या में जीविका से वंचित लोग आवारे, भिखमंगे और बटमार बन गये। राज्याधिकारियों ने उन उजड़े हुए लोगों के विरुद्ध कानून जारी किये जिन्होंने अपनी सम्पत्ति पुनः प्राप्त करने की कोशिश की। आम तौर पर इंगलैण्ड में इन 'खूनी कानूनों' की संज्ञा दी गयी। इस प्रकार लुटे हुए लोगों को यंत्रणा देकर, कोड़े मारकर और गर्म लोहे से दागकर पूंजीवादी उद्योगों में काम करने के लिए मजबूर किया गया।

किसानों को जमीन से जबर्दस्ती अलग करने के दो नतीजे सामने आये। पहला, भूमि लोगों के एक छोटे समूह की निजी सम्पत्ति हो गयी। दूसरा, उद्योगों में मजूरी के लिए काम करने वाले मजदूरों का निरंतर प्रवाह निश्चित हो गया। इस तरह पूंजीवाद के उदय के लिए आवश्यक पहली स्थिति—व्यक्तिगत स्वतंत्रता प्राप्त सम्पत्ति तथा उत्पादन के साधनों से वंचित, लोगों की बहुत बड़ी संख्या में उपस्थिति—उत्पन्न हो गयी।

मार्क्स ने बड़े पूंजीवादी उद्योगों के संगठन के लिए आवश्यक मात्रा में धन के संचय के वास्ते काम में लाये जाने वाले निम्नलिखित बुनियादी तरीकों की ओर संकेत किया है। १) उपनिवेश-व्यवस्था—अमरीका, एशिया और अफ्रीका के पिछड़े हुए जनगण की गुलामी और लूट, २) कर-व्यवस्था—इजारेदारी के निर्माण तथा अन्य तरीकों से जनता पर लगाये गये करों के एक हिस्से को हड़पना ३) संरक्षण की व्यवस्था—पूंजीवादी उद्योगों के विकास के लिए राजकीय समर्थन, और ४) शोषण के पाशविक तरीकों का प्रयोग।

इस तरह आदिम संचय के परिणामस्वरूप उत्पादन के साधनों से वंचित लोगों की एक फौज बनी और चन्द लोगों के हाथों में अपार धन संचित हो गया।

२ मुद्रा का पूंजी के रूप में परिवर्तन

मुद्रा स्वयं पूंजी का निर्माण नहीं करती। हमें पता है कि पूंजीवाद के उदय के पूर्व भी मुद्रा रही है। वस्तु उत्पादन के विकास के एक विशेष चरण में ही मुद्रा पूंजी के रूप में परिवर्तित हो जाती है।

पूंजी का सामान्य सूत्र

पूंजीवाद के पहले भी वस्तु प्रचलन था। इसे हम निम्नलिखित सूत्र द्वारा अभिव्यक्त कर सकते हैं - व मु व (वस्तु मुद्रा वस्तु)। मतलब यह हुआ कि

एक वस्तु बेचकर दूसरी वस्तु खरीदना। पूंजी के सचलन को एक अन्य सूत्र द्वारा अभिव्यक्त करते हैं—मु व मु (मुद्रा वस्तु मुद्रा) यानी बेचने के लिए खरीदना।

सूत्र व मु-व साधारण वस्तु उत्पादन के लिए प्रकारात्मक है। इस उदाहरण मे मुद्रा के माध्यम से एक वस्तु का विनिमय दूसरी वस्तु के लिए होता है। मुद्रा सिर्फ चलन माध्यम का काम करती है। मुद्रा पूजी नही है। वस्तु-विनिमय का उद्देश्य स्पष्ट है। उदाहरण के लिए किसी मोची को लें। मोची जूतो को बेचकर रोटी खरीदता है। इसका मतलब है कि एक उपयोग-मूल्य का विनिमय दूसरे उपयोग मूल्य के साथ होना है।

सूत्र मु व-मु का चरित्र सर्वथा अलग है। यहा मुद्रा ही प्रारम्भ विन्दु है। मुद्रा का प्रयोग बेचने के उद्देश्य से क्रय करने के लिए होता है। यहा मुद्रा पूजी के रूप मे काम करती है। पूजीपति अपनी मुद्रा राशि से निश्चित मात्रा मे वस्तुए खरीदता है। फिर उन्हें वह मुद्रा राशि के रूप म परिवर्तित कर देता है। यहा प्रारम्भ विन्दु और समापन विन्दु एक ही हैं। इस प्रक्रिया के प्रारम्भ में पूजीपति के पास मुद्रा थी और प्रक्रिया की समाप्ति के बाद भी उसके पास मुद्रा है।

अगर पूजीपति के पास प्रक्रिया के प्रारम्भ और समाप्ति के समय भी समान मुद्रा राशि हो तो पूजी का सचलन निरर्थक होगा। पूजी के प्रयोग का एकमात्र उद्देश्य यही है कि इस सचलन के बाद पूजीपति के पास प्रारम्भिक मुद्रा राशि की अपेक्षा अधिक मुद्रा राशि हो। पूजीपति की सम्पूर्ण क्रियाओं का एकमात्र उद्देश्य मुनाफा बटोरना है। अत पूजीवादी स्थितियो के अन्तगत मार्क्स ने मुद्रा के सचलन को निम्नलिखित सूत्र (जिसे उन्होंने पूजी का सामान्य सूत्र कहा) से स्पष्ट किया—मु-व मु। मु प्रारम्भ मे दी गयी मुद्रा राशि और उसमे हुई कुछ वृद्धि के बराबर है। मूल राशि म इसी वृद्धि को मार्क्स ने अधिशेष मूल्य कहा। अधिशेष मूल्य के लिए उन्होंने 'अ अक्षर का इस्तेमाल किया।

पूजीपति मुद्रा का प्रयोग वस्तु प्रचलन के माध्यम के रूप म नहीं, बल्कि मुनाफा कमाने और समृद्धि हासिल करने के लिए करते हैं।

पूजीवाद के अन्तगत मुद्रा का सचलन एक अन्तहीन प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया के दौरान मुद्रा अपने आप बढने की क्षमता प्राप्त कर लेती है। स्वय बढने वाले मूल्य (या वह मूल्य जिसके कारण अधिशेष मूल्य प्राप्त होता है) को पूजी कहा जाता है।

अब प्रश्न उठता है पूजी किस प्रकार बढती है? सम्भव है कि पूजी की वृद्धि खरीद बिक्री की प्रक्रिया के दौरान प्रचलन के क्षेत्र मे होती है।

मगर ऐसा सोचना सर्वथा गलत होगा क्योंकि इस लेन देन में (प्रचलन के क्षेत्र में) सिर्फ समान मूल्य वाले तुल्यों का ही विनिमय होता है। मान लें कि सभी विक्रेता अपनी वस्तुओं को वास्तविक मूल्य से १० प्रतिशत अधिक पर बेचने में सफल हो जाते हैं, तो जब वे स्वयं खरीदेंगे तब उन्हें भी अपने विक्रेताओं को को वास्तविक मूल्य से १० प्रतिशत अधिक चुकाना पड़ेगा। स्पष्ट है कि वस्तु उत्पादकों ने विक्रेता के रूप में जो कुछ भी प्राप्त किया है उसे उन्हें ग्राहक के रूप में दे देना पड़ेगा। फिर भी हम पाते हैं कि पूंजीपति वर्ग को पूंजी में वृद्धि प्राप्त होती है।

तो किस प्रकार पूंजीपति अपनी वस्तुओं को उनके वास्तविक मूल्य पर खरीद-बेचकर भी अधिशेष मूल्य प्राप्त कर लेते हैं।

पूंजी के सामान्य सूत्र में दो तत्व हैं—मुद्रा और वस्तु। अतः सिर्फ मुद्रा या वस्तुओं में होने वाले परिवर्तन के फलस्वरूप ही मूल्य की वृद्धि प्राप्त हो सकती है। यह सामान्य ज्ञान की बात है कि मुद्रा अपने आप न तो अपने मूल्य में परिवर्तन कर सकती है और न अपने में कोई वृद्धि ला सकती है। अतः मूल्य की वृद्धि का स्रोत वस्तुओं में ही ढूंढ़ना चाहिए।

मुद्रा को पूंजी में परिवर्तित करने के लिए बाजार में पूंजीपति को ऐसी वस्तु जरूर प्राप्त करनी चाहिए जिसका इस्तेमाल किया जाये और वह वस्तु अपने आपमें निहित मूल्य से अधिक मूल्य की सृष्टि कर सके। ऐसी वस्तु श्रम शक्ति है।

वस्तु के रूप में श्रम शक्ति। उसका मूल्य और उपयोग मूल्य

श्रम शक्ति मनुष्य की उन शारीरिक और मानसिक क्षमताओं के सम्मिलित रूप का नाम है जिनका इस्तेमाल वह भौतिक धन के उत्पादन के लिए करता है। प्रत्येक समाज में श्रम शक्ति उत्पादन का एक आवश्यक तत्व है। श्रम शक्ति सिर्फ पूंजीवाद के अंतर्गत ही वस्तु का रूप ले लेती है क्योंकि पूंजीवाद के अंतर्गत ही मेहनतकश जनता के पास न तो उत्पादन के साधन होते हैं और न जीवन निर्वाह के साधन। ऐसी स्थिति में बाजार में बेचने के लिए उसके पास सिर्फ श्रम शक्ति होती है।

तब अन्य वस्तुओं की तरह ही श्रम शक्ति का भी मूल्य और उपयोग मूल्य होना चाहिए। वास्तव में ऐसा है भी। अन्य वस्तुओं के मूल्यों की तरह श्रम शक्ति का मूल्य भी उसके पुनरुत्पादन के लिए सामाजिक तौर पर आवश्यक श्रम-काल से निर्धारित होता है। श्रम शक्ति का मतलब मनुष्य के काम करने की योग्यता से है। यह योग्यता तभी तक वर्तमान रहती है जब तक उसका

स्वामी जीवित रहता है। अपने आपको जीवित रखने के लिए प्रत्येक मजदूर का जीवन निर्वाह के साधनो की एक निश्चित मात्रा की आवश्यकता होती है। परिणामस्वरूप श्रम शक्ति का मूल्य मजदूर के जीवन निर्वाह के लिए आवश्यक साधनो के मूल्य से निर्धारित होता है।

हर देश म मजदूर के लिए आवश्यक जीवन निर्वाह के साधनो की मात्रा और किस्म कतिपय बातों पर निर्भर होती है आर्थिक विकास का स्तर, सर्वहारा वग के जन्म की परिस्थितियां, मजदूर वग के संघष का काल और उसकी सफलताए।

श्रम शक्ति के मूल्य म मजदूर वग की सामाजिक और सांस्कृतिक आवश्यकताओ (जो इतिहास के एक निश्चित काल म विकसित हुई हैं) का मूल्य भी शामिल है। मार्क्स ने लिखा कि "अन्य वस्तुओं की स्थिति के विपरीत श्रम शक्ति के मूल्य मे एक ऐतिहासिक और नैतिक तत्त्व भी शामिल है।"[१]

श्रम-शक्ति का पुनमरण श्रमिक का परिवार करता है। इस प्रकार श्रम-शक्ति के मूल्य म श्रमिक के परिवार के सदस्यो के लिए आवश्यक जीवन-निर्वाह के साधनो का मूल्य भी शामिल होना चाहिए।

कोई भी व्यक्ति दक्ष मजदूर के रूप मे जन्म नही लेता। दक्ष श्रम-शक्ति प्राप्त करने के लिए प्रशिक्षण पर व्यय करना आवश्यक है। अत प्रशिक्षण व्यय भी श्रम-शक्ति के मूल्य म शामिल है। दूसरे शब्दों मे, श्रम शक्ति के मूल्य का निर्धारण हर देश मे मजदूर की शारीरिक शक्ति को बनाये रखने उसकी तथा उसके परिवार की सामाजिक और सांस्कृतिक जरूरतो को पूरा करने और योग्यता प्राप्ति के लिए किए गये व्यय को पूरा करने के लिए अत्यन्त जरूरी आवश्यकता की वस्तुओ के मूल्य से होता है। श्रम शक्ति की कीमत श्रम-शक्ति के मूल्य की मुद्रा के रूप में अभिव्यक्ति का ही नाम है। पूंजीवाद के अन्तगत श्रम-शक्ति की कीमत को मजूरी कहते हैं।

चूंकि श्रम शक्ति एक वस्तु है इसलिए उसका उपयोग मूल्य भी होता है। श्रम शक्ति के उपयोग मूल्य से हमारा मतलब श्रम की प्रक्रिया मे श्रम शक्ति के मूल्य से अधिक मूल्य का निर्माण करने की क्षमता से है। अधिशेष मूल्य का स्रोत श्रम शक्ति ही है। इसी कारण पूंजीपति की दिलचस्पी अधिशेष मूल्य मे ही होती है।

अब हम देखें कि किस प्रकार श्रम शक्ति के प्रयोग के द्वारा अधिशेष मूल्य की उत्पत्ति होती है और किस प्रकार पूंजीपति धन बटोरता है।

---

१ कार्ल मार्क्स 'पूंजी', खंड १, पृष्ठ १७१।

३ अधिशेष मूल्य का उत्पादन तथा पूजीवादी शोषण

श्रम शक्ति का व्यवहार श्रम की प्रक्रिया के दौरान होता है। श्रम की प्रक्रिया एक निश्चित सामाजिक रूप मे होती है। इस सामाजिक रूप को उत्पादन के सम्बध के नाम से सम्बोधित करते हैं।

पूजीवाद के अतगत श्रम प्रक्रिया की विशिष्ट विशेषताए

उत्पादन के सम्बध उत्पादन के साधनों के स्वामित्व के स्वरूप पर आधारित हैं। प्रत्येक समाज मे श्रम प्रक्रिया की खास विशेषताए उत्पादन के साधनो पर स्वामित्व के स्वरूप के अनुसार होती हैं। पूजीवादी व्यवस्था मे उत्पादन के साधनो पर पूजीपति का अधिकार होता है और मजदूर उनसे वचित होते हैं। श्रम प्रक्रिया की निम्नलिखित विशेषताए पूजीवाद के लिए प्रकारात्मक हैं

पहली, मजदूर उस पूजीपति के नियत्रण म काम करता है जिसका उसके श्रम पर अधिकार होता है। पूजीपति इस बात का फसला करता है कि किस वस्तु का उत्पादन किस पमाने पर और किस तरीके से हो।

दूसरी, पूजीपति सिफ मजदूर के श्रम का ही मालिक नही होता बल्कि श्रम के उत्पादन का भी अधिकारी होता है।

य विशेषताए पूजावाद के अतगत मजदूर के श्रम को एक भारी बोझ के रूप म परिवर्तित कर देती हैं।

मूल्य-वृद्धि की प्रक्रिया। पूजीवादी शोषण

पूजीवादी उत्पादन उपयोग मूल्य का निर्माण और मूल्य वद्धि की प्रक्रियाओ का सम्मिलित रूप है। वस्तु अथव्यवस्था मे उपयोग मूल्य का उत्पादन बिना मूल्य का उत्पादन किये सम्भव नही है। मजदूर जब कोई वस्तु तैयार करता है तो वह उसम अपना श्रम खच करता है। श्रम का चरित्र दोहरा होता है। एक तरफ वह मूत श्रम है और उपयोग मूल्य का निर्माण करता है। दूसरी तरफ वह अमूत श्रम है और वस्तु के मूल्य का निर्माण करता है। पूजीपति के लिए उपयोग मूल्यो का उत्पादन उसके लक्ष्य की प्राप्ति का एक साधन है। पूजीवादी उत्पादन का लक्ष्य और प्रमुख प्रयोजन अधिशेष मूल्य का उत्पादन करना है।

अब जरा हम इस बात पर विचार करें कि अधिशेष मूल्य का उत्पादन कसे होता है।

जब पूजीपति अपना व्यवसाय प्रारम्भ करता है तब वह बाजार म जरूरत की प्रत्यक चीज—मशीन, मशीनी औजार, कच्चे माल इधन और

श्रम शक्ति खरीदता है। तत्पश्चात उत्पादन प्रारम्भ होता है। मशीन और औजार परिचालित होते हैं। मजदूर काम करते हैं। इंधन की खपत होती है। फिर कच्चे माल तैयार माल के रूप मे परिवर्तित हो जाते हैं। वस्तु के तैयार हो जाने पर पूजीपति उसे बाजार मे बेच देता है। वस्तु को बेचने से प्राप्त होने वाली मुद्रा राशि म वह और अधिक कच्चे माल मशीन, श्रम शक्ति, इत्यादि खरीदता है। दूसरे शब्दो मे हम कह सकते हैं कि पुराने चक्र की ही पुनरावृत्ति होती है। इस चक्र को यो दिखा सकते हैं

श श

मु—व < उ व'—मु'

उ सा

मुद्रा वस्तु (श्रम शक्ति और उत्पादन के साधन)—उत्पादन वस्तु मुद्रा।

अब तैयार वस्तु का मूल्य क्या होगा ?

मान लें कि पूजीपति के पास कपडे की एक मिल है। पोशाक तैयार करने के लिए वह सिलाई की मशीनें, ऊनी कपडे, कतरनें, (किनारी, बटन, धागा, इत्यादि) और श्रम-शक्ति खरीदता है। मान लें कि ५०० पोशाकें बनाने के लिए वह १,५०० गज ऊनी कपडे ३० डालर प्रति गज की दर से ४५,००० डालर मे खरीदता है। कतरन पर वह ३० डालर प्रति पोशाक के हिसाब से कुल १,५०० डालर खर्च करता है। ५०० पोशाको के उत्पादन के दौरान सिलाई मशीनो की घिसावट तथा अन्य मदों (रोशनी, गर्मी इत्यादि) मे ५,००० डालर खर्च होते हैं। ५ डालर प्रति मजदूर की दर से ५०० मजदूरो को काम पर लगाने मे २,५०० डालर व्यय करना पडता है।

इस तरह पूजीपति उत्पादन के लिए आवश्यक सभी तत्वो को प्राप्त कर लेता है। ५०० पोशाकें बनाने मे उसका कुल व्यय का ब्योरा इस प्रकार है

ऊनी कपडे का मूल्य	४५,००० डालर
कतरन का मूल्य	१५,००० डालर
घिसावट वगरह का मूल्य	५,००० डालर
श्रम शक्ति का मूल्य	२,५०० डालर
	योग ६७,५०० डालर।

अत एक पोशाक का मूल्य (६७,५००—५००) १३५ डालर होगा। पूजीपति बाजार मे देखता है कि ठीक उसी तरह की पोशाक बाजार में १३५ डालर प्रति पोशाक की दर से बची जाती है। इसलिए उसे भी अपनी पोशाक उसी कीमत पर बेचनी पडती है। हमने देखा है कि पूजीपति

ने उत्पादन में कुल ६७,५०० डालर लगाये थे और बिक्री के बाद भी उसे उतनी ही राशि (१३५ डालर × ५०० = ६७ ५०० डालर) मिल पाती है। यहा न तो किसी अधिशेष मूल्य का निर्माण हुआ और न मुद्रा का पूंजी के रूप मे परिवर्तन ही। तब फिर अधिशेष मूल्य का निर्माण कैसे होता है ?

महत्वपूर्ण बात तो यह है कि मजदूर अपनी श्रम शक्ति के मूल्य का पुनरुत्पादन पूरे काम दिवस के दौरान नही करता, बल्कि उसके एक हिस्से (मान लें कि ५ घण्टे) मे ही करता है। पूजीपति उसे ५ घण्टे से अधिक काम करने के लिए मजबूर करता है। चूकि पूंजीपति श्रम शक्ति का दैनिक मूल्य चुकाता है इसलिए उसके उपयोग मूल्य पर पूरे दिन के लिए उसका अधिकार हो जाता है। इसी वजह से वह मजदूर को ८ १० या उससे भी अधिक घण्टो तक काम करने के लिए मजबूर करता है। श्रम प्रक्रिया के विस्तार के परिणामस्वरूप मजदूर उस वस्तु (श्रम शक्ति) के मूल्य से अधिक मूल्य का निर्माण करता है।

मान लें कि पूजीपति मजदूरों से ५ घण्टे नही बल्कि १० घण्टे काम लेता है। १० घण्टे मे मजदूर (इस उदाहरण म ५०० मजदूर) उत्पादन के दुगुने साधनो का इस्तेमाल करेंगे और १ ००० पोशाक बनायेंगे।

पूजीपति के व्यय का ब्योरा इस प्रकार होगा

ऊनी कपडे का मूल्य	६० ००० डालर
कतरन का मूल्य	३० ००० डालर
घिसावट इत्यादि का मूल्य	१० ००० डालर
श्रम शक्ति का मूल्य	२ ५०० डालर
योग	१३२ ५०० डालर

१० घण्टे के काम दिवस के दौरान मजदूरो ने १ ००० पोशाकें बनायी हैं। बाजार म उनकी बिक्री (१३५ डालर प्रति पोशाक की दर) से पूजी-पति को १ ३५ ००० डालर प्राप्त हुए। उसने इसके लिए सिर्फ १ ३२ ५०० डालर व्यय किये थे। २५,००० डालर की अधिक राशि अधिशेष मूल्य है। मुद्रा का पूजी के रूप म परिवर्तन हो गया है।

अधिशेष मूल्य इसलिए मिला है कि मजदूरो ने अपनी श्रम शक्ति के मूल्य के पुनरुत्पादन के लिए आवश्यक काम के घण्टों से अधिक लगाये हैं। अत अधिशेष मूल्य पूजीपति वर्ग द्वारा मजदूर वर्ग के शोषण का ही परिणाम है।

मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण को पूजीवाद ने जन्म नहीं दिया। यह शोषण पहले भी मौजूद था। दास और सामन्तवादी समाज म दासो और

कमिया का श्रम स्पष्ट रूप मे बलात श्रम था। उनका शोषण गुप्त या छदमावरण मे लिपटा नही था।

पूजीवाद के अतगत भिन्न स्थिति होती है। यहा मजदूर व्यक्तिगत रूप से किसी पर निभर नहीं होत। उन पर किसी पूजीपति विशेष का अधिकार नहीं होना। पूजीपति उन्हें काम करने के लिए मजबूर नही कर सकत। मजदूरा के पास न तो उत्पादन के साधन होते हैं और न जीवन निवाह के साधन ही। इस वजह स उन्हें अपनी श्रम शक्ति को वेचने के लिए मजबूर होना पडता है। भूख मजदूरा को पूजीपति के लिए काम करने के वास्ते मजबूर कर देती है। अत मजदूर श्रम की व्यवस्था को मजदूर दासता की व्यवस्था कहते हैं।

पूजीवाद के अतगत श्रम को बलात लेने वाला चरित्र छिपा रहता है।

पूजीवादी शोषण का रहस्योदघाटन करने के बाद मार्क्स ने उत्पादन के पजीवादी ढग का बुनियादी आर्थिक नियम ढूढ निकाला। उन्होंने लिखा—'अधिशेष मूल्य का उत्पादन उत्पादन की इस प्रणाली का निरपेक्ष नियम है।' [१]

अधिशेष मूल्य का नियम हमे पूजीवादी समाज म चलने वाली सभी क्रियाओ और घटनाओ का समझने और उनकी व्याख्या करने में मदद देता है। यह नियम पूजीवादी समाज के शोषक स्वरूप को दर्शाता है। यह नियम प्रतिद्वद्विता की तीव्रता और पजीवादी उत्पादन की अराजकता, मेहनतकश जनता की बढती हुई दरिद्रता एव बेरोजगारी और पूजीवाद के सभी अन्तर्विरोधो की गहराई तथा तीव्रता को निर्धारित करता है।

आवश्यक और अधिशेष श्रम काल

पूजीवादी उद्यम मे काय दिवस को दो भागों मे—आवश्यक श्रम-काल और अधिशेष श्रम-काल—मे बाटते हैं। इसी के अनुकूल मजदूर का श्रम भी दो भागो—आवश्यक और अधिशेष श्रम—मे विभाजित होता है।

आवश्यक श्रम-काल और आवश्यक श्रम श्रमिक द्वारा व्यय किये गय श्रम-काल और श्रम के वे हिस्से हैं जो उसकी श्रम शक्ति के मूल्य (यानी उसके द्वारा अपेक्षित जीवन निर्वाह के साधनों के मूल्य) के पुनरुत्पादन के लिए आवश्यक हैं। पूजीपति मजदूर को आवश्यक श्रम-काल के लिए मजूरी के रूप मे भुगतान करता है।

अधिशेष श्रम-काल और अधिशेष श्रम श्रम और श्रम-काल के वे भाग हैं जिन्हें अधिशेष पैदावार के उत्पादन के लिए व्यय किया जाता है। पूजीवाद

१ कार्ल मार्क्स, 'पूजी', खड १, पृष्ठ ६७८।

के अन्तगत अधिशेष उत्पादन पूजीपति द्वारा हडपे जाने वाले अधिशेष मूल्य का रूप ग्रहण कर लेता है। अधिशेष श्रम या अधिशेष श्रम काल का आवश्यक श्रम या आवश्यक श्रम काल के साथ अनुपात मजदूर के शोषण की मात्रा जाहिर करता है। फलस्वरूप अधिशेष श्रम काल और अधिशेष श्रम एक निश्चित सामाजिक सम्बध व्यक्त करता है। यह सम्बध उत्पादन के साधनो के स्वामियो—पूजीपतियो द्वारा मजदूर वग के शोषण की व्यवस्था की विशिष्टता है।

उत्पादन के साधनो का पूजीवादी स्वामित्व और मजदूर के श्रम का शोषण पूजीवादी समाज को दो परस्पर विरोधी वर्गों म बाट देते हैं।

मार्क्स और एगेल्स ने सिद्ध कर दिया कि उत्पादन के साधनो (भूमि, भूगभ श्रम के उपकरणो या सक्षेप म यो कहे कि भौतिक धन के उत्पादन के लिए आवश्यक प्रत्येक चीज) पर निजी स्वामित्व होने के बाद से ही समाज वर्गों मे बट गया। समाज का अल्पसख्यक हिस्सा उत्पादन के साधनो का मालिक बन बठा और फलस्वरूप उत्पादन के साधनो से वचित समाज के दूसर हिस्से का शोषण करने लगा।

पूजीवादी समाज का वग ढाचा

लेनिन ने कहा कि एक शोषक समाज में वग लोगों के समूह होते हैं। इस समाज मे एक समूह दूसरे समूह के श्रम का उत्पादन के साथ अलग-अलग सम्बध होने के कारण हडप जाता है।

समाज का पहला वग विभाजन दास स्वामियो और दासो के बीच हुआ था। दासता से सामन्तवाद तक पहुचने के बाद यह विभाजन सामन्तो और कमिया लोगो के बीच हुआ।

पूजीवादी समाज की विशेषता यह है कि उसमे दो परस्पर विरोधी बुनियादी वग—पूजीपति वग और सवहारा वग हैं। पूजीपति वग उत्पादन के साधनो पर अधिकार रखने वाला वग है। पूजीपति उनका इस्तेमाल अधिशेष मूल्य प्राप्त करने के लिए मजदूरो का शोषण करने मे करते हैं। सवहारा वग मजदूरो का वह वग है जो उत्पादन के साधनो से वचित है। अत उसका पूजीवादी शोषण होता है। पूजीपति वग और सवहारा वग के अतिरिक्त पूजीवाद के अन्तगत सामन्तवादी व्यवस्था के अवशेष के रूप म भूस्वामियो और किसानो का वग भी होता है।

पूजीपति वग और सवहारा वग दो परस्पर विरोधी वग हैं। इन वर्गों के हित परस्पर विरोधी और असमाधेय होते हैं। जसे-जसे पूजीवाद का विस्तार होता जाता है वसे वसे सवहारा वग की ताकत भी बढ़ती जाती है और यह

अपने वर्ग-स्वार्थों के प्रति जागरूक होता जाता है। वह पूंजीपति वर्ग के विरुद्ध संघर्ष के लिए अपने आपको विकसित और संगठित करता है। पूंजीवादी समाज का मुख्य लक्षण है पूंजीपति वर्ग के विरुद्ध सर्वहारा वर्ग का संघर्ष। इस समाज में सर्वहारा वर्ग सबसे बड़ा क्रान्तिकारी वर्ग है। वह पूंजीवादी समाज की कब्र खोदने वाला है।

पूंजीवादी राज्य पूंजीवाद के अन्तर्गत मौजूद सामाजिक आर्थिक और राजनीतिक विषमता की रक्षा करता है। वह उत्पादन के साधनों के पूंजीवादी निजी स्वामित्व की रक्षा करता है और मेहनतकश जनता के शोषण के लिए एक यंत्र है। पूंजीवादी राज्य पूंजीवादी व्यवस्था के विरुद्ध मेहनतकश जनता के संघर्ष को कुचल देता है।

पूंजीवादी समाजशास्त्री और विधिवेत्ता पूंजीवादी राज्य को वर्ग और समाज के ऊपर रखते हैं। लेकिन वास्तविकता यह है कि पूंजीवादी राज्य अर्थ-व्यवस्था पर आधिपत्य रखने वाले वर्ग का राजनीतिक संगठन है। यह पूंजीपति वर्ग का अधिनायकत्व है।

शोषक राज्य का मुख्य कार्य शोषित बहुमत को जकड़े रखना और शासक वर्गों का गुलाम बनाये रखना है। पूंजीवादी राज्य के कई रूप (राजतंत्र या गणतंत्र) हैं। इसके अन्तर्गत कई प्रकार के शासनतंत्र (जनतांत्रिक या फासिस्ट और निरंकुशवादी) हो सकते हैं। किन्तु सब रूपों में वस्तुगत समानता है। वे पूंजीपति वर्ग का अधिनायकत्व हैं। शोषक राज्य का उद्देश्य पूंजी के द्वारा भाड़े पर लगाये गये श्रम के शोषण की व्यवस्था को बनाये रखना और मजबूत करना है।

४ पूंजी और उसके अवयव

पूंजीवादी अर्थशास्त्रियों के अनुसार आदिम मनुष्य के पत्थर और डंडे से लेकर अब तक श्रम का प्रत्येक उपकरण पूंजी है, किन्तु वास्तव में उत्पादन का प्रत्येक साधन अपने आप पूंजी नहीं होता। किसी समाज के अस्तित्व के लिए उत्पादन के साधन अपरिहार्य हैं। इस दृष्टि से वे वर्गों के लिए महत्वहीन हैं। उत्पादन के साधन तभी पूंजी का रूप धारण कर लेते हैं जब वे पूंजीपतियों की निजी सम्पत्ति होते हैं और उनका इस्तेमाल मजदूर वर्ग के शोषण के लिए होता है। पूंजी न तो मुद्रा की एक निश्चित राशि है और न उत्पादन का साधन। वह ऐतिहासिक रूप से निर्धारित सामाजिक आर्थिक सम्बंध है जिसमें उत्पादन के साधन और उपकरण तथा जीवन निर्वाह के बुनियादी साधन पूंजीपति वर्ग की सम्पत्ति होते हैं जबकि दूसरी ओर समाज की

उत्पादन के सामाजिक सम्बन्ध के रूप में पूंजी

मुख्य उत्पादन शक्ति मजदूर वर्ग उत्पादन के साधनों और जीवन निर्वाह के साधनों से वंचित है। अतः मजदूर वर्ग को अपनी श्रम शक्ति पूंजीपतियों के हाथों बेचनी पड़ती है और शोषण की मार सहनी पड़ती है। संक्षेप में, पूंजी वह मूल्य है जो मजदूरों के शोषण द्वारा अधिशेष मूल्य की सृष्टि करती है।

पूंजी के मूल तत्त्व तथा पूंजीवादी शोषण के सार को समझने के लिए आवश्यक है कि हम पूंजी के अचल और चल पूंजी के रूप में विभाजन को समझें। इस विभाजन को समझने पर ही हम इस प्रश्न का उत्तर दे सकते हैं कि अधिशेष मूल्य की उत्पत्ति कैसे होती है?

जब पूंजीपति उत्पादन प्रारम्भ करता है तब वह अपनी पूंजी का एक हिस्सा कारखानों की इमारत, मशीन, साज-सामान और मशीनों द्वारा कच्चा माल और अन्य सहायक सामग्रियों को खरीदने में व्यय करता है।

अचल और चल पूंजी

पूंजी का यह भाग (जो उत्पादन के साधनों के रूप में होता है) श्रम की प्रक्रिया में अपना परिमाणात्मक परिवर्तन नहीं करता। जिस हद तक उत्पादन के साधन घिस जाते हैं उस हद तक उनके मूल्य का हस्तान्तरण वस्तु में हो जाता है। जब कच्चे माल, सहायक सामग्रियों और ईंधन का मूल्य उत्पादन की प्रक्रिया में पूर्ण रूपेण हस्तान्तरित हो जाता है। उदाहरण के लिए एक मशीन को ले लें। मान लें कि मशीन उत्पादन की प्रक्रिया में १० वर्ष तक काम कर सकती है। इस स्थिति में प्रत्येक वर्ष मशीन के मूल्य का १०वां भाग उसके द्वारा उत्पन्न नयी वस्तुओं को हस्तान्तरित हो जायगा। पूंजी का वह भाग जो उत्पादन के साधनों (मशीन, मशीनी औजार, कच्चा माल इत्यादि) पर व्यय किया जाता है और जो अपने परिमाण को नहीं बदल पाता है अचल पूंजी कहा जाता है। हम इसे अ पू से सूचित करेंगे।

पूंजीपति अपनी पूंजी का दूसरा भाग श्रम शक्ति को खरीदने के लिए व्यय करता है। उत्पादन की प्रक्रिया के अन्त में उसे एक नया मूल्य प्राप्त होता है जिसे उसके उद्यम में मजदूरों ने पैदा किया है। नया मूल्य श्रम शक्ति के मूल्य से अधिक होता है। पूंजीपति श्रम शक्ति के मूल्य का भुगतान मजूरी के रूप में करता है। पूंजी का वह भाग जिसे पूंजीपति श्रम शक्ति को खरीदने के लिए इस्तेमाल करता है और जो उत्पादन की प्रक्रिया में मजदूरों के द्वारा अधिशेष मूल्य की सृष्टि के कारण बढ़ता है, चल पूंजी कहा जाता है। इसे हम च पू से सूचित करेंगे।

मार्क्स ने ही पहले पहल पूंजी को दो भागों—अचल और चल पूंजी—में बांटा और पूंजी के रहस्य का उद्घाटन किया। उन्होंने दिखलाया कि सिर्फ चल पूंजी ही अधिशेष मूल्य की उत्पत्ति करती है।

पूजीवादी अर्थशास्त्री इस विभाजन को स्वीकार नही करते। इस तरह पूजीवाद के वकील के रूप मे वे उसके शोषक चरित्र को छिपाना चाहते हैं। पूजीपति अपने व्यावसायिक खाते म पूजी को स्थिर और चलायमान पूजी के रूप मे विभाजित करता है। इसी विभाजन को पूजीवादी अर्थशास्त्री मान्यता देते हैं। पूजी का यह विभाजन उत्पादन के यत्न की व्याख्या करने म सहायता करता है लेकिन पूजीवादी शोषण के ऊपर प्रकाश नहीं डालता।

स्थिर और चलायमान पूजी

उत्पादक पूजी अपने मूल्य को तयार माल म तत्काल या कई चरणो म हस्तान्तरित कर देती है। हस्तान्तरण का ढग ही पूजी के स्थिर और चलायमान पूजी के रूप म विभाजन का आधार है।

स्थिर पूजी से हमारा मतलब उस पूजी स है जो तैयार माल को अपना मूल्य कई चरणो म अपने (इमारतें, मशीन मशीनी औजार) घिसने के साथ साथ हस्तान्तरित करती है। चलायमान पूजी से हमारा तात्पर्य उस भाग से है जो श्रम-शक्ति कच्चा माल सहायक सामग्री तथा इधन पर व्यय किया जाता है। यह पूजी उत्पादन के उसी काल म पूजीपति को वस्तु बेचने के बाद मुद्रा राशि के रूप मे वापस मिल जाती है।

स्थिर और चलायमान पूजी के रूप मे पूजी का विभाजन उत्पादन के साधनो और श्रम शक्ति के मूल विभेद को छिपा लेता है। यहा पर श्रम शक्ति और कच्चे माल तथा सहायक सामग्रिया इधन, इत्यादि को एक साथ रखते हैं। ये उत्पादन के अन्य साधनो स अलग रखे जाते हैं। अधिशेष मूल्य की सृष्टि में श्रम शक्ति जो हिस्सा अदा करती है उसे यह विभाजन छिपा देता है और इस तरह पूजीवादी शोषण के ऊपर एक पर्दा डाल देता है।

पूजी के इन दोनो प्रकार के विभाजनो को हम इस प्रकार दिखा सकते हैं :-

शोषण की प्रक्रिया मे महत्व की दृष्टि स विभाजन		प्रचलन के तरीके के अनुसार विभाजन
अचल पूजी	कारखाने की इमारतें और स्थान, साज-सामान मशीन कच्चे माल तथा सहायक सामग्रिया,	स्थिर पूजी
चल पूजी	इधन मजदूरो की मजूरी	चलायमान पूजी

अधिशेष मूल्य की मात्रा और दर

अधिशेष मूल्य का एक निश्चित—निरपेक्ष या सापेक्ष—परिमाण होता है। अधिशेष मूल्य के निरपेक्ष परिमाण को अधिशेष मूल्य की मात्रा कहते हैं। यह शोषण के अंश तथा शोषित मजदूरों की संख्या पर निर्भर है। अधिशेष मूल्य के सापेक्ष परिमाण को अधिशेष मूल्य की दर या शोषण के अंश के रूप में व्यक्त करते हैं।

पूंजी के अचल पूंजी और चल पूंजी के रूप में विभाजन की व्याख्या करके मार्क्स ने न सिर्फ पूंजीवादी शोषण के चरित्र का भंडा खोला, बल्कि शोषण के अंश को मापने का तरीका भी बतलाया।

अचल पूंजी (अ पू) अधिशेष मूल्य की सृष्टि नहीं करती अतः अधिशेष मूल्य की दर को निर्धारित करते समय उसे अलग कर देना चाहिए। चल पूंजी (च पू) ही अधिशेष मूल्य की सृष्टि करती है। इस कारण से अधिशेष मूल्य के सापेक्षिक परिमाण को निर्धारित करते समय अधिशेष मूल्य को चल पूंजी की ही दृष्टि से देखना चाहिए तभी हमें अधिशेष मूल्य की दर प्राप्त हो सकती है। श्रम शक्ति के शोषण के अंश के लिए यह सही अभिव्यक्ति है। अगर हम अ' से अधिशेष मूल्य की दर को सूचित करें और अ से अधिशेष मूल्य को तो हमें निम्न लिखित समीकरण मिलेगा

$$अ' = \times \frac{अ}{च\ पू} \times १००\%$$

इसे स्पष्ट करने के लिए एक उदाहरण लें। मान लें कि कोई पूंजीपति वस्तुओं के उत्पादन के लिए निम्नलिखित राशि (डालर में) देता है

१ ०० ००० अ पू + २० ००० च पू = १ २० ०००

मान लें कि वह अपने मजदूरों द्वारा उत्पन्न वस्तुओं को १ ४० ००० डालर में बेच देता है तो इसका मतलब है कि उसे अधिशेष मूल्य के रूप में २०,००० डालर मिलते हैं।

अधिशेष मूल्य की दर क्या होगी ?

$$अ' = \frac{अ}{च\ पू} \times १००\% = \frac{२० \ ०००}{२० \ ०००} \times १००\% = १००\%$$

यह उदाहरण बतलाता है कि यहां मजदूर का श्रम दो बराबर भागों—आवश्यक और अधिशेष श्रम—में विभाजित है। कार्य दिवस के आधे भाग में मजदूर अपने लिए काम करता है और आधे भाग में बिना मजूरी लिये पूंजीपति के

लिए काम करता है। अधिशेष श्रम का आवश्यक श्रम के साथ अनुपात जितना ही अधिक होगा शोषण की दर उतनी ही अधिक होगी।

पूंजीवाद के विकास के साथ अधिशेष मूल्य में भी वृद्धि होती है। अमरीका मे खाना तथा प्रोसेसिंग उद्योगो म अधिकृत आकडो के आधार पर गणना करने पर हम पाते हैं कि अधिशेष मूल्य की दरें इस प्रकार थी १८८९ म १४५ प्रतिशत, १९१९ मे १६५ प्रतिशत, १९२९ म २१० प्रतिशत, १९३९ मे २२० प्रतिशत, १९४७ मे २६० प्रतिशत और १९५५ म (सिर्फ प्रोसेसिंग उद्योगो के लिए) ३०६ ३ प्रतिशत।

अब प्रश्न है पूंजीवाद के अन्तर्गत शोषण के अश म किस प्रकार वृद्धि होती है ?

५ मजदूर वर्ग के शोषण का अश बढाने के दो तरीके

जसा कि हमने ऊपर कहा है पूंजीवाद के अन्तर्गत काय दिवस को दो भागो में बाटा जाता है १) आवश्यक श्रम-काल जिसकी आवश्यकता श्रम शक्ति के मूल्य के बराबर मूल्य उत्पन्न करने के लिए होती है और २) अधिशेष श्रम-काल जिसके दौरान मजदूर पूंजीपति के लिए काम करके अधिशेष मूल्य की सृष्टि करता है।

निरपेक्ष अधिशेष मूल्य

उदाहरण के लिए १० घटा का काय दिवस लें। उनम से ५ घटे आवश्यक श्रम-काल के हैं और ५ घटे अधिशेष श्रम-काल के। इसे हम एक रेखा-चित्र से दिखला सकते हैं

५ घटे	५ घटे
आवश्यक श्रम काल	अधिशेष श्रम-काल

इस उदाहरण म अधिशेष मूल्य की दर

$$अ' = \frac{अ}{च पू} = \frac{५ \text{ घटे अधिशेष काल}}{५ \text{ घटे आवश्यक काल}} \times १००\% = १००\%$$

अगर आवश्यक श्रम-काल स्थिर रहे तो काय दिवस को बढा कर ही अधिशेष श्रम-काल को बढाया जा सकता है। इसका अथ होगा अधिशेष मूल्य की दर तथा मजदूर के शोषण के अश मे वृद्धि। मान लें कि काय दिवस को १० घटे

को १२ घंटे कर दिया गया तब अतिरिक्त श्रम-काल ५ घंटे के बजाय ७ घंटे का होगा। अगर ऐसा है तब अतिरिक्त मूल्य की दर $\frac{७}{५} \times १००\% = १४०\%$ होगी।

कार्य दिवस को बढ़ाकर जो अतिरिक्त मूल्य उत्पन्न किया जाता है उसे मार्क्स ने निरपेक्ष अतिरिक्त मूल्य कहा है। चूंकि अतिरिक्त मूल्य के लिए पूंजीपति की भूख असन्तोष होती है इसलिए वह कार्य दिवस को अन्तिम हद तक बढ़ाने की कोशिश करेगा।

किस सीमा तक पूंजीपति कार्य दिवस को बढ़ा सकते हैं? अगर वे कार्य दिवस को बढ़ाने में समर्थ हैं तो भी वे मजदूरों को प्रतिदिन २४ घंटे काम करने के लिए मजबूर कर सकते हैं। लेकिन यह भी सम्भव नहीं है क्योंकि प्रत्येक मनुष्य को हर दिन और रात को विश्राम करने तथा खाने और नहाने में कुछ समय लगाना आवश्यक है। ये आवश्यकताएं कार्य दिवस की विशुद्ध प्राकृतिक सीमाओं को निर्धारित करती हैं। प्राकृतिक सीमाओं के अतिरिक्त नैतिक सीमाएं भी हैं क्योंकि समाज के एक सदस्य के नाते मजदूर को अपनी सांस्कृतिक और सामाजिक जरूरतों (पुस्तक और समाचारपत्र पढ़ना, सिनेमा देखना, सभाओं में जाना, आदि) को पूरा करना आवश्यक है। लेकिन चूंकि कार्य दिवस की प्राकृतिक और नैतिक सीमाएं लचीली होती हैं इसलिए पूंजीवाद के अंतर्गत कार्य दिवस ८, १०, १२ या उससे भी अधिक घंटों का हो सकता है।

पूंजीवाद के प्रारम्भिक चरणों में राज्य ने पूंजीपतियों के हित में कार्य दिवस को बढ़ा करने के लिए विशेष कानून जारी किया था। बाद में यांत्रिक उत्पादन के प्रसार और बेरोजगारी की वृद्धि के कारण कार्य दिवस को बढ़ाने की कोई आवश्यकता नहीं रही। पूंजीपति आर्थिक दबाव डालकर मजदूरों को अधिकतम सम्भव समय तक काम करने के लिए मजबूर करने लगे।

तब मजदूर वर्ग ने कार्य दिवस को छोटा करने के लिए संघर्ष छेड़ दिया। संघर्ष सबसे पहले इंगलैंड में शुरू हुआ। यह संघर्ष विशेषकर प्रथम इंटरनेशनल और १८६६ में बाल्टीमोर में हुई श्रमिक कांग्रेस के बाद तीव्र हो गया। इस कांग्रेस ने ८ घंटे के कार्य दिवस का नारा दिया। मजदूर वर्ग के संघर्ष के फलस्वरूप बहुतेरे पूंजीवादी देशों में कार्य दिवस को नियंत्रित करने के लिए कानून बनाये गये। प्रश्न उठता है अगर कार्य दिवस को बहुत बड़ा नहीं किया जा सकता तो कोई पूंजीपति किस प्रकार बड़ी मात्रा में अतिरिक्त मूल्य प्राप्त कर लेता है?

अधिशेष मूल्य को बढ़ाने का दूसरा तरीका है आवश्यक श्रम-काल को कार्य दिवस के घटे पूर्ववत रखते हुए छोटा कर देना, जिससे अधिशेष श्रम-काल बढ़ सके। यह कैसे होता है? स्मरण रहे कि श्रम शक्ति के मूल्य का निर्धारण मजदूर के जीवन निर्वाह के साधनों पर व्यय की गयी श्रम की मात्रा से होता है। अगर उपभोक्ता वस्तुओं को उत्पन्न करने वाले उद्योगों में श्रम-उत्पादकता बढ़ जाती है तो उपभोक्ता वस्तुओं का मूल्य कम हो जायेगा। इसका अर्थ होगा श्रम शक्ति के मूल्य में ह्रास। फलस्वरूप अधिशेष श्रम काल बढ़ जायेगा।

सापेक्ष अधिशेष मूल्य

मान लें कि हम १० घंटे के कार्य दिवस को ५ घंटे के आवश्यक श्रम-काल और ५ घंटे के अधिशेष श्रम-काल में विभाजित करते हैं। यह भी मान लें कि उपभोक्ता वस्तुओं के उद्योग में श्रम-उत्पादकता में वृद्धि होने के फलस्वरूप आवश्यक श्रम-काल ५ घंटों से घटकर ३ घंटे हो जाता है। अब अधिशेष श्रम-काल निस्सदेह ५ घंटे से बढ़कर ७ घंटे हो जायगा। कार्य दिवस में कोई परिवर्तन नहीं होने पर भी शोषण का अंश (या अधिशेष मूल्य की दर) ऊंचा हो जायेगा। इस उदाहरण में हम कार्य दिवस को इस प्रकार दिखा सकते हैं

५ घंटे	५ घंटे
आवश्यक श्रम काल	अधिशेष श्रम-काल

प्रतिशत के रूप में अधिशेष मूल्य की दर होगी $अ' = \frac{५}{५} \times १००\% = १००\%$

३ घंटे	७ घंटे
आवश्यक श्रम-काल	अधिशेष श्रम-काल

अधिशेष मूल्य की दर होगी $अ' = \frac{७}{३} \times १००\% = २३३$ प्रतिशत।

हमारे उदाहरण में कार्य दिवस की लम्बाई में निरपेक्ष वृद्धि के कारण नहीं बल्कि आवश्यक और अधिशेष श्रम-काल के अनुपात में परिवर्तन हो जाने के

फलस्वरूप ही अधिशेष मूल्य की दर १०० प्रतिशत से बढ़कर २३३ प्रतिशत हो गयी है।

बढ़ी हुई श्रम उत्पादकता के फलस्वरूप आवश्यक श्रम काल में कमी तथा अधिशेष श्रम काल में सगत वृद्धि करके जो अधिशेष मूल्य प्राप्त किया जाता है उसे सापेक्ष अधिशेष मूल्य कहते हैं। कई स्थितियों में पूजीपति अतिरिक्त अधिशेष मूल्य प्राप्त कर लेता है।

अतिरिक्त अधिशेष मूल्य सापेक्ष अधिशेष मूल्य का ही एक रूप है। प्रत्येक पूजीपति अधिकतम मुनाफा कमाना चाहता है। इस उद्देश्य से वह नयी मशीन और टेक्नालाजी का प्रयोग करता है और इस प्रकार उच्च उत्पादकता प्राप्त कर लेता है। फलस्वरूप उसके उद्यम में उत्पन्न होने वाली वस्तुओं का मूल्य इसी तरह के अन्य उद्यमों में उत्पन्न होने वाली इसी प्रकार की वस्तुओं के औसत मूल्य की अपेक्षा कम हो जाता है। चूंकि किसी वस्तु की बाजार कीमत उत्पादन में मौजूद औसत स्थितियों से निर्धारित होती है इसलिए पूजीपति को अधिशेष मूल्य की सामान्य दर की तुलना में ऊंची दर प्राप्त होती है।

अतिरिक्त अधिशेष मूल्य

वस्तु के सामाजिक मूल्य और उसके निम्न व्यक्तिगत मूल्य के अन्तर को अतिरिक्त अधिशेष मूल्य कहते हैं। इसकी दो विशेषताएं हैं पहली यह उन्हीं उद्यम विशेष को प्राप्त होता है जो औरों से पहले नये और अधिक उत्पादक सयन्त्र लगाते हैं दूसरी किसी भी पूजीपति को अतिरिक्त अधिशेष मूल्य अस्थायी तौर पर मिल सकता है क्योंकि देर-सवेर अन्य पूजीपतियों के उद्यमों में भी नयी मशीन लग जायेगी और कुछ विशेष लोगों का लाभ खत्म हो जायेगा और उनको अतिरिक्त अधिशेष मूल्य मिलना बन्द हो जायेगा। अगर इसी बीच किसी अन्य उत्पादक ने अपने उद्यम में और भी उत्पादक मशीन लगा ली तो उसे ही अब अतिरिक्त अधिशेष मूल्य मिलने लगेगा।

पूजीवाद के विकास में अतिरिक्त अधिशेष मूल्य एक महत्वपूर्ण हिस्सा अदा करता है। अतिरिक्त अधिशेष मूल्य हासिल करने की महत्वाकांक्षा के कारण ही टेक्नालाजी में स्वत विकास होता है। चूंकि प्रत्येक पूजीपति के सामने उसकी अपनी समृद्धि का लक्ष्य रहता है इसलिए वह अपनी नयी मशीन और उत्पादन टेक्नालाजी को गुप्त रखता है जिससे अन्य उद्योगपति उनका इस्तेमाल नहीं कर पाते। इसके कारण पूजीपतियों में पारस्परिक प्रतिद्वन्द्विता बढ़ जाती है और उनके पारस्परिक अन्तर्विरोध तीव्र हो जाते हैं। परिणामस्वरूप कुछ उद्योगपति बर्बाद हो जाते हैं और कुछ धनी हो जाते हैं।

निर्माणशाला मे श्रम की दशाएं बहुत ही कठिन थी। एक ही तरह के साधारण संचलन की निरन्तर पुनरावृत्ति ने मजदूर को शारीरिक और मानसिक रूप से अपंग कर दिया था। उसका कार्य दिवस १८ घंटे या उससे भी अधिक तक पहुच गया था, लेकिन मजूरी बहुत ही कम थी।

हाथो के द्वारा होने वाले उत्पादन ने बड़े पैमाने के मशीनी उत्पादन के लिए स्थितियां पैदा कर दी गयी १) कार्य-परिचालन विधियो के सरल हो जाने के कारण मजदूर हाथो के बदले मशीन से काम करने लगे, २) अलग अलग प्रक्रियाओ के पूरा होने के कारण औजारो मे विशेषीकरण बढ़ा, फलस्वरूप हाथ द्वारा चलाये जाने वाले औजारो के बदले मशीनें आयी, ३) हाथो के द्वारा होने वाले उत्पादन ने मशीन उद्योग के लिए दक्ष मजदूर तैयार किये। इस तरह हाथो के द्वारा होने वाले उत्पादन ने एक ऐतिहासिक भूमिका अदा की।

कारखाने तक पहुचने के लिए हाथो के द्वारा होने वाला उत्पादन एक संक्रान्ति काल के रूप मे आया। सर्वप्रथम कार्य करने वाली मशीन आयी। इस मशीन ने वही कार्य करना प्रारम्भ कर दिया जो कार्य पहले मजदूर करते थे किन्तु ऐसी मशीन को चलाना एक मजदूर की मांसपेशियो की शक्ति से बाहर की बात थी। तब एक प्रेरक यंत्र—वाष्प इंजन—को ईजाद किया गया जिसने नयी मशीन को संचालित करना प्रारम्भ कर दिया। इन सबके फलस्वरूप पूजीवादी कारखाने का उदय हुआ। पूजीवादी कारखाना वह इकाई था जिसमे वस्तुओ के उत्पादन के लिए एक-दूसरे से सम्बद्ध कई मशीनें व्यवहृत की जाने लगीं।

मशीनो के प्रयोग और उनमे सुधार के कारण श्रम उत्पादकता बढ़ाने और वस्तुओ को सस्ता करने की नयी सम्भावनाए उत्पन्न हुई। मशीनों के बढ़ते प्रयोग ने छोटे वस्तु उत्पादको की बहुत बड़ी संख्या को बर्बाद कर दिया और जिन वर्कशापो मे हाथो से काम होता था वे बन्द हो गये।

श्रम को पूजी द्वारा गुलाम बनाने की दिशा मे पूजीवादी कारखाना एक नया चरण था। अब मजदूर मशीन के एक उपांग की भूमिका अदा करने लगे। मशीनो के पूजीवादी व्यवहार के कारण कार्य दिवस लम्बा हो गया औरतो और बच्चों को काम पर लगाया गया, बेरोजगारो की एक बड़ी फौज तैयार हो गयी और मजदूर वर्ग की हालत बदतर हो गयी।

पूजीपति मशीन का व्यवहार सदा नही करता। पूजीपति मशीन का प्रयोग तभी तक करता है जब तक उसकी कीमत मशीन द्वारा विस्थापित मजदूरो की मजूरी से कम होती है। पूजीपति मशीन का प्रयोग तभी तक करता है जब तक उसका इस्तेमाल उसके फायदे मे होता है। मशीनी उत्पादन के कारण हाथ से काम किया जाना बिल्कुल खत्म नही होता। अमरीका और ब्रिटेन जैसे अत्यन्त

विकसित औद्योगिक देशों में शारीरिक श्रम का अब भी व्यापक रूप से इस्तेमाल होता है।

हाथों से उत्पादन करने के ढंग से कारखाने तक संक्रमण ने उत्पादन की पूंजीवादी प्रणाली को अच्छी तरह स्थापित कर दिया।

बड़े पैमाने के मशीनी उत्पादन ने श्रम और उत्पादन के स्वत समाजीकरण की प्रक्रिया के लिए आधार तैयार कर दिया। हाथ से संचालित होने वाली मशीनों का इस्तेमाल करने वाले छोटे वर्कशापों को विभिन्न व्यवसायों में हजारों आदमियों को काम देने वाले बड़े कारखानों ने उखाड़ फेंका। श्रम विभाजन का और विस्तार हुआ। सभी उद्यम और उद्योग परस्पर सम्बद्ध और एक दूसरे पर निर्भर हो गये। हम जानते हैं कि इंजीनियरिंग संयंत्र के लिए लोहा और इस्पात के कारखाने के उत्पादनों के बिना काम करना असम्भव हो जाता है। लोहा और इस्पात के कारखाने कोयले के बिना काम नहीं कर सकते। कोयले की खानें इंजीनियरिंग तथा अन्य संयंत्रों पर निर्भर होंगी। इस तरह उत्पादन ने एक सामाजिक चरित्र ग्रहण कर लिया।

पूंजीवाद का मूल अन्तर्विरोध

इस दौरान सभी प्रकार के उद्यम, भूमि और भू धन निजी सम्पत्ति ही रहे। सामाजिक श्रम के उत्पादन को पूंजीपति हड़प गये। परिणामस्वरूप उत्पादन के सामाजिक चरित्र और उत्पादन की फल प्राप्ति के निजी और पूंजीवादी रूप में एक अन्तर्विरोध पैदा हो गया। यही पूंजीवाद का मूल अन्तर्विरोध है।

पूंजीवाद का मूल अन्तर्विरोध निरन्तर विकसित होने वाली उत्पादक शक्तियों और पूंजीवादी उत्पादन सम्बन्धों के अन्तर्विरोध के रूप में जाहिर होता है। जैसे जैसे उत्पादन का समाजीकरण होता जाता है, वैसे वैसे उत्पादक शक्तियों के विस्तार के मार्ग में पूंजीवादी रुकावटें आने लगती हैं। इन रुकावटों को दूर करने के लिए पूंजीवादी सम्पत्ति का उन्मूलन आवश्यक हो जाता है। पूंजीवाद उत्पादक शक्तियों को विकसित कर अपनी (पूंजीवाद की) कब्र खोदने वाले सर्वहारा वर्ग को जन्म देता है। सर्वहारा वर्ग ही वह शक्ति है जिसके हाथों निजी सम्पत्ति का उन्मूलन और उसकी जगह सामाजिक स्वामित्व की स्थापना निश्चित है।

६ पूंजीवाद के अन्तर्गत मजूरी

मजूरी का मूल स्वभाव

हमने अब तक यह स्पष्ट किया है कि पूंजीवाद के अन्तर्गत अन्य वस्तुओं की तरह ही श्रम शक्ति का भी एक मूल्य होता है। श्रम शक्ति के मूल्य की मुद्रा के रूप में अभिव्यक्ति को श्रम शक्ति की कीमत कहते हैं।

पूजीवादी शोषण को छिपाने के लिए पूजीवादी अर्थशास्त्री कहते हैं कि मजूरी ही श्रम की कीमत है। वे कहते हैं कि मजदूर पूजीवादी कारखाने में काम करता है, तरह-तरह की चीजों को पैदा करता है और अपने श्रम के बदले श्रम की कीमत—मजूरी पाता है।

यह इसलिए लगता है कि मजदूर को उनके द्वारा किये गये काम के लिए मजूरी मिलती है। मजदूर को एक निश्चित समय की निश्चित अवधि में काम कर चुकने के बाद ही मजूरी मिलती है। मजूरी या तो किये गये काम की अवधि (घंटे, दिन, सप्ताह) के अनुसार दी जाती है या उत्पन्न की गयी सामग्रियों के अनुसार दी जाती है। वास्तव में, जैसा कि कार्ल मार्क्स कहते हैं, मजूरी श्रम शक्ति के मूल्य या कीमत का रूपान्तरित यानी गुप्त और छद्मावरित रूप है।

श्रम स्वयं कोई वस्तु नहीं है और इस वजह से न तो इसका कोई मूल्य होता है और न कोई कीमत होती है। श्रम को बेचने के लिए जरूरी है कि बिक्री के पहले उसका अस्तित्व रहे। कोई भी व्यक्ति अस्तित्वहीन चीज को नहीं बेच सकता। जब कोई मोची अपने जूते बाजार में लाता है तो इसका अर्थ होता है कि जूतों का अस्तित्व है और वे बेचे जा सकते हैं। किन्तु जब पूंजीपति मजदूरों को काम पर लगाता है तब श्रम का कोई अस्तित्व नहीं होता। सिर्फ मजदूर के काम करने की क्षमता यानी उसकी श्रम शक्ति रहती है। इसी को मजदूर पूंजीपति के हाथों बेचते हैं। जब पूंजीपति इसे खरीदता है और मुद्रा राशि का भुगतान करता है तब उसकी मुख्य दिलचस्पी काम करने और अधिशेष मूल्य की सृष्टि करने की मजदूरों की क्षमता में होती है न कि स्वयं मजदूरों में।

चूंकि पूंजीवाद के अन्तर्गत मजूरी श्रम के लिए किये जाने वाले भुगतान का रूप ले लेती है, इसलिए ऐसा लगता है कि भुगतान सम्पूर्ण श्रम के लिए किया जाता है। मान लें कि श्रमिक को अपने और अपने परिवार के लिए जीवन निर्वाह के साधनों को उत्पन्न करने में सामाजिक तौर पर ६ घंटे काम करने की आवश्यकता होती है। अगर इस समय का एक घंटा १ डालर के बराबर हो तो सामाजिक तौर पर आवश्यक काम-काल के ६ घंटों का मूल्य ६ डालर के बराबर होगा। पूंजीपति श्रम शक्ति के पूरे मूल्य ६ डालर का भुगतान करता है, लेकिन मजदूर को १२ घंटे काम करने के लिए मजबूर करता है। इसलिए वास्तविक दर सिर्फ ५० सेंट प्रति घंटा होती है। मजूरी इस बात को छिपाती है कि पूंजीपति काम दिवस के आधे दिवस के लिए ही भुगतान करता है। अत मजूरी काम दिवस के आवश्यक और अधिशेष श्रम-काल तथा भुगतान किये गये श्रम और नहीं भुगतान किये गये श्रम के विभाजन को छिपा देती है। मजूरी से ऐसा लगता है कि उसका भुगतान श्रमिक द्वारा व्यय किये गये पूरे श्रम के लिए होता है। इस तरह

मजूरी शोषण को हमारी दृष्टि से ओझल कर देती है। यही विशेष लक्षण पूंजीवाद को उसके पहले के अन्य सभी शोषक समाजों से अलग करता है।

पूंजीवाद में मजूरी कई रूप ग्रहण कर लेती है। काल मजूरी वह रूप है जिसके अन्तर्गत काम की कालावधि (दिन सप्ताह और महीना) के अनुसार मजूरी का भुगतान किया जाता है।

मजूरी के रूप

पूंजीवाद में काल मजूरी का सही अन्दाज प्राप्त करने के लिए उसे कार्य दिवस की लम्बाई की दृष्टि से देखना चाहिए। अगर पूंजीपति किसी मजदूर को प्रतिदिन १० डालर देता है और मजदूर १० घंटे काम करता है तो एक घंटे काम करने की औसत मजूरी १ डालर हुई। मान लें कि पूंजीपति कार्य दिवस को बढ़ा कर १० घंटे से १२ घंटे कर देता है। इस अवस्था में १ घंटे काम करने की कीमत १ डालर से घटकर ८३ सेंट हो गयी। इससे यह स्पष्ट है कि पूंजीपति के लिए काल-मजूरी शोषण को तीव्र करने का एक साधन है। काल मजूरी के अतिरिक्त मजूरी का एक अन्य रूप खंड मजूरी भी है।

मजूरी के उस रूप को जिसके अनुसार मजदूर की कमाई समय की एक इकाई (एक घंटा या एक दिन) के दौरान उसके द्वारा की गयी उत्पन्न सामग्रियों की मात्रा पर निर्भर है खंड मजूरी (पैदावार के अनुसार भुगतान) कहा जाता है।

मार्क्स ने खंड-मजूरी को काल मजूरी का एक परिष्कृत रूप कहा। वास्तविकता यह है कि प्रत्येक हिस्से के लिए भुगतान की राशि तय करने में पूंजीपति मजदूर की प्रतिदिन की काल मजूरी की राशि को और बलिष्ठतम एवं सबसे अधिक निपुण मजदूर द्वारा एक दिन के दौरान उत्पन्न किये गये हिस्सों को ध्यान में रखता है।

अगर दैनिक काल दर १० डालर है और मजदूर द्वारा २० हिस्से तैयार किये जाते हैं तो प्रत्येक हिस्से के लिए पूंजीपति ५० सेंट खंड-दर देगा। इस तरह पूंजीपति अपने को आश्वस्त कर लेता है कि खंड-मजूरी काल मजूरी से अधिक नहीं है। अगर यही स्थिति है तो फिर पूंजीपति खंड मजूरी क्यों लागू करते हैं? ऐसा वे इसलिए करते हैं कि खंड मजूरी की कुछ ऐसी विशेषताएं हैं जो उसे पूंजीपतियों के लिए मजूरी के अन्य रूपों की तुलना में कभी-कभी अधिक लाभप्रद बना देती हैं। खंड मजूरी रहने पर कार्य की कोटि की जांच अन्तिम रूप से तैयार वस्तु द्वारा की जाती है। पूंजीपति उच्च या मध्यम कोटि की वस्तुओं के लिए भुगतान करेगा, लेकिन घटिया कोटि की वस्तुओं के लिए भुगतान नहीं करेगा। मजूरी का यह रूप मजदूर के श्रम पर एक दबाव डालता है और प्रत्येक मजदूर अधिक मुद्रा-राशि प्राप्त करने के लिए अपना उत्पादन बढ़ाने की कोशिश करता है। लेकिन

ज्यों ही सभी मजदूर अपना उत्पादन बढ़ा देते हैं, त्यों ही पूँजीपति प्रति इकाई मजूरी कम कर देता है और इस तरह उसका मुनाफा बढ़ जाता है। इसीलिए मार्क्स ने कहा कि मजदूर जितना ही अधिक काम करता है उसे उतनी ही कम मजूरी मिलती है।

पूँजीपति मूल परिस्थितियों के अनुसार ही मजूरी के विभिन्न रूपों का प्रयोग करते हैं।

ऐतिहासिक रूप में काल मजूरी नग-मजूरी से पहले आयी। पूँजीवाद के विकास के प्रारम्भिक चरणों में भी जब पूँजीपति काम दिवस को बढ़ाकर अतिरिक्त मूल्य को बढ़ाने की स्थिति में थे काल-मजूरी व्यापक रूप में प्रचलित थी। मजूरी के इस रूप से उन्हें कई फायदे हुए। पीछे चलकर जब काम दिवस को कानून के द्वारा नियन्त्रित कर दिया गया तब पूँजीपतियों ने नग-दर का व्यापक प्रयोग प्रारम्भ किया। वर्तमान काल में काल दर-सामान्य प्रणाली के विभिन्न रूप काफी प्रचलित हैं। सन् १९५७ के अन्त में अमरीका के ७० प्रतिशत औद्योगिक श्रमिकों को परिष्कृत काल मजूरी मिली।

नग मजूरी से काल मजूरी की ओर आने के कौन से कारण हैं? तथ्य यह है कि वर्तमान पूँजीवादी उद्योग की बहुतेरी शाखाओं में एक निश्चित रफ्तार से घूमने वाले वाहक पट्टों द्वारा प्रवाह विधि अपनायी गयी। इसका मतलब है कि उत्पादन की गति मजदूर पर निर्भर नहीं है। इसका निर्धारण वाहक पट्टों के निरन्तर अधिक तेजी से घूमने से या उत्पादन दस्तकारी के विशिष्ट स्वभाव से होता है। श्रम की भयंकर तीव्रता के साथ साथ श्रमिकों की मजूरी में कोई वृद्धि नहीं होती है।

बहुधा एक ही उद्यम में और एक ही समय भुगतान के दोनों रूपों (काल और नग) का इस्तेमाल एक साथ होता है। पूँजीवाद में मजूरी के ये दोनों रूप मजदूर वर्ग के शोषण को तीव्र करने के विभिन्न तरीके मात्र हैं।

अधिक अधिशेष मूल्य की आकांक्षा से पूँजीपति उत्पादन को संगठित करने तथा मजूरी का भुगतान करने की अतिश्रामण व्यवस्थाएं काम में लाते हैं। इन व्यवस्थाओं का मूल उद्देश्य एक निश्चित काल के दौरान श्रमिक से जितना भी सम्भव श्रम हो उतना लेना है। मजूरी के भुगतान की दर्जनों अतिश्रामण व्यवस्थाएं हैं।

पहली कोटि की व्यवस्थाओं में एक है टेलरवाद जिसका नाम इसके अमरीकी इंजीनियर अन्वेषक एफ टेलर के नाम पर रखा गया है। टेलरवाद का सार यह है कि पूँजीपति द्वारा चुने गये बलिष्ठतम और निपुणतम मजदूरों को अधिकतम तीव्रता से काम करने के लिए बाध्य किया जाता है। अलग-अलग

क्रियाओ को सम्पादित करने का समय सेकेण्डों या उनमे भी छोटे भागो म निश्चित रहता है। इस तरह जो आकडे मिलते हैं उन्हे एक विशेष तकनीक परिषद को द दिया जाता है। यह परिषद उनका अध्ययन करने के बाद उत्पादन का एक सगठन तथा उद्यम के मजदूरो के लिए काल-मजूरी निश्चित करती है। काम पूरा करने वालो के लिए मजूरी की ऊची दर और काम पूरा न करने वालो के लिए नीची दर तय की जाती है। इस मजूरी व्यवस्था के परिणामस्वरूप श्रम उत्पादकता मे द्रुत गति से वृद्धि होती है, किन्तु मजूरी की पूरी राशि शायद ही बढती है। परिणाम यह होता है कि शोषण की दर काफी बढ जाती है।

अतिश्रामण व्यवस्था का दूसरा रूप फोर्डवाद है। इसका भी लक्ष्य मजदूर से श्रम की अधिकतम मात्रा प्राप्त करना है। वाहक पट्टे की गति को तेज कर ही ऐसा किया जाता है। प्रारम्भ म वाहक पट्टा तीन मीटर प्रति मिनट की रफ्तार स चलता था लेकिन अब अगर उसकी गति त्वरित हो जाये तो उसकी गति चार या पाच मीटर प्रति मिनट हो जायेगी। इस परिस्थिति मे मजदूर अधिक जोर शोर से काम करन और अधिक शक्ति व्यय करने के लिए चाहे अनचाहे मजबूर हो जाते हैं, लेकिन उनकी मजूरी पुराने ही स्तर पर रहती है और व्यय की गयी अधिक शक्ति के लिए पुरस्कार नही दिया जाता। परिणाम यह होता है कि बहुतेरे मजदूर ४० ५० वर्ष की उम्र होते होते पूर्णतया थक जाते हैं और मालिक द्वारा बरखास्त कर दिय जाते हैं।

इसके अतिरिक्त वाहक पट्टो पर किये गये कामो की सरलता को देखते हुए पूजीपति अप्रशिक्षित मजदूरो को काम पर लगाते हैं भुगतान की निम्न दर निर्धारित करते हैं और इस तरह मुनाफे की बडी रकम कमाते हैं।

मुनाफे मे हिस्सा देने की पद्धति को भी मजूरी की अतिश्रामण व्यवस्था मे ही रखा जा सकता है। इस पद्धति के अन्तर्गत पूजीपति मजदूरो को सूचित कर देता है कि वह उनको अन्य पूजीपतियो की अपेक्षा कम मजूरी देगा, लेकिन प्रत्येक वर्ष के अन्त म जब काम का लेखा जोखा लिया जायेगा, तब अच्छी तरह काम करने वाले मजदूर मुनाफे का एक हिस्सा पायेंगे।

इस पद्धति का प्रयोग श्रम की तीव्रता को बढा देता है, उनकी वर्ग चेतना के विकास को मन्द कर देता है उनको एक-दूसरे स अलग कर देता है और पूजीपतियो के विरुद्ध उनके सघर्ष को अवरुद्ध करता है। मुनाफे म हिस्सा देने की पद्धति स यह भ्रम पैदा हो जाता है कि मजदूरो को भी पूजीवादी उद्यम को बढाने में दिलचस्पी है।

पूजीवादी विकास के प्रारम्भिक चरणो म मजदूरो को शायद ही मुद्रा के रूप म मजूरी मिलती थी। पूजीपति ने मजदूरो को ऐसी स्थिति म रख दिया जिसमे

मौद्रिक और वास्तविक मजूरी

वे कारखाने की दूकान से भोजन की सामग्रियाँ और अन्य उपभोक्ता वस्तुओं को उधार पर लेने के लिए मजबूर हो गये। महीने या मौसम के अन्त में पूजीपति लेखा जोखा तैयार करता था कि उस अवधि में मजदूर ने कितना कमाया है और उसने कितनी वस्तुएं उधार ली हैं। हिसाब करने के बाद बहुधा यही पता चलता था कि या तो मजदूर का कोई पावना पूजीपति के जिम्मे नहीं रह गया है या थोड़ा पावना रह गया है।

वर्तमान समय में वस्तु भुगतान विशेषकर आर्थिक रूप से अल्प विकसित देशों में ही प्रचलित है।

विकसित पूजीवादी देशों में मुद्रा के रूप में मजूरी के भुगतान की प्रथा है। मुद्रा के रूप में दी जाने वाली मजूरी को मौद्रिक मजूरी कहते हैं। मौद्रिक मजूरी मजदूर को मिले भुगतान की वास्तविक मात्रा को नहीं व्यक्त कर सकती। वास्तविक मजूरी की अवधारणा के द्वारा ही हम इसके स्तर को निर्धारित करते हैं। जीवन निर्वाह के साधनों के रूप में दी गयी मजूरी को वास्तविक मजूरी कहते हैं। संक्षेप में, वास्तविक मजूरी यह दिखलाती है कि अर्जित मुद्रा राशि से मजदूर अपने और अपने परिवार के लिए जीवन निर्वाह के कौन-से साधन और कितनी मात्रा में खरीद सकते हैं।

वास्तविक मजूरी निर्धारित करते समय हम मौद्रिक मजूरी के आकार, उपभोक्ता वस्तुओं और सेवाओं की कीमतों करों के बोझ, लगान और ऊपरी खर्च का लेखा जोखा ध्यान में रखना चाहिए। जैसे जैसे पूजीवाद विकसित होता है वैसे वैसे वास्तविक मजूरी की प्रवृत्ति घटने की होती है।

पूजीवाद के अन्तर्गत वास्तविक मजूरी में ह्रास कई कारणों से होता है। इनमें पहला कारण है बढ़ती हुई कीमतें। मजदूर की मौद्रिक मजूरी में किंचित वृद्धि भी हो सकती है लेकिन अगर वस्तुओं की कीमतें बहुत बढ़ जायें तो वह पहले के बराबर वस्तुएं नहीं खरीद सकता। स्पष्ट है कि उसकी वास्तविक मजूरी घट गयी है। यह प्रवृत्ति वर्तमान समय में सब पूजीवादी देशों में देखी जा रही है। कीमतें मजूरी की अपेक्षा अधिक तेजी से बढ़ रही हैं। फ्रांस में १९३८ और १९५४ के बीच सभी वस्तुओं की कीमतें ३२ गुनी से भी अधिक हो गयी जबकि मौद्रिक मजूरी में वृद्धि २१ गुनी ही थी। फलतः हुआ कि १९५४ में फ्रांस के मजदूर उतनी वस्तुएं नहीं खरीद पाये जितनी वे १९३८ में खरीदते थे।

मजदूरों की वास्तविक मजूरी के घटने का दूसरा कारण है करों और ऊपरी खर्च (लगान, ताप और रोशनी पर खर्च तथा अन्य व्यय) में वृद्धि। इनमें वृद्धि होने के कारण मजदूरों की वास्तविक मजूरी में काफी ह्रास हो जाता है।

अमरीका मे १९५९ मे १९३९ की अपेक्षा जनसंख्या पर कर का बोझ १२ गुना बढ गया। १९५८ म कमाई का २५-३० प्रतिशत लगान के रूप म चला गया। जुर्माने के कारण भी वास्तविक मजूरी घट जाती है।

पूजीवाद के अन्तर्गत मजदूर वर्ग की मजूरी मे ह्रास होने के ये कतिपय कारण हैं।

पूजीवादी देशो म औरतों और मर्दों को समान काम के लिए समान मजूरी नही दी जाती। मर्दों के बराबर काम करने पर भी औरतो को मर्दों की अपेक्षा कम मजूरी मिलती है।

औरतो की औसत मजूरी मर्दों को दी जाने वाली औसत मजूरी से अमरीका म ३० से ४० प्रतिशत कम फ्रास म १५ से २० प्रतिशत कम और जापान म ३५ से ४० प्रतिशत कम है। मर्दों और औरतो की मजूरी के इस अन्तर के कारण अमरीका को हर साल कई अरब डालर का अतिरिक्त मुनाफा होता है।

नस्ली भेदभाव पूजीपतियो के लिए अपार मुनाफा कमाने का एक स्रोत है। अमरीका मे नीग्रो मजदूरो को गोरे मजदूरों की तुलना म बदतर दशाओं म काम करना पडता है। उनको अत्यन्त कठिन नुकसानदेह और खतरनाक कामो म लगाया जाता है। नीग्रो मजदूरो को गोरे मजदूरो की अपेक्षा बहुत कम मजूरी मिलती है।

विभिन्न पूजीवादी देशो म मजूरी का स्तर एक-सा नही है। इसके कई कारण हैं। ऐसा सोचना गलत होगा कि कुछ देशो म दूसरे देशों की अपेक्षा पूजीपति मजदूरो के प्रति अधिक उदार हैं। हर जगह उनकी कोशिश कम से कम मजूरी देने की होती है। विभिन्न देशो की मजूरी की दरो की तुलना करते समय हमे उन ऐतिहासिक स्थितियो पर ध्यान देना चाहिए, जिनमे उन देशों के मजदूर वर्ग ने जन्म लिया है। इसके अतिरिक्त मजदूर वर्ग की परम्परागत जरूरतों का स्तर क्षमता प्राप्ति व्यय श्रम की उत्पादकता तथा वर्ग संघर्ष एव अन्य स्थितियो पर भी विचार करना चाहिए।

उदाहरण के लिए अमरीका को लें। वहा पूजीवाद का विकास उस समय हुआ जब श्रम की पूर्ति कम थी। इस कारण वहा मजूरी ऊची हो गयी। यूरोप के देशो मे ब्रिटेन मे ही पहले पहल मजदूर वर्ग ने पूजीपतियो का सामना करना प्रारम्भ किया। इस कारण अभी ब्रिटेन म आयरलैण्ड की अपेक्षा मजूरी की दर ऊची है।

ऊची मजूरी के लिए मजदूर वर्ग का संघर्ष

पूजीपति मजदूरो की कमाई कम करने की कोशिश करते हैं और सिर्फ उतना ही देना चाहते हैं जिससे उनकी जरूरी आवश्यकताएं पूरी हो जायें। सर्वहारा वर्ग के विरुद्ध अपने संघर्ष म पूजीपति राज्य, कानून, चर्च, प्रेस रेडियो टेलीविजन, इत्यादि की सहायता प्राप्त कर लेते हैं।

पूजीपति सर्वहारा से टक्कर लेने के लिए एकजुट होकर मालिको का सगठन एवं सयुक्त मोर्चा बनाते है।

दूसरी ओर मजदूर अपनी ट्रेड यूनियनो म सगठित होकर पूजी के आक्रमण का मुकाबला करते हैं और अपनी आर्थिक स्थिति म सुधार लाते हैं। १९६० मे सारे विश्व मे ट्रेड यूनियनो की कुल सदस्य सख्या १८ करोड के आस पास थी, जिसम से १० करोड सदस्य विश्व मजदूर सघ से सम्बद्ध थे।

मजूरी का स्तर सर्वहारा वग और पूजीपति वग के बीच चलने वाले कटु वग सघष के फलस्वरूप स्थापित होता है। जहा मजदूर हडतालो मे अविचलन और दृढता दिखाते हैं वहा पूजीपति बहुधा उनकी मागो को मान लेने तथा उनकी मजूरी को बढाने के लिए मजबूर हो जाते है। हाल मे बडे पूजीवादी देशो—अमरीका, ब्रिटेन, फ्रास इटली पश्चिम जमनी और जापान मे मजदूर वग न अपनी जिदगी की हालतो को उन्नत करने के लिए सघष किया था। सिफ १९६४ मे करीब ६ करोड लोगो ने हडतालो म भाग लिया। फ्रास के मजदूरो के व्यापक सघष, *बेल्जियम के खान मजदूरो की हडताल, इटली के इस्पात और इजीनियरिंग उद्योगों* के मजदूरो की लम्बी हडताल जिसमे १२,५० ००० लोगो ने हिस्सा लिया, इगलैण्ड के इजीनियरिंग उद्योग के मजदूरो की हडताल आदि को इतिहास सदा याद रखेगा। पूजीवादी देशो मे आर्थिक और सामाजिक अधिकारो के लिए मजदूर वग का सघष उग्र होता जा रहा है।

सर्वहारा वग का आर्थिक सघष बहुत ही महत्वपूण है। इस बात को मानते हुए *मार्क्सवाद-लेनिनवाद यह सीख देता है कि सिर्फ यही मजदूरो को शोषण से* मुक्त नही कर सकता। क्रातिकारी राजनीतिक सघष के द्वारा उत्पादन की पूजीवादी पद्धति का उन्मूलन करने पर ही मजदूर वग आर्थिक और राजनीतिक उत्पीडन को जन्म देने वाली स्थितियो को समाप्त कर सकता है।

अध्याय ४

पूजी का सचय और सर्वहारा वर्ग की बिगडती हुई स्थिति

हम पहले देख चुके हैं कि अधिशेष मूल्य का उत्पादन पूजी से होता है, किन्तु पूजी निर्माण अधिशेष मूल्य से होता है। यह कसे होता है ? इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए आवश्यक है कि हम पूजीवादी पुनरुत्पादन के विषय म कुछ जानकारी हासिल करें।

१ पूजी का सचय और बेरोजगारों की फौज

उत्पादन से हमारा मतलब भौतिक धन की सृष्टि की प्रक्रिया से है। पूजीवाद के अन्तर्गत इसका मतलब यह है कि पूजीपति बाजार मे उत्पादन के साधन और श्रम शक्ति खरीदता है और तब जनता भौतिक धन का उत्पादन करती है। इस तरह उत्पादन की प्रक्रिया पूरी होती है। तो क्या इसका मतलब यह है कि इसके बाद भौतिक धन के उत्पादन की कोई आवश्यकता नही रहती ? नही इसका यह मतलब नही है। समाज कभी भी भौतिक धन का उत्पादन बन्द नही कर सकता क्योकि ऐसा करने पर उसका अस्तित्व ही खतरे मे पड जायेगा। अत जरूरी है कि उत्पादन निरन्तर होता रहे उसकी प्रक्रिया का प्रत्येक चरण दुहराया जाता रहे। भौतिक धन के उत्पादन की इस निरन्तर नवीकृत और पुनरावृत्त प्रक्रिया को **पुनरुत्पादन** कहते हैं।

पूजी का पुनरुत्पादन और सचय

पुनरुत्पादन प्रत्येक समाज मे होता है किन्तु अलग-अलग समाज म पुनरुत्पादन की प्रेरक शक्ति अलग अलग होती है। अधिशेष मूल्य की आकाक्षा ही

पूजीपति के लिए पूजी के अतगत प्रेरक शक्ति है। भौतिक धन का उत्पादन और पुनरुत्पादन मेहनतकश जनता की जरूरतो को पूरा करने के लिए नही होता, बल्कि इसलिए होता है कि पूजीपति मुनाफा प्राप्त कर सकें।

पूजीपति द्वारा प्राप्त अधिशेष मूल्य की सृष्टि पूजीवादी पुनरुत्पादन के दौरान होती है। हम यहा सिर्फ यही नही जानना चाहते कि पूजीपति किस प्रकार अधिशेष मूल्य प्राप्त करता है, अपितु यह भी जानना चाहते हैं कि अधिशेष मूल्य का किस प्रकार इस्तेमाल किया जाता है। मतलब यह है कि अधिशेष मूल्य की राशि को किस प्रकार व्यय किया जाता है। अगर पूजीपति अधिशेष मूल्य की सम्पूर्ण राशि को अपनी निजी आवश्यकताओ की सतुष्टि के लिए खर्च करे, तो हम उत्पादन की इस पूरी प्रक्रिया को साधारण पुनरुत्पादन कहेगे। मान लें कि किसी पूजीपति ने २,००,००० डालर की पूजी लगायी है जिसमे अचल पूजी १ ६० ००० डालर और चल पूजी ४० ००० डालर है। अगर अधिशेष मूल्य की दर १०० प्रतिशत हो तो कुल तयार वस्तुओ का मूल्य २ ४० ००० डालर होगा। यहा हमारी यह मान्यता भी है कि सम्पूर्ण अचल पूजी तयार वस्तुओ के मूल्य म सम्मिलित है (१ ६० ००० अ पू + ४०,००० च पू + ४० ०००अ = २,४०,०००)। इन २ ४० ००० डालरो मे प्रारम्भ म लगाये गये २ ०० ००० डालर तथा उत्पादन प्रक्रिया म मजदूरो के श्रम द्वारा उत्पन्न अधिशेष मूल्य के रूप म ४० ००० डालर सम्मिलित हैं।

चूकि साधारण पुनरुत्पादन म अधिशेष मूल्य की सम्पूर्ण मात्रा पूजीपति और उसके परिवार की निजी जरूरतो पर खर्च कर दी जाती है इसलिए दूसरे वर्ष भी पुनरुत्पादन की प्रक्रिया उसी पैमाने पर चलेगी। तीसरे चौथे और इसी तरह आगे के अन्य वर्षों म भी पुनरुत्पादन के पैमाने एक जैसे रहेगे। साधारण पुनरुत्पादन म भौतिक धन के उत्पादन की मात्रा म कोई परिवर्तन नही किया जाता किन्तु अगर हम उसका विश्लेषण करें तो पूजीपतियो की समृद्धि का सार पा सकते हैं।

उत्पादन की प्रक्रिया म प्रारम्भिक पूजी का पुनरुत्पादन और अधिशेष मूल्य की सृष्टि होती है। अधिशेष मूल्य का पूजीपति अपनी निजी जरूरतों की पूर्ति के लिए व्यय करता है।

अगर पूजीपति को अधिशेष मूल्य प्राप्त नही हो तो वह अपनी निजी आवश्यकताओ की सतुष्टि के लिए अपनी सारी प्रारम्भिक पूजी ही खर्च कर देगा। उपयुक्त उदाहरण म अगर पूजीपति हर साल ४० ००० डालर खर्च करे, तो उसकी सारी प्रारम्भिक पूजी (२,०० ००० डालर) ५ वर्षों म पूर्णतया समाप्त हो जायगी। किन्तु ऐसा नही होता। वास्तव म पूजीपति अपनी निजी आवश्यक

ताओ पर जो मुद्रा-राशि खर्च करता है, वह अधिशेष मूल्य की राशि होती है। अधिशेष मूल्य की सृष्टि मजदूरों के उस श्रम से होती है, जिसके लिए उन्हें कोई भुगतान नहीं किया जाता।

लगायी गयी पूंजी का प्रारम्भिक स्रोत जो भी हो, निष्कर्ष यही निकलता है कि साधारण पुनरुत्पादन के दौरान पूंजी कालक्रम से मजदूरों के द्वारा उत्पन्न मूल्य का रूप धारण कर लेती है जिसे बिना कोई कीमत चुकाये पूंजीपति हड़प जाता है।

इससे एक बहुत महत्वपूर्ण बात सामने आती है। समाजवादी क्रांति के दौरान जब मजदूर वर्ग पूंजीपतियों का उन्मूलन कर उनके कारखाने ले लेता है, तब वह सिर्फ उन्हीं चीजों को लेता है जिनका निर्माण उसके पुश्त दर पुश्त के श्रम से हुआ है। निजी पूंजीवादी स्वामित्व का उन्मूलन एक वैध कार्य है। ऐतिहासिक न्याय का कार्य है।

हमने ऊपर माना था कि पूंजीपति सम्पूर्ण अधिशेष मूल्य को अपनी निजी जरूरतों पर खर्च करता है। सवाल है कि क्या यह स्थिति सदा रह सकती है? पूंजीवादी विकास के प्रारम्भिक चरण में ऐसा बहुधा होता था। उस समय पूंजीपति सिर्फ थोड़े-से मजदूरों का शोषण करता था और कभी कभी स्वयं काम करता था। पूंजीवादी उद्यमों के विस्तार के बाद स्थिति बदली। पूंजीपति अब सैकड़ों-हजारों मजदूरों का शोषण करने लगा। मान लें कि किसी पूंजीपति ने १००० मजदूरों को काम पर लगाया है। वह उन्हें मजूरी के रूप में २० लाख डालर हर वर्ष देता है। ये मजदूर उसके लिए (अगर अधिशेष मूल्य की दर १०० प्रतिशत है) प्रति वर्ष २० लाख डालर के बराबर अधिशेष मूल्य की सृष्टि करते हैं। मान लें कि पूंजीपति अधिशेष मूल्य की सम्पूर्ण राशि को नहीं, बल्कि उसके एक हिस्से को अपनी निजी जरूरतों पर खर्च करता है। अधिशेष मूल्य के बाकी हिस्से को उत्पादन का विस्तार करने, अधिक मशीनें तथा कच्चे माल प्राप्त करने और अधिक मजदूरों को काम पर लगाने के लिए प्रयोग में लाता है। यह विस्तारित पुनरुत्पादन या पूंजी के संचय की स्थिति है।

अब हम अधिशेष मूल्य के पूंजी के रूप में बदल जाने की प्रक्रिया पर विचार करें। मान लें कि किसी पूंजीपति के पास १ करोड़ डालर की पूंजी है। इसमें से वह ८० लाख डालर अचल पूंजी और २० लाख डालर चल पूंजी के रूप में लगाता है। अधिशेष मूल्य की दर १०० प्रतिशत है। मान लें कि सम्पूर्ण अचल पूंजी तैयार वस्तु के मूल्य में शामिल हो जाती है। इस तरह उत्पादन की प्रक्रिया की समाप्ति के बाद १ करोड़ २० लाख डालर के मूल्य की वस्तुओं का उत्पादन

होता है (८० लाख डालर अ पू + २० लाख डालर च पू + २० लाख डालर अ)।

मान लें कि पूजीपति अधिशेष मूल्य (२० लाख डालर) का वितरण विभिन्न मदो पर इस प्रकार करता है उत्पादन के विस्तार के लिए १० लाख डालर निजी उपभोग के लिए १० लाख डालर। उत्पादन के विस्तार के लिए अधिशेष मूल्य का जो भाग (१० लाख डालर) रखा गया है उसका अचल और चल पूजी के रूप म उसी अनुपात म विभाजन होना है जिस अनुपात म प्रारम्भ मे पूजी लगायी गयी थी। प्रारम्भ म कुल पूजी का विभाजन अचल और चल पूजी के रूप म ४ १ के अनुपात म हुआ था। अत वह ८ लाख डालर अचल पूजी और २ लाख डालर चल पूजी के रूप म लगाता है।

परिणामस्वरूप दूसरे वष उद्यम के पास सक्रिय पूजी के रूप म १ करोड १० लाख डालर (८८ लाख डालर अ पू + २२ लाख डालर च पू) होता है। अगर अधिशेष मूल्य की दर १०० प्रतिशत है तो दूसरे वष के दौरान १ करोड ३२ लाख डालर (८८ लाख अ पू + २२ लाख च पू + २२ लाख डालर अ) में मूल्य की वस्तुए पदा होगी।

दूसरे वष के दौरान उत्पादन की मात्रा बढी और अधिशेष मूल्य के परिमाण मे वद्धि हुई क्योंकि पहले वष मे प्राप्त अधिशेष मूल्य के एक हिस्से को पूजी मे रूपान्तरित किया गया। इस तरह अधिशेष मूल्य पूजी सचय का स्रोत है। पूजी करण (यानी पूजी म अधिशेष मूल्य के योग) के द्वारा पूजीपति अपनी पूजी को उत्तरोत्तर बढाता है।

अपनी समद्धि के लिए अधिकाधिक अधिशेष मूल्य प्राप्त करने की अतप्त आका ा पूजीपति को अपने उत्पादन के पमाने को निरतर बढाने के लिए प्रेरित करती है। दूसरी ओर प्रतिद्वद्विता प्रत्येक पूजीपति को तकनीक को उन्नत करने और उत्पादन का विस्तार करने के लिए बाध्य करती है क्योंकि ऐसा नही करने पर उसे अपने बर्बाद हो जाने का भय बना रहता है। तकनीक के विकास और उत्पादन के विस्तार को रोकने का मतलब है प्रतिद्वद्विता म पीछे छूट जाना। पीछे छूटने वाले लोग अपने प्रतिद्वद्विया के शिकार हो जाते है।

अगर पूजीपति निरन्तर उत्पादन का विस्तार कर रहे हैं तो क्या इसका अथ यह नही हुआ कि वे अपनी निजी आवश्यकताओ पर व्यय होने वाली अधिशेष मूल्य की राशि म कटौती कर रहे हैं? नही ऐसी बात नही है। वास्तविकता यह है कि पूजीपति वग की धनराशि मे वद्धि होने के साथ उसकी निजी आवश्य कताओ पर व्यय की जाने वाली अधिशेष मूल्य की राशि भी बढती है। उदाहरण के लिए अमरीका के लखपति अपनी आय का २५ प्रतिशत अपनी व्यक्तिगत

जरूरतो पर खच करते हैं। कुछ लखपति परिवारो के पास कई आलीशान इमारतें, कीमती क्रीडा नौकाए निजी हवाई जहाज और ऐन्न के लिए दजनो मोटरगाडिया हैं। अमरीकी लखपतियो की फिजूलखर्ची निम्नलिखित तथ्य से स्पष्ट हो जायेगी। अमरीका के ६० सबसे अधिक समृद्धिशाली परिवारो म से कोई न कोई परिवार हर मौसम मे एक बडा शानदार स्वागत समारोह आयोजित करता है। इस समारोह म जितना धन खच होता है उतने म पाच व्यक्तियो वाला एक अमरीकी परिवार जीवन-पयन्त अभावहीन जिन्दगी बिता सकता है। स्पष्ट है कि पूजी-सचय के साथ पूजीपति वग की परजीविता और फिजूलखर्ची भी बढती है।

कुत्सित पूजीवादी राजनीतिक अथशास्त्र के प्रतिनिधि कहते हैं कि पूजीवादी सचय पूजीपतियो के मितव्यय का परिणाम है। चूकि पूजीपतियो को समाज की भलाई की चिन्ता रहती है इसलिए वे अपनी आवश्यकताओ को सीमित रखते हैं और पूजी सचय करते हैं।

इस विचार का सबसे कुख्यात प्रवक्ता १९वी सदी का अग्रेज अथशास्त्री सिनियर था। उसने निष्ठापूवक कहा "मैं उत्पादन के एक उपकरण के रूप म काम आने वाली पूजी के बदले उपभोग-स्थगन शब्द रखता हू।"[१]

'उपभोग स्थगन' शब्द की खिल्ली उडाते हुए मार्क्स ने कहा कि पूजीपति वाष्प इजिन, रेलगाडी, खाद, इत्यादि का स्वय उपभोग न कर श्रम के उपकरण के रूप म मजदूरो को देता है और इस तरह अपनी आवश्यकताओ को सीमित करता है। इन प्रचारको के वास्तविक स्वरूप का पर्दाफाश करते हुए मार्क्स ने व्यग्यात्मक स्वर म कहा कि सामान्य मानवीय दया भाव का तकाजा है कि पूजीपति से उत्पादन के साधनो का स्वामित्व लेकर उसे इन 'कष्टपूर्ण त्यागो' से मुक्त किया जाये।

१९वी सदी के अन्त म सिनियर के सिद्धान्तो को अग्रेज अथशास्त्री अल्फ्रेड मार्शल और अमरीकी अथशास्त्री टामस कावर ने परिष्कृत रूप म पुनर्जीवित किया। उन लोगो ने 'उपभोग स्थगन' शब्द के बदले 'भवितव्यता' और 'प्रतीक्षा' शब्द रखे।

इन सभी सिद्धान्तो का एकमात्र उद्देश्य पूजीवाद और पूजीवादी शोषण को न्यायोचित सिद्ध करना है। किन्तु वास्तविकता यह है कि पूजी सचय और सचय की सीमा पूजीपति के उपभोग स्थगन पर नही, जसा कि पूजीपति सिद्धान्त-वेत्ता सोचते हैं बल्कि मजदूर वग के शोषण पर निभर है। उदाहरण के लिए, ८,००० डालर की अचल पूजी और २,००० डालर की चल पूजी लें। अगर अधिशेष मूल्य की दर १०० प्रतिशत मानें तो २,००० डालर के बराबर अधिशेष

[१] कार्ल मार्क्स "पूजी", खण्ड १, पृष्ठ ५९९।

मूल्य प्राप्त होगा। अगर अधिशेष मूल्य की दर २०० प्रतिशत हो तो ४,००० डालर के बराबर अधिशेष मूल्य मिलेगा। निष्कर्ष यह निकला कि शोषण की दर जितनी ही ऊंची होगी, उतना ही अधिक अधिशेष मूल्य प्राप्त होगा और उतना ही अधिक पूंजी सचय होगा। काय दिवस को लम्बा करना, श्रम की तीव्रता को बढाना, मजूरी को श्रम शक्ति के मूल्य से भी कम करना, इत्यादि तरीकों से श्रम शक्ति के शोषण की मात्रा बढायी जाती है।

श्रम की उत्तरोत्तर बढ़ती हुई उत्पादकता पूंजी सचय की गति को तेज करती है। इसके परिणामस्वरूप वस्तुए सस्ती हो जाती हैं और पूंजीपति के लिए यह सम्भव हो जाता है कि वह (क) श्रम शक्ति के मूल्य को कम कर सके, जिसका मतलब यह हुआ कि चल पूंजी की समान मात्रा से जीवित श्रम की एक बडी मात्रा को काम में लगाया जा सकता है जिससे अधिक उत्पादन और फल-स्वरूप अधिक अधिशेष मूल्य उत्पन्न हो सकता है, (ख) विस्तारित उत्पादन के लिए अधिशेष मूल्य के आवश्यक भाग को बिना घटाये अपने निजी उपभोग को बढा सके और (ग) पूंजी के रूप में इस्तेमाल किये जाने वाले अधिशेष मूल्य को बिना बढाये सस्ती मशीनो के प्रयोग से उत्पादन को तेजी से बढा सके।

पूंजी सचय की मात्रा लगायी गयी पूंजी के आकार से भी प्रभावित होती है। अगर अचल और चल पूंजी के बीच पूंजी के विभाजन का अनुपात अपरिवर्तित रहे तो पूंजी की मात्रा जितनी ही अधिक होगी, चल पूंजी का आकार उतना ही बडा होगा। अतः अन्य स्थितियो के अपरिवर्तित रहने पर पूंजी सचय का आकार विनियुक्त प्रारम्भिक पूंजी के आकार का प्रत्यक्ष रूप से समानुपाती होता है।

ये बुनियादी तत्व ही पूंजी सचय के आकार को निश्चित करते हैं।

सवाल उठता है कि पूंजी सचय किस प्रकार मजदूर वर्ग की स्थिति को प्रभावित करता है? इस प्रश्न पर विचार करने से पहले जरूरी है कि हम पूंजी का सागठनिक सयोजन सम्बन्धी मार्क्स के सिद्धान्त के सम्बन्ध में थोडी जानकारी हासिल कर।

पूंजी का सागठनिक सयोजन

मार्क्स ने अधिशेष मूल्य के सिद्धान्त द्वारा पूंजी के अचल और चल पूंजी के रूप में विभाजन को स्पष्ट कर अधिशेष मूल्य के वास्तविक स्रोत को सामने रखा। बाद में मार्क्स ने इसमें पूंजी के सागठनिक सयोजन के सिद्धान्त को भी शामिल कर लिया।

पूंजी के सयोजन के दो पहलू हैं प्राकृतिक भार (परिमाण) और मूल्य के अनुसार।

मूल्य के अनुसार पूजी का सयोजन अचल एव चल पूजी के विभाजन के अनुपात पर निर्भर है।

उत्पादन की प्रक्रिया म काय करने वाली पूजी उसके भौतिक रूप की दृष्टि से उत्पादन के साधनो और श्रम शक्ति के बीच विभाजित होती है। उत्पादन के प्रयुक्त साधनो की मात्रा और उसके सचालन के लिए आवश्यक श्रम की मात्रा के पारस्परिक सम्बध से निर्धारित पूजी की सरचना को पूजी का तकनीकी सयोजन कहते हैं। यह सम्बध उद्यम विशेष के तकनीकी साज-सामान पर निर्भर है।

पूजी का मूल्य की दृष्टि से सयोजन और उसका तकनीकी सयाजन दोनो घनिष्ठ रूप से एक-दूसरे से सम्बद्ध हैं। सामान्यतया पूजी के तकनीकी सयोजन म परिवतन होने से मूल्य की दृष्टि से सयोजन में भी परिवतन आता है। जिस हद तक अचल और चल पूजी का पारस्परिक सम्बध (यानी मूल्य की दृष्टि से पूजी का सयोजन) पूजी के तकनीकी सयाजन म निर्धारित होता है और उसके परिवतन को प्रदर्शित करता है, मार्क्स न इसे पूजी का सागठनिक सयोजन कहा है।

अत पूजी के सागठनिक सयोजन का मतलब अचल और चल पूजी का आपसी सम्बध है। उदाहरण के लिए, अगर अचल पूजी ८०० डालर और चल पूजी २०० डालर हो तो सागठनिक सयोजन ४ १ होगा। मूल्य की दृष्टि से पूजी के सयोजन को सागठनिक सयोजन का एकदम पर्यायवाची नही समझ लेना चाहिए। उत्पादन के साधनो और श्रम शक्ति की बाजार कीमतो मे उतार चढ़ाव के फलस्वरूप मूल्य की दृष्टि से पूजी के सयोजन म निरन्तर परिवतन होता है। किन्तु पूजी के सागठनिक सयाजन म परिवतन पूजी की तकनीकी सरचना म आन वाले परिवतन से प्रभावित होने पर ही होता है।

पूजीवाद के विकास और पूजी के बढ़ते हुए सचय के साथ पूजी के साग-ठनिक सयाजन म निरन्तर वृद्धि होती है। जसे, अमरीका के प्रोसेसिंग उद्योगो म सागठनिक सयोजन १८८९ में ४ ४ १, १९३९ म ६ १ और १९५५ म ८ १ था।

सागठनिक सयोजन म वद्धि का मतलब है कि उत्पादन के विकास के साथ कच्चे माल, मशीन, औजार और अन्य साज-सामान की मात्रा म उत्पादन के लिए प्रयुक्त श्रम शक्ति की मात्रा की अपेक्षा अधिक तेजी से वद्धि होती है। मान लें कि प्रारम्भ म पूजी का सागठनिक सयोजन १ १ था और फिर बढ़कर क्रमश, २ १, ३ १, ४ १ और ५ १ हो गया। इसका मतलब है कि सम्पूर्ण पूजी म चल भाग का हिस्सा १/२ म घटकर क्रमश १/३, १/४, १/५ और १/६ हो गया। चूकि श्रम की माग सम्पूर्ण पूजी पर नहीं, अपितु उसके चल भाग पर

निर्भर है इसलिए चल पूंजी की मात्रा में कमी होने का मतलब है कि जिस गति से श्रमिक काम पर लगाये जाते हैं, यह गति उत्तरोत्तर धीमी होती जाती है और पूंजी संचय की दर से पीछे छूटती जाती है।

इसका परिणाम यह होता है कि मजदूरों की उत्तरोत्तर बढ़ती हुई संख्या को काम नहीं मिल पाता। मजदूर वर्ग का एक हिस्सा पूंजीवादी संचय की जरूरतों की दृष्टि से अनावश्यक हो जाता है और एक तथाकथित 'फालतू जन-समूह' या सापेक्ष फालतू जन-समूह बेरोजगार हो जाता है।

स्थिर सापेक्ष फालतू जन-समूह का अस्तित्व जनसंख्या के पूंजीवादी नियम की अभिव्यक्ति है। इस नियम को मार्क्स ने ढूंढ निकाला। इस नियम के अनुसार यह है कि अतिरिक्त मूल्य की जितनी ही अधिक सृष्टि होगी, पूंजी संचय और पूंजी का सांगठनिक संयोजन उतना ही अधिक होगा, किन्तु उत्पादन की प्रक्रिया में लगी श्रम शक्ति की मात्रा उतनी ही कम होगी।

औद्योगिक रिजर्व फौज और उसके रूप

पूंजीवादी देशों में उत्पादन की प्रक्रिया से निकाले गये श्रमिकों से रोजगार विहीनों की एक फौज बनती है।

औद्योगिक रिजर्व फौज के निर्माण का मुख्य कारण पूंजी के सांगठनिक संयोजन में वृद्धि है। इसके अतिरिक्त अन्य तत्व भी हैं जो बेरोजगारी की वृद्धि को तीव्र कर देते हैं। ये अन्य तत्व हैं (क) काम के लम्बे घंटे और श्रम की बढ़ी हुई तीव्रता। बेरोजगारों की फौज की उपस्थिति का फायदा उठाकर पूंजीपति रोजगार पाये हुए प्रत्येक मजदूर को दो या तीन मजदूरों के बराबर काम करने के लिए बाध्य करते हैं। फलस्वरूप औद्योगिक रिजर्व फौज का आकार भी बढ़ता है। (ख) औरतों और बालकों के श्रम का बड़े पैमाने पर इस्तेमाल। नवीन तकनीकी क्रियाओं और श्रम क्रियाओं के सरलीकरण के कारण कम मजूरी पर औरतों और अल्प वयस्कों को उत्पादन में लगाया जाना सम्भव हो जाता है। इससे काम पर लगे बहुतेरे वयस्क मर्द मजदूर बेरोजगार हो जाते हैं। (ग) छोटे उत्पादकों की बर्बादी। पूंजी-संचय के बढ़ने के साथ यह प्रक्रिया भी तीव्र होती जाती है। किसानों और दस्तकारों को उत्पादन छोड़कर बेरोजगारों की फौज में भर्ती होने के लिए मजबूर होना पड़ता है।

काम पर लगे मजदूरों को सदा भयभीत और आतंकित रखने के लिए आवश्यक है कि पूंजीवाद में औद्योगिक मजदूरों की रिजर्व फौज बनी रहे। पूंजीपति बरखास्तगी का भय दिखाकर मजूरी कम करने में सफल हो जाते हैं और श्रम की तीव्रता को भी बढ़ा देते हैं। इस तरह मजदूर वर्ग का अधिकाधिक शोषण होता है

पूजीवादी देशो म सापेक्ष फालतू जनसख्या या बेरोजगारी कई रूपो म रहती है। या इसके तीन मुख्य रूप हैं भटक्ती, गुप्त और स्थिर फाल्तू जनसख्या। नीचे हम इन पर एक एक कर विचार करेंगे।

भटक्ती हुई फालतू जनसख्या का तात्पय मजदूरा के उस समूह से है, जिसे यदा-कदा रोजगार मिल जाता है। इस कारण बेरोजगारा की एक निश्चित सख्या सदा बनी रहती है। ऐसे मजदूरो को उत्पादन के विस्तार होने और नये उद्यमा की स्थापना होने पर काम मिल जाता है लेकिन जब उत्पादन म कटौती होती है नयी मशीनें लगायी जाती हैं, या उद्यम बन्द कर दिये जाते हैं तो उनकी छटनी हो जाती है। बेरोजगारी का यह रूप शहरों और औद्योगिक केन्द्रा मे अधिकतर देखने म आता है।

गुप्त फालतू जनसख्या या कृषिगत फालतू जनसख्या शब्द कृषि के क्षेत्र मे निरन्तर पाये जाने वाले फाल्तू मजदूरो के लिए व्यवहृत होता है। छोटे किसानो का अपनी जमीन के छोटे टुकडा पर खेती द्वारा गुजारा कर पाना कठिन होता है। अत वे ग्राहक मिलने पर अपनी श्रम शक्ति को बेचने के लिए तयार रहते हैं।

कृषक समुदाय म अलगाव की प्रक्रिया भी चलती रहती है। किसान धनी-गरीब के बीच बट जाते हैं। खेतिहर सवहारा वग का बहुत बडी सख्या म जन्म होता है। इस वग के अन्तगत ग्रामीण पूजीपतियो के फार्मो पर काम करने वाले मजदूर आते हैं। पूजीवादी फार्मो के रूप म अधिकाधिक जमीन केन्द्रित हो जाती है। वहा मशीना का अधिक इस्तेमाल होता है, जिससे कृषि म काम करने वाले लोगों की सख्या म निरपेक्ष कमी हो जाती है। भूखा नही मरें इसलिए खेतिहर मजदूर शहरो और औद्योगिक केन्द्रा म जाते हैं। वहा रोजगार नही मिलने पर विवश होकर उन्ह बेरोजगारा की फौज मे शामिल होना पडता है।

सापेक्ष फाल्तू जनसख्या के स्थिर रूप के अन्तगत वे मजदूर आते हैं, जिन्हें किसी प्रकार का कोई अनियमित रोजगार नही मिलता। गह उद्योगों मे काम करने वाले और अस्थायी रूप से रोजगार प्राप्त लोग इसी कोटि मे आते हैं। इनके जीवन-यापन का स्तर मजदूर वग के सामान्य सदस्या के औसत जीवन-यापन के स्तर से कम होता है।

इन बुनियादी रूपो के अतिरिक्त सापेक्ष फालतू जनसख्या मे शामिल मजदूरा की एक निकृष्ट कोटि भी होती है जिसके अन्तगत आवारे अपराधी, भिखमगे इत्यादि आते हैं।

पूजीवाद के विकास के साथ सापेक्ष फाल्तू जनसख्या भी बढती है। पूजीवाद के अन्तगत बेरोजगारी एक ऐसा तथ्य है जिससे इनकार नही किया जा

सकता। अतः पूंजीवादी अर्थशास्त्रियों के सामने बेरोजगारी के उद्भव और अस्तित्व की व्याख्या करने की समस्या मौजूद है।

बहुसंख्यक पूंजीवादी अर्थशास्त्री बेरोजगारी और गरीबी को शाश्वत प्राकृतिक नियमों का फल मानते हैं। इन अर्थशास्त्रियों में १७९८ में सबसे अधिक प्रतिक्रियावादी सिद्धान्त प्रतिपादित करने वाला अंग्रेज पादरी माल्थस था।

माल्थस का अमानवीय "सिद्धांत"

माल्थस ने कहा कि मानव समाज के प्रारम्भ से ही जनसंख्या गुणोत्तर श्रेणी (१ २ ४ ८, इत्यादि) में बढ़ रही है जबकि जीवन-यापन के साधन, प्राकृतिक साधनों की सीमितता के कारण समानान्तर श्रेणी (१, २, ३, ४ इत्यादि) में बढ़ रहे हैं। माल्थस के अनुसार संसार में लोगों का एक विशाल जन-समूह "बेकार" है। ये बेकार लोग न तो रोजगार पा सकते हैं और न भोजन ही। माल्थस का यह निष्कर्ष झूठी सांख्यिकीय गणनाओं पर आधारित था।

माल्थस के "सिद्धांत" के बतुकेपन के बावजूद पूंजीवाद ने उसका खुले हृदय से स्वागत किया, क्योंकि उसने पूंजीवाद की सभी बुराइयों को न्यायोचित बतलाया था। कहा गया कि मजदूर वर्ग की जनसंख्या में निरपेक्ष रूप से बड़ी तेज वृद्धि के कारण ही बेरोजगारी होती है। माल्थस ने बतलाया कि भोजन करने वालों की संख्या में निरपेक्ष रूप से वृद्धि होती है लेकिन जीवन निर्वाह के साधनों में उसी अनुपात में वृद्धि नहीं होती। परिणामस्वरूप बेरोजगारी गरीबी आदि का जन्म होता है। पूंजीवाद को खत्म करके सर्वहारा वर्ग अपने आपको बेरोजगारी गरीबी और भुखमरी से मुक्त नहीं कर सकता। माल्थस का नुस्खा है कि सर्वहारा वर्ग के सदस्य शादी-ब्याह नहीं करें और कृत्रिम तरीकों से जन्म दर कम करें। यही नहीं, माल्थस ने युद्ध और महामारी जैसी विपत्तियों को मानवजाति के लिए ईश्वर की कृपादृष्टि माना क्योंकि इनके द्वारा मानवजाति 'फालतू' जनसंख्या से मुक्ति पा लेती है और इस तरह जनसंख्या जीवन निर्वाह के उपलब्ध साधनों के अनुकूल हो जाती है।

सब देशों के प्रगतिशील लोग माल्थस के "सिद्धांत" के खिलाफ जोरदार रूप से डट गये। इस अमानवीय विचारधारा के सक्रिय विरोधियों में रूसी जनवादी क्रान्तिकारी चेरनीशेव्स्की (१८२८ १८८९) और पिसारेव (१८४० १८६८) के नाम उल्लेखनीय हैं।

मार्क्स ने "पूंजी संचय" के अपने सिद्धांत में माल्थस के गलत विचारों की काफी धज्जियां उड़ायीं। किन्तु अब भी पूंजीवादी विश्व में इस सिद्धांत की वकालत की जाती है। अमरीका में यह सिद्धान्त विशेषकर प्रचलित है। अमरीका

में प्रकाशित विलियम वोग्ट की पुस्तक रोड टू सरवाइवल म कहा गया है कि पृथ्वी म ५० ६० करोड़ लोगो से अधिक के पालन पोषण की क्षमता नहीं है। बाकी जनसख्या फालतू है और उससे मुक्ति पाना जरूरी है। रावट कुक लिखित एव अय किताब ह्यूमन फर्टिलिटी दी माडन डायलेमा मे जनसख्या की वद्धि का मानवजाति के अस्तित्व क लिए भयानक खतरे के रूप म दिखलाया गया है।

मार्क्सवाद लेनिनवाद के सस्थापको न वज्ञानिक ढग से पूजीवाद के अन्तगत बेरोजगारी, गरीबी और भुखमरी के वास्तविक कारणो को सामने रखा। उत्पादन के पूजीवादी ढग और उसके साथ पूजीपतियो की सचय की तीव्र आकाक्षा के फलस्वरूप श्रमिक जन समूह म बेरोजगारी और भुखमरी का जन्म होता है। इन बुराइयो स मुक्ति पाने का एकमात्र माग है क्रान्ति द्वारा पूजीवाद का विनाश। समाजवादी देशो का विकास इसका स्पष्ट सबूत है।

प्राकृतिक नियमो का परिपालन न तो मजदूर वग की बिगडती हुई स्थिति के लिए जिम्मेदार है न बेरोजगारी मे वृद्धि के लिए ही। इनकी व्याख्या पूजीवादी उत्पादन के नियमो मे की गयी है। मार्क्स ने लिखा

पूजीवादी सचय के सामान्य नियम का सार

'जितना ही अधिक सामाजिक धन, कार्यकारी पूजी, उसके विकास की सीमा और उसकी शक्ति तथा परिणामस्वरूप सर्वहारा वग की निरपेक्ष सख्या एव श्रम की उत्पादकता होगी औद्योगिक रिजव फौज भी उतनी ही बडी होगी । लेकिन यह रिजव फौज सक्रिय श्रमिक फौज की अपेक्षा जितनी ही बडी होगी, फालतू जनसख्या भी उतनी ही अधिक होगी। फालतू जन सख्या का उत्पीडन उसके द्वारा लगाये गय श्रम के प्रतिलोम अनुपात मे होगा। अन्त म, सर्वहारा वग का अन्तिम स्तर[1] और औद्योगिक फौज का आकार जितना ही बडा होगा, अधिकृत दरिद्रता भी उतनी ही अधिक होगी। यही पूजीवादी सचय का निरपेक्ष व्यापक नियम है।'[2]

पूजीवादी सचय के सामान्य नियम के अनुसार पूजी-सचय एक ओर (पूजीपति वग के हाथों म) धन की वद्धि को निर्धारित करता है और दूसरी ओर मजदूर वग की बेरोजगारी और असुरक्षा की वद्धि के लिए जिम्मेदार है। पूजीवादी सचय का सामान्य नियम पूजीवाद के बुनियादी आर्थिक नियम—अधिशेष मूल्य के नियम—के परिचालन की मूत अभिव्यक्ति है। अधिशेष मूल्य की उत्तरोत्तर बढती हुई आकाक्षा के परिणामस्वरूप पूजीपति वग की समृद्धि,

---

१ समाज का अन्तिम स्तर दरिद्रताग्रस्त बेरोजगार लोग भिखमगे, आवारा श्रम या दूसरे लोगों के श्रम पर पलने वाले बेघरबार लोग।—सम्पादक

२ कार्ल मार्क्स 'पूजी', खड १ पृष्ठ ६४४।

विलासिता, परजीविता और अपव्यय में वृद्धि होती है। पूंजीपति वर्ग द्वारा धन का जितना ही अधिक संचय होगा बेरोजगारों की फौज और रोजगार प्राप्त मजदूरों के शोषण की मात्रा उतनी ही अधिक और उनकी स्थिति उतनी ही खराब होगी। अतः पूंजी संचय और सर्वहारा वर्ग की दुःस्थिति—ये दोनों पूंजीवादी समाज के अभिन्न पहलू हैं।

सर्वहारा वर्ग की स्थिति में सापेक्ष और निरपेक्ष गिरावट

पूंजीवाद के विकास के साथ सर्वहारा वर्ग की सापेक्ष कंगाली की प्रक्रिया भी चलती है। तात्पर्य यह हुआ कि सामाजिक धन ज्यों-ज्यों बढ़ता है समाज में पैदा होने वाली नयी मूल्य राशि (राष्ट्रीय आय) में श्रमिकों का हिस्सा उतना ही कम होता जाता है और पूंजीपतियों का हिस्सा बढ़ता जाता है।

अमरीका, ब्रिटेन, फ्रांस आदि विकसित पूंजीवादी देश मजदूर वर्ग की उत्तरोत्तर बढ़ती हुई सापेक्ष कंगाली के स्पष्ट उदाहरण हैं। अमरीकी मजदूरों को वहां की राष्ट्रीय आय का १८६० में ५६ प्रतिशत तथा १९२३ में ५४ प्रतिशत मिला और आज उनको वहां की राष्ट्रीय आय का ४० प्रतिशत से भी कम मिलता है।

राष्ट्रीय आय में मजदूर वर्ग का हिस्सा तो घट रहा है लेकिन पूंजीपतियों का हिस्सा धीरे धीरे बढ़ता जा रहा है। अमरीका में पूंजीपति वर्ग को राष्ट्रीय आय का आधा से भी अधिक प्राप्त होता है यद्यपि उनका हिस्सा देश की कुल जनसंख्या का सिर्फ दसवां भाग है।[1]

मजदूर वर्ग की सापेक्ष कंगाली मजूरी और मुनाफे के अनुपात में मजदूर वर्ग के प्रतिकूल किन्तु पूंजीपति वर्ग के हितों के अनुकूल परिवर्तनों से स्पष्ट है।

पूंजीवादी संचय का आम नियम मजदूर वर्ग की आर्थिक स्थिति में निरपेक्ष गिरावट लाता है और निरपेक्ष कंगाली की प्रवृत्ति को जन्म देता है।

पूंजीवाद के अन्तर्गत मजदूर इतने निराशावादी हो जाते हैं कि उन्हें भविष्य पर कोई विश्वास ही नहीं रह जाता। पूंजी-संचय मजदूर की आगे आने वाली पीढ़ी को भी भरण पोषण के लिए मजूरी पर निर्भर रहने के लिए बाध्य करता है। आगे आने वाली पीढ़ी को भी श्रम-बाजार में आने को मजबूर होना पड़ता है। इस तरह वह शोषण की वस्तु बनती है। एक तरफ मजदूर वर्ग के एक बड़े हिस्से को अत्यन्त कठिन परिश्रम करने और राक्षसी शोषण कराने के लिए

---

१ "सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की असाधारण २१वीं कांग्रेस की दस्तावेजें"

मजदूर होना पडता है जबकि दूसरी ओर [illegible] जाती है।

निरपेक्ष कंगाली का तात्पर्य मजदूरों के [illegible] की दिनोंदिन बदतर होने वाली स्थितियों से है। मजदूरों की वास्तविक मजूरी दिनोंदिन कम होती जाती है लेकिन जीवन निर्वाह का खर्च बढ़ता जाता है। शहरों और देहातों में बेरोजगारों की फौज का आकार निरन्तर बढ़ता [illegible] है। यही नहीं, श्रम की तीव्रता बढ़ती है आवास स्थिति खराब [illegible]। नीचे हम इनमें से कुछ पर विचार करेंगे।

पूंजीवादी देशों में जीवन निर्वाह का खर्च दिन प्रति दिन [illegible] है। उदाहरण के रूप में अमरीका को ही ले लें। अगर वहां [illegible] जीवन निर्वाह के खर्च का सूचकांक १०० मानें तो १९५० में [illegible] १९५५ में ११५ और १९६० में १२६ ४ था। इस तरह [illegible] बीच अमरीका में जीवन निर्वाह के खर्च में २६ ४ प्रतिशत [illegible]।

अगर ब्रिटेन के जीवन निर्वाह के खर्च का सूचकांक [illegible] मानें तो यह सूचकांक १९५० में १८५ और १९५५ में [illegible] जीवन निर्वाह का खर्च १९५५ में १९३८ का [illegible] जीवन निर्वाह का खर्च १९५५ के बाद लगातार बढ़ता जा [illegible] के लिए जीवन निर्वाह के खर्च का सूचकांक १०० मानें, तो [illegible] १०९ और १९६० में ११० ७ था।

पूंजीवाद के अन्तर्गत मजदूर वर्ग की निरपेक्ष [illegible] बेरोजगारी की वृद्धि बहुत हद तक जिम्मेदार है। पूंजी[illegible] गारी स्थायी और दीर्घकालिक हो गयी है। पूर्णतया बेरोज[illegible] रिक्त लाखों लोग अर्द्ध बेरोजगार हैं जिन्हें कुछ हफ्ता या कुछ [illegible] काम मिल पाता है। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद अमरीका में [illegible] की वार्षिक संख्या २० ३० लाख थी जो १९६२ में ४० [illegible] १९६४ में इटली में बेरोजगारों की संख्या १२ लाख था।

बेरोजगारी सिर्फ रोजगार विहीन लोगों के [illegible] इन नहीं लाती बल्कि सम्पूर्ण मजदूर वर्ग की स्थिति [illegible] गारी का भय दिखाकर पूंजीपति मजूरी घटाने की कोशिश [illegible]।

पूंजीवादी उद्यमों में श्रम की तीव्रता में निरन्तर [illegible] जीवन निर्वाह के स्तर की गिरावट का सूचक है। [illegible] अभाव और श्रम की अत्यन्त तीव्रता के परिणामस्वरूप [illegible] होती हैं। अमरीका का ही उदाहरण लें। वहां हर [illegible]

तो मर जाता है या अपग हो जाता है। हर ग्यारह सेकेंड म किसी एक मजदूर को कोई चोट लगती है। अमरीका के ब्यूरो आफ लेवर स्टटिस्टिक्स के आकड़ों के अनुसार १६५० और १६६० के बीच २ करोड २० लाख अमरीकी मजदूर दुघटनाओ के शिकार हुए। इस तरह प्रति वष औसतन २० लाख मजदूर दुघटनाओ की चपेट म आये।

निरपेक्ष कगाली की प्रवत्ति पर विचार करते समय उपनिवेशो और पराधीन देशो के मजदूरा की स्थिति पर भी ध्यान देना होगा। इन देशो को विरासत के रूप मे साम्राज्यवाद स गरीबी और ऊची मृत्यु दर मिली है। समस्त पूजीवादी देशो म साम्राज्यवाद के चलते कृषक और दस्तकार समुदाय तबाह और कगाल हो गया है।

सक्षप म, उपयुक्त सत्र पूजीवादी देशा के मजदूर वग की निरपेक्ष कगाली के लिए जिम्मेदार हैं।

निरपेक्ष कगाली का मतलब मजदूरो के जीवन निर्वाह के स्तर मे वष प्रति वष या दिन प्रति दिन लगातार व्यापक गिरावट नही है। यह मुमकिन है कि कुछ देशो में मजदूरा के जीवन निर्वाह का स्तर ऊपर उठे, किन्तु अन्य पूजीवादी देशो म मजदूरो के जीवन निर्वाह के स्तर में गिरावट आये। पूजीवादी देशो म मजदूरो की स्थिति पर विचार करते समय हमे यह याद रखना चाहिए कि मजदूर वग के भौतिक सुख का स्तर पूजीपति वग और सवहारा वग की वग शक्तियो के सतुलन पर निभर होता है। पूजीवाद के प्रारम्भ से ही मजदूर अपने जीवन निर्वाह की दशा को सुधारने के लिए दृढ सघष करते आ रहे हैं। उनका सघष उनके जीवन निर्वाह के स्तर में गिरावट के विरुद्ध एक महत्वपूण तत्व है।

पूजीवादी जगत म हर साल हडतालें होती हैं। अमरीका में हडताल एक आम घटना बन गयी है। १६३१ ४० के दौरान अमरीका में २२,०२१ हडतालें हुइ। १६४६ ५५ म हडतालो की सख्या ४३ १५६ रही। १६४६ ५५ के दौरान हडतालियो की सख्या २ करोड ६५ लाख थी जबकि १६३१ ४० मे सिफ ६५ लाख लोगो ने हडतालो में भाग लिया। १६३१ ४० म १४ करोड ५० लाख काय दिवस नष्ट हुए किन्तु १६४६ ५५ मे ४३ करोड ४० लाख काय दिवसो की बर्बादी हुई। १६६२ में वहा ३ ५०० स भी अधिक हडतालें हुइ जिनमें १५ लाख मजदूरा ने भाग लिया। हडतालें निरन्तर अधिकाधिक दीघकालिक और दृढ होती जा रही हैं।

समस्त पूजीवादी दुनिया मे १६६० और १६६४ के बीच हडताली मजदूरा और अन्य मेहनतकशो की सख्या ५ करोड ४० लाख स बढकर ६ करोड हो गयी। मजदूर वग की राजनीतिक गतिविधिया भी निरन्तर बढी हैं। १६५८ म

करीब ४३ प्रतिशत कुल हड़तालियों ने राजनीतिक हड़तालों में भी भाग लिया। १९६२ में तीन चौथाई हड़तालियों ने राजनीतिक हड़तालों में हिस्सा लिया।

पूंजीवादी और दक्षिणपंथी समाजवादी अर्थशास्त्री पूंजीवाद के स्वरूप को आकर्षक बनाने की कोशिश कर रहे हैं। वे पूंजीवाद के अन्तर्गत मजदूर वर्ग की सापेक्ष और निरपेक्ष दोनों दृष्टियों से बिगड़ती हुई स्थिति से सम्बंधित मार्क्सवादी लेनिनवादी सिद्धान्त का खंडन करने के लिए नये सिद्धांत प्रतिपादित करने के प्रयत्न कर रहे हैं।

हाल के वर्षों में 'जन-पूंजीवाद' नामक सबसे झूठे सिद्धांत का प्रचार किया गया है। श्रमजीवी जन-समूह को बरगलाने के लिए साम्राज्यवाद की ओर से यह सिद्धांत रखा गया है। जरा अमरीका पर ही एक निगाह डालें। वहां एक विशेष सरकारी एजेंसी को इस सिद्धान्त के प्रचार का काम सौंपा गया है। कहा जाता है कि एक अमरीकी अधिकारी ने 'जन-पूंजीवाद' शब्द के अस्तित्व को इसलिए बनाये रखने पर जोर दिया है कि आधुनिक अमरीकी पूंजीवाद और आज से १०० वर्ष पूर्व मार्क्स द्वारा वर्णित यूरोपीय पूंजीवाद का अंतर स्पष्ट किया जा सके।

इस सिद्धांत के वकीलों का दावा है कि पूंजीवाद के अंतर्गत मजूरी इतनी तेजी से बढ़ती है कि मजदूर और पूंजीपति का पारस्परिक वर्ग विभेद धुंधला पड़ जाता है। मजदूर अपनी मजूरी के पैसों से गाड़ी मकान और शेयर खरीदते हैं, बचत बैंकों में पैसा जमा करते हैं और उन्हें कई उद्यमों से मुनाफा भी प्राप्त होता है। पूंजीवाद के इन समर्थकों का कहना है कि जन-पूंजीवाद के अन्तर्गत लोगों की आय में क्रान्तिकारी परिवर्तन होते हैं। परिणामस्वरूप धनी और गरीब व्यक्तियों के जीवन निर्वाह के स्तर बहुत कुछ एक हो जाते हैं तथा समाज में भौतिक धन का वितरण समान हो जाता है। अब वर्ग विरोध के बदले वर्ग समानता आ जाती है। चूंकि प्रत्येक अध्यवसायी और मितव्ययी मजदूर 'जन-पूंजीवाद' में पूंजीपति हो सकता है इसलिए वर्ग संघर्ष का मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धांत अनावश्यक है।

लेकिन ऐसे अकाट्य तथ्य उपलब्ध हैं जिनके आधार पर 'जन पूंजीवाद' के सिद्धांत को गलत बतलाया जा सकता है। मजदूरों की हड़तालें और संघर्ष में वृद्धि इस सिद्धान्त की बखिया उधेड़ देती हैं। 'वर्ग शान्ति', "वर्ग समन्वय" के वकील असाध्य को सिद्ध करने की मूर्खतापूर्ण गलती कर रहे हैं। उनका मुख्य उद्देश्य है मजदूर वर्ग को उसके बुनियादी वर्ग हितों के संघर्ष से अलग कर देना, उसे निहत्था बना देना और उसके दिमाग में यह भ्रम पैदा कर देना कि बिना क्रान्तिकारी संघर्ष किए पूंजीवाद की बुराइयों का उन्मूलन सम्भव है।

पूंजी संचय के पूर्ण विश्लेषण के बाद मार्क्स ने पूंजीवादी संचय की ऐतिहासिक प्रवृत्ति को दिखलाया। पूंजीवादी सम्पत्ति का जन्म पहले-पहल छोटे वस्तु उत्पादकों की निजी सम्पत्ति के रूप में हुआ।

पूंजीवादी संचय की ऐतिहासिक प्रवृत्ति

सामन्तवाद के दौरान छोटे पैमाने का वस्तु उत्पादन विघटित होने लगा और उससे पूंजीवाद के तत्व जन्म लेने लगे। किन्तु विघटन का यह प्रक्रिया बहुत धीमी थी। प्रारम्भिक पूंजी संचय के दौरान छोटे वस्तु उत्पादकों के बलात विनाश ने इस प्रक्रिया को तेज कर दिया। इस प्रक्रिया के फलस्वरूप पूंजीवादी सम्पत्ति का बोलबाला हो गया।

इस तरह उत्पादन के पूंजीवादी सम्बंध आये। उनका आधार उत्पादन के साधनों पर बड़े पैमाने का निजी स्वामित्व था। पूंजीवादी उत्पादन सम्बंधों ने उत्पादक शक्तियों के तेज विकास को प्रोत्साहित किया। तकनीकी प्रगति बड़ी तेजी से हुई और सैकड़ों हजारों मजदूरों को एक स्थल पर इकट्ठा किया गया। इस प्रकार उत्पादन ने एक सामाजिक चरित्र ग्रहण किया।

पूंजीवाद के आर्थिक नियमों की सक्रियता ने उत्पादन के सामाजिक चरित्र को और पक्का कर दिया। पूंजीवाद के बुनियादी आर्थिक नियम—अधिशेष मूल्य के नियम—के फलस्वरूप मजदूर वर्ग का शोषण उत्तरोत्तर बढ़ता जाता है और पूंजी संचय भी तेजी से होता है। पूंजीवादी संचय की प्रक्रिया में पूंजी का सांगठनिक संयोजन भी बढ़ता है। इन सबके परिणामस्वरूप उत्पादन बड़े पैमाने पर होने लगता है।

उत्पादन का समाजीकरण होने के साथ साथ पूंजीपतियों की संख्या घटती जाती है किन्तु सामाजिक धन की अधिकाधिक मात्रा पूंजीपति वर्ग के अधिकार में आ जाती है। पूंजीपति वर्ग लाखों मजदूरों की मेहनत की कमाई हड़पने में समर्थ हो जाता है।

पूंजीवाद के विकास के साथ ही उत्पादन की प्रक्रिया के सामाजिक चरित्र और पूंजीवादी स्वामित्व के बीच विरोध पैदा हो जाता है। उत्पादक शक्तियों के अग्रिम विकास में निजी स्वामित्व बाधक हो जाता है।

पूंजी द्वारा श्रम के समाजीकरण के कारण पूंजीवाद के विनाश की वस्तुगत पूर्वस्थितियां तैयार हो जाती हैं। साथ ही पूंजीवाद के आन्तरिक नियमों के परिचालन के कारण पूंजीवाद के पतन की आत्मगत पूर्वस्थितियां पैदा होती हैं। पूंजी और उत्पादन के पैमाने में वृद्धि के साथ मजदूर वर्ग की संस्थात्मक शक्ति भी बढ़ती है। पूंजीवादी उत्पादन यंत्र के जरिये मजदूर अपने आपको एकजुट और संगठित कर उस दिन की तैयारी करते हैं जिस दिन उन्हें समाजवादी समाज में उत्पादन की व्यवस्था करनी होगी। पूंजीवादी संचय की प्रक्रिया में बेरोजगारी बढ़ती है

मजदूर वर्ग की स्थिति बदतर होती है और उसका संघर्ष जोर पकड़ता है। मजदूर वर्ग यह बात अच्छी तरह समझ जाता है कि गरीबी, भुखमरी और शोषण से छुटकारा पाने का एकमात्र रास्ता क्रान्ति के द्वारा पूंजीवाद की समाप्ति है।

अतः पूंजीवाद स्वयं अपने विनाश की वस्तुगत और आत्मगत स्थितियां तयार करता है। पूंजीवादी निजी स्वामित्व के खात्मे, पूंजीवाद के पतन और समाजवाद की विजय के लिए समस्त आवश्यक स्थितियों को तयार कर देना पूंजीवादी संचय की ऐतिहासिक प्रवृत्ति की विशेषता है।

सम्पूर्ण ऐतिहासिक विकास स्पष्ट रूप से पूंजीवाद के अवश्यम्भावी पतन को इंगित करता है। १९१७ में रूसी मजदूर वर्ग ने गरीब किसानों के घनिष्ठ सहयोग से लेनिन के नेतृत्व और कम्युनिस्ट पार्टी की देखरेख में अक्तूबर क्रांति सम्पन्न की।

क्रान्तिकारी परिवर्तनों के दौरान सोवियत संघ के मजदूर वर्ग ने पूंजीपति वर्ग को समाप्त कर दिया। उसने उत्पादन के साधनों के निजी स्वामित्व का उन्मूलन कर उसके स्थान पर सार्वजनिक स्वामित्व कायम किया। समाज के सदस्यों के बीच उत्पादन के नये सम्बंध बने। पुरुषों और स्त्रियों के बीच शोषणहीन सहयोग और पारस्परिक सहायता के सम्बंध स्थापित हुए।

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद अन्य कई देशों की जनता ने क्रांतिकारी सामाजिक-आर्थिक परिवर्तनों का मार्ग पकड़ा। आज वे देश सफलतापूर्वक समाजवाद का निर्माण कर रहे हैं।

अध्याय ५

अधिशेष मूल्य का मुनाफे में परिवर्तन और विभिन्न शोषक समूहों में उसका वितरण

१ पूंजी के विशिष्ट रूप

पिछले अध्यायों में हम सर्वहारा वर्ग और औद्योगिक पूंजीपति वर्ग के पारस्परिक सम्बंधों की चर्चा कर चुके हैं। हमने अन्य शोषक समूहों—व्यावसायिक पूंजीपति वर्ग, बैंक मालिकों, खेतिहर पूंजीपतियों और बड़े जमीन्दारों—के सम्बंध में उस समय कोई चर्चा नहीं की थी। मजदूर वर्ग के शोषण के लिए ये सब एकजुट हो जाते हैं और मजदूरों द्वारा उत्पन्न अधिशेष मूल्य की राशि को आपस में बांट लेते हैं। पूंजीपति वर्ग के समूह विशेषों में विभाजन का कारण हमें पूंजीवादी उत्पादन की वास्तविक स्थितियों में ढूंढना चाहिए।

पूंजी का चक्रीय प्रचलन — पूंजी सदा गतिशील रहती है। पूंजी की गति के रुकने या मन्द होने पर पूंजीपति को प्राप्त होने वाले अधिशेष मूल्य की राशि खत्म हो जाती है या कम हो जाती है।

गतिशील पूंजी कई दौरों से गुजरती है और विभिन्न रूप धारण करती है। पहले दौर में पूंजी मुद्रा के रूप में प्रचलन क्षेत्र में काम करती है। इस मुद्रा राशि से पूंजीपति उत्पादन के साधन और श्रम शक्ति खरीदता है। पूंजी के प्रचलन को इस दौर में हम निम्नलिखित सूत्र से दिखला सकते हैं

$$\text{म} —— \text{व} < \begin{matrix} \text{श श} \\ \text{उ सा} \end{matrix}$$

(म = मुद्रा व = वस्तुएं श श = श्रम शक्ति, उ सा = उत्पादन के साधन)। इस तरह पहले दौर में पूंजी मुद्रा का रूप छोड़कर उत्पादक पूंजी का रूप ग्रहण करती है।

दूसरे दौर मे पूजी उत्पादन के क्षेत्र मे काय करती है। यहा भाडे के श्रम और उत्पादन के साधनो का सयोजन होता है। मजदूर अपने श्रम से अधिशेष मूल्य सहित नये मूल्य वाली नयी वस्तुओ की सृष्टि करते हैं। इस दौर मे पूजी के प्रचलन को हम या अभिव्यक्त कर सकते हैं

श्र श
व< उ व
उ सा

इस तरह दूसरे दौर म पूजी अपने उत्पादक रूप को छोडकर वस्तु पूजी का रूप धारण करती है।

तीसरे दौर मे पूजी पुन प्रचलन के क्षेत्र म काय करती है। उत्पन्न वस्तुए इस दौर मे बची जाती हैं और वस्तु पूजी मुद्रा पूजी म पुन परिवर्तित हो जाती है। इस दौर मे पूजी के प्रचलन को हम निम्नलिखित सूत्र स प्रदर्शित कर सकते हैं

व —म'

इस तरह पूजी अपना प्रचलन मुद्रा के रूप मे प्रारम्भ करती है और अन्त मे फिर मुद्रा के रूप मे आ जाती है। किन्तु पूजीपति के पास से जितनी मुद्रा राशि प्रचलन मे आ जाती है, उससे अधिक मुद्रा राशि उसके पास आती है।

हम पूजी के सम्पूण प्रचलन को इस प्रकार दिखला सकते हैं

श्र श
म——व< उ व —म'
उ सा

पूजी के इस प्रचलन को पूजी का परिपथ कहते हैं। इस परिपथ पर पूजी क्रमश विभिन्न रूप धारण करती है और तीन दौरो से गुजरती है।

पूजी क परिपथ के तीन दौरो म से दो दौर प्रचलन के हैं और एक उत्पादन का। इस तरह पूजीवादी पुनरुत्पादन प्रचलन प्रक्रिया और उत्पादन प्रक्रिया का सूत्रबद्ध रूप है। इनमे से उत्पादन प्रक्रिया का निर्णायक महत्व होता है। इसी प्रक्रिया के दौरान अधिशेष मूल्य का उत्पादन होता है।

औद्योगिक पूजी के परिपथ के तीन दौरा के अनुकूल ही पूजी के तीन रूप क्रमश मुद्रा पूजी, उत्पादक पूजी और वस्तु पूजी हैं। पूजीवाद के विकास के साथ साथ पूजी के विभिन्न रूप एक दूसरे से स्पष्टत अलग हो जाते हैं। व्यावसायिक और ऋण पूजी का अस्तित्व उत्पादन में काय करने वाली पूजी स अलग हो जाता है। वे क्रमश व्यवसाय तथा साख के क्षेत्रो मे काय

पूजी के विभिन्न रूपो व पूजीपतियो के विभिन्न समूहो का बनना

करती है। पूंजी के इन विभिन्न रूपों के अनुरूप ही पूंजीपति वर्ग भी भिन्न भिन्न समूहों—उद्योगपति, व्यवसायी और बैंक मालिक—के रूप में विभक्त हो जाता है।

औद्योगिक पूंजीपति अधिशेष मूल्य के उत्पादन के दौरान मजदूर वर्ग का अधिशेष श्रम हड़प लेते हैं। व्यवसायी वस्तु पूंजी को मुद्रा पूंजी के रूप में परिवर्तित करते हैं। महाजनी या बैंक पूंजीपति उपलब्ध पूंजी को मुद्रा के रूप में एक जगह इकट्ठा करते हैं और उसके बाद उसका वितरण करते हैं। प्रत्येक पूंजीपति समूह को मजदूर वर्ग द्वारा उत्पन्न अधिशेष मूल्य में हिस्सा मिलता है।[1]

पूंजीपतियों के अतिरिक्त भूस्वामी भी शोषक वर्ग में आते हैं। उत्पादन के एक महत्वपूर्ण साधन—भूमि—का स्वामी होने के कारण उनका पूंजीवादी समाज में एक विशिष्ट स्थान होता है। उन्हें अधिशेष मूल्य की कुल राशि में हिस्सा प्राप्त होता है।

समाज की पूंजी का, जैसा कि हम देख चुके हैं, स्वतंत्र कार्यकारी पूंजी के कई रूपों, यथा औद्योगिक, व्यावसायिक और ऋण पूंजी में विभाजन हो जाता और बड़े भूस्वामियों के उपस्थित होने के कारण विभिन्न शोषक समूहों में अधिशेष मूल्य का अधिकाधिक हिस्सा प्राप्त करने के लिए भयंकर प्रतिद्वंद्विता होती है। हर पूंजीपति को मुनाफे के रूप में अधिशेष मूल्य प्राप्त होता है। औद्योगिक पूंजीपति को औद्योगिक मुनाफा, व्यवसायी को व्यावसायिक मुनाफा और बैंक मालिकों को ऋण पर ब्याज मिलता है। बड़े भूस्वामियों को जमीन का लगान प्राप्त होता है।

२ औसत मुनाफा और उत्पादन की कीमत

हर पूंजीवादी उद्यम में उत्पादित वस्तु के मूल्य में तीन तत्व शामिल होते हैं: १) अ पू—अचल पूंजी का मूल्य (मशीन और साधन और कारखाने के मूल्य का एक हिस्सा और कच्चा माल ईंधन इत्यादि का मूल्य) २) च पू—चल पूंजी का मूल्य, ३) अ—अधिशेष मूल्य।

लागत कीमत — मुनाफा। मुनाफे की दर

इनमें से सिर्फ पहले दो तत्वों के लिए ही पूंजीपति को भुगतान करना पड़ता है और भुगतान की राशि ही उसकी लागत कीमत होती है। अतः पूंजीपति की लागत कीमत अचल और चल पूंजी के रूप में व्यय की गयी राशि के योग (अ पू + च पू) के बराबर होती है।

---

१ पूंजीपतियों के उपर्युक्त समूहों के अतिरिक्त कृषि के क्षेत्र में भी पूंजीपति होते हैं। उनको अलग समूह में रखने की कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि औद्योगिक पूंजीपतियों से वे किसी भी अर्थ में भिन्न नहीं होते।

पूंजीपति का अपने कारखाने में निर्मित वस्तु को बेचने पर लागत कीमत के अतिरिक्त अधिशेष मूल्य भी प्राप्त होता है। व्यय की गयी या लगायी गयी पूंजी (यानी लागत कीमत) के संदर्भ में अधिशेष मूल्य द्वारा उस उद्यम विशेष की लाभ प्रदता निश्चित होती है। कुल पूंजी के संदर्भ में अधिशेष मूल्य की राशि ही मुनाफे की राशि का रूप ले लेती है। इस प्रकार का आभास होता है कि अधिशेष मूल्य का सृजन पूंजी द्वारा हुआ है, किन्तु वास्तविकता कुछ और है। अधिशेष मूल्य का सृजन पूंजी के सिर्फ चल भाग द्वारा होता है। इसीलिए मार्क्स ने मुनाफे को अधिशेष मूल्य का परिवर्तित रूप कहा।

हर पूंजीवादी उद्यम का लाभप्रदता की माप मुनाफे की दर से होती है। अगर हम अधिशेष मूल्य और कुल पूंजी के अनुपात को प्रतिशत के रूप में अभिव्यक्त करें, तो हमें मुनाफे की दर मिलेगी। मान लें कि लगायी गयी कुल पूंजी (अ पू + च पू) २,००,००० डालर (१,६०,००० अ पू + ४०,००० च पू) के बराबर हो तथा उस वर्ष अधिशेष मूल्य (अ) ४०,००० डालर हो तो मुनाफे की दर होगी

$$\text{मु द}' = \frac{\text{अ}}{\text{अ पू} + \text{च पू}} \times १०० \% = \frac{४०,०००}{२,००,०००} \times १०० \% = २० \%$$

मुनाफे की दर और अधिशेष मूल्य की दर में भेद करना आवश्यक है। हर उद्यम में मुनाफे की दर अधिशेष मूल्य की दर से सदा कम होगी। उपर्युक्त उदाहरण में अधिशेष मूल्य की दर होगी

$$\text{अ}' = \frac{\text{अ}}{\text{च पू}} \times १०० \% = \frac{४०,०००}{४०,०००} \times १०० \% = १०० \%$$

मुनाफे की दर पूंजीवादी उत्पादन की प्रेरक शक्ति है। पूंजीवादी व्यवस्था में मुनाफे की दर के महत्व को १९वीं सदी के मध्य के प्रसिद्ध अंग्रेज ट्रेड यूनियन नेता और पत्रकार टी० जे० डनिंग ने बहुत ही अच्छी तरह रखा है। उनके शब्दों में "वहीं पर अगर मुनाफे की दर १० प्रतिशत हो, तो वहां निश्चित रूप से पूंजी लगायी जा सकती है, अगर मुनाफे की दर २० प्रतिशत हो तो वहां पर पूंजी लगाने के लिए पूंजीपति उतावले हो जायेंगे अगर दर ५० प्रतिशत हो, तो पूंजीपति ढीठ होकर विनियोग करेंगे, मुनाफे की दर १०० प्रतिशत होने पर पूंजीपति विनियोग करने के लिए इतने उतावले हो जायेंगे कि वे किसी भी मानवीय विधान की परवाह नहीं करेंगे और अगर मुनाफे की दर कहीं ३००% हो तो पूंजी लगाने के लिए पूंजीपति कोई भी जघन्य अपराध करने और खतरा मोल लेने से पीछे नहीं हटेंगे अगर उन्हें फांसी भी लगने की नौबत आ जाये, तो भी नहीं डरेंगे।"[1]

१ कार्ल मार्क्स, "पूंजी", खंड १ पृष्ठ ७६०।

आज के पूंजीपतियों के व्यवहार से इस विवरण की पूर्ण पुष्टि हो जाती है। अमरीकी करोड़पतियों—मारगन, राकफेलर, ड्यूपोंट आदि ने धन और शक्ति प्राप्त करने के लिए किसी भी मानवीय अधिकार और नियम की कोई परवाह नहीं की। पूंजीवादी अर्थव्यवस्था सब प्रकार की वस्तुओं को उत्पन्न करने वाले विभिन्न उद्यमों का सामूहिक रूप है। एक ही तरह की वस्तुओं को उत्पन्न करने वाले सब उद्यम समान स्थितियों में काम नहीं करते। आकार, तकनीकी उपकरणों के स्तर और उत्पादन के संगठन की दृष्टि से उनमें अन्तर होता है। फलस्वरूप विभिन्न उद्यमों द्वारा उत्पन्न वस्तुओं के मूल्य एक नहीं होते। उद्योग की एक शाखा के अन्तर्गत प्रतिद्वन्द्विता होने के कारण वस्तुओं की कीमतें उनके उत्पादन के लिए किसी एक उद्यम के द्वारा व्यय किये गये श्रम या वस्तुओं के अलग-अलग मूल्यों द्वारा निश्चित नहीं होती बल्कि उनके बाजार (सामाजिक) मूल्य द्वारा निश्चित होती हैं।

मुनाफे की औसत दर और उत्पादन की कीमत का निर्धारण

वस्तुओं की कीमतों का निर्धारण उनके बाजार मूल्य द्वारा होने के कारण ऊंचे स्तर की टेकनालाजी और श्रम उत्पादकता वाले उद्यम बेहतर स्थिति में रहते हैं। उन्हें अतिरिक्त मुनाफा या अधिलाभ प्राप्त होता है किन्तु मुक्त प्रतिद्वन्द्विता इस स्थिति को बहुत दिनों तक नहीं चलने देती। उच्च मुनाफे की राशि की ओर सभी आकर्षित होते हैं। पूंजीपति तकनीकी सुधार करते हैं, उत्पादकता बढ़ाते हैं और मजदूरों से अधिक मेहनत करवाते हैं। इस तरह निम्न स्तर के उद्यमों में उत्पन्न वस्तुओं और उन्नत उद्यमों की वस्तुओं के मूल्य बराबर हो जाते हैं। यही मूल्य अब बाजार या सामाजिक मूल्य बन जाता है। फलस्वरूप अब किसी भी उद्यम को अधिलाभ नहीं मिलता। किन्तु पुनः कुछ उद्यमों में तकनीकी सुधार होते हैं और उन्हें अधिलाभ प्राप्त होने लगता है।

पूंजीवादी समाज के अन्तर्गत उत्पादन की न सिर्फ एक ही शाखा के अन्दर प्रतिद्वन्द्विता रहती है बल्कि विभिन्न शाखाओं के बीच भी प्रतिद्वन्द्विता रहती है। उद्योग की विभिन्न शाखाओं में पूंजी लगाने वाले पूंजीपतियों में पारस्परिक प्रतिद्वन्द्विता रहती है। इस प्रकार की प्रतिद्वन्द्विता के फलस्वरूप उद्योग की विभिन्न शाखाओं में मुनाफे की दर समान रहती है। पूंजी की समान मात्रा पर हर शाखा में मुनाफे की समान राशि प्राप्त होती है।

अब हम देखें कि पूंजीपतियों को मुनाफे की समान दर कैसे प्राप्त होती है। मान लें कि समाज में उद्योग की तीन शाखाएं—चर्म उद्योग, वस्त्र उद्योग और इंजीनियरिंग उद्योग हैं। इन उद्योगों में पूंजी की बराबर मात्राएं लगायी गयी

हैं किन्तु इनमे पूजी के सागठनिक सयोजन भिन्न हैं। मान लें कि प्रत्येक औद्योगिक शाखा म पूजी की १०० इकाइया (१० लाख डालर) लगायी गयी हैं। चम उद्योग म अचल पूजी की ७० इकाइया और चल पूजी की ३० इकाइया, वस्त्र उद्योग म अचल पूजी की ८० इकाइया और चल पूजी की २० इकाइया तथा इजीनियरिंग उद्योग म अचल पूजी की ९० इकाइया और चल पूजी की १० इकाइया लगी हैं। मान लें कि इन तीनो म अधिशेष मूल्य (१०० प्रतिशत की दर से) की दर बराबर है। अत चम उद्योग म अधिशेष मूल्य की ३० इकाइया, वस्त्र उद्योग म २० इकाइया और इजीनियरिंग उद्योग मे १० इकाइया उत्पन्न होगी। पहले, दूसरे और तीसरे उद्योगो म उत्पन्न वस्तुओ के मूल्य क्रमश १३०, १२० और ११० इकाइयां होगे। इस तरह कुल मिला कर ३६० इकाई मूल्य की वस्तुए उत्पन्न होगी।

अगर वस्तुओ को उनके मूल्य के अनुसार बेचा जाये, तो चम उद्योग, वस्त्र उद्योग और इजीनियरिंग उद्योग मे मुनाफे की दरें क्रमश ३० प्रतिशत, २० प्रतिशत और १० प्रतिशत होगी। मुनाफे की यह वितरण-व्यवस्था चम उद्योग म विनियोग करने वाले पूजीपतियों के लिए लाभदायक और इजीनियरिंग उद्योग मे पूजी लगाने वालों के लिए अलाभदायक होगी। मुनाफे की लालच से पूजीपति इजीनियरिंग उद्योग से पूजी हटाकर चम उद्योग मे लगायेंगे। चम उद्योग म अतिरिक्त पूजी लगाने मे वहा जरूरत स अधिक वस्तुओ का उत्पादन होने लगेगा। अत चम उद्योग म बनी वस्तुओं की कीमतें गिरेंगी और वहा मुनाफे की दर म (मान लें कि २० प्रतिशत) कमी होगी।

दूसरी ओर इजीनियरिंग उद्योग का उत्पादन घटेगा किन्तु माग पूववत रहेगी। माग और पूर्ति के पारस्परिक सम्बध म परिवतन होने के कारण इजीनियरिंग उद्योग से सम्बद्ध पूजीपति अपनी वस्तुओ की कीमतें बढाने मे सफल हो जायेंगे। फलस्वरूप मुनाफ की दर बढेगी। उदाहरणाथ यह दर १० प्रतिशत स बढकर २० प्रतिशत हो जायेगी।

अत उद्योग की एक शाखा स दूसरी शाखा म पूजी के प्रवाह के कारण मुनाफे की दरो मे विषमता खत्म हो जाती है और एक औसत दर हर जगह हो जाती है। विभिन्न औद्योगिक शाखाओं मे पूजी की समान मात्राए लगाने पर मुनाफे की मिलने वाली समान मात्राओं को औसत मुनाफा कहते हैं। मुनाफे की औसत दर के निर्धारण के बाद वस्तुओ का विक्रय उनके मूल्य (अ पू + च पू + अ) पर नही होता, बल्कि लागत कीमत और औसत मुनाफा (अ पू + च पू + औ मु) के योग के बराबर उनकी कीमत होती है। उत्पादन की कीमत वस्तु की लागत कीमत और औसत मुनाफे के योग के बराबर होती है।

निम्नलिखित तालिका से मुनाफे की विभिन्न दरों की समानता और उत्पादन की कीमत के निर्धारण को स्पष्ट किया जा सकता है

उद्योग	पूंजी का सांगठनिक संयोजन	अधिशेष मूल्य की दर, %	अधिशेष मूल्य	मुनाफे की दर, %	वस्तु का मूल्य	मुनाफे की औसत दर, %	उत्पादन की कीमत	मूल्य से उत्पादन की कीमत का विचलन
चर्म उद्योग	७० स्थि पूं + ३० परि पूं	१००	३०	३०	१३०	२०	१२०	—१०
वस्त्र उद्योग	८० स्थि पूं + २० परि पूं	१००	२०	२०	१२०	२	११०	०
इंजीनियरिंग उद्योग	९० स्थि पूं + १० परि पूं	१००	१०	१०	११०	२०	१२०	+१०
योग	२४० स्थि पूं + ६० परि पूं	१ ०	६०	२०	३६	२०	३६०	—

इस तालिका से स्पष्ट है कि मुनाफे की विभिन्न दरों को एक औसत दर के रूप में परिवर्तित किया गया है। उत्पादन की कीमतें वस्तु के मूल्य से भिन्न हैं। एक उद्योग में उत्पादन की कीमतें वस्तु के मूल्य से ऊपर उठी हैं और दूसरे उद्योग में नीचे गिरी हैं।

जिन उद्योगों में पूंजी का सांगठनिक संयोजन कम होता है (हमारे उदाहरण में चर्म उद्योग) उनमें उत्पादन की कीमत वस्तु के मूल्य से कम तथा मुनाफे की राशि अधिशेष मूल्य की राशि से कम होती है। पूंजी के मध्यम सांगठनिक संयोजन वाले उद्योगों में उत्पादन की कीमत वस्तु के मूल्य के बराबर और मुनाफे की राशि अधिशेष मूल्य की राशि के बराबर होती है। पूंजी के उच्च सांगठनिक संयोजन वाले उद्योगों (हमारे उदाहरण में इंजीनियरिंग उद्योग) में उत्पादन की कीमत मूल्य से तथा मुनाफे की राशि अधिशेष मूल्य की राशि से अधिक होती है। इस अंतर के स्रोत पूंजी के निम्न सांगठनिक संयोजन वाले उद्योग हैं। इन उद्योगों के मजदूरों द्वारा उत्पन्न अधिशेष मूल्य को पूंजी के उच्च सांगठनिक संयोजन वाले उद्योगों के मालिक हड़प जाते हैं।

इस तरह मजदूरों का शोषण उनको प्रत्यक्ष रूप से काम पर लगाने वाले पूंजीपति ही नहीं करते अपितु सारा पूंजीपति वर्ग करता है। मजदूरों के शोषण

की दर को बढ़ाने से सम्पूर्ण पूंजीपति वर्ग का स्वार्थ सधता है, क्योंकि इस तरह मुनाफे की औसत दर बढ़ती है। इसी वजह से सभी पूंजीपति एक मोर्चे में संयुक्त होकर मजदूरों के खिलाफ वर्ग संघर्ष चलाते हैं। पूंजीपति वर्ग द्वारा शोषित मजदूर वर्ग को भी चाहिए कि वह वर्ग एकता कायम करे और एक संयुक्त मोर्चे के अन्तर्गत संगठित हो। मजदूरों की कुछ श्रेणियों के हितों के लिए सिर्फ संघर्ष करने या पूंजीपति विशेष के विरुद्ध लड़ने से मजदूर वर्ग की स्थिति में कोई आमूल फर्क नहीं आ सकता। पूंजी के जुए को उतार फेंकने के लिए आवश्यक है कि मजदूर वर्ग पूंजीवादी शोषण व्यवस्था का उन्मूलन करे। इस निष्कर्ष में मार्क्स के औसत मुनाफे के सिद्धान्त और सवहारा के वर्ग संघर्ष का राजनीतिक महत्व छिपा है।

ऊपर हम देख चुके हैं कि पूंजीवाद के अन्तर्गत वस्तुएं अपने मूल्य पर नहीं बल्कि अपने उत्पादन की कीमतों के अनुसार बेची जाती हैं। इसका यह कतई मतलब नहीं होता कि मूल्य का नियम काम नहीं करता। उत्पादन की कीमत वस्तु के मूल्य का ही परिष्कृत रूप है। कुछ पूंजीपति अपनी वस्तुओं को उनके मूल्य से ऊंची कीमतों पर बेचते हैं, जबकि दूसरे पूंजीपति अपनी वस्तुओं को उनके मूल्य से कम कीमतों पर बेचते हैं, किन्तु सभी पूंजीपतियों को अपनी वस्तुओं के पूरे मूल्य मिलते हैं। सम्पूर्ण पूंजीपति वर्ग के मुनाफे की कुल राशि समाज में उत्पन्न अधिशेष मूल्य की कुल मात्रा के बराबर होती है। सारे समाज के पैमाने पर उत्पादन की कीमतों का कुल योग वस्तुओं के कुल मूल्य राशि के बराबर होता है तथा मुनाफे की मात्रा अधिशेष मूल्य की मात्रा के समतुल्य होती है। इस तरह मूल्य का नियम उत्पादन की कीमतों के माध्यम से सचालित होता है।

पूंजीवाद के विकास के साथ पूंजी का सावयविक संयोजन भी बढ़ता है। इसका मतलब है कि उसमें कच्चे माल, मशीन और उपकरण की मात्रा में वृद्धि होती है। उसी क्षण मजदूरों की संख्या में भी वृद्धि होती है, यद्यपि यह वृद्धि उतनी तेजी से नहीं होती, जितनी कच्चे माल, मशीन तथा उपकरण की वृद्धि होती है। अतः चल पूंजी अचल पूंजी की अपेक्षा कम तेजी से बढ़ती है। किन्तु पूंजी का सावयविक संयोजन जितना ही अधिक होगा मुनाफे की दर उतनी ही कम होगी। इसका मतलब यह नहीं है कि मुनाफे की मात्रा में भी निश्चित रूप से कमी होगी। एक उदाहरण लें। मान लें कि समाज की कुल पूंजी १०० अरब डालर है। इसमें से ७० अरब डालर अचल पूंजी और ३० अरब डालर चल पूंजी के रूप में है। कुल पूंजी २० वर्षों में दुगुनी हो जाती है। पूंजी का सावयविक संयोजन भी बढ़ जाता है। २०० अरब डालर की कुल पूंजी में १६० अरब डालर अचल पूंजी और ४० अरब डालर चल पूंजी हो जाती है।

मुनाफे की दर गिरने की प्रवृत्ति

होना स्वाभाविक है क्योंकि उत्पादन में व्यवसायियों की अपेक्षा अधिक पूजी लगाते हैं। किन्तु पूजी की समान मात्रा पर मुनाफे की समान राशि प्राप्त होती है।

अधिशेष मूल्य व्यावसायिक मुनाफे का रूप ग्रहण करने पर अधिक छद्मावरित हो जाता है। व्यवसायी की पूजी उत्पादन में कोई हिस्सा नहीं लेती इसलिए ऐसा प्रतीत होता है कि मुनाफे का स्रोत व्यवसाय ही है। दूसरे शब्दों में वह यह मुनाफा वस्तु वितरण की प्रक्रिया के कारण प्राप्त करता है।

वस्तुओं के वितरण की प्रक्रिया में एक निश्चित व्यय राशि की आवश्यकता होती है। इस वस्तु वितरण की लागत कहते हैं। पूजीवाद में वस्तु वितरण लागत दो तरह की होती है। वस्तु वितरण की शुद्ध लागत वस्तुओं की खरीद बिक्री से प्रत्यक्षत सम्बन्धित है। वस्तुओं को मुद्रा और मुद्रा को वस्तुओं के रूप में परिवर्तित करने की प्रक्रिया में होने वाला व्यय भी इस लागत में शामिल होता है। इसके अतिरिक्त इस लागत में व्यावसायिक कर्मचारियों की मजूरी व्यावसायिक दफ्तरों विज्ञापन प्रतिद्वंद्विता और सट्टेबाजी पर होने वाले खर्च भी आते हैं। वस्तु वितरण की शुद्ध लागत के कारण मूल्य में कोई वृद्धि नहीं होती। औद्योगिक पूजीपतियों से प्राप्त अधिशेष मूल्य की राशि से इस लागत की व्यवस्था पूजीपति करते हैं। पूजीवादी व्यवसाय के अन्तर्गत होने वाले वस्तु वितरण व्यय में सबसे बड़ा हिस्सा शुद्ध लागत का होता है।

वस्तु वितरण की लागत

वस्तु वितरण के क्षेत्र में उत्पादन की प्रक्रिया का विस्तार होने से आवश्यक लागत में वे व्यय भी शामिल हैं जो समाज के लिए जरूरी क्रियाओं पर किये जाते हैं। ये व्यय पूजीवादी अर्थव्यवस्था के विभिन्न पहलुओं से स्वतन्त्र हैं। उदाहरण के लिए वस्तुओं को भंडार में रखने, उनको अंतिम रूप देने, परिवहन की व्यवस्था तथा पैकिंग पर होने वाले व्यय मुख्य हैं। उपभोक्ता के पास वस्तु के पहुचने के बाद ही वह उसका इस्तेमाल कर सकता है। वस्तुओं को आखिरी रूप देने तथा उनके परिवहन और पैकिंग पर व्यय किया जाने वाला श्रम वस्तुओं के मूल्य में वृद्धि करता है। इस दृष्टि से वस्तु वितरण लागत उत्पादन लागत से किसी भी प्रकार भिन्न नहीं है।

पूजीवाद के अन्तर्गत वस्तु वितरण लागत निरन्तर बढ़ती जाती है (विशेष कर वस्तु वितरण की शुद्ध लागत जिसमें विज्ञापन व्यय मुख्य है)। अमरीका ने १९६१ में विज्ञापन पर कुल मिलाकर १२ अरब डालर खर्च किये जो १९५० में होने वाले व्यय का दुगुना था। वस्तु वितरण लागत में होने वाली वृद्धि पूजीवादी समाज में परजीविता के बढ़ने का सूचक है। पूजीवादी देशों में खुदरा व्यापार से

प्राप्त होने वाली कुल राशि म वस्तु विवरण लागत एक तिहाई है। मेहनतकश जनता पर यह एक बडा बोझ है।

वर्तमान पूजीवादी व्यवस्था मे घरेलू व्यापार के दो मुख्य रूप हैं थोक व्यापार और खुदरा व्यापार। थोक व्यापार पूजीपतियो के बीच (उद्योगपतियो और व्यापारियो के बीच) चलता है। खुदरा व्यापार का मतलब जनता को प्रत्यक्ष रूप से वस्तुओ के बेचने से है। थोक व्यापार मे वस्तु विनिमय अधिक महत्वपूर्ण है। यह खास प्रकार का बाजार है जहा व्यापार नमूने के आधार पर चलता है। इस बाजार म वस्तुओ की माग और पूर्ति समूचे देश और बहुधा सम्पूर्ण पूजीवादी दुनिया के पैमाने पर केन्द्रित रहती हैं।

पूजीवादी व्यापार के रूप। विदेश व्यापार

विदेश व्यापार के अन्तर्गत आयात और निर्यात आते हैं। इनके आपसी सम्बध (कीमतो के रूप म) को व्यापार सतुलन कहा जाता है। व्यापार सतुलन क्रियाशील या निष्क्रिय हो सकता है। अगर किसी देश का निर्यात आयात से अधिक हो तो उस देश का व्यापार सतुलन सक्रिय होगा। किन्तु आयात के निर्यात से अधिक होने पर व्यापार सतुलन निष्क्रिय माना जाता है।

विदेशी बाजार मे वस्तुओ को बेचकर पूजीपति उत्पादन का विस्तार करते हैं और अपने मुनाफे को बढाते हैं। आर्थिक दृष्टि से अल्पविकसित देशो के साथ व्यापार करना औद्योगिक तौर पर विकसित देशो के लिए विशेष रूप से लाभदायक होता है क्योकि वे तैयार माल को इन देशो के हाथ अपेक्षाकृत ऊची कीमतो पर बेचते हैं और कच्चा माल कम कीमतों पर खरीदते हैं। विदेश व्यापार विकसित पूजीवादी देशो द्वारा आर्थिक रूप से अल्पविकसित देशो को पराधीन रखने का एक साधन है।

४ ऋण पूजी ज्वायट-स्टाक कम्पनिया

पूजी के आवर्त के दौरान न सिर्फ व्यावसायिक पूजी अलग हो जाती है, बल्कि मुद्रा पूजी भी ऋण पूजी का रूप धारण कर अलग हो जाती है। अतिरिक्त मुद्रा पूजी कहा से आती है? मान लें कि कोई उद्योगपति अपनी तैयार वस्तुओ को हर माह बेचता है लेकिन कच्चा माल छ महीने पर खरीदता है। इसका मतलब है कि लगातार पाच महीनो तक उसके पास अतिरिक्त मुद्रा पडी रहती है। अगर कोई पूजीपति अपनी अचल पूजी के पुराने घिसे पिटे हिस्से को प्रतिस्थापित करने के लिए मुद्रा का सचय कर रहा है, तो जब तक उसके

ऋण पूजी और ब्याज

पास प्रतिस्थापन के लिए आवश्यक मात्रा म मुद्रा नही हो जाती, तब तक अनिरि
मुद्रा उसके पास अस्थायी रूप से पडी रहेगी। कई वर्षों के बाद यह राशि
उपकरणो की खरीद पर खर्च की जायेगी।

दूसरे समय पूजीपति को अतिरिक्त मुद्रा राशि की आवश्यकता पड सक
है, अर्थात जब वह अपने तयार माल को बचने म असफल हो जाता है लेकिन उ
कच्चा माल तत्काल खरीदना पडता है, तब उसे अतिरिक्त मुद्रा राशि की जरूर
पडती है।

फलस्वरूप एक ही समय किसी पूजीपति के पास मुद्रा पूजी की अस्थाय
तौर पर अधिकता रहती है, जबकि उसी समय किसी अन्य पूजीपति को उसक
जरूरत रहती है। जिस पूजीपति के पास अनिरिक्त मुद्रा रहती है, वह उसे अ
पूजीपतियो को अस्थायी तौर पर इस्तेमाल के लिए कर्ज के रूप म दे देता है। ऋण
पूजी समय की एक विशेष अवधि के लिए एक निश्चित मुद्रा राशि (यान
ब्याज) पर उधार दी जाने वाली मुद्रा पूजी है।

ब्याज मुनाफे का वह हिस्सा है जो उद्योगपति या व्यापारी से ऋण दें
वाले पूजीपति को प्राप्त होता है। उद्योगपति या व्यापारी उधार ली गयी मुद्रा राशि
को उत्पादन या व्यापार म लगाते हैं। अत ऋण पूजी का इस्तेमाल इसके स्वामी
पूजीपति द्वारा नही किया जाता। उद्योगपति उधार ली गयी पूजी के माध्यम से
मजदूरो को काम पर लगाते हैं और अधिशेष मूल्य प्राप्त करते हैं। वे इस अधिशेष
मूल्य का एक भाग ऋण देने वाले पूजीपति को ब्याज के तौर पर दे देते हैं। इस
तरह ऋण के ऊपर प्राप्त होने वाला ब्याज अधिशेष मूल्य का ही एक रूप है।

एक उदाहरण लें। मान लें कि किसी औद्योगिक पूजीपति ने एक लाख
डालर उधार लिया है। अगर मुनाफे की औसत दर २० प्रतिशत हो तो इस पूजी पर
प्राप्त होने वाला कुल मुनाफा २० ००० डालर होगा। उद्योगपति मुनाफे की इस
राशि म से एक भाग ऋण देने वाले पूजीपति को ब्याज के रूप मे देता है। अगर
ऋण पर ब्याज की दर[१] ३ हो तब १ लाख डालर की पूजी पर २० हजार डालर
मुनाफे की प्राप्त राशि म से ३ हजार डालर ब्याज के रूप मे दिया जायेगा। मुनाफे
की शेष राशि (यानी १७ हजार डालर) उद्योगपति को प्राप्त होगी। मुनाफे के
इस हिस्से को उद्यम का मुनाफा कहते हैं।

औसत मुनाफे का ब्याज और उद्यम के मुनाफे के रूप मे विभाजन का
अनुपात ऋण पूजी की माग और पूर्ति के सतुलन पर निर्भर करता है। मुद्रा पूजी
की माग जितनी ही अधिक होगी ब्याज की दर उतनी ही ऊची होगी। अगर
मुद्रा पूजी की माग कम होगी, तो ब्याज की दर भी कम होगी। ब्याज औसत

१ "ब्याज की दर" ब्याज की राशि और उधार दी गयी पूजी का अनुपात है।

मुनाफे का एक भाग होता है इसलिए ब्याज की दर मुनाफे की औसत दर से अधिक नही हो सकती।

पूजीवाद के विकास के साथ-साथ ब्याज की दर की ह्रासोन्मुख प्रवृत्ति देखने मे आती है। ऐसा दो कारणो से होता है १) मुनाफे की औसत दर की प्रवृत्ति गिरने की होती है, और २) ऋण पूजी की कुल मात्रा उसकी माग की अपेक्षा अधिक तेजी से बढती है।

पूजीवादी साख। ऋण पूजी अधिकतर साख के रूप मे दी जाती है। पूजीवादी साख के दो रूप हैं व्यावसायिक साख और बैंक वालों की साख।

बैंक और बैंक मालिको का मुनाफा

व्यावसायिक साख उस समय दी जाती है जब उद्योगपति और व्यापारी एक दूसरे की साख पर वस्तुए बेचते हैं। विक्रेता को वस्तु विक्रय के समय एक हुण्डी मिलती है जिसके आधार पर खरीदार एक निश्चित तिथि तक मुद्रा की एक निश्चित राशि विक्रेता को अदा करता है।

बैंक वालों की साख बैंक वाले उद्योग या व्यवसाय में काम करने वाले पूजीपतियो को देते हैं। यह साख बैंकों द्वारा अस्थायी तौर पर जमा अतिरिक्त मुद्रा पूजी मे से दी जाती है।

बैंक पूजीवाद के अन्तर्गत पूजीवादी संस्था होते हैं। इनका काम उधार लेने वालों के बीच बिचौलिये का है। बैंक अतिरिक्त, निष्क्रिय पूजी और आय राशि को संग्रहीत कर कार्यशील पूजीपतियो और पूजीवादी राज्य को प्रदान करते हैं। इसके अतिरिक्त बैंक वाले प्रत्यक्ष रूप से औद्योगिक और व्यावसायिक उद्यमो मे पूजी लगाते हैं और स्वयं कार्यशील पूजीपति बन जाते हैं।

अन्य पूजीवादी उद्यमो की तरह ही बैंको के परिचालन का उद्देश्य मुनाफा कमाना होता है। बैंको के मुनाफे का स्रोत भी उत्पादन के क्षेत्र मे निर्मित अधिशेष मूल्य है। उधार दी गयी ऋण पूजी पर प्राप्त ब्याज राशि और जमा राशि पर भुगतान की गयी ब्याज राशि का अन्तर ही बैंक वालो का मुनाफा होता है। जमा राशि वह अस्थायी अतिरिक्त मुद्रा राशि है जिसे पूजीपति, व्यापारी भूस्वामी और अन्य लोग बैंको मे रखते हैं। बैंक जमा राशि पर ऋण राशि पर प्राप्त ब्याज से कम ब्याज देते हैं। वे दोनो के अन्तर को स्वयं रख लेते हैं। बैंको के परिचालन पर होने वाला व्यय इसी राशि से आता है। अन्तिम तौर पर जो कुछ बच जाता है वह बैंक मालिकों का मुनाफा होता है। पूजीवादी प्रतिद्वंद्विता के कारण यह मुनाफा बैंक मालिको को अपनी पूजी पर प्राप्त होने वाले मुनाफे की औसत दर पर आ जाता है। बैंको की पूजी का एक बडा भाग जमा राशि के आधार पर ली गयी उधार पूजी होता है।

साख प्रबन्ध II बिचौलिये के रूप में काम करने के अतिरिक्त बैंक पूंजीपतियों के आपसी लेन-देन का भी हिसाब रखते हैं। वे उनके लिए हर तरह के वित्तीय आयोग का काम सम्पादित करते हैं। वे पूंजीपतियों के लिए बस खजांची का काम करते हैं।

पूंजीवाद के अन्तर्गत बैंक मुद्रा के मालिकों को अर्थव्यवस्था की विभिन्न शाखाओं में स्वतः वितरित करने के विशिष्ट उपकरणों के रूप में काम करते हैं। यह वितरण सामाजिक हितों को ध्यान में रखकर नहीं होता, बल्कि पूंजीपतियों के हितों की दृष्टि से होता है। अर्थव्यवस्था की विभिन्न शाखाओं को एक-दूसरे से सम्बद्ध कर बैंक श्रम के समाजीकरण को प्रोत्साहित करते हैं। श्रम का यह समाजीकरण उत्पादन के साधनों के निजी स्वामित्व पर आधारित होता है। इस कारण साख का विकास उत्पादन की पूंजीवादी पद्धति के अन्तर्विरोधों को तीव्र कर देता है और पूंजीवादी उत्पादन की अराजकता को बढ़ाता है।

पूंजीवाद के प्रारम्भिक काल में कारखाने व्यक्तिगत स्वामियों द्वारा शुरू किये गये। आगे चलकर रेल्वे, बन्दरगाह वगैरह विशाल उद्यमों का व्यक्तिगत पूंजी द्वारा चलाया जाना असम्भव हो गया। उद्योग, रेल निर्माण और बैंक उद्योग में ज्वायन्ट-स्टाक कम्पनियां स्थापित होने लगीं। १९वीं सदी के उत्तरार्द्ध में वे काफी व्यापक हो गयीं। ज्वायन्ट-स्टाक कम्पनी उद्यम के उस रूप को कहते हैं जिसकी पूंजी कम्पनी के सदस्यों के अंशदान से बनती है। ये सदस्य अपने द्वारा लगायी गयी पूंजी के अनुसार शेयरों की एक निश्चित संख्या के स्वामी होते हैं।

ज्वायन्ट स्टाक कम्पनियां

शेयर एक प्रकार की प्रतिभूति है जो यह प्रमाणित करती है कि उसके मालिक ने उद्यम में एक निश्चित धनराशि लगायी है। शेयर अपने मालिक को उद्यम की आय का एक हिस्सा प्राप्त करने का अधिकार देता है। शेयर होल्डर को प्राप्त होने वाली राशि को लाभांश कहते हैं। स्टाक एक्सचेंज में निश्चित कीमतों पर शेयर खरीदे और बेचे जाते हैं। इन निश्चित कीमतों को कथित मूल्य कहते हैं। स्टाक एक्सचेंज प्रतिभूतियां विशेषकर शेयरों का बाजार है। यहां पर शेयरों की खरीद बिक्री होती है और उनके कथित मूल्य दर्ज होते हैं।

कथित मूल्य या शेयरों की कीमतें दो बातों पर निर्भर करती हैं १) जमा राशि पर बैंकों द्वारा अदा किये जाने वाले ब्याज का स्तर और २) प्रत्येक शेयर पर प्राप्त वार्षिक आय (यानी लाभांश)। अगर १०० डालर के एक शेयर पर १० डालर की वार्षिक आय प्राप्त हो तो इस शेयर को उस राशि पर बेचा जायगा जिस राशि को किसी बैंक में जमा करने पर ब्याज के रूप में प्रतिवर्ष १०

डालर प्राप्त हो। मान लें, बक प्रतिवष ५ प्रतिशत की दर मे ब्याज अदा करते हैं। इस स्थिति मे इस शेयर की कीमत २०० डालर होगी, क्याकि इतनी राशि बक मे जमा करन पर शेयर होल्डर का १० डालर प्रतिवष ब्याज के रूप मे प्राप्त हो सकेगा।

प्रत्येक ज्वायट स्टाक उद्यम के नियन्त्रण और प्रब ध के लिए शेयर होल्डरा की आमसभा एक यवस्थापक परिषद चुनती है और पदाधिकारिया की नियुक्ति करती है। आमसभा म वाटा की सख्या प्राप्त शेयरा की सख्या पर निभर करती है। सामा यतया बहुसख्यक शेयर च द बडे पूजीपतियो के अधिकार मे रहते हैं। इसलिए य ही लोग वास्तविक तौर पर ज्वायन्ट-स्टाक कम्पनियो को नियन्त्रित और सचालित करते हैं। व्यवहार म हम पाते हैं कि किसी ज्वाय ट स्टाक उद्यम पर नियन्त्रण रखने के लिए कुल शेयरा के आधे से भी कम पर अधिकार रखना पर्याप्त है। अगर किसी व्यक्ति के पास इतने शेयर हैं कि वह अपनी इच्छानुसार काय कर सकता है तो कहा जाता है कि उसका नियन्त्रक हित है। यह बात कई लोगों के समूह क लिए भी लागू हा सकती है।

प्रतिभूतियो (शेयर बौण्ड) के रूप मे रहने वाली पूजी जो पूजीपतियो को आय प्रदान करती है, फर्जी पूजी कही जाती है। प्रतिभूतियो का अपन आपमे कोई मूल्य नहीं होता। व अप्रत्यक्ष रूप से वास्तविक पूजी के रूप मे काय करती हैं।

ज्वाय ट स्टाक कम्पनिया के प्रचलित हो जान के कारण पूजीपति अब ब्याज और लाभाशा के प्राप्तकर्ता मात्र रह गये हैं। औद्योगिक उत्पादन का प्रब ध वेतनभोगी मैनेजर डायरेक्टर आदि देखते हैं। इस तरह पूजीवादी स्वामित्व का परजीवी चरित्र अधिकाधिक स्पष्ट हो जाता है।

जनता क हर समूह के पास शेयर रहते हैं। यह पूजीपतिया के लिए लाभ दायक है क्याकि शेयरों के जितने ही अधिक खरीदार होंगे शेयर होल्डरा के उच्च वग के हाथो म उतनी ही अधिक पूजी होगी। मेहनतकश जनता क भी कई सदस्या के पास शेयर होने के कारण पूजीवादी विचारक "पूजी के जनवादीकरण" के सिद्धा त का प्रचार करने लगे हैं। यह झूठा सिद्धान्त बतलाता है कि ज्वायन्ट स्टाक उद्यम के विकास के फलस्वरूप पूजीवाद का चरित्र बदल रहा है और शेयर खरीदने वाला हर व्यक्ति कम्पनी का सहभागी बन गया है और उसके प्रब ध म भाग लेता है। किन्तु वास्तविकता कुछ और ही है। ज्वाय ट स्टाक कम्पनिया का नियन्त्रण बडे पूजीपतियो द्वारा ही होता है। कम्पनी की शेयर पूजी से पूरा फायदा इन्ही बडे पूजीपतिया को मिलता है। मेहनतकश जनता के सदस्या का शयरो के एक नगण्य हिस्स पर ही अधिकार रहता है। अत न ता व किसी ज्वाय ट स्टाक कम्पनी के प्रब ध म हिस्सा लेते हैं और न ले सकते है।

ऊपर हमने देखा है कि अधिशेष मूल्य किस प्रकार मुनाफे के रूप में परिवर्तित होता है और किस प्रकार उद्योगपति व्यापारी और बैंकर उसे प्राप्त करते हैं। पूंजीवाद के अन्तर्गत शोषकों का एक और समूह—भूस्वामियों का समूह है। उन्हें भी अधिशेष मूल्य की राशि में हिस्सा प्राप्त होता है। यह पूंजीवादी भू लगान के रूप में मिलता है।

५ पूंजीवाद के अन्तर्गत भू लगान और कृषि-सम्बन्ध

भू लगान कहां से मिलता है, कौन इसे उत्पन्न करता है और यह भूस्वामी को क्यों प्राप्त होता है? इन प्रश्नों का उत्तर देने के लिए मार्क्सवाद-लेनिनवाद मान लेता है कि पूंजीवादी कृषि व्यवस्था मौजूद है।

पूंजीवादी भू लगान

पूंजीवादी कृषि मजदूरों के शोषण पर आधारित है। मार्क्सवाद-लेनिनवाद विश्लेषण के लिए यह भी मानता है कि भूस्वामी और पूंजीपति दो भिन्न व्यक्ति हैं।

भूस्वामी स्वयं खेती नहीं करता। वह अपनी जमीन किसी पूंजीपति को पट्टे पर दे देता है। यह पूंजीपति कृषि उत्पादन में अपनी पूंजी का विनियोग करता है। पूंजीपति मजदूरों को काम पर लगाता है। वे मजदूर उत्पादन की प्रक्रिया के दौरान अधिशेष मूल्य उत्पन्न करते हैं। यह अधिशेष मूल्य सर्वप्रथम पूंजीवादी कृषक काश्तकार को मिलता है जो इसे दो भागों में विभाजित करता है पहला भाग उसका मुनाफा होता है, जो उसके द्वारा लगायी गयी पूंजी के औसत मुनाफे के बराबर होता है और दूसरा भाग औसत मुनाफे की राशि के अतिरिक्त होता है तथा भूस्वामी को प्राप्त होता है। अधिशेष मूल्य का यह दूसरा भाग भू लगान के रूप में होता है। क्यों और किस आधार पर भूस्वामी पूंजीवादी कृषक काश्तकार द्वारा मजदूरों को काम पर लगाने से उत्पन्न अधिशेष मूल्य का एक हिस्सा प्राप्त करता है? भूस्वामी भूमि का मालिक होता है और बिना उसकी अनुमति के कोई भी व्यक्ति उसकी जमीन पर खेती नहीं कर सकता। इसलिए उसको अधिशेष मूल्य का एक हिस्सा प्राप्त होता है। भू लगान के माध्यम से जमीन का निजी स्वामित्व अभिव्यक्त होता है। अगर पूंजीपति स्वयं भूमि का स्वामी रहे तो वह खेतिहर मजदूरों द्वारा उत्पन्न किये गये अधिशेष मूल्य की सम्पूर्ण मात्रा प्राप्त करेगा।

पूंजीवादी भू लगान सामन्तवादी भू-लगान से भिन्न होता है। सामन्तवाद के अन्तर्गत सब प्रकार के लगान (श्रम लगान, वस्तु-लगान, मुद्रा लगान) दो मुख्य वर्गों—भूस्वामियों और कमियां किसानों—के पारस्परिक सामन्तवादी उत्पादन सम्बन्धों को जाहिर करता है। पूंजीवाद के अन्तर्गत भू-लगान तीन वर्गों

—भूस्वामियों, पूंजीवादी कृषक काश्तकारों और काम पर लगे खेतिहर मजदूरों के सम्बंध को अभिव्यक्त करता है। सामंतवाद में किसानों द्वारा उत्पन्न सम्पूर्ण अधिशेष मूल्य भू लगान के रूप में होता है। पूंजीवाद के अंतर्गत अधिशेष मूल्य दो शोषक वर्गों—पूंजीवादी कृषक काश्तकारों और भूस्वामियों के बीच वितरित होता है।

दो प्रकार के लगान अंतरीय लगान और निरपेक्ष लगान में फर्क करना आवश्यक है। लेनिन ने बताया कि दोनों प्रकार के लगान इजारेदारी के दोहरे चरित्र से सम्बंधित हैं। भूमि की इजारेदारी अन्तरीय लगान को जन्म देती है क्योंकि भूमि आर्थिक क्रिया की वस्तु है। भूमि पर निजी स्वामित्व की इजारेदारी के कारण निरपेक्ष लगान का जन्म होता है।

उद्योगों में वस्तु का मूल्य और उत्पादन की कीमत का निर्धारण उत्पादन की औसत स्थितियों के द्वारा होता है, किन्तु कृषि के क्षेत्र में कृषिगत वस्तुओं की उत्पादन कीमत का निर्धारण उत्पादन की औसत स्थितियों के कारण नहीं होता बल्कि सबसे ऊसर जमीन की उत्पादन स्थितियों के द्वारा होता है। चूंकि जमीन का क्षेत्रफल सीमित है और उसे अनिश्चित तौर पर बढ़ाया नहीं जा सकता, इसलिए वे किसान जिनके पास सबसे अच्छा या मध्यम कोटि की जमीन होती है ऊसर जमीन के काश्तकारों से बेहतर स्थिति में होते हैं। आर्थिक क्रियाकलापों के उद्देश्य से इजारेदार काश्तकारों के पास हर प्रकार की जमीन रहती है। अतः भिन्न प्रकार की जमीन से प्राप्त आय में विषमता रहती है। अंतरीय लगान औसत मुनाफे के अतिरिक्त प्राप्त होने वाला मुनाफा होता है। यह उन फार्मों को प्राप्त होता है जिनमें उत्पादन की स्थितियां अधिक अनुकूल रहती हैं। किन्तु जमीन स्वयं लगान का स्रोत नहीं है। उर्वर जमीन पर लगाया जाने वाला श्रम अधिक उत्पादक होता है और उससे अतिरिक्त मुनाफा प्राप्त होता है।

अन्तरीय लगान

तीन तत्वों के कारण अंतरीय लगान प्राप्त होता है। वे तत्व हैं १) विभिन्न भूखण्डों की उत्पादकता में अन्तर, २) बाजार की दृष्टि से भूखण्डों की भिन्न स्थितियां, ३) भूमि में अतिरिक्त पूंजी के विनियोग के कारण उत्पादकता में अंतर।

जमीन की उत्पादकता और स्थिति में अन्तर होने के कारण प्राप्त अन्तरीय लगान को मार्क्स ने अंतरीय लगान १ कहा। आइए हम इस पर विचार करें।

उदाहरण के लिए, समान आकार, लेकिन भिन्न उत्पादकता वाले तीन भूखण्डों को लें। प्रत्येक भूखण्ड का काश्तकार मजदूरों को काम पर लगाने, बीज और मशीन खरीदने इत्यादि के लिए १०० डालर खर्च करता है। इन भूखण्डों की उत्पादकता में अन्तर होने के कारण प्रत्येक भूखण्ड का अन्नोत्पादन बराबर नहीं

होता। भूखण्ड १ पर १० बुशेल भूखण्ड २ पर १५ बुशल और भूखण्ड ३ पर २० बुशेल अन्न का उत्पादन होता है।

मान लें कि मुनाफे की औसत दर २० प्रतिशत है। इस अवस्था में प्रत्येक भूखण्ड पर सम्पूर्ण अन्न की उत्पादन कीमत (उत्पादन लागत + औसत मुनाफा) १२० डालर होगी। किन्तु १ बुशल अन्न का उत्पादन कीमत क्या होगी? भूखण्ड १ पर एक बुशल अन्न के उत्पादन का लागत १२ डालर (१२० १०), भूखण्ड २ पर ८ डालर (१२० १५) और भूखण्ड ३ पर ६ डालर (१२० २०) है।

बाजार में अन्न की कीमत का निर्धारण सबसे कम उर्वर भूखण्ड को ध्यान में रखकर होता है। इस प्रकार १ बुशल अन्न की कीमत १२ डालर होगी। अगर कीमत का निर्धारण मध्यम कोटि के भूखण्ड को ध्यान में रखकर ८ डालर प्रति बुशल किया जाय तो सबसे ऊसर जमीन के काश्तकार को सिर्फ ८० डालर मिलेंगे। इस तरह उसको अपनी पूंजी पर मुनाफा नहीं प्राप्त होगा। ऊसर जमीन के काश्तकार को खेती छोड़ने के लिए विवश होना पड़ेगा। वह मध्यम या प्रथम कोटि की जमीन पर खेती नहीं कर सकता क्योंकि इस प्रकार की जमीन उपलब्ध नहीं है। सबसे ऊसर जमीन पर अन्न का उत्पादन बन्द कर देने के कारण कुल अन्नोत्पादन घट जायगा। फलस्वरूप अन्न की कीमत बढ़ेगी और जब १२ डालर प्रति बुशल हो जायेगी तब सबसे ऊसर जमीन पर फिर खेती करना लाभदायक हो जायेगा।

अतः भूखण्ड १ का काश्तकार अपनी कुल उपज १२० डालर, भूखण्ड २ का काश्तकार १८० डालर और भूखण्ड ३ का काश्तकार २४० डालर में बेचेगा। उत्पादन की कीमत के अतिरिक्त प्राप्त राशि—भूखण्ड २ पर ६० डालर और भूखण्ड ३ पर १२० डालर—अन्तरीय लगान होगी।

अधिक स्पष्टता के लिए हम उपर्युक्त उदाहरण को इस तालिका द्वारा प्रस्तुत कर सकते हैं

भूखण्ड	पूंजी का व्यय, डालर	औसत मुनाफा, डालर	उपज, बुशेल	व्यक्तिगत उत्पादन कीमत, डालर		सामाजिक उत्पादन कीमत, डालर		अन्तरीय लगान १, डालर
				कुल उपज	१ बुशेल	१ बुशल	कुल उपज	
१	१००	२	१०	१२०	१२	१२	१२०	—
२	१	२०	१५	१२०	८	१२	१८०	६
३	१००	२	२०	१२०	६	१२	२४	१२०

उपयुक्त तालिका देखने पर स्पष्ट हो जाता है कि अन्तरीय लगान औसत मुनाफे के अतिरिक्त प्राप्त राशि है। इसका उत्पादन खेतिहर मजदूरों के श्रम से होता है। श्रमिकों का श्रम अगर भिन्न उत्पादकता वाले भूखण्डों पर लगे तो श्रम उत्पादकता में अन्तर होगा। इस कारण विभिन्न भूखण्डों से अधिशेष मूल्य की समान राशियां नहीं प्राप्त होंगी।

अन्तरीय लगान १ का उदय भूखण्डों की स्थिति से सम्बंध रखता है। शहरों, बड़ी नदियों, समुद्र तटों और रेल्वे से दूरी का बड़ा असर पड़ता है। जो भूखण्ड बाजार के नजदीक होते हैं उनको अपनी उपज बाजार में ले जाने में दूर वाले भूखण्डों की अपेक्षा बहुत कम श्रम और साधन व्यय करने पड़ते हैं, किन्तु वे अपनी उपज को उन्हीं कीमतों पर बेचते हैं जिन पर दूर वाले बेचते हैं और इस तरह अतिरिक्त मुनाफा प्राप्त करते हैं।

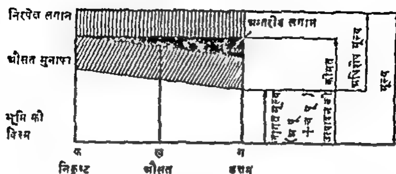
अगर भूमि पर अतिरिक्त पूंजी लगायी जाये (कृत्रिम खादों का इस्तेमाल, भूमि विकास, उन्नत मशीन वगैरह), तो भी अन्तरीय लगान प्राप्त हो सकता है। सघन खेती के फलस्वरूप प्राप्त अतिरिक्त मुनाफा को अन्तरीय लगान २ कहते हैं।

अन्तरीय लगान १ और २ के अतिरिक्त निरपेक्ष लगान भी भूस्वामी को मिलता है।

पूंजीवाद में जमीन पर व्यक्तिगत स्वामित्व होता है। अतः कृषि में पूंजी लगाने में पहले भूस्वामी की अनुमति प्राप्त कर लेना आवश्यक होता है। जमीन पर निजी स्वामित्व की इजारेदारी के कारण उद्योग से कृषि में पूंजी का मुक्त प्रवाह सम्भव नहीं है। इस कारण कृषि में उद्योग की तुलना में पूंजी का सांगठनिक संयोजन कम होता है। इसका मतलब है कि पूंजी की समान मात्रा पर उद्योग की अपेक्षा कृषि में अधिशेष मूल्य की अधिक राशि प्राप्त होती है। अगर उद्योग से कृषि में पूंजी का मुक्त प्रवाह सम्भव हो जाये तो पूंजी के निम्न सांगठनिक संयोजन के कारण कृषि में उत्पन्न होने वाला अतिरिक्त अधिशेष मूल्य उद्योग और कृषि के बीच बंट जायेगा किन्तु भूमि पर निजी स्वामित्व होने के कारण यह अतिरिक्त अधिशेष मूल्य पूंजीपतियों के बीच पुनर्वितरित नहीं हो पाता। भूस्वामी कृषि में पूंजी लगाने वाले पूंजीपति से यह अतिरिक्त अधिशेष मूल्य प्राप्त कर लेता है।

निरपेक्ष लगान। जमीन की कीमत

निरपेक्ष और अंतरीय लगान



भूस्वामी को जमीन के इस्तेमाल के लिए बिना भुगतान किये पूंजीपति कृषि उत्पादन नही कर सकता। भूमि पर निजी स्वामित्व के अधिकार के आधार पर भूस्वामी को जो कुछ मिलता है उसे निरपेक्ष लगान कहते हैं।

हम निम्नलिखित उदाहरण को देखें कि किस प्रकार निरपेक्ष लगान मिलता है। उद्योग मे अगर पूंजी का सांगठनिक संयोजन ४ : १ है और कुल पूंजी ८० स पू + २० व पू है, तो अधिशेष मूल्य की दर १०० प्रतिशत होने पर अधिशेष मूल्य की मात्रा २० डालर होगी। कुल उत्पाद्य का मूल्य १२० डालर होगा। कृषि मे पूंजी का सांगठनिक संयोजन (६० स पू + ४० व पू यानी १.५ : १) उद्योग की अपेक्षा कम है। अगर अधिशेष मूल्य की दर १०० प्रतिशत हो तो ४० डालर अधिशेष मूल्य उत्पादित होगा और कुल कृषि उत्पाद्य का मूल्य १४० डालर होगा। पूंजीवादी कृषक काश्तकार को उद्योगपति के समान ही २० डालर का औसत मुनाफा प्राप्त होगा। अतः कृषि की उपज की उत्पादन कीमत (उत्पादन लागत + औसत मुनाफा) १२० डालर (१०० + २०) होगी, जबकि उपज का मूल्य (यानी जिस कीमत पर उपज बेची जा रही है) १४० डालर होगा। कृषि की उपज के मूल्य और उत्पादन कीमत का अंतर (हमारे उदाहरण मे १४० — १२० = २०) निरपेक्ष लगान है। यह भूस्वामी को प्राप्त होता है। अतः निरपेक्ष लगान कृषि की उपज के मूल्य और उत्पादन की सामाजिक कीमत का अन्तर है।

इसलिए भूमि पर निजी स्वामित्व की इजारेदारी के कारण ही प्रत्येक प्रकार के भूखण्ड (बिना उसकी उत्पादकता और स्थिति पर विचार किये) से निरपेक्ष लगान प्राप्त होता है।

भूमि प्रकृति का एक उपहार है और उसका कोई मूल्य नही है लेकिन पूंजीवाद के अन्तर्गत भूमि खरीदी और बेची जाती है। इस तरह पूंजीवाद मे

भूमि एक वस्तु बन जाती है। कौन-से तत्व जमीन के बेचते समय उसकी कीमत निर्धारित करते हैं?

किसी भी भूखण्ड की कीमत दो बातों पर निर्भर होती है १) उस भूखण्ड से प्राप्त वार्षिक आय (लगान), और २) ऋण पर ब्याज की दर। अगर भूस्वामी को प्रतिवर्ष जमीन से १०,००० डालर का लगान मिले तो वह जमीन को उतनी मुद्रा राशि पर बेचेगा, जितनी किसी बैंक में जमा करने पर उसे उतनी ही आय (१०,००० डालर प्रतिवर्ष) प्रदान करे। मान लें कि बैंक जमा राशि पर ४ प्रतिशत ब्याज दे रहे हैं तब भूस्वामी उस भूखण्ड को २,५०,००० डालर पर बेचेगा, क्योंकि इस राशि को बैंक में जमा करने पर उसे ४ प्रतिशत ब्याज की दर के हिसाब से १०,००० डालर की वार्षिक आय मिलेगी। अतः भूमि की कीमत पूंजीकृत लगान है, अर्थात लगान को पूंजी के रूप में परिवर्तित करने पर ब्याज के रूप में आय प्राप्त होती है। पूंजीवाद के विकास के साथ जमीन की कीमत लगान में वृद्धि होने पर बढ़ती है और ऋण पर ब्याज की दर घटने से घटती है।

कृषि में पूंजीवादी विकास के विशिष्ट लक्षण कृषि में पूंजीवाद का विकास उन्हीं नियमों के अनुसार होता है, जिन नियमों के अनुसार वह उद्योग में विकसित होता है।

कृषि में पूंजीवाद का विकास कई तरह से मूर्त ऐतिहासिक स्थितियों के अनुसार होता है। दो प्रकार के पूंजीवादी विकास ध्यान देने लायक हैं।

पहला सामन्तवादी भूसम्पत्ति को बनाये रखना और उसे धीरे धीरे पूंजीवादी कृषि में बदलना। जर्मनी, जारशाही रूस और इटली में पूंजीवाद का विकास कृषि के क्षेत्र में इसी प्रकार हुआ।

दूसरा पूंजीवादी क्रान्ति द्वारा सामन्तवादी भूसम्पत्ति का उन्मूलन और जमीनों को सामन्तों से छीनकर किसानों के हाथों बेचना। ऐसे फार्म बनते हैं जिन पर पूंजीवादी उत्पादन का विकास तेजी से हो। उदाहरण के तौर पर, अमरीका में ऐसे फार्म बनाये गये जिनमें पूंजीवादी उत्पादन का तेजी से विकास हुआ।

किन्तु जिस तरह भी कृषि में पूंजीवाद का विकास हुआ हो, सदा ही बड़े पूंजीपतियों के हाथों में भूसम्पत्ति का केन्द्रीकरण हुआ। छोटे कृषकों और सामन्ती जमींदारों के स्वामित्व की जगह पूंजीवादी निजी स्वामित्व कायम हुआ। उदाहरण के तौर पर, अमरीका में १९५४ में ७३.४ फार्मों के अन्तर्गत कुल क्षेत्रफल का ११.६ था जबकि २६.६ फार्मों के अन्तर्गत ८०.४ जमीन थी, जिसमें से ४५.९ भूमि सबसे बड़े कृषि उद्यमों (कुल २.७ फार्मों) के पास थी।

कृषि म पूजीवादी विकास क साथ उत्पादन अधिकाधिक सकेद्रित होता जाता है। इस कारण लघु कृषक फार्म बडे पमाने के उत्पादन के समक्ष महत्वहीन हो जाते हैं, क्योकि बडे फार्मों को छोटे फार्मों की अपेक्षा कई निर्णायक सहूलियतें प्राप्त रहती हैं। बडे पमाने के उत्पादन म कृषि-यत्र की क्षमता का पूरा इस्तेमाल हो पाता है। बडे फार्मों पर श्रम उत्पादकता अधिक होती है। बड पमाने के उत्पादन म किसी न किसी शाखा (भूमि पर खेती अथवा पशुपालन) म विशेषीकरण होता है। इस कारण उनकी ऊची व्यावसायिक पण्यता होती है। बडे पमाने के उत्पादन के कारण छोटे उत्पादन नष्ट हो जाते हैं।

यह एक अकाट्य तथ्य है कि उद्योग म बडे पमाने का उत्पादन छोटे पमाने के उत्पादन पर हावी हो जाता है। इस तथ्य को पूजीवाद के वकील भी स्वीकार करते हैं किन्तु व कृषि को ग्रामीण आनन्द की एक अस्पष्ट अवस्था के रूप म दिखाते हैं और 'छोटे कृषको के खेती के स्थायित्व' का झूठा सिद्धान्त प्रतिपादित करते हैं। वास्तविकता कुछ और ही है। छोटे फाम किसी भी दृष्टि से स्थायी नही हैं। छोटे फाम अपना अस्तित्व इसलिए बनाये हैं कि भयकर दरिद्रता के कारण किसान अपने परिवार समेत उन पर जी-तोड काम करते हैं और थोडा-बहुत उपाजन कर लेते हैं।

पूजीवाद शहर और गाव के परस्पर विरोध को गहरा बनाता है और भडकाता है। कृषक वग का शहरी पूजीपति वग द्वारा शोषण और उद्योग, व्यवसाय, साख तथा कर व्यवस्था के विकास के क्रम म बहुसख्यक किसानो की बढ़ती हुई दरिद्रता के कारण ही यह परस्पर विरोध उत्पन्न होता है। आर्थिक राजनीतिक और सास्कृतिक दृष्टियो से ग्रामीण क्षेत्र शहरी क्षेत्र के मुकाबले पिछड जाता है।

अपनी कठिन जिन्दगी को देखकर किसान पूजीवादी व्यवस्था के उन्मूलन की आवश्यकता महसूस करने लगते हैं। अत बहुसख्यक किसानों तथा सवहारा वग के बुनियादी हितो का मेल हो जाता है। यही पूजीवाद के विरुद्ध समान सघष के लिए सवहारा वग और मेहनतकश कृषक वग के सयुक्त मोर्चे का आर्थिक आधार है।

भूमि पर निजी स्वामित्व रहने के कारण कृषि उद्योग की तुलना मे पिछड जाती है। हम पहले यह कह चुके हैं कि जमीन पर निजी स्वामित्व उद्योग से कृषि म पूजी के मुक्त प्रवाह को रोकता है। पूजीवादी कृषक

भूमि का राष्ट्रीयकरण और भू-लगान

कास्तकार कृषि मे अतिरिक्त पूजी (खाद, सिचाई परियोजना आदि) लगाने के लिए उत्सुक नही रहते क्योकि पट्टा खत्म होने के बाद विनियोग के सारे फायदे भूस्वामी

को प्राप्त होते हैं। भूमि का निजी स्वामित्व निरपेक्ष लगान का स्रोत है। निरपेक्ष लगान की इस राशि को जमीदार जोक की तरह चूस लेते हैं। इस प्रकार भूमि का निजी स्वामित्व पूजीवाद की उत्पादक शक्तियो के विकास के मार्ग मे बाधक होता है। इसलिए भूमि पर से निजी स्वामित्व खत्म होना जरूरी है। इसका एक रास्ता भूमि का राष्ट्रीयकरण, यानी भूमि को राजकीय सम्पत्ति मे बदलने का होगा।

पूजीवाद के प्रारम्भिक काल म पूजीपति वग के कुछ प्रतिनिधि भूमि के राष्ट्रीयकरण के पक्ष मे थे। उन दिनो भूमि मुख्य रूप से सामन्ती जमीदारो के अधिकार मे थी। उन्होने सुझाव दिया कि भूमि के निजी स्वामित्व को खत्म कर उसे पूजीवादी राज्य के अधिकार मे लाया जाये। पूजीवादी स्थितियो के अन्तगत ऐसा कदम उठाने पर क्या परिणाम होता? भूमि पर राज्य का नियत्रण होते ही निरपेक्ष लगान का अस्तित्व समाप्त हो जाता क्योकि निरपेक्ष लगान का स्रोत भूमि पर निजी स्वामित्व है।

पूजीवादी राज्य द्वारा भूमि का राष्ट्रीयकरण पूजीवाद और उसकी उत्पादक शक्तियो का विकास त्वरित कर देता, किन्तु पूजीवादी राज्य ऐसा नही करना चाहता था। प्रथम, भूमि पर स निजी स्वामित्व का उन्मूलन पूजीवादी सम्पत्ति समेत तमाम निजी सम्पत्ति के पाये को हिला देता। द्वितीय, पूजीवाद के विकास के साथ पूजीपति वग ने भी भूमि प्राप्त करना प्रारम्भ कर दिया और इस प्रकार पूजीपति वग और भूस्वामियो के हित एक-दूसरे स बध गये।

विकसित पूजीवाद के युग मे भूमि पर से निजी स्वामित्व का उन्मूलन वही वग कर सकता है जो हर प्रकार की निजी सम्पत्ति का खत्म करने के लिए सघष रत है। ऐसा वग क्रातिकारी सवहारा वग है। सवहारा वग द्वारा भूमि के राष्ट्रीयकरण से पूजीवाद के विकास का माग प्रशस्त नही होता, बल्कि इसके विपरीत पूजीवाद के उन्मूलन की प्रक्रिया का प्रारम्भ होता है।

सोवियत सघ मे भूमि का राष्ट्रीयकरण कर एक ही बार म भूमि पर से निजी स्वामित्व और निरपेक्ष लगान को खत्म कर दिया गया। बडे पमाने की कृषि के समाजवादी रूप के द्रुत विकास के लिए यह कदम अत्यन्त आवश्यक था।



अब तक हमने पूजी के सदभ मे अधिशेष मूल्य द्वारा अपनाये गये विभिन्न रूपो को देखा है। हम स्पष्ट कर चुके हैं कि पूजीपति वग के सभी समूहो तथा भूस्वामियो की आय का एकमात्र स्रोत भाडे के मजदूरो द्वारा उत्पन्न अधिशेष

मूल्य ही है। अधिशेष मूल्य कई रूप धारण कर लेता है और इस प्रकार ये रूप पूंजीवादी समाज के बुनियादी वर्ग अन्तर्विरोध (पूंजीपति वर्ग और सर्वहारा वर्ग के अन्तर्विरोध) पर परदा डाल देते हैं या उन्हें धुंधला बना देते हैं।

अधिशेष मूल्य के उत्पादन, पूंजी संचय सर्वहारा वर्ग की दरिद्रता और अधिशेष मूल्य के वितरण की प्रक्रियाओं का विश्लेषण करते समय मार्क्स ने सर्वहारा वर्ग और पूंजीपति वर्ग के अन्तर्विरोधों—पूंजीवाद के बुनियादी वर्ग अन्तर्विरोधों पर हर सम्भव दृष्टि से विचार किया। वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि सर्वहारा वर्ग का काम इन असाध्य अन्तर्विरोधों को हल करना, यानी उत्पादन के पूंजीवादी ढंग और शोषण को सदा के लिए समाप्त कर देना है।

अध्याय ६

सामाजिक पूंजी का पुनरुत्पादन और आर्थिक संकट

पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में कई स्वतन्त्र उद्यम शामिल रहते हैं। प्रत्येक पूंजीपति प्रदत्त समय में अधिकतम मुनाफा देने वाली वस्तुओं को उत्पन्न करता है। फलस्वरूप उत्पादन अनियोजित ढंग से चलता है। पूंजीवादी समाज में उत्पादन की अराजकता होने के कारण वस्तुओं की बिक्री के मार्ग में दिक्कतें आती हैं। फलस्वरूप अत्युत्पादन का आर्थिक संकट पैदा हो जाता है।

आर्थिक संकटों के कारण मेहनतकश जनता को असह्य यातनाएं सहनी पड़ती हैं। आर्थिक संकट पूंजीवाद के अन्तर्विरोधों को तीव्र बना देते हैं। वे याद दिलाते हैं कि पूंजीवाद का विध्वंस अवश्यम्भावी है।

आइए, सामाजिक पूंजी के पूंजीवादी पुनरुत्पादन की प्रक्रिया को सम्पूर्ण रूप में देखें।

१ सामाजिक पूंजी का पुनरुत्पादन

पूंजीवाद के अन्तर्गत सामाजिक उत्पादन एकीकृत नहीं होता। यह कई पूंजीवादी उद्यमों में विभक्त रहता है। इनमें से प्रत्येक उद्यम पर किसी न किसी पूंजीपति का निजी तौर पर स्वामित्व रहता है। वह अन्य उद्यमों से अलग एक स्वतन्त्र इकाई के रूप में कार्य करता है। साथ ही हर उद्यम में पुनरुत्पादन अन्य उद्यमों के पुनरुत्पादन पर निर्भर करता है—यथा, मोटरगाड़ी के कारखाने में पुनरुत्पादन तभी हो सकता है जब अन्य पूंजीपति सब प्रकार के मशीनों

व्यक्तिगत और सामाजिक पूंजी

औज़ार, उपकरण, सहायक पदार्थ इत्यादि मजदूरों के लिए उपभोक्ता वस्तु इत्यादि का उत्पादन करें।

अलग-अलग (व्यक्तिगत) पूंजी का कुल योग पूंजीपतियों की अन्योन्याश्रितता और पारस्परिक सम्बन्ध के सन्दर्भ में सामाजिक पूंजी है। पूंजीवाद के अंतर्गत पुनरुत्पादन समाज की कुल पूंजी के अलग-अलग स्वतन्त्र हिस्सों की इसी अन्तरसम्बद्धता के सन्दर्भ में होता है। पुनरुत्पादन की प्रक्रिया चले, इसके लिए आवश्यक है कि समाज के सभी पूंजीपति बाजार में अपनी कुल वस्तुओं को बेच सकें और अपनी जरूरत की वस्तुओं को खरीद सकें।

यह देखने के लिए कि सम्पूर्ण सामाजिक पूंजी का उत्पादन किस प्रकार होता है हमें समग्र सामाजिक उत्पादन के संयोजन को देखना चाहिए।

समग्र सामाजिक उत्पादन

समाज में एक निश्चित काल (उदाहरण के लिए एक साल) के दौरान उत्पन्न भौतिक धन (मकानों साज-सामान मशीनों ईंधन खाद्य एवं वस्त्र आदि) की सम्पूर्ण मात्रा समग्र सामाजिक उत्पादन होती है।

मूल्य के रूप में समग्र सामाजिक उत्पादन का विभाजन १) व्यय की गयी अचल पूंजी को प्रतिस्थापित करने वाला मूल्य (यानी वह मूल्य जो उपकरणों की घिसावट, प्रयुक्त कच्चे और सहायक माल इत्यादि के मूल्य के बराबर होता है), २) चल पूंजी को प्रतिस्थापित करने वाला मूल्य (यानी श्रम शक्ति का मूल्य) और ३) अधिशेष मूल्य में होता है। दूसरे शब्दों में, समग्र सामाजिक उत्पादन का मूल्य होता है—अ पू + च पू + अ (अचल पूंजी + चल पूंजी + अधिशेष मूल्य)।

समग्र सामाजिक उत्पादन का प्रत्येक भाग पुनरुत्पादन की प्रक्रिया में भिन्न हिस्सा अदा करता है। अचल पूंजी सदा उत्पादन की प्रक्रिया में काम करती है। चल पूंजी मजूरी के रूप में परिवर्तित होती है जिसे मजदूर अपनी जरूरतों की सन्तुष्टि के लिए व्यय करते हैं यानी श्रम शक्ति के पुनरुत्पादन पर खर्च करते हैं। साधारण पुनरुत्पादन में सम्पूर्ण अधिशेष मूल्य पूंजीपतियों द्वारा अपनी व्यक्तिगत जरूरतों की सन्तुष्टि के लिए इस्तेमाल किया जाता है। विस्तारित पुनरुत्पादन में अधिशेष मूल्य का एक भाग पूंजीपति इस्तेमाल करते हैं और शेष नियमतः एक बड़ा हिस्सा उत्पादन के अतिरिक्त साधनों को खरीदने और अतिरिक्त मजदूरों को भाड़े पर रखने के लिए व्यय किया जाता है।

पुनरुत्पादन और कुल सामाजिक पूंजी के प्रचलन का विश्लेषण करने के लिए समग्र सामाजिक उत्पादन के भौतिक रूप पर ध्यान देना आवश्यक है।

भौतिक रूप की दृष्टि से समग्र सामाजिक उत्पादन के दो हिस्से हैं उत्पादन के साधन और उपभोक्ता वस्तुएं। सम्पूर्ण सामाजिक उत्पादन दो महत्वपूर्ण हिस्सों में बांटा जा सकता है विभाग १ जिसमें उत्पादन के साधन उत्पन्न किये जाते हैं और विभाग २ जिसमें उपभोक्ता वस्तुओं का उत्पादन होता है।

समग्र सामाजिक उत्पादन के इन हिस्सों के भौतिक रूप भिन्न होते हैं और पुनरुत्पादन की प्रक्रिया में वे भिन्न हिस्सा अदा करते हैं। उत्पादन के साधन आगे के उत्पादन में सहायक होते हैं और उपभोक्ता वस्तुएं व्यक्तिगत जरूरतों को पूरा करती हैं।

सामाजिक पूंजी का पुनरुत्पादन इस मान्यता पर आधारित है कि प्रत्येक व्यक्तिगत पूंजी और फलस्वरूप सम्पूर्ण सामाजिक पूंजी को निरन्तर अपने आवर्त को पूरा करना चाहिए। कहने का मतलब यह हुआ कि सम्पूर्ण सामाजिक पूंजी को मुद्रा से उत्पादन रूप, उत्पादन-रूप से वस्तु रूप और वस्तु रूप से मुद्रा रूप में परिवर्तित होते रहना चाहिए। यह आवर्तन तभी हो सकता है, जब सब पूंजीपति सम्मिलित रूप से और उनमें से प्रत्येक अलग अलग अपने तैयार माल का मूल्य प्राप्त कर सके, यानी अपने माल को बेच सके। मूल्य वसूली की प्रक्रिया का अर्थ यह है कि वार्षिक सामाजिक उत्पादन के प्रत्येक अवयव का—मूल्य और भौतिक रूप दोनों दृष्टियों से—सम्पूर्ण विनिमय होता है और उत्पादन की प्रक्रिया में प्रत्येक अवयव का अपना कार्य होता है।

मूल्य वसूली की समस्या का सार

सम्पूर्ण वार्षिक उत्पादन के मूल्य की वसूली के लिए कौन सी स्थितियां होनी चाहिए? पुनरुत्पादन का मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त उन स्थितियों पर प्रकाश डालता है और बतलाता है कि पूंजीवादी उत्पादन ज्यों-ज्यों विकसित होता है त्यों-त्यों इन स्थितियों का अनिवार्य रूप से और निरन्तर उल्लंघन होता है तथा अत्युत्पादन का आर्थिक संकट पैदा हो जाता है।

साधारण पूंजीवादी पुनरुत्पादन में मूल्य वसूली की स्थितियां

साधारण पुनरुत्पादन में उत्पादन की प्रक्रिया पिछले काल के पैमाने पर ही दुहरायी जाती है और सम्पूर्ण अधिशेष मूल्य पूंजीपतियों की व्यक्तिगत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए खर्च किया जाता है।

अब हम साधारण पुनरुत्पादन के संदर्भ में समग्र सामाजिक उत्पादन की मूल्य वसूली पर विचार करें। मान लें कि विभाग १ में अचल पूंजी का मूल्य (१० *लाख डालर के रूप में अभिव्यक्त करने पर)* ४,००० चल पूंजी का मूल्य १,००० और अधिशेष मूल्य १००० है। मान लें कि विभाग २ में अचल पूंजी का मूल्य

२,०००, चल पूजी का मूल्य ५०० और अधिशेष मूल्य ५०० है। इस प्रकार समग्र सामाजिक उत्पादन के निम्नलिखित हिस्से होते हैं

विभाग १ ४,००० अ पू + १,००० च पू + १,००० अ = ६,०००
विभाग २ २००० अ पू + ५०० च पू + ५०० अ = ३,०००

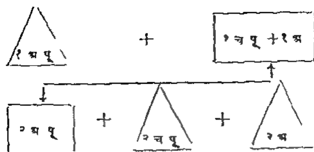
विभाग १ में सम्पूर्ण उत्पादन का मूल्य ६,००० है। यह वस्तु के अन्त में मशीन, कच्चे माल इत्यादि के रूप में रहता है। किन्तु इस विभाग के मजदूरों और पूजीपतियों को सिर्फ उत्पादन के साधनों की ही जरूरत नहीं है बल्कि उपभोक्ता वस्तुओं की भी आवश्यकता है। उत्पादन की प्रक्रिया का आगे बढ़ना उपभोक्ता वस्तुओं की प्राप्ति पर निर्भर है। विभाग १ का तैयार माल जरूर बिकना चाहिए। मूल्य वसूली की प्रक्रिया किस प्रकार चलती है?

विभाग १ के उत्पादन का एक हिस्सा (४००० अ पू के बराबर) उसी विभाग के उद्यमों के हाथों बेच दिया जाता है जिसके द्वारा इस्तेमाल की गयी अचल पूजी को प्रस्थापित किया जाता है। विभाग १ के उत्पादन का दूसरा भाग (१००० च पू + १००० अ) उत्पादन के साधनों के रूप में उपभोक्ता वस्तुओं को उत्पन्न करने वाले उद्यमों के हाथों बेच दिया जाता है। उत्पादन के ये साधन जो २,००० के बराबर है विभाग २ में इस्तेमाल की गयी अचल पूजी को पूरा करते हैं।

विभाग २ के सम्पूर्ण उत्पादन का मूल्य ३ ००० है। यह उत्पादन उपभोक्ता वस्तुओं (वस्त्र जूता खाद्यान्न इत्यादि) के रूप में है। विभाग २ में उत्पन्न २ ००० के बराबर उपभोक्ता वस्तुए विभाग १ में उत्पन्न २ ००० के बराबर उत्पादन के साधनों के साथ विनिमय की जाती हैं। विभाग २ के उत्पादन का शेष भाग चल पूजी (५०० च पू) के पुनरुत्पादित मूल्य तथा नव उत्पादित अधिशेष मूल्य (५०० अ) के बराबर होता है। इसे उसी विभाग के मजदूरों और पूजीपतियों के हाथों बेच दिया जाता है।

इस तरह सम्पूर्ण सामाजिक उत्पादन का मूल्य वसूल हो जाता है। साधारण पूजीवादी पुनरुत्पादन में मूल्य वसूली के लिए आवश्यक है कि विभाग १ की चल पूजी और अधिशेष मूल्य मिलकर विभाग २ की अचल पूजी के बराबर हो।

अगर विभाग के अन्दर ही बिकने वाले हिस्सों को त्रिभुजा से और दूसरे विभाग से विनिमय किये जाने वाले हिस्सों को आयतों द्वारा प्रदर्शित करें और उनको मिलाते हुए एक रेखा खींचें तो हमे निम्नलिखित चित्र मिलेगा



इस सरल रेखाचित्र से स्पष्ट है कि साधारण पुनरुत्पादन में मूल्य वसूली के लिए १ (च पू + अ) = २ अ पू होनी चाहिए।

विस्तारित पुनरुत्पादन या संचय पूजीवाद की एक विशेषता है। उत्पादन बढाने के लिए वतमान उद्यम का विस्तार या नये उद्यम की स्थापना आवश्यक है। दोनो स्थितियो मे उत्पादन के कुछ नये साधनो को काम पर लगाना जरूरी है। चूकि विभाग १ मे उत्पादन के साधन उत्पन्न किये जाते हैं इसलिए विभाग १ के उत्पादन का वह हिस्सा जो नये उत्पन्न मूल्य १ (च पू + अ) के बराबर है विभाग २ की अचल पूजी २ अ पू) में अधिक होना चाहिए। इसी स्थिति मे उत्पादन के अतिरिक्त साधन प्राप्त हो सकते हैं, जिन्हे दोनो विभागो मे उत्पादन बढाने के लिए काम पर लगाया जा सकता है।

विस्तारित पूजीवादी पुनरुत्पादन मे मूल्य वसूली की स्थितिया

निम्नलिखित उदाहरण इसी आधार पर है

विभाग १ ४,००० अ पू + १,००० च पू + १,००० अ = ६,०००
विभाग २ १,५०० अ पू + ७५० च पू + ७५० अ = ३ ०००

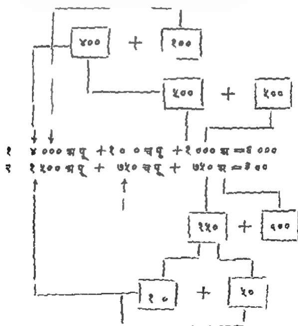
विस्तारित पुनरुत्पादन मे प्रत्येक विभाग का अधिशेष मूल्य दो भागो मे बाटा जाता है वह भाग जिसका पूजीपति उपभोग करते हैं और वह भाग जिसका वे संचय करते हैं। अधिशेष मूल्य के संचित भाग को उत्पादन के अतिरिक्त साधनो को प्राप्त करने और अतिरिक्त श्रम शक्ति को काम पर लगाने के लिए व्यय किया जाता है।

मान लें कि विभाग १ के पूजीपति अपने अधिशेष मूल्य का आधा भाग यानी ५०० संचित करते हैं। इसका मतलब है कि उन्हें अचल पूजी मे ४०० और चल पूजी में १०० जोडना चाहिए यानी संचित अधिशेष मूल्य को उसी अनुपात मे बाटना चाहिए जिस अनुपात मे प्रारम्भिक पूजी लगायी गयी थी। फलस्वरूप

विभाग १ मे दूसरे वर्ष उत्पादन प्रारम्भ करने के समय पूंजी का संयोजन ४४०० अ पू + १ १०० च पू होना चाहिए।

विभाग १ के कुल उत्पादन (६ ०००) म से ४४०० के बराबर तैयार माल उसी विभाग म बिक जायेगा। शेष १ ६०० के बराबर तैयार माल का विभाग २ की वस्तुओ के साथ विनिमय होना चाहिए। किन्तु अगर विभाग २ के पूजीपति १ ६०० के मूल्य के उत्पादन के साधन खरीदते हैं (गत साल १ ५०० खर्च किया था) तो उन्हे अपनी अचल पूजी को अपने विभाग के अधिशेष मूल्य द्वारा १०० से बढाना होगा। प्रारम्भ म विभाग २ म अचल और चल पूजी का अनुपात २ १ था। अत अचल पूजी १०० से बढाने का मतलब है कि चल पूजी म ५० की वृद्धि करनी होगी। परिणामस्वरूप अगले वर्ष उत्पादन प्रारम्भ करने के समय विभाग २ की कुल पूजी १ ६०० अ पू + ८०० च पू होगी।

विभाग १ और २ के भीतर उत्पादन के साधनो और उपभोक्ता वस्तुओ के वितरण को निम्नलिखित रेखाचित्र द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है



उत्पादन की मूल्य वसूली इस प्रकार होती है विभाग १ के पूजीपति परस्पर एक दूसरे स ४ ४०० के मूल्य के उत्पादन के साधन खरीदते हैं। उत्पादन

के साधनो के शेष भाग (१,६००) का विनिमय विभाग २ से उपभोक्ता वस्तुए प्राप्त करने के लिए होना है। इस विनिमय के द्वारा विभाग १ के पूजीपति १,६०० के मूल्य की उपभोक्ता वस्तुए प्राप्त करते हैं जबकि विभाग २ के पूजीपति उतने ही मूल्य के उत्पादन के साधन प्राप्त करते हैं। शेष उपभोक्ता वस्तुओ (१,४००) की बिक्री विभाग २ के अन्दर ही होनी है।

इन विभागो के पारस्परिक विनिमय की प्रक्रिया को इस प्रकार दिखाया जा सकता है

१ ४,४०० अपू + | १,१०० चपू + ५०० अ | = ६,०००

२ | १,६०० अपू | + ८०० चपू + ६०० अ = ३,०००

विस्तारित पुनरुत्पादन की शर्त यह है चल पूजी का मूल्य (१,०००) + संचित अधिशेष मूल्य का वह भाग जिसे चल पूजी के रूप मे परिवर्तित करते हैं (१००) + अधिशेष मूल्य का वह हिस्सा जिसका पूजीपति उपभोग करते हैं (४००) = अचल पूजी का मूल्य (१,५००) + संचित अधिशेष मूल्य का वह भाग (१००) जिसे विभाग २ की अचल पूजी मे जोड़ना है।

दूसरे वर्ष उत्पादन का नया चक्र अधिक पूजी के आधार पर प्रारम्भ होगा और अधिशेष मूल्य की दर १०० प्रतिशत होने पर उस वर्ष समग्र सामाजिक उत्पादन होगा

विभाग १ ४४०० अपू + १,१०० चपू + ११०० अ = ६६००
विभाग २ १६०० अपू + ८०० चपू + ८०० अ = ३,२००

इसी प्रकार विस्तारित पूजीवादी पुनरुत्पादन की प्रक्रिया चलती है और ये ही विस्तारित पुनरुत्पादन की प्रवृत्ति का पूर्वनिर्धारित करने वाली मूल्य वसूली की आवश्यक स्थितिया हैं।

विस्तारित पुनरुत्पादन मे सामाजिक श्रम का वह हिस्सा जिस उत्पादन के साधनो को उत्पन्न करने के लिए लिया जाता है उपभोक्ता वस्तुओ के उत्पादन के लिए लगाये जाने वाले हिस्से की अपेक्षा अधिक तेजी से बढता है।

विस्तारित पुनरुत्पादन का आर्थिक नियम यह है कि उत्पादन के साधनों का उत्पादन उपभोक्ता वस्तुओं के उत्पादन की अपेक्षा अधिक तेजी से बढता है।

उत्पादन के साधनो के अपेक्षाकृत अधिक तेजी से बढने के इस नियम का सम्पूर्ण अर्थ और महत्व इस तथ्य मे निहित है कि शारीरिक श्रम की जगह मशीनों

श्रम—साधारणतया समाज के उद्योग की तकनीकी प्रगति—को प्रतिस्थापित करने के लिए कौशल और ज्ञान यानी उत्पादन के साधनों के लिए वास्तविक उत्पादन के साधनों का तीव्र विकास आवश्यक हो जाता है।[1]

मूल्य वसूली के सिद्धान्त द्वारा साधारण और विस्तारित पुनरुत्पादन में वस्तुओं की मूल्य वसूली की आवश्यक शर्तें स्पष्ट हो जाती हैं। किन्तु यह किसी भी तरह इस बात की पुष्टि नहीं करता कि पूंजीवाद में ये स्थितियां सचमुच उपस्थित हैं बल्कि इसके विपरीत बहुधा इनका अभाव रहता है।

जहां प्रतिद्वन्द्विता और उत्पादन की अराजकता ही नियम हो वहां कोई भी व्यक्ति बाजार की जरूरतों को ठीक-ठीक नहीं जान सकता। इस वजह से उद्योग की विभिन्न शाखाओं के बीच और प्रत्येक शाखा के भीतर निश्चित आवश्यक समानुपातिक सम्बन्ध ये निरन्तर तोड़ मरोड़कर स्थापित किये जाते हैं।

पूंजीवाद के अन्तर्गत उत्पादन और उपभोग में अन्तर्विरोध होता है। पूंजीवादी उत्पादन का उद्देश्य अधिकतम मुनाफा प्राप्त करना है जिसकी पूर्ति उत्पादन के विस्तार और पूंजी के संचय कर की जाती है। इन दोनों प्रक्रियाओं में मजदूरों के जीवन-यापन के स्तर को नीचा किया जाता है। अतः मजदूरों की क्रय शक्ति और उपभोग की मात्रा घटती है। फलस्वरूप बाजार में अन्तर्विरोध पैदा हो जाता है और वस्तुओं की बिक्री मुश्किल हो जाती है।

पूंजीपति वर्ग इस अन्तर्विरोध को विदेशी बाजार पर कब्जा जमा कर हल करना चाहता है। विदेशी बाजार के लिए संघर्ष उन पर कब्जा उनका विभाजन और पुनर्विभाजन करने का प्रयास अन्तर्विरोध पैदा कर देते हैं और ये ही पूंजीवादी देशों के बीच होने वाले भयानक युद्धों के लिए जिम्मेदार होते हैं।

अगर किसी देश मे एक वर्ष के दौरान ९० अरब डालर के मूल्य की वस्तुए उत्पन्न की जायें और उसमे से ६० अरब डालर के बराबर मूल्य की वस्तुए उस वर्ष इस्तेमाल किये गये उत्पादन के साधनो को पूरा करने के लिए हो, तो शेष ३० अरब डालर उस वर्ष उत्पन्न राष्ट्रीय आय होगी।

भौतिक रूप मे राष्ट्रीय आय के अन्दर व्यक्तिगत उपभोग की वस्तुए और उत्पादन के साधनो का वह भाग जो उत्पादन के विस्तार के लिए इस्तेमाल किया जाना है शामिल रहता है।

भौतिक उत्पादन के क्षेत्र मे काम करने वाले लोग राष्ट्रीय आय को उत्पन्न करते हैं। इस क्षेत्र मे उद्योग, कृषि निर्माण परिवहन इत्यादि वे सभी शाखाए आती हैं जिनमे भौतिक धन की सृष्टि होती है। उत्पादन के क्षेत्र मे प्रत्यक्ष रूप से काम करने वाले मजदूर, किसान, दस्तकार और बुद्धिजीवी राष्ट्रीय आय का उत्पादन करते हैं।

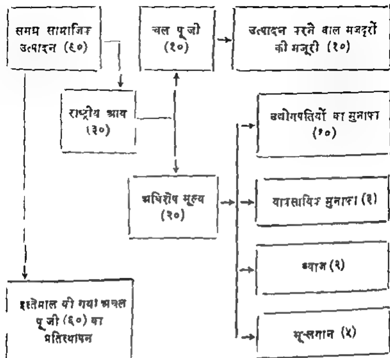
गैर उत्पादन क्षेत्र मे किसी भी प्रकार की राष्ट्रीय आय का उत्पादन नही होता। इस क्षेत्र के अन्तर्गत राजकीय यन्त्र साख व्यवस्था व्यवसाय (उत्पादन की प्रक्रिया के वितरण के क्षेत्र मे विस्तारस्वरूप आवश्यक व्यापारिक सक्रियाओ को छोडकर) फौज मेडिकल संस्थाए, मनोरंजन के साधन इत्यादि आते हैं। इन शाखाओ पर होने वाले सभी व्यय उत्पादन के क्षेत्र मे उत्पन्न राष्ट्रीय आय की राशि से आते हैं।

जहा तक भौतिक उत्पादन के क्षेत्र मे राष्ट्रीय आय के सृजन का सवाल है, इसकी वृद्धि के लिए आवश्यक है कि उत्पादन मे लगे लोगो की सख्या मे वृद्धि हो, उनके श्रम की उत्पादकता बढे।

राष्ट्रीय आय का वितरण

पूजीवाद के अन्तर्गत राष्ट्रीय आय के वितरण का आधार वर्ग हैं। यह वितरण शोषको के हित मे और मेहनतकश जनता के विरुद्ध होता है। राष्ट्रीय आय के प्रारम्भिक और गौण वितरण मे भेद करना आवश्यक है।

राष्ट्रीय आय सर्वप्रथम पूजीपतियो के हाथो मे आती है। राष्ट्रीय आय का प्रारम्भिक वितरण पूजीपतियो और मजदूरो के बीच होता है। मजदूरो को मजूरी मिलती है और पूजीपतियो को अधिशेष मूल्य। अधिशेष मूल्य का वितरण उद्योग पतियो, व्यापारियो बैक मालिको और बडे भूस्वामियो के बीच होता है। इस वितरण को निम्नलिखित रेखाचित्र द्वारा देखा जा सकता है (प्रत्येक इकाई १ अरब डालर की है)



पूंजीवादी समाज के बुनियादी वर्गों—सर्वहारा वर्ग, पूंजीपति वर्ग और भूस्वामियों के बीच राष्ट्रीय आय का वितरण हो जाने के उपरान्त एक गौण वितरण या पुनर्वितरण होता है।

राष्ट्रीय आय का पुनर्वितरण किस प्रकार होता है? हम देख चुके हैं कि अर्थव्यवस्था की गैर-उत्पादक शाखाओं (मेडिकल संस्थाओं, सार्वजनिक सेवाओं और सुविधाओं, मनोरंजन के साधनों इत्यादि) में कोई राष्ट्रीय आय उत्पन्न नहीं होती। किन्तु इन उद्यमों और संस्थाओं को नियंत्रित करने वाले पूंजीपति काम पर लगे लोगों (डाक्टरों, अभिनेताओं आदि) को वेतन देते हैं और उनकी देख-रेख पर खर्च करते हैं तथा मुनाफा भी प्राप्त करते हैं। व्यय की इन सभी मदों को उत्पादन के क्षेत्र में उत्पन्न राशि से इन सेवाओं (चिकित्सा, शिक्षा, सार्वजनिक सेवाओं और सुविधाओं इत्यादि) के लिए भुगतान करके पूरा करते हैं। इन सेवाओं के लिए किया गया भुगतान उद्यमों के अनुरक्षण-व्यय को पूरा करता है और गैर-उत्पादक क्षेत्र के पूंजीपतियों को औसत मुनाफा प्रदान करता है।

मजदूरों की आय का एक हिस्सा राजकीय बजट द्वारा पुनर्वितरित होता है और इसका इस्तेमाल शासक वर्ग के हित में होता है।

पूंजीवादी राज्य की अपनी फौज, पुलिस, दण्डालय और कचहरी, प्रशासकीय यंत्र, आदि होते हैं। इन सबका पोषण राजकीय बजट द्वारा होता है। जनता पर लगाया गया कर राजकीय आय का मुख्य स्रोत है। इसका मतलब है कि राष्ट्रीय आय के पुनर्वितरण द्वारा मजूरी मिल जाने के बाद सर्वहारा वर्ग को राज्य का कर अदा करना पड़ता है। इस तरह सर्वहारा वर्ग को प्राप्त होने वाली राष्ट्रीय आय का हिस्सा कम हो जाता है।[1]

पूंजीवाद के विकास के साथ करों का बोझ भी बढ़ता जाता है। उदाहरण के लिए १९१३ में ब्रिटेन में राष्ट्रीय आय का ११ प्रतिशत, १९२४ में २३ प्रतिशत और १९५९ में ३५ प्रतिशत कर के रूप में लिया गया। फ्रांस में १९१३ में १३ प्रतिशत १९२४ में २१ प्रतिशत और १९५९ में २७ प्रतिशत कर के रूप में लिया गया। ट्रूमैन प्रशासन के दौरान अमरीका में इतने अधिक कर लिये गये जितने ट्रूमैन के पहले १५६ वर्षों में कभी किसी राष्ट्रपति के शासन-काल में नहीं लिये गये थे।

राष्ट्रीय आय का इस्तेमाल किस प्रकार होता है? पूंजीवाद के अन्तर्गत राष्ट्रीय आय के वितरण का वर्ग चरित्र होता है। राष्ट्रीय आय उपभोग और संचय पर व्यय की जाती है।

मजदूरों को राष्ट्रीय आय का इतना कम हिस्सा मिलता है कि वे बहुत कम उपभोग कर पाते हैं। उनके बहुत बड़े समुदाय को भी जीवन-यापन का न्यूनतम स्तर प्राप्त नहीं हो पाता है। लाखों मजदूरों की आवास स्थितियां बदतर होती हैं। उनकी यथार्थ आवश्यकताओं की भी पूर्ति नहीं होती और न उनके बच्चों को शिक्षा ही मिल पाती है।

राष्ट्रीय आय का एक बहुत बड़ा हिस्सा शोषक वर्ग हड़प लेते हैं। पूंजीपति इसका एक अंश विलास की वस्तुओं समेत व्यक्तिगत उपभोग तथा नौकरों की एक बड़ी संख्या पर खर्च करते हैं। दूसरा हिस्सा उत्पादन की वृद्धि या संचय में लगाते हैं।

---

[1] पूंजीपति भी कर देते हैं। किन्तु उस कर का एक भाग उन्हें भुगतान के रूप में वापस कर दिया जाता है। सरकार को वस्तुएं और सेवाएं देने के लिए पूंजीपतियों को ऊंचा भुगतान मिलता है। कर का दूसरा भाग राज्य यन्त्र, फौज आदि के भरण पोषण पर खर्च होता है, जिसका उद्देश्य मुख्यतया उन्हीं पूंजीपतियों के हितों की रक्षा करना होता है।

अतः पूंजीवादी समाज में न सिर्फ राष्ट्रीय आय का वितरण बल्कि पुनर्वितरण भी शोषक वर्गों के हितों में होता है।

किन्तु समाज की सम्भावनाओं और जरूरतों के संदर्भ में यह अन्तर अपेक्षाकृत कम होता है। संचय की अल्पमात्रा के लिए अनुत्पादक विज्ञापन, अव्यवस्था के संयोजन (?) व्यय बढ़ाये गये राज्ययन्त्र के पोषण आदि पर होने वाले खर्च जिम्मेदार हैं।

चूँकि पूँजीवाद के अन्तर्गत राष्ट्रीय आय का एक वर्ग चरित्र होता है इसलिए उत्पादन के बढ़ते हुए पैमाने की तुलना में मजदूर वर्ग की क्रय शक्ति पीछे रह जाती है। कभी कभी इनमें बहुत बड़ा अन्तर हो जाता है और अत्युत्पादन का आर्थिक संकट खड़ा हो जाता है।

३ आर्थिक संकट

संकटों का स्वभाव और उनके बुनियादी कारण आर्थिक संकटों द्वारा प्रकट अन्तर्विरोधों के सम्बन्ध में फ्रांस के यूटोपियन समाजवादी फौरियर ने कहा था विपुलता जरूरत और दरिद्रता का स्रोत हो जाती है।

अत्युत्पादन के संकट के प्रथम मुख्य लक्षण व्यापार में कटौती, बाजार में न बिकी हुई फालतू वस्तुएं, कारखाने में काम का ठप्प हो जाना है। कारखाने में काम ठप्प हो जाने के कारण मजदूरों को गुजारे के साधन प्राप्त नहीं होते।

क्या यह सही है कि पूँजीवादी समाज में भोजन वस्त्र ईंधन, इत्यादि बहुत बड़ी मात्रा में उत्पन्न होते हैं? नहीं वास्तविकता कुछ और ही है। संकट खड़ा करने वाला अत्युत्पादन निरपेक्ष नहीं, सापेक्ष होता है। सिर्फ प्रभावी माँग की तुलना में ही वस्तुओं की अधिकता रहती है, न कि समाज की वास्तविक जरूरतों की दृष्टि से। संकट के समय समाज की जरूरतें नहीं घटतीं बल्कि मेहनतकश जनता के बहुसंख्यक सदस्यों की क्रय शक्ति घट जाती है। संकट के दौरान अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति भी नहीं हो पाती।

पूँजीवाद के अन्तर्गत अत्युत्पादन के आर्थिक संकट का मुख्य कारण पूँजीवाद का बुनियादी अन्तर्विरोध—उत्पादन के सामाजिक चरित्र और उत्पादन के फल की प्राप्ति के निजी रूप का अन्तर्विरोध—है।

पूँजीवादी उत्पादन श्रम के सामाजिक विभाजन पर आधारित रहता है। पूँजीवाद के विकास के साथ श्रम का अधिकाधिक विभाजन होता है। विशिष्टता-प्राप्त शाखाओं की संख्या दिनोंदिन बढ़ती है और उत्पादन का कार्य उन्हीं के द्वारा होता है। बड़े उद्यमों में हजारों मजदूर काम करते हैं और ये सभी उद्यम अन्तरसम्बद्ध होते हैं तथा राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों के लिए उत्पादन करते हैं। इस प्रकार श्रम को बड़े पैमाने पर केन्द्रित कर पूँजीवाद उत्पादन को सामाजिक चरित्र प्रदान करता है। प्रत्येक वस्तु हजारों मजदूरों के सामाजिक श्रम का परिणाम होती है।

किन्तु पूजी उत्पादन को एक अत्यन्त प्रतिरोधी रूप म सामाजिक चरित्र प्रदान करती है। उत्पादन का उत्तरोत्तर समाजीकरण पूजीपतियो के हित मे होता है। पूजीपतियो का उद्देश्य अपना मुनाफा बढाना मात्र होता है। उत्पादन के जिन साधनो मे लाखो लोग काम करते हैं वे पूजीपतियो की निजी सम्पत्ति होते हैं। फलस्वरूप लाखो लोगो के श्रम का फल मुट्ठीभर पूजीपतियो की सम्पत्ति बन जाता है।

पूजीवाद का बुनियादी अन्तर्विरोध अलग-अलग उद्यमो के उत्पादन सगठन और सम्पूर्ण समाज के उत्पादन मे व्याप्त अराजकता के बीच मुख्य रूप से परिलक्षित होता है। प्रत्येक पूजीपति अधिकतम मुनाफा प्राप्त करने की कोशिश करता है। मुनाफे की ऊची दर प्राप्त करने की इच्छा से पूजीपति सम्पूर्ण समाज की आवश्यकताओ पर बिना ध्यान दिये उत्पादन का विस्तार करता है (या अन्य अधिक लाभदायक उद्यमो मे अपनी पूजी हस्तान्तरित करने के उद्देश्य मे उत्पादन मे कटौती करता है)। उद्योग की शाखाओ के पारस्परिक आनुपातिक सम्बन्धो को तोडा मरोडा जाता है जिसके कारण सामाजिक उत्पादन की पूर्ण बिक्री कठिन या असम्भव हो जाती है।

पूजीवाद का बुनियादी अन्तर्विरोध पूजीवाद म उत्पादन के असीमित विस्तार की निहित प्रवृत्ति और पूजीवाद द्वारा मुख्य उपभोक्ताओ (मेहनतकश जनता) की क्रय शक्ति पर लादी गयी सीमाओ म अन्तर्विरोध के रूप मे जाहिर होता है।

उत्पादन के असीमित विकास की प्रवृत्ति का मुख्य कारण पूजीवाद का बुनियादी आर्थिक नियम—अधिशेष मूल्य का नियम—है। मुनाफे की आकाक्षा से प्रेरित होकर प्रत्येक पूजीपति पूजी-सचय करता है उत्पादन का विस्तार करता है, टेक्नालाजी को उन्नत करता है नयी मशीनें लगाता है अधिक मजदूरो को काम पर लगाता है और और नयी वस्तुओ का उत्पादन करता है। किन्तु उत्पादन के असीमित विस्तार के साथ उपभोग मे अनुकूल विस्तार होना कोई जरूरी नही है। अधिकतम मुनाफे की आकाक्षा पूजीपतियो को मजूरी घटाने और शोषण की मात्रा बढाने के लिए बाध्य करती है लेकिन अधिक शोषण और मेहनतकश जनता की दरिद्रता का अर्थ प्रभावी माग और वस्तुओ के बेचने के अवसर मे सापेक्षिक कमी है। इन सबका नतीजा होता है अत्युत्पादन का आर्थिक सकट।

पूजीवाद का बुनियादी अन्तर्विरोध सर्वहारा और पूजीपति के पारस्परिक वर्ग विरोध के रूप म भी दृष्टिगोचर होता है। पूजीवाद ने पूजीपतियो के हाथो मे केन्द्रित उत्पादन के साधनो और श्रम शक्ति के अतिरिक्त अन्य साधनो से विहीन प्रत्यक्ष उत्पादको को एक दूसरे से अलग कर दिया है। अत्युत्पादन के सकट के

दौरान यह अलगाव काफी स्पष्ट हो जाता है। उस समय एक ओर तो उत्पादन के साधनो और वस्तुओ की अत्यधिक बहुलता होती है, तो दूसरी ओर फालतू श्रम शक्ति तथा निर्वाह के साधनो से विहीन बेरोजगार जन समूह होते हैं।

समय-समय पर अत्युत्पादन का सकट आता रहता है। पहला औद्योगिक सकट इगलड म १८२५ म आया। १८४७ ४८ का सकट पहला विश्व आर्थिक सकट था। इसकी चपेट म अमरीका और कई यूरोपीय देश आये। १९वी सदी का सबसे गम्भीर सकट १८७३ म आया। इस सकट ने मुक्त एकाधिकार से एकाधिकारी पूजीवाद—साम्राज्यवाद—की ओर सक्रमण का सूत्रपात किया। २०वी शताब्दी का सबसे भयकर सकट १९२९ ३३ के दौरान आया।

पूजीवादी चक्र और उसके दौर

एक सकट से दूसरे सकट के बीच के काल को चक्र कहते हैं और इसके चार दौर होते हैं सकट, मन्दी, पुनर्प्राप्ति और उत्कर्ष।

सकट चक्र का मुख्य दौर है। इस दौर म वस्तुओ का अधिक उत्पादन होता है कीमतो मे तेजी के साथ गिरावट आती है दिवालियापन की अनगिनत घटनाए होती हैं, उत्पादन मे स्पष्ट कटौती होती है बेरोजगारी बढती है, मजूरी घटती है, वस्तुओ मशीनो और उद्यमो को जान-बूझकर नष्ट कर दिया जाता है और घरेलू तथा विदेश व्यापार म कमी आती है। इस दौर म उत्पादन की बढती हुई सम्भावनाओ और सापेक्ष रूप से घटी प्रभावी माग का अन्तर्विरोध विस्फोटक एव विध्वसकारी रूपो मे जाहिर होता है। उत्पादक शक्तियो का अत्यन्त विकसित स्तर उत्पादन के पूजीवादी सम्बन्धो के तग चौखटे मे समा नही पाता। उत्पादन के पूजीवादी सम्बन्धो का तग चौखटा उत्पादक शक्तियो के भावी विकास के माग मे बाधक होता है।

दिवालियापन बहुत से उद्यमो की बर्बादी और उत्पादक शक्तियो का आशिक तौर पर नष्ट किया जाना—इन कुछ तरीको स सकट के दौरान उत्पादन की मात्रा समाज की तत्कालीन प्रभावी माग के स्तर पर बलात लायी जाती है। इसके बाद सकट से मदी की ओर सक्रमण प्रारम्भ होता है।

मदी चक्र का दूसरा दौर है। इस दौर मे सकट की गहराई रुक जाती है, लेकिन औद्योगिक उत्पादन तब भी जड अवस्था मे रहता है वस्तुओ की कीमतें बहुत नीचे स्तर पर रहती हैं व्यापार मद रहता है तथा मुनाफे की दर बहुत कम होती है। बेरोजगारी और मजूरी सकट वाले स्तर पर ही रहती हैं। वस्तुओ के सचित भडार को आशिक तौर पर नष्ट कर दिया जाता है और बाकी को घटी कीमतो पर बेच दिया जाता है। पूजीवादी उत्पादन तब तक मन्दी के दौर म रहता

है जब तक प्रतिद्वंद्विता और बाजार तथा कच्चे माल के स्रोतों के लिए संघर्ष पूंजीपतियों को उद्योग को पुनस्सज्जित करने और उसकी अचल पूंजी के नवीकरण के लिए प्रोत्साहित नहीं करते। वे उत्पादन को सस्ता करने और संकट के फल स्वरूप कम कीमतों पर भी उसे लाभदायक बनाने के लिए सब प्रकार के तकनीकी विकासों का इस्तेमाल करते हैं। उत्पादन के विस्तार के प्रोत्साहन के साथ पूंजीगत वस्तुओं के लिए मांग बढ़ती है। धीरे धीरे चक्र के दूसरे दौर—पुनर्प्राप्ति की ओर संक्रमण के लिए पूर्व स्थितियां तैयार हो जाती हैं।

पुनर्प्राप्ति के दौरान सफलतापूर्वक संकट को पार करने वाले उद्यम अपनी स्थिर पूंजी का नवीकरण करते हैं और धीरे धीरे उत्पादन का विस्तार प्रारम्भ होता है। उत्पादन की मात्रा संकट प्रारम्भ होने के समय के स्तर पर पहुंच कर उससे आगे बढ़ जाती है। व्यापार में सुधार होता है वस्तुओं की कीमतें बढ़ती हैं, मुनाफा बढ़ता है और धीरे धीरे बेरोजगारी घटती है।

जब पूंजीवादी उत्पादन की मात्रा संकट के पूर्व प्राप्त अधिकतम उत्पादन की मात्रा से भी अधिक हो जाती है तो उत्कर्ष (तेजी) के दौर का प्रारम्भ होता है।

उत्कर्ष (तेजी) चक्र का अंतिम दौर है। इस दौर में उत्पादन के असीमित विकास की प्रवृत्ति पूरी तरह परिलक्षित होती है। एक बार फिर एक-दूसरे से आगे बढ़ने की भावना से प्रेरित होकर पूंजीपति उत्पादन का विस्तार करते हैं, नयी निर्माण योजनाएं प्रारम्भ होती हैं और बाजार में वस्तुओं की अधिकाधिक मात्रा आती है। उत्पादन का तीव्र विकास प्रभावी मांग से आगे निकल जाता है। छिपे हुए रूप में प्रारम्भ होकर अत्युत्पादन धीरे धीरे बढ़ता है और वस्तुओं की फालतू मात्राएं जमा होती जाती हैं। तेजी के इस उच्च स्तर पर एकाएक यह पता लगता है कि बाजार में जरूरत से अधिक वस्तुएं पड़ी हुई हैं, जिनके लिए कोई प्रभावी मांग नहीं है और फिर कीमतें गिरने लगती हैं तथा संकट शुरू हो जाता है। पुनः पूरा चक्र एक बार फिर चलता है।

अतः पूंजीवादी उत्पादन निर्बाध नहीं, बल्कि तीव्र उतार-चढ़ाव से होकर विकसित होता है। *जिस चक्रीय रूप में पूंजीवादी उत्पादन विकसित होता है* वह उत्पादक शक्तियों और उत्पादन के सम्बन्धों के तीव्र अन्तर्विरोधों का परिणाम और ज्वलन्त प्रमाण है। यह स्पष्ट कर देता है कि पूंजीवाद स्वयं अपने विकास के मार्ग में बाधाएं खड़ी करता है और अविराम गति से अपने पतन की ओर बढ़ता जाता है।

पूंजीवादी देशों में औद्योगिक संकट के अतिरिक्त कृषि संकट, यानी कृषिगत वस्तुओं के अत्युत्पादन का संकट आता है।

आम तौर पर कृषि संकट दीर्घकालिक होते हैं। इसका कारण उद्योग की अपेक्षा कृषि का अधिक पिछड़ापन है। भूमि पर निजी एकाधिकार कृषि के क्षेत्र में पूंजी के मुक्त प्रवाह के मार्ग में रोड़े अटकाता है। कृषि के क्षेत्र में लगी अचल पूंजी का पुनर्नवीकरण नहीं हो पाता और कृषि संकट लम्बे काल तक चलता है। साथ ही छोटे वस्तु उत्पादक संकट के दौरान उत्पादन के पुराने पैमाने को बनाये रखने के लिए यथाशक्ति प्रयत्न करते हैं जिससे वे भूमि पर अपना अधिकार कायम रख सकें। वे कभी-कभी अत्यधिक कृषि उत्पादन को बढ़ाने की भी कोशिश करते हैं और इस तरह संकट की समाप्ति नहीं होने देते।

कृषि संकट का मुख्य बोझ किसानों के एक बहुत बड़े समूह पर पड़ता है और उन पर बर्बादी ढाता है।

संकट और पूंजीवाद के अंतर्विरोधों का तीव्र होना

संकटों से स्पष्ट हो जाता है कि पूंजीवाद ने जिन शक्तियों को जन्म दिया है उनको वह नियंत्रित नहीं कर सकता। प्रत्येक आर्थिक संकट के उपरान्त उत्पादन में बड़ी कटौती और घरेलू तथा विदेश व्यापार में कमी की जाती है।

उदाहरण के लिए, ब्रिटेन में १६२६-३३ के संकट के दौरान कोयले का उत्पादन ३५ वर्ष पूर्व के स्तर पर, इस्पात का उत्पादन २३ वर्ष पूर्व के स्तर पर, लोहे का उत्पादन ७६ वर्ष पहले के स्तर पर और विदेश व्यापार ३६ वर्ष पहले के स्तर पर चला गया।

संकट काल के दौरान बहुत धन नष्ट किया जाता है जबकि उसी समय दूसरी ओर मेहनतकश जनता के बहुत बड़े समूह की अत्यन्त आवश्यक जरूरतें भी पूरी नहीं की जातीं। १६२६-३३ के दौरान अमरीका में ६२, ब्रिटेन में ७२ और जर्मनी में २८ धमन भट्टियां तोड़ दी गयीं। १६३३ में अमरीका में १०४ लाख एकड़ कपास नष्ट कर दी गयी।

संकट के दौरान समाज की सबसे महत्वपूर्ण उत्पादक शक्ति—श्रम-शक्ति बर्बाद होती है। संकट लाखों लोगों का रोजगार छीनता है। मेहनतकशों को बलात लादी गयी बेकारी और उद्देश्यविहीनता के अस्तित्व को स्वीकार करने के लिए मजबूर कर देता है।

संकट सर्वहारा वर्ग और पूंजीपति वर्ग, कृषक समुदाय और उसके शोषक भूस्वामी समुदाय, महाजन समूह इत्यादि के बीच अंतर्विरोध को भड़काता है। संकट के दौरान सर्वहारा वर्ग को उन अन्त में फायदों से हाथ धोना पड़ता है जिन्हें उसने पूंजीपतियों के विरुद्ध संघर्ष कर प्राप्त किया है।

सर्वहारा वर्ग के व्यापक तबके संकट द्वारा लायी गयी अपार दरिद्रता से पीड़ित होकर वर्ग चेतना और क्रान्तिकारी संकल्प प्राप्त कर लेते हैं। मजदूर इस निष्कर्ष पर आते हैं कि गरीबी और भुखमरी से पिण्ड छुड़ाने का एकमात्र मार्ग वर्तमान आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था को बदलना है यहां तक कि मेहनतकश जनता के पिछड़े हुए तबके भी शोषकों के विरुद्ध संघर्ष की आवश्यकता समझने लगते हैं।

अत आर्थिक संकट स्पष्ट रूप से पूंजीवाद से समाजवाद की ओर क्रान्तिकारी परिवर्तन की आवश्यकता बतलाते हैं। यह परिवर्तन पूंजीवादी व्यवस्था के अन्तर्विरोधों को समाप्त कर समाज की उत्पादक शक्तियों के असीमित विकास के लिए मार्ग प्रशस्त कर देता है।

ख एकाधिकारी पूंजीवाद—साम्राज्यवाद

१९वीं सदी के तृतीय चरण के दौरान पूंजीवाद अपनी चरम और अन्तिम अवस्था—साम्राज्यवाद के रूप में सामने आया। मुक्त प्रतिद्वंद्विता का एकाधिकार द्वारा प्रतिस्थापन इस अवस्था को अन्य अवस्थाओं से अलग करता है। इस काल में उत्पादक शक्तियां बहुत तेजी से विकसित हुई। बसीमर मार्टिन और टामस द्वारा लोहा और इस्पात उद्योग में लोहा पिघलाने के नये तरीके प्रारम्भ किये गये। फलस्वरूप इस्पात के बड़े बड़े कारखानों का जन्म हुआ। उस काल में कई बहुत महत्वपूर्ण आविष्कार (१८६७ में डाइनेमो, १८७७ में अन्तर्दहन इंजिन १८८३ १८८५ में भाप टर्बाइन) हुए जिन्होंने उद्योग और परिवहन के विकास को तेज किया। नये प्रकार की चालन शक्ति के कारण परिवहन के नये तरीके आये जैसे १८७९ में बिजली से संचालित ट्राम १८८५ में मोटरगाडियां, १८९१ में डिजल इंजिन और १९०३ में हवाई जहाज बने। विज्ञान और टेक्नालाजी की तरक्की ने बिजली के उत्पादन और इस्तेमाल के लिए मार्ग प्रशस्त कर दिया।

प्रारम्भ में हल्के उद्योगों का ही बोलबाला था लेकिन १९वीं सदी के तृतीय चरण में भारी उद्योग सामने आये। भारी उद्योग की शाखाएं इतनी तेजी से बढ़ी कि १८७० की तुलना में १९०० तक विश्व का इस्पात उत्पादन ५६ गुना तेल का उत्पादन २५ गुना और कोयले का उत्पादन तिगुना हो गया। बड़े पैमाने के उत्पादन की ओर १८७३ के आर्थिक संकट के बाद तेजी से प्रगति हुई।

उत्पादक शक्तियों और उत्पादन के विकास के साथ पूंजीवाद के अन्तर्विरोध दिनोंदिन तीव्र होते गये। अत्युत्पादन के आर्थिक संकट बार-बार आने लगे और वे विध्वंसकारी भी होते गये। बेरोजगारी निरन्तर बढ़ती गयी। पूंजीवादी राज्यों में परस्पर युद्ध होने लगे जिसके कारण मेहनतकश जनता को अकथनीय यातनाएं सहनी पड़ी। यद्यपि मेहनतकश जनता की स्थिति बदतर होती

गयी, तथापि पूंजीपतियों की समृद्धि अभूतपूर्व तेजी से बढ़ती गयी। परिणाम-स्वरूप मजदूर वर्ग का आर्थिक और राजनीतिक संघर्ष तेज हो गया।

मजदूर आन्दोलन के अन्दर पूंजीपति वर्ग के समर्थकों ने घोषणा की कि पूंजीवादी दुनिया में एकाधिकारों की स्थापना के कारण पूंजीवाद के विकास का नया युग प्रारम्भ हो गया और पूंजीवाद जनहित विरोधी नहीं रहा, अपितु वह 'संगठित', 'संकटों से मुक्त' और शान्तिपूर्ण हो गया। कौटस्की और हिल्फ-र्डिंग ने कहा कि विभिन्न देशों के पूंजीपति पारस्परिक समझौते द्वारा उत्पादन की अराजकता और युद्ध को दूर कर सकते हैं। इन सभी सिद्धान्तों का एकमात्र उद्देश्य पूंजीवाद के अन्तर्विरोध पर पर्दा डालना और मजदूर वर्ग को क्रान्तिकारी संघर्ष से विमुख करना था।

मजदूर वर्ग के सिद्धान्तकारों के लिए जरूरी हो गया कि २०वीं सदी के प्रारम्भ से पूंजीवाद के अन्तर्गत आये विशिष्ट तत्वों का समुचित अध्ययन कर साम्राज्यवाद का एक सुस्पष्ट वैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत करें। पूंजी के जुए से मजदूर वर्ग को मुक्त करने के लिए उसे सही सैद्धान्तिक हथियार देना जरूरी हो गया।

लेनिन ने यह कार्य अपनी अमर रचना साम्राज्यवाद, पूंजीवाद की चरम अवस्था (१६१६) तथा कई अन्य रचनाओं द्वारा सम्पन्न किया। उन्होंने दिखलाया कि साम्राज्यवाद में पूंजीवाद के सभी बुनियादी तत्व मौजूद हैं। साम्राज्यवाद के अन्तर्गत उत्पादन के साधनों पर पूंजीपतियों का निजी स्वामित्व और मेहनतकश जनता तथा पूंजीपतियों के बीच शोषण के सम्बन्ध भी विद्यमान हैं। वही वितरण व्यवस्था कायम रहती है जिसके अन्तर्गत कुछ लोगों के हाथों में धन बढ़ता जाता है और दूसरी ओर अन्य सब लोगों की स्थिति बदतर होती जाती है। पूंजीपति वर्ग और सर्वहारा वर्ग के बीच अमैत्रीपूर्ण सम्बन्ध भी मौजूद रहते हैं।

फलस्वरूप पूंजीवाद के सभी आर्थिक नियम (अधिशेष मूल्य का नियम, पूंजीवादी संचय का सामान्य नियम, प्रतिद्वंद्विता और उत्पादन की अराजकता का नियम इत्यादि) काम करते हैं हालांकि साम्राज्यवाद में इन नियमों के परिचालन में कतिपय विशिष्ट लक्षण हमारे सामने आते हैं।

लेनिन द्वारा साम्राज्यवाद के विश्लेषण से स्पष्ट हो गया कि पूंजीवाद की एकाधिकार वाली अवस्था के निम्नलिखित मूल आर्थिक लक्षण हैं : १) उत्पादन तथा पूंजी का संकेन्द्रण विकसित होकर इतनी ऊंची अवस्था में पहुंच गया है कि उसने एकाधिकारियों को जन्म दिया है। इन एकाधिकारियों की आर्थिक जीवन में एक निर्णायक भूमिका है। २) बैंकों की पूंजी और उद्योगों की पूंजी मिलकर एक

हो गयी हैं, और इस 'वित्तीय पूंजी" के आधार पर एक वित्तीय अल्पतंत्र ने जन्म लिया है। ३) पूंजी के निर्यात ने (जो माल के निर्यात से भिन्न है) असाधारण महत्व धारण कर लिया है। ४) अन्तर्राष्ट्रीय एकाधिकारी पूंजीवादी संघों का निर्माण हुआ है। इन संघों ने दुनिया को आपस में बांट लिया है तथा सबसे बड़ी पूंजीवादी ताकतों के बीच सम्पूर्ण संसार का क्षेत्रीय विभाजन पूरा हो गया है।[१]

१ व्ला॰ इ॰ लेनिन, "संग्रहीत रचनाएं", खंड २२ पृष्ठ २६६।

अध्याय ७

साम्राज्यवाद की मूल आर्थिक विशेषताए

१ उत्पादन का सकेन्द्रण और एकाधिकार

साम्राज्यवाद मे पहले मुक्त प्रतिद्वद्विता का ही बोलबाला था। मुक्त प्रतिद्वद्विता के काल म एक ही तरह की वस्तु कई पूजीपति उत्पन्न करते थे। हर पूजीपति कोशिश करता था कि वह वस्तु को ऐसी कीमत पर बेचे, जिसमे अधिकतम मुनाफा प्राप्त हो सके। उत्पादन का सकेन्द्रण मुक्त प्रतिद्वद्विता के चलते कमजोर पूजीपति बर्बाद हो गये जबकि मजबूत पूजीपति धनी हो गये और उत्पादन का विस्तार किया। एगेल्स के अनुसार मुक्त प्रतिद्वद्विता सबके खिलाफ चलायी जाने वाली सबकी लडाई (जिसका आधुनिक सभ्य समाज म बोलबाला है) की पूर्ण अभिव्यक्ति है।"[1] मुक्त प्रतिद्वद्विता कुछ लोगो को धनी बनाकर और अन्य लोगो को बर्बाद कर हजारो मजदूरो को काम पर लगाने वाले बडे उद्यमो मे उत्पादन को सकेन्द्रित करती है। अपने विकास के एक निश्चित चरण म उत्पादन का सकेन्द्रण एकाधिकार को जन्म देता है और साम्राज्यवाद की अवस्था म सकेन्द्रण अपने विकास की आखिरी अवस्था म पहुच जाता है।

उदाहरण के लिए जर्मनी मे १८८२ म ५० से अधिक मजदूरो से काम लेने वाले उद्यमो म कुल काम पर लगे लोगो का २२ प्रतिशत, १८९५ म ३० प्रतिशत, १९०७ म ३७ प्रतिशत, १९२५ मे ४७ २ प्रतिशत और १९३९ म ४९ ९ प्रतिशत था। १९५५ मे पश्चिम जर्मनी म ८७ १ प्रतिशत कुल रोजगार प्राप्त लोग उन उद्यमो म लगे थे जिनम हर उद्यम ५० से अधिक मजदूरो से काम लेता

---

१ कार्ल मार्क्स और फ्रेडरिक एगेल्स, "आन ब्रिटेन", मास्को, पृष्ठ १०९।

था। अमरीका में १० लाख डालर या उससे अधिक का वार्षिक उत्पादन करने वाले उद्यमों में १९०४ में कुल जनसंख्या का ० ९ प्रतिशत लगा था। उनमें २५ ६ प्रतिशत कुल रोजगार प्राप्त लोग लगे थे और अमरीका के समग्र उत्पादन में उनका हिस्सा ३८ प्रतिशत था। १९३९ में अमरीका में ५ २ प्रतिशत कुल बड़े उद्यम थे। उनमें ५५ प्रतिशत मजदूर काम करते थे और समग्र औद्योगिक उत्पादन का ६७ ५ प्रतिशत उत्पन्न करते थे। १९५५ में अमरीका के ५०० औद्योगिक कारपोरेशन कुल औद्योगिक उत्पादन का आधा उत्पन्न करते थे और उन्हें कुल मुनाफे की राशि का ६८ प्रतिशत प्राप्त होता था। सबसे बड़े ४० कारपोरेशन जो कुल संख्या के ० ०५ प्रतिशत थे अमरीकी प्रोसेसिंग उद्योग के कुल उत्पादन का करीब एक चौथाई उत्पन्न करते थे।

आज अमरीका की १०० बडी कम्पनियां और अन्य साम्राज्यवादी देशों की १०० कम्पनियां विश्व के कुल पूंजीवादी उत्पादन के एक तिहाई को नियंत्रित करती हैं।

पूंजी के संकेन्द्रण के अतिरिक्त पूंजी का केन्द्रीकरण भी होता है। जब कई अलग पूंजियां का एक बडी पूंजी में विलयन होता है और पूंजी की मात्रा बढती है तो हम कहते हैं कि पूंजी का केन्द्रीकरण हुआ है। केन्द्रीकरण समझौते के फल स्वरूप (जैसे ज्वायंट स्टाक कम्पनियों का निर्माण) या जोर जबरदस्ती (जैसे प्रति द्वंद्विता के कठिन संघर्ष में बडे पूंजीवादी उद्यम छोटे पूंजीवादी उद्यमों को बर्बाद कर देते हैं या उनको हडप जाते हैं) के कारण होता है।

प्रतिद्वंद्विता प्रत्येक पूंजीपति को अपनी वस्तुओं को सस्ता करने के लिए बाध्य करती है। बडे पूंजीपति ही वस्तुओं को सस्ता कर सकते हैं। प्रतिद्वंद्विता में न टिक पाने वाले छोटे उद्यम परिसमाप्त हो जाते हैं या किसी बडे पूंजीपति के कब्जे में चले जाते हैं। यह प्रक्रिया निरन्तर जारी रहती है।

उत्पादन और पूंजी के संकेन्द्रण और केन्द्रीकरण के कारण मजदूरों की विशाल जनसंख्या बडे उद्यमों में लग जाती है। इस कारण मजदूर वर्ग की एकता और पूंजी के विरुद्ध उनका संगठन सम्भव हो जाता है। मजदूर वर्ग जोरदार संघर्ष चलाने में सक्षम एक क्रान्तिकारी ताकत बन जाता है। पूंजी और उत्पादन के संकेन्द्रण और केन्द्रीकरण के फलस्वरूप श्रम का बडे पैमाने पर समाजीकरण होता है तथा मजदूरों और पूंजीपतियों के बीच वर्ग संघर्ष तेज हो जाता है।

उत्पादन के संकेन्द्रण के कारण प्रत्यक्ष रूप से एकाधिकार के रूप का जन्म होता है। बडा पूंजी वाले उद्यम प्रतिद्वंद्विता में एक दूसरे का हरा नहीं पाते। इसलिए इन स्थितियों में बडे पूंजीपतियों के लिए एकाधिकार के रूप बाजार और कच्चे माल के स्रोत में साझेदारी कीमत

निर्धारण इत्यादि के सम्बध मे परस्पर समझौता करना सम्भव और आवश्यक हो जाता है।

एकाधिकार वे निश्चय वस्तुओ के उत्पादन या बिक्री (और बहुधा उत्पादन और बिक्री दोनो) पर नियत्रण रखने वाले पूजीपतियो के आपसी समझौते या सगठन का नाम है। इन सगठनो का जो भी रूप हो, सबका एक ही लक्ष्य है—अधिकतम मुनाफा प्राप्त करना।

एकाधिकार सगठनो का जन्म सवप्रथम भारी उद्योग की शाखाओ म हुआ। वहा उत्पादन तेजी से सकेन्द्रित होता है। ज्यो ही एकाधिकार सगठन भारी उद्योग पर नियत्रण प्राप्त कर लेते हैं त्यो ही उद्योग की अन्य शाखाओ म भी उनका प्रसार हो जाता है।

एकाधिकार सगठनो के कई रूप हैं। प्रारम्भ म वे व्यक्तिगत पूजीपतियो के विक्रय कीमत सम्बधी आपसी अल्पकालीन समझौतो का रूप लेते हैं। इस तरह दीर्घकालीन समझौतों के लिए आधार तैयार होता है।



कार्टेल का सगठन बाजार के बटवारे और कीमत निर्धारण को लेकर पूजीपतियो के बीच समझौते के रूप म होता है। वे उत्पन्न की जाने वाली वस्तुओ का भी निर्धारण करते हैं। कार्टेल म सम्मिलित उद्यम अपनी वस्तुओ को एक दूसरे से स्वतन्त्र होकर उत्पन्न करते या बेचते हैं। एकाधिकार का यह रूप युद्ध पूर्व जमनी म काफी व्यापक था और आज भी जमन सघ गणराज्य म व्यापक है।

सिंडिकेट एकाधिकार सगठन का एक उच्चतर रूप है। सिंडिकेट म सम्मिलित उद्यम स्वतन्त्र रूप से वस्तुओ का उत्पादन करते हैं लेकिन उन्हे व्यावसायिक स्वतत्रता नही रहती। सिंडिकेट के सदस्य अपने उत्पादन को स्वय बेचते या कच्चे माल को खरीदते नही हैं बल्कि इस काय के लिए एक सयुक्त व्यावसायिक यत्र बनाते हैं। एकाधिकार का यह रूप जारशाही रूस म व्यापक था।

ट्रस्ट एकाधिकार का वह रूप है जिस पर उसके सभी सदस्य उद्यमो का सयुक्त स्वामित्व होता है। उद्यमो के भूतपूर्व स्वामी ट्रस्ट के शेयर होल्डर बन जाते हैं और अपने शेयरो की सख्या के अनुसार मुनाफा पाते हैं।

कन्सन उद्योग वका, व्यावसायिक फर्मों परिवहन और बीमा कम्पनियो की विभिन्न शाखाओ के बड टस्ट या उद्यमा का सगठन है जो बड बडे पूजीपतियो के एक विशेष समूह पर वित्तीय रूप स अवलम्बित रहता है।

टस्ट और कन्सन अमरीका ब्रिटेन, फ्रास, जापान और अन्य देशा म बडे पमाने पर विकसित हुए हैं।

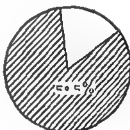
साम्राज्यवाद के अतगत पूजीवादी देशा की अथव्यवस्थाओ म एकाधिकारो का बोलबाला रहता है। मोटे तौर पर य उद्योग,

प्रमुख पूजीवादी देशो परिवहन व्यवसाय बीमा और बक की सभी शाखाए मे एकाधिकार सगठन अपने चगुल म कर लेते हैं। इसे प्रमुख पूजीवादी देशा के निम्नलिखित उदाहरणो मे देख सकते हैं।

अमरीका के लोहा और इस्पात उद्योग पर १७ इजारेदार कब्जा जमाये हैं। १९५९ म इस्पात की ९४ प्रतिशत उत्पादन क्षमता पर उनका नियत्रण था। इसम दो इजारेदार—दी यू एस स्टील कारपोरेशन और बेटलहम स्टील कारपोरेशन—देश की आधी उत्पादन क्षमता को नियत्रित करते थे। दि यू एस स्टील कारपोरेशन के अधिकार मे अभी १४० इस्पात कारखान और १८० धमन भटिठया हैं। इनका देश क ७० प्रतिशत लौह अयस्क साधना पर अधिकार है तथा इनकी अपनी रेल सचार व्यवस्था है। तल उद्योग म सबस बडा इजारेदार स्टडड आयल है। इसके अतगत २० कम्पनिया हैं। अमरीका और कुछ अन्य देशा के तल उद्योग पर इसका प्रभुत्वकारी प्रभाव है।

अमरीका की बडी कम्पनिया—प्रत्येक कम्पनी की परिसम्पत्ति १ करोड डालर से अधिक है





आटोमोबाइल उद्योग म तीन बड इजारेदार—जेनरल मोटर्स, फोड और क्रायस्लर हैं। १९५८ म इन्होने अमरीका म निर्मित ९३ प्रतिशत मोटर गाडिया

को बनाया। ये तीनों हथियार और गोला-बारूद के भी महत्वपूर्ण उत्पादक हैं। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान इन्होंने अमरीका का कुल मोटर-परिवहन, ७५ प्रतिशत एरो इंजिन, ४० प्रतिशत टैंक और ३० प्रतिशत तोपखाना, मशीनगन स्वयचालित रायफल, इत्यादि का उत्पादन किया था।

इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग को ही लें। अधिकांश उत्पादन क्षमता दो इजारेदारों—जनरल इलेक्ट्रिक और वेस्टिंगहाउस—के कब्जे में है। रासायनिक उद्योग में एक ही ट्रस्ट—ड्युपोंट द नेमोर का एकछत्र राज्य है जो विस्फोटक, जहर, प्लास्टिक बुनियादी रसायन और आणविक हथियार बनाता है।

अमरीका की तरह ही ब्रिटेन की अर्थव्यवस्था पर भी बड़े एकाधिकार कब्जा जमाये हैं। दि ब्रिटिश आयरन एण्ड स्टील फेडरेशन में देश का प्रमुख लोहा और इस्पात कम्पनियां शामिल हैं। विकर्स आर्मस्ट्रांग की फर्में हथियार बनाती हैं। उनका गोला-बारूद फौजी और सिविल इंजीनियरिंग और जहाज निर्माण तथा उड्डयन और इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग के उत्पादनों पर नियंत्रण है।

द्वितीय महायुद्ध के दौरान इसने ब्रिटिश सरकार को २८ ००० हवाई जहाज १,६४ ००० भारी बन्दूकें और असंख्य पनडुब्बी जहाज बेचे थे। ब्रिटेन के राजनीतिक क्षेत्र में यह एक बड़ी प्रतिक्रियावादी शक्ति है।

रसायन उद्योग में सबसे बड़ा एकाधिकार इम्पीरियल केमिकल इंडस्ट्रीज है। इसका बुनियादी रसायनों के ६५ प्रतिशत उत्पादन नाइट्रोजन के ९८ प्रतिशत उत्पादन और रंग के सामानों के ४० प्रतिशत उत्पादन पर अधिकार है। फौजी कार्यों के लिए आवश्यक रसायनों का यह प्रधान उत्पादक है। आई सी आई ब्रिटिश उद्योग की अन्य शाखाओं, खासकर हथियार बनाने वाली फर्मों से घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध है।

फ्रांस में एक ही कार्टेल अल्मूनियम फ्रांकेस का अल्मूनियम के सम्पूर्ण उत्पादन पर नियंत्रण है। दूसरे एकाधिकार कम्पगनाई फ्रांकेस दी मटायर कोलोरान्टे का रंग के सामानों के ८० प्रतिशत उत्पादन पर नियंत्रण है। ९६ प्रतिशत मोटर गाड़ियों का निर्माण चार इजारेदार ही करते हैं।

पश्चिम जर्मनी का एक सबसे बड़ा इजारेदार जर्मन स्टील ट्रस्ट वरीनिग्टे स्टाल्वर्क ए जी है। द्वितीय विश्व युद्ध के शुरू होने के समय इसके अधिकार में ३७० कम्पनियां और इसकी २२० शाखाएं जर्मनी और जर्मनी से बाहर थीं। युद्ध के बाद इसे अमरीकी पूंजी की सहायता से पुनर्जीवित किया गया। यह अब यूरोपियन कोल और स्टील कम्यूनिटी का प्रमुख सदस्य है। अन्य बड़े इजारेदार—क्रूप थायसेन आदि भी लड़ाई के बाद पुनर्जीवित किये गये और अब ये हथियार और इस्पात उत्पादित किया करते हैं। रसायन उद्योग में प्रमुख इजारेदार

पूजीपतियो का चालू खाता देखते देखते बडे बक उनकी स्थिति के सम्बध मे जानकारी प्राप्त कर लेते हैं और उन पर नियत्रण रखते हैं। साख की उपलब्धि को आसान या कठिन बनाकर वे औद्योगिक पूजीपतियो को अपने अधिकार म रखते है और उनके क्रियाकलापो का निर्देशन करते हैं।

अत भुगतान के क्षेत्र म बक साधारण बिचौलिये से बढकर सवशक्तिमान वित्तीय केद्र हो गये हैं।

बैंको के सवशक्तिमान एकाधिकार के रूप म परिवर्तित हो जाने के कारण उत्पादन के सकेन्द्रण की प्रक्रिया तेज हो जाती है क्याकि बक एकाधिकार के सदस्य (बडे उद्यमो) को साख की सुविधाए प्रदान करने म प्राथमिकता देते हैं। बक एकाधिकार की प्रगति मे दिलचस्पी रखते हैं इसलिए वे उनके शेयर भी खरीदते हैं। वे पर्याप्त मात्रा मे शेयर खरीदकर एकाधिकार मे अपनी निर्णायक स्थिति बना लेते हैं।

वित्तीय पूजी

वित्तीय पूजी के चरित्र के सम्बध म लेनिन ने लिखा "उत्पादन का सकेन्द्रण उससे उत्पन्न होने वाले एकाधिकार बको का उद्योगो के साथ मिल जाना या उनका एक दूसरे मे विलीन हो जाना—यह है वित्तीय पूजी के उत्थान का इतिहास और इस अवधारणा का सार।"[1]

बक उद्योग व्यवसाय, परिवहन, बीमा और अन्य एकाधिकारो के शेयर खरीदकर उनके सह स्वामी हो जाते हैं। औद्योगिक एकाधिकार भी सम्बद्ध बकों के शेयर खरीदते हैं। नतीजा यह होता है कि एकाधिकार बक और औद्योगिक पूजी एक सूत्र मे बध जाते हैं या परस्पर मिल जाते है। इस आधार पर नये प्रकार की पूजी—वित्तीय पूजी का जन्म होता है।

बक पूजी और औद्योगिक पूजी का मेल कई रूपो मे होता है। इसका बहुत स्पष्ट रूप व्यक्तिगत सम्मिलन है। जब एक ही लोग बक, उद्योग, व्यवसाय और अन्य एकाधिकार के प्रमुख होते हैं तभी यह सम्भव होता है। बक के मुख्य सचालक औद्योगिक एकाधिकार के प्रबन्ध मे घुस जाते हैं और औद्योगिक एकाधिकार के प्रतिनिधि बैंक का सचालक परिषद मे महत्वपूर्ण स्थानो पर आसीन हो जाते हैं।

अमरीका मे ४०० उद्योगपतियो और बक मालिको का एक छोटा समूह २५० बडे कारपोरेशनो के डायरेक्टर की १ २०० जगहो पर अधिकार रखता है। लारेन्स राकफेलर इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं। वे १० से भी अधिक कम्पनियो के डायरेक्टर हैं।

---

१ ब्ला इ लेनिन, सग्रहीत रचनाए, खड २२ पृष्ठ २२६।

ब्रिटेन के आठ सबसे बडे बैंकों के २०० डायरेक्टरों मे से १६० डायरेक्टर ३३ औद्योगिक एकाधिकारो, ३१ बीमा कम्पनियो और निर्माण फर्मों, ६८ औद्योगिक कम्पनिया, १७ बैंको और अन्य वित्तीय कम्पनियो तथा ८७ विदेशी (खास कर राष्ट्रमण्डल के देशो म) औद्योगिक कम्पनियो एव बकों के बाड के सदस्य हैं। बहुतरे ब्रिटिश औद्योगिक और परिवहन एकाधिकारो के डायरेक्टर बडे बको के बोड के सदस्य हैं। उदाहरण के लिए ब्रिटिश पेट्रोलियम के डायरेक्टर मिडलैंड बैंक लायडस बैंक और नेशनल प्राविसियल बक जैसे तीन बडे बकों के बोड के सदस्य हैं।

फ्रास के सबसे बड़ बक बैंक डे पेरिस एट डेस पेज बास के डायरेक्टर अन्य कम्पनियो के बोड मे १६० जगहो पर हैं। इन कम्पनियों का शाखाओ और अनुषगी कम्पनियो के एक सम्पूण समूह पर अधिकार है।

जमनी क बहुत बडे बक डियूटस्चे बैंक के ८४ प्रतिनिधि द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान विभिन्न कम्पनियों मे डायरेक्टर की ७०७ जगहो पर बैठे थे। १९५८ म उसी बैंक के ४८ प्रतिनिधि पश्चिम जमनी की १२६ बडी कम्पनियो की ६६२ प्रमुख जगहो पर आसीन थे। बैंक की सचालक परिषद के अध्यक्ष हरमन एब्स अन्य बैंको व्यावसायिक कम्पनियो तथा औद्योगिक सस्थाओ की सलाहकार समितियो और परिषदों की ४० जगहो पर हैं। हिटलर के शासन-काल मे वे ऐसी ४२ जगहो पर थे।

वित्तीय अल्पतत्र का आधिपत्य वित्तीय पूजी की शक्ति की मूत अभिव्यक्ति है।

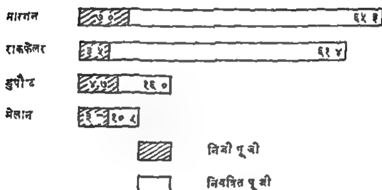
एकाधिकार और वित्तीय पूजी के विकास के फलस्वरूप बडे बैंक मालिको और उद्योगपतियो का एक छोटा मडल बन जाता है। इस मडल का प्रभाव देश के सम्पूण आर्थिक और राजनीतिक जीवन पर रहता है।

वित्तीय अल्पतत्र

इस तरह वित्तीय अल्पतत्र (यानी थोडे-से धनपतियो की शक्ति और आधिपत्य) का उदय होता है। अथव्यवस्था की सभी महत्वपूण शाखाओ और पूजीवादी देशो के राजनीतिक यत्र पर पूरी तरह वित्तीय अल्पतत्र का कब्जा हो जाता है।

अमरीका की अथव्यवस्था म निर्णायक भूमिका आठ वित्तीय समूहो—मारगन राकफेलर, डूपोंट, मेलान, दी बक आफ अमरीका दी शिकागो बैंक दी क्लीवलैंड बक और दी फस्ट नशनल सिटी बक की है। १९५५ म २१,८५ ०००लाख डालर की कुल पूजी पर इन समूहो का नियत्रण था। इनम सबस बडा समूह मारगन और राकफेलर का है। १९५५ म मारगन के प्रभाव क्षेत्र क बैंको और कारपोरेशन की कुल पूजी ६,५३,००० डालर थी। इनके अन्तगत ५ सबस बडे बक,

१४ रेलरोड कम्पनिया, कई टेली-कम्युनिकेशन एकाधिकार, दी यू एस स्टील कारपोरेशन जेनरल इलेक्टिक, आदि थे। उसी वर्ष राकफेलर के प्रभाव क्षेत्र के अन्तर्गत विशाल स्टैडर्ड आयल एकाधिकार, रेलरोड, इस्पात और अन्य एकाधिकार समेत जितने बैंक और कारपोरेशन थे उनकी कुल पूजी ६ १४,००० लाख डालर थी। अमरीका की जनसख्या मे १० लाख डालर से अधिक की सम्पत्ति वाले सिर्फ १ प्रतिशत हैं लेकिन सारे देश की कुल सम्पत्ति का ६० प्रतिशत उनके नियंत्रण मे है।



ब्रिटेन की राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था मे आठ वित्तीय समूहो की ही निर्णायक भूमिका है। यहा के मुख्य उद्योग उनके नियंत्रण मे हैं और ब्रिटेन के भूतपूर्व उपनिवेशों को आर्थिक रूप से जकडे हुए हैं।

अन्य पूजीवादी देशो मे भी इसी तरह वित्तीय अल्पतंत्र का बोलबाला है।

होल्डिंग की व्यवस्था द्वारा वित्तीय अल्पतंत्र आर्थिक क्षेत्र पर कब्जा जमाये रखते हैं। यह व्यवस्था इस प्रकार काम करती है एक बडा वित्तीय साधन लगाने वाला पूजीपति (या उनका एक समूह) अपने नियंत्रक हित या अन्य तरीके से मुख्य ज्वायट स्टाक कम्पनी के ऊपर नियंत्रण पा लेता है। यह 'मूल कम्पनी' होती है। यह कम्पनी अन्य कम्पनियो के शेयर प्राप्त कर लेता है। इस प्रकार नियंत्रक हित प्राप्त कर वह 'अनुजात कम्पनिया' पर अधिकार कर लेती है। इन अनुजात कम्पनियो के द्वारा अन्य कम्पनिया पर नियंत्रण प्राप्त कर लिया जाता है। होल्डिंग की इस व्यवस्था के द्वारा १ अरब डालर की पूजी वाला कोई पूजीपति कई गुनी ज्यादा

पूजी पर भी नियत्रण रख सकता है। इस व्यवस्था के द्वारा बडी पूजी का प्रभाव क्षेत्र निरन्तर बढता जाता है। इस व्यवस्था को कई मजिलो के पिरामिड के रूप मे देखा जा सकता है जिसके ऊपर वित्तीय जगत के 'राजे" बठते हैं।

पूजीवादी देशो के राजनीतिक जीवन पर भी वित्तीय अल्पतत्र का दबदबा रहता है और राजकीय यत्र इनके अधिकार म रहता है। इस तरह राजकीय पूजीवादी एकाधिकार का जन्म होता है और वह विकसित होने लगता है।

३ पूजी निर्यात और विश्व का आर्थिक और क्षेत्रीय विभाजन

साम्राज्यवाद के पूव देशो के पारस्परिक आर्थिक सम्बध के मुख्य रूप विदेशी व्यापार और वस्तु निर्यात थे। साम्राज्यवाद के अतगत विश्व व्यापार का फलाव होता है और पूजी निर्यात अधिक महत्वपूण हो जाता है। पूजी निर्यात से चन्द बडे साम्राज्यवादी देश पूजीवादी दुनिया के एक बडे भाग का शोषण करते हैं।

पूजी निर्यात

एकाधिकार का बोलबाला होने पर काफी विकसित पूजीवादी देशो मे 'फालतू पूजी' इकट्ठा हो जाती है। अगर एकाधिकारी अपनी पूजी का इस्तेमाल मेहनतकश जनता के जीवमान के स्तर को ऊचा उठाने और कृषि को आधुनिक बनाने के लिए करें तो निस्सदेह कोई 'फालतू" पूजी नही रहेगी। इस अवस्था म पूजीवाद पूजीवाद नही रहेगा। पूजीपतियों का उद्देश्य अपनी पूजी को इस तरह लगाना है कि उन्हे अधिकतम मुनाफा प्राप्त हो।

पूजी का दो रूपो—ऋण पूजी और उत्पादक पूजी—म बाहर निर्यात होता है। ऋण पूजी का निर्यात तब होता है जब किसी अन्य देश की सरकार या पूजीपति को ऋण दिया जाता है। ऋण प्राप्त करने वाले देश ब्याज देते हैं। ऋणी देश के मजदूरो द्वारा उत्पन्न अधिशेष मूल्य पूजी निर्यात करने वाले देश म ब्याज के रूप मे चला जाता है।

उत्पादक पूजी का निर्यात तब होता है जब पूजीपति दूसरे देशो म औद्योगिक उद्यम इत्यादि आदि का निर्माण करते हैं। मान लें कि किसी लटिन अमरीकी देश म तल कूप बनाने के लिए अमरीका म एक ज्वायट स्टाक कम्पनी बनती है। इस कम्पनी के शेयर अमरीकी पूजीपति खरीदते हैं। शेयर की बिक्री से प्राप्त पूजी का इस्तेमाल सम्बद्ध देश म तल कूप बनाने के लिए होता है किन्तु तेल कूपों से मुनाफा शेयर होल्डरो (यानी अमरीकी पूजीपतियो) को मिलता है। दोनो स्थितियो म पूजी निर्यात का उद्देश्य अधिकतम एकाधिकार मुनाफा प्राप्त करना है।

सामान्यता आर्थिक दृष्टि से अविकसित देशो को ही पूजी निर्यात होता है। इन देशो के पास बहुत कम पूजी होती है, उनकी जमीन सस्ती होती है, कच्चे मालो की बहुलता होती है और मजूरी की दर कम होती है। फलस्वरूप वहां पूजी लगाना काफी लाभदायक होता है। अभी अफीका और मध्यपूर्व के देशो का जोर-शोर से पूजी निर्यात हो रहा है। औद्योगिक रूप से विकसित देशो को भी पूजी निर्यात होता है। पूजी का निर्यात और आयात करने वाले देशो के लिए इसके भयकर परिणाम होते हैं।

पूजी का आयात करने वाले देश म पूजीवाद के अन्तर्विरोधी—जनता की दरिद्रता और बर्बादी भूमि और अन्य प्रकार के राष्ट्रीय धन के अपव्यय सहित त्वरित पूजीवादी विकास होता है। वित्तीय पूजी अल्पविकसित देशो की अर्थव्यवस्थाओ को विकृत करती है फलस्वरूप उन देशो म मुख्यत निर्यात के लिए खान उद्योग और कृषि का विकास होता है।

पूजी का निर्यात करने वाले देशो के लिए इसके दो नतीजे होते हैं। एक ओर ये देश अपनी धनराशि मे वृद्धि करते हैं यानी विदेश मे स्थित अपने उद्यमो से मुनाफे के रूप मे या ऋण पर ब्याज के रूप म अधिशेष मूल्य प्राप्त करते हैं। दूसरी ओर पूजी निर्यात के कारण स्वदेश म विनियोग की सम्भावनाए कम हो जाती हैं।

पूजी निर्यात व्यापक अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक सम्बधो को जन्म देता है। इन व्यापक सम्बधो का अर्थ है आर्थिक रूप से अविकसित देशो का विकसित देशो द्वारा शोषण।

पूजीवादी सिद्धान्तकार यह दिखलाने की कोशिश करते हैं कि साम्राज्यवाद के युग मे पूजी निर्यात अल्पविकसित देशो के लिए एक प्रकार की "सहायता" और वरदान है। उपनिवेशो के विघटन का एक सिद्धान्त सामने रखा गया है। सक्षेप मे इस सिद्धान्त का सार यह है साम्राज्यवाद ने उपनिवेशो के आर्थिक विकास को आगे बढाया है महानगरो पर उनकी निर्भरता कम की है। इस सिद्धान्त का उद्देश्य पूजी निर्यात के साम्राज्यवादी चरित्र पर परदा डालना है। वास्तविकता यह है कि पूजी निर्यात उपनिवेशो के विघटन को प्रेरित नही करता बल्कि कुछ देशो द्वारा अन्य देशो को गुलामी की जजीर म जकडे रहने का साधन है।

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद पूजी निर्यात की कई नयी विशेषताए सामने आयी। यूरोप और एशिया के अनेक देशो के पूजीवादी चगुल से मुक्त हो जाने के कारण पूजीवादी विनियोग का क्षेत्र सकुचित हो गया।

पूजी का असम निर्यात काफी स्पष्ट हो गया। ब्रिटेन और फ्रास का पूजी निर्यात काफी कम हो गया। दूसरी ओर अमरीका का पूजी निर्यात बढा। १९४६

म अमरीकी विदेशी पूंजी विनियोग अन्य सभी पूंजीवादी देशो के सम्मिलित पूंजी विनियोग से अधिक था। १९३९ १९५५ की अवधि म अमरीका का विदेशी विनियोग चार गुना बढा।

अमरीका सरकारी ऋण और साख के रूप म लटिन अमरीका एशिया और अफ्रीका के अल्पविकसित देशो को तथा पश्चिमी यूरोप के ब्रिटेन, फ्रास, पश्चिम जमनी आदि विकसित औद्योगिक देशो को उत्तरोत्तर अधिक पूंजी का निर्यात कर रहा है। अमरीका सम्पूण पूंजीवादी विश्व के वित्तीय शोषण का केन्द्र है।

राजकीय ऋण और साख का राजनीतिक और फौजी पहलुओ के अतिरिक्त आर्थिक पक्ष भी है।

पूंजी निर्यात के माध्यम से अत्यन्त विकसित पूंजीवादी देशो का अल्पतन्त्र पूंजी आयात करने वाले देशो के सम्पूण आर्थिक जीवन को अपने नियन्त्रण मे कर लेना है।

अनेक देश पूंजी का निर्यात करते हैं। हर साम्राज्यवादी देश यह कोशिश करता है कि उसका पूंजी निर्यात उन देशो को हो, जिनसे उसे अधिकतम लाभ प्राप्त हो। इस कारण न सिर्फ पूंजीपतियो, बल्कि साम्राज्यवादी देशो के बीच प्रतिद्वंद्विता और दुश्मनी होती है और समस्त पूंजीवादी विश्व मे अन्तर्विरोध तीव्र हो जाते हैं।

पूंजीपतियो के गठजोड के बीच विश्व का आर्थिक विभाजन

पूंजीवादी देशो मे एकाधिकार सवप्रथम घरेलू बाजार पर एकछत्र आधिपत्य कायम करने के लिए प्रयास करते हैं। वे घरेलू बाजार का विभाजन कर लेते हैं कीमत को कृत्रिम रूप से ऊंचे स्तर पर रखते हैं और अपार मुनाफा कमाते हैं। ऊंची कीमतो को बनाये रखकर एकाधिकार विदेशी प्रतिद्वंद्विता के मुकाबले घरेलू बाजार को सुरक्षित रखते हैं। इस उद्देश्य से ऊंची चुंगी लगायी जाती है। कभी कभी कुछ वस्तुओ के आयात पर पूण प्रतिबन्ध लगा दिया जाता है। कई बार आयात चुंगी वस्तुओ के मूल्य से भी अधिक होती है। इस तरह घरेलू बाजार पर एकाधिकार का आधिपत्य पक्का हो जाता है।

घरेलू बाजार सीमित होते हैं। वे विशाल कन्सर्नों द्वारा उत्पन्न वस्तुओ को खपा नही पाते। इसलिए एकाधिकार उन्हें विदेशी बाजारो मे बेचने के लिए अधिकाधिक प्रयास करते हैं। यहा प्रश्न उठता है कि जब ये बाजार भी आयात चुंगिया द्वारा सुरक्षित कर लिये गये हो, तो ऐसा करना किस प्रकार सम्भव है ?

आयात चुंगी से बचने के लिए वे पूजी का ही निर्यात करते हैं। पूजीपति अन्य देशों मे कारखाने बनाते हैं और उनके बाजार को वस्तुओं से भर देते हैं बाजार को वस्तुओ से भर कर भी पूजीपति ऊची आयात चुंगी से बचते हैं और विदेशी बाजारों पर कब्जा करते हैं। बाजार को वस्तुओ से पाटने का मतलब उन्हें कम कीमतो पर बेचना है। कभी-कभी वे वस्तुओं को उत्पादन लागत से भी कम कीमत पर निर्यात करते हैं। कम कीमतें प्रतिद्वंद्वियो को बाजार से बाहर कर देती हैं और उसके बाद एकाधिकार कीमतें बढा देते है।

विदेशी बाजार कच्चे माल के स्रोत और पूजी विनियोग के क्षेत्र के लिए विभिन्न एकाधिकारो के बीच उनके प्रभाव क्षेत्रो के रूप में विश्व का आर्थिक विभाजन होता है। अपने राज्य विशेष की सीमा के बाहर एकाधिकार के प्रसार से उत्पादन और पूजी के संकेन्द्रण का एक नया और ऊचा चरण आता है। इस चरण को लेनिन ने अतिएकाधिकार कहा है।

जब किसी उद्योग मे कुछ ट्रस्ट या सिंडिकेट सारे विश्व के पैमाने पर निर्णायक स्थान प्राप्त कर लेते हैं तब अन्तर्राष्ट्रीय एकाधिकार के निर्माण की स्थितियां उत्पन्न की जाती हैं। बाजार और कच्चे माल के स्रोत के विभाजन, उत्पादन कोटा मूल्य नीति इत्यादि के सम्बंध मे विभिन्न देशो के बड़े एकाधिकार परस्पर समझौता कर अन्तर्राष्ट्रीय एकाधिकार कायम करते हैं।

प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय एकाधिकारो का जन्म १६वी सदी के छठे और आठवें दशकों मे हुआ। १६वी सदी की समाप्ति के समय ४० और द्वितीय विश्व युद्ध के प्रारम्भ (१६३६) के समय ३०० से अधिक अन्तर्राष्ट्रीय एकाधिकार थे। आजकल इनकी संख्या करीब ३५० है। पूजीवादी देशो के बड़े एकाधिकार अन्तर्राष्ट्रीय एकाधिकार हो जाते हैं।

लेनिन ने बतलाया कि किस प्रकार प्रथम विश्व युद्ध के पूर्व अमरीका और जर्मनी का सारे विश्व के पैमाने पर इलक्ट्रिक इंजीनियरिंग पर एकाधिकार था। जर्मनी में जर्मन इलेक्ट्रिक कम्पनी (ए ई जी) थी जिसके उद्यम और शाखाए यूरोप और अमरीका के कई देशो में फैली थी। अमरीका मे इलेक्ट्रिक इंजीनियरिंग पर जनरल इलेक्ट्रिक कम्पनी का एकाधिकार था। इसके उद्यम सम्पूर्ण अमरीका और यूरोप में फैले थे। १६०७ में विश्व के पैमाने पर प्रभाव क्षेत्र के वितरण के लिए इन एकाधिकारों के बीच समझौता हुआ। जर्मन कम्पनी को यूरोप के बाजार और एशियाई बाजार का एक भाग मिला जबकि अमरीकी महाद्वीप के बाजार पर अमरीकी कम्पनी का आधिपत्य हो गया।

प्रथम विश्व युद्ध के पूर्व विश्व तेल बाजार का विभाजन अमरीकी स्टैंडर्ड आयल और रायल डच शैल इंग्लिश डच कम्पनी के बीच हुआ।

अन्तर्राष्ट्रीय एकाधिकार हथियार उत्पादन सहित उद्योग की समस्त शाखाओ पर आधिपत्य कायम कर लेते हैं। ब्रिटन के विकरस आमस्टाग, फ्रास के दनीडर क्रसट ओर जमनी के ग्रुप एक लम्ब समय तक परस्पर सम्बद्ध रहे हैं। इन फर्मों ने विश्व बाजार का आपस म बटवारा कर लिया और ऊची कीमतें देने वालो को हथियार दिये। लडाई के दौरान भी इनके सम्बध नहीं टूट।

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद कई अन्तर्राज्यीय एकाधिकार बने। इनम यूरोपियन काल एण्ड स्टील कम्युनिटी (जिसके अधिकार मे फ्राम पश्चिम जमनी बेल्जियम हालैड, लक्जेमबग और इटली के लोहा तथा इस्पात उद्योग हैं) यूरोपियन इकानामिक कम्युनिटी (कामन मार्केट) और यूरोपियन फ्री ट्रेड एसोसिएशन (ई एफ टी ए) सबसे शक्तिशाली हैं जिसम सात देश—आस्ट्रिया, ब्रिटेन, डेनमाक, नार्वे, पुर्तगाल, स्विटजरलैण्ड और स्वीडन हैं।

पूजीवादी देशो के असम विकास के कारण अन्तर्राष्ट्रीय एकाधिकारो के पारस्परिक शक्ति सम्बध निरन्तर बदल रहे हैं। अन्तर्राष्ट्रीय एकाधिकार के बनने का मतलब न तो विश्व के बटवारे के लिए होने वाले सघष का अन्त है और न साम्राज्यवादी देशा म परस्पर शान्तिपूण सहयोग की ओर सक्रमण ही है, अपितु यह सघष के उग्रतर होन का सूचक है।

अत पूजी के निर्यात और अन्तर्राष्ट्रीय एकाधिकार के निर्माण के द्वारा वित्तीय पूजी के बडे बडे मालिक दुनिया को अपन बीच आर्थिक तौर पर बाट लेते हैं यानी अलग अलग प्रभाव क्षेत्र बना लेते हैं। विश्व के आर्थिक विभाजन के फल स्वरूप विश्व क क्षेत्रीय विभाजन के लिए सघष शुरू हो जाता ह।

विश्व का क्षेत्रीय विभाजन और उसके पुनर्विभाजन के लिए सघष

साम्राज्यवाद की ओर सक्रमण क काल म उपनिवेश तजी स हडपे जाते हैं। १८७६ और १९१४ के बीच बडी शक्तिया ने २५० लाख वग किलोमीटर औपनिवेशिक क्षेत्र (यानी साम्राज्यवादी देशा के क्षेत्र फल मे डेढ गुना अधिक) हडप लिया। ब्रिटेन न सबसे अधिक भूमि पर कब्जा कर लिया। १८७६ मे ब्रिटेन के उपनिवेशो का क्षेत्रफल २२५ लाख वग किलोमीटर था। वहा कुल जनसख्या २ ५१६ लाख थी। १९१४ तक ब्रिटेन उपनिवेशा के क्षेत्रफल म ११० लाख वग किलोमीटर और उनकी जनसख्या म १,४१६ लाख वृद्धि हुई। १८७६ म जमनी, अमरीका और जापान का कोई उपनिवेश नही था। फ्रास की भी करीब-करीब यही स्थिति थी। किन्तु १९१४ तक इन चार ताकतो ने १० करोड जनसख्या वाले ४१ लाख वग किलोमीटर क्षेत्रफल पर अपना अधिकार जमा लिया।

जनता का राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन काफी व्यापक हो गया और इस तरह साम्राज्यवादी औपनिवेशिक व्यवस्था का विघटन शुरू हुआ।

४ एकाधिकार मुनाफा—पूंजीवादी एकाधिकार की प्रेरक शक्ति

अपने हर चरण म पूजीवाद का बुनियादी आर्थिक नियम अधिशेष मूल्य का नियम है। यह नियम सम्पूर्ण पूजीवादी ढाचे के विकास की दिशा निर्धारित करता है। इससे स्पष्ट होता है कि अपने अधिशेष मूल्य की मात्रा को बढाने के लिए भुगतान न कर श्रम को हड़पने के लिए किस प्रकार पूजीपति कोशिशें करते हैं। पूजीवाद का बुनियादी नियम पूजीवाद के विभिन्न चरणो मे अलग अलग ढग से जाहिर होता है।

एकाधिकार मुनाफा

साम्राज्यवाद के आने से पहले मुक्त प्रतिद्वन्द्विता का बोलबाला था। उस समय अधिकतम मुनाफा प्राप्त करने की आकाक्षा और एक उद्योग से दूसरे उद्योग म पूजी का कमोबेश मुक्त प्रवाह एक साथ पाये जाते हैं। फलस्वरूप मुनाफे की एक औसत दर निश्चित हो जाती थी।

साम्राज्यवाद म मुक्त प्रतिद्वन्द्विता की जगह एकाधिकार का बोलबाला हो गया। उद्योग की जिन शाखाओ म एकाधिकार रहता है वहा ऐसी आर्थिक स्थितिया बनायी जाती हैं कि इजारेदार अधिकतम मुनाफा पा सकें। औसत मुनाफे के अतिरिक्त उच्च एकाधिकार मुनाफे के अतर्गत इजारेदारो को उत्पादन या विनिमय के क्षेत्र पर आधिपत्य के कारण अतिरिक्त मुनाफा भी मिलता है।

साम्राज्यवाद के अतर्गत एकाधिकार द्वारा उत्पन्न वस्तुए उत्पादन कीमतो पर नही बल्कि एकाधिकार कीमतो पर बेची जाती हैं। एकाधिकार कीमत म उत्पादन लागत और उच्च एकाधिकार मुनाफा भी शामिल रहता है।

प्रश्न उठता है पूजीपति किस प्रकार उच्च एकाधिकार मुनाफा प्राप्त करते हैं?

अन्य पूजीवादी मुनाफे की तरह ही उच्च एकाधिकार मुनाफे का स्रोत अधिक शोषण की प्रक्रिया म मजदूरो से हड़पा गया अधिशेष मूल्य है। उत्पादन व्यवस्था म विभिन्न प्रकार का अतिश्रमण विधिया अपनायी जाती है। इन अतिश्रमण विधियो द्वारा अधिशेष मूल्य की दर और मात्रा बढ़ायी जाती है। अतिश्रमण विधियो म व्यवसायगत विवेकीकरण और तीव्र श्रम मुख्य है।

एकाधिकार मुनाफे का स्रोत

मजदूर को मजूरी मिल जाने के बाद पूंजीपति का दूसरा हिस्सा (भूस्वामी, व्यापारी आदि) उसका और भी शोषण करता है।

कृषक वर्ग का शोषण भी उच्च एकाधिकार मुनाफे का स्रोत है। एकाधिकार तैयार वस्तुओं का अधिकांश किसानों के हाथों ऊंची कीमतों पर बेचते हैं और उनके कृषि उत्पादन के लिए बहुत कम कीमत देते हैं। जब किसान कर्ज से लद जाते हैं और उनके फार्म बेकार हो जाते हैं तब बिना कोई भुगतान किये एकाधिकार उनकी भूमि और जायदाद हड़प जाते हैं।

पूंजीवादी देशों में सर्वहारा वर्ग, मेहनतकश किसान और कम मजूरी पाने वाले लोग ही बड़े एकाधिकारों द्वारा समर्थित पूंजीवादी राज्य के शोषण का शिकार होते हैं। अतिरिक्त शोषण टैक्स, सरकारी ऋण और कागजी मुद्रा के अवमूल्यन द्वारा होता है। इस अमानवीय शोषण के कारण अधिकांश जनता की स्थिति तेजी से बदतर हो जाती है।

उपनिवेशों और अल्पविकसित देशों की जनता का शोषण कर एकाधिकार अपार धन प्राप्त कर लेते हैं। मजूरी इतनी नहीं होती कि मजदूर जीवन की अनिवार्य वस्तुएं भी प्राप्त कर सकें। मेहनतकश जनता कर के बोझ से दबी रहती है। कृषि और उद्योग दोनों में बलात् श्रम का इस्तेमाल किया जाता है। एकाधिकार मुनाफा पाने के लिए वस्तुओं को ऊंची कीमतों पर बेचा जाता है और कच्चे माल और खाद्य पदार्थ कम कीमतों पर खरीदे जाते हैं। इस विषम विनिमय के कारण अल्पविकसित देशों को हर साल २० अरब डालर (यानी समग्र राष्ट्रीय उत्पादन का छठा भाग) खोना पड़ता है।

युद्ध और फौजी अर्थव्यवस्था उच्च एकाधिकार मुनाफे की प्राप्ति सुनिश्चित करते हैं। युद्ध के समय मजदूरों का शोषण काफी बढ़ जाता है। उस समय औद्योगिक उद्यमों पर अनिवार्य श्रमिक अनुशासन लगाया जाता है। इसके अतिरिक्त करों और कीमतों में वृद्धि होती है। इन सबके द्वारा पूंजीपतियों को अपार मुनाफा प्राप्त होता है। उदाहरण के लिए द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान अमरीका के एकाधिकारों के मुनाफे सात गुना से भी अधिक बढ़ गये। शांति काल में अर्थव्यवस्था का सैन्यीकरण (उद्योग में लड़ाई के सामानों के निर्माण को अधिक स्थान देना) भी मुनाफे की मात्रा को बढ़ाना है। अमरीका में युद्ध का सामान बनाने वाले एकाधिकार गैर फौजी उद्योगों की तुलना में ५० प्रतिशत से १०० प्रतिशत अधिक मुनाफे की दर से मुनाफा प्राप्त करते हैं। युद्ध उत्पादन से इजारेदार अपार मुनाफा कमाते हैं, लेकिन दूसरी ओर मेहनतकश जनता की स्थिति बिगड़ती जाती है।

उपर्युक्त मुख्य विधियों से एकाधिकार पूंजी को उच्च एकाधिकार मुनाफा मिलता है। साम्राज्यवादी युग में पूंजीवाद का बुनियादी नियम एक आधार प्रदान करता है जिस पर आम जनता—मजदूर, किसान और उपनिवेशों एवं पराधीन देशों की जनता—एकाधिकार पूंजी के खिलाफ लड सकें और साम्राज्यवाद का शीघ्र पूरी तरह विनाश कर सके।

अध्याय ८

इतिहास मे साम्राज्यवाद का स्थान—विश्व पूजीवाद का आम सकट

१ इतिहास मे साम्राज्यवाद का स्थान

साम्राज्यवाद पूजीवाद की चरम अवस्था है। इतिहास मे साम्राज्यवाद का स्थान निश्चित करते हुए लेनिन ने बताया कि यह पूजीवाद की एक विशेष अवस्था है। इस अवस्था की तीन विशेषताए हैं १) पूजीवादी एकाधिकार, २) परजीवी या क्षयाग्रस्त पूजीवाद और ३) मरणासन्न पूजीवाद।

साम्राज्यवाद एकाधिकार पूजीवाद है

जैसा कि हम ऊपर कह चुके हैं आर्थिक दृष्टि से साम्राज्यवाद एकाधिकार पूजीवाद है। एकाधिकार-आधिपत्य उसकी मुख्य विशेषता है। यही विशेषता इतिहास मे साम्राज्यवाद का स्थान निश्चित करती है।

लेनिन ने अपनी रचना साम्राज्यवाद, और समाजवाद मे फूट मे बताया कि पूजीवादी एकाधिकार मुख्यतया चार तरह मे प्रकट होता है।

प्रथम जब उत्पादन का सकेन्द्रण काफी ऊचे स्तर पर पहुच गया तब एकाधिकार विकसित हुए। एकाधिकार के अन्तगत पूजीपतियो के एकाधिकार सगठन—कार्टेल सिंडिकेट, ट्रस्ट कम्बन आते हैं। पूजीवादी देशो के आर्थिक जीवन मे ये निर्णायक भूमिका अदा करते हैं। उत्पादन के सकेन्द्रण द्वारा एकाधिकारो का जन्म और पूजीवादी देशो के आर्थिक और राजनीतिक जीवन पर उनका आधिपत्य पूजीवादी विकास के नये चरण साम्राज्यवाद की विशेषताए हैं।

द्वितीय एकाधिकार बैंको के जरिए विकसित हुए। बैंक साधारण बिचौलिये से बढ़कर सर्वशक्तिमान वित्तीय केन्द्र हो गये। प्रत्येक विकसित पूजी-

वादी देश में पांच इस बड़े बैंकों ने औद्योगिक और बैंक पूंजी का एक पारस्परिक "व्यक्तिगत संघ" बना लिया है। ये संघ मुद्रा की एक बहुत बड़ी राशि पर नियंत्रण रखते हैं। वित्तीय पूंजी और वित्तीय अल्पतंत्र राष्ट्र के आर्थिक और राजनीतिक जीवन को अपने अधीन कर लेते हैं। लखपतियों और करोड़पतियों का एक छोटा सा समूह देश के सम्पूर्ण धन को खर्च करता है किन्तु वह अपने सिवा अन्य किसी के प्रति जिम्मेदार नहीं है।

तृतीय, एकाधिकारों ने कच्चे माल के स्रोत बाजार और पूंजी विनियोग के क्षेत्रों को जबरदस्ती हड़पना शुरू किया है। उनका बोलबाला विभिन्न देशों यहां तक कि सम्पूर्ण महादेश पर हो जाता है। इस प्रकार के एकाधिकार नियंत्रण से वित्तीय सेठों के एक लघु समूह का बोलबाला बढ़ता है और परिणामस्वरूप पूंजीवादी शिविर के भीतर अन्तर्विरोध भड़क उठते हैं।

चतुर्थ, एकाधिकार साम्राज्यवादी शक्तियों की औपनिवेशिक नीति के कारण विकसित हुए। भूखण्डों का मनमाना हड़पने ' के युग के स्थान पर उपनिवेशों की गुलामी के कारण उन पर एकाधिकार नियंत्रण कायम हो जाता है। पूंजी और वस्तुओं के निर्यात के द्वारा जनता को आर्थिक और राजनीतिक तौर पर गुलाम बनाया जाता है।

इस तरह एक ऐसी अवस्था आ जाती है जहां सिर्फ एक एकाधिकार सारे विशाल उद्यमों को इकाई के रूप में संगठित करता है लाखों मजदूरों को एक साथ लाता है बाजार और कच्चे माल के स्रोत पर सदा नियंत्रण रखता है तथा सभी उपलब्ध विशेषज्ञों और वैज्ञानिकों को अपनी नौकरी में रखता है। एकाधिकार उत्पादन के विशेषीकरण को अन्तिम सीमा तक विकसित करते हैं। उत्पादन के इस व्यापक विशेषीकरण का आधार उत्पादन के साधनों पर निजी स्वामित्व है। इसके द्वारा मुट्ठीभर पूंजीपतियों का स्वार्थ सिद्ध होता है। जनता के अपार समूह को उत्पादक शक्तियों के अपार विकास से कोई लाभ नहीं पहुंचता है बल्कि इसके विपरीत सिर्फ गरीबी और शोषण बढ़ता है।

फलस्वरूप एकाधिकारों का शासन पूंजीवाद के बुनियादी अन्तर्विरोध (उत्पादन के सामाजिक चरित्र और उत्पादन के फल की प्राप्ति के निजी पूंजीवादी तरीकों में अन्तर्विरोध) को उग्र कर देता है। साम्राज्यवाद की अवस्था में पहुंचकर पूंजीवाद मानव समाज के विकास को पीछे धकेलने वाली एक प्रतिक्रिया वाली ताकत बन जाता है।

लेनिन ने बताया कि एकाधिकार के कारण उत्पादन का अधिकतम बहुमुखी विशेषीकरण होता है। समाजीकरण के उच्च स्तर और उत्पादन के विकास का

सबूत यह तथ्य है कि समाज के समाजवादी परिवर्तन के लिए सभी भौतिक उपादान वर्तमान हैं।

साम्राज्यवाद के अंतर्गत समाज की उत्पादक शक्तियां ऐसे स्तर पर पहुंच गयी हैं कि श्रम फल प्राप्त करने के निजी पूंजीवादी तरीकों से उनका विरोध हो गया है। परिणामस्वरूप उत्पादक शक्तियां बहुत मंद गति से विकसित हो रही हैं। आर्थिक सकटों के समय व पीछे भी धकेल दी जाती हैं।

एकाधिकार साम्राज्यवाद के काल में मेहनतकश जनता के उत्पीडन को अन्तिम सीमा तक पहुंचा देता है। सर्वहारा वर्ग संघर्ष में शामिल होता है, ताकतवर और लडाई में पक्का हो जाता है। इस प्रकार शक्ति की बागडोर थामने में सर्वहारा वर्ग सक्षम हो जाता है।

लेनिन ने बताया कि पूंजीवाद के अन्तर्गत पूंजीवाद से एक उच्चतर सामाजिक-आर्थिक संरचना की ओर संक्रमण के युग के आसार विकसित और प्रत्यक्ष हो गये हैं। साम्राज्यवाद पूंजीवाद की चरम अवस्था है। यही तथ्य इतिहास में इसका स्थान निश्चित करता है।

साम्राज्यवाद परजीवी या क्षयोन्मुख पूंजीवाद है

साम्राज्यवाद न सिर्फ एकाधिकार पूंजीवाद है बल्कि परजीवी, क्षयोन्मुख पूंजीवाद भी है। साम्राज्यवाद का परजीवी चरित्र इस तथ्य से स्पष्ट हो जाता है कि पूंजीपतियों की बहुत बडी संख्या का उत्पादन प्रक्रिया से कोई सम्बंध नहीं है। वे आलस्यपूर्ण परजीवी जिन्दगी बिताते हैं। एकाधिकार के युग में पूंजीपति शेयरों, राजकीय ऋण बौण्डों और आय देने वाली अन्य प्रतिभूतियों को प्राप्त कर लेते हैं। औद्योगिक उद्यम का प्रबंध वेतनभोगी तकनीकी लोगों के हाथों में होता है।

पूंजी द्वारा उपलब्ध उत्पादक शक्तियों का पूरी तरह इस्तेमाल न करना, बेरोजगारों को काम न देना और उत्पादन क्षमताओं का पूर्ण उपयोग न कर पाना— ये सभी पूंजीवाद के क्षय के सूचक हैं। सबसे धनी पूंजीवादी देश, अमरीका बहुत हद तक निरन्तर बेरोजगारी और उत्पादन क्षमता के अर्द्ध उपयोग का देश है।

मेहनतकश जनता का अधिकांश पूंजीपति वर्ग की व्यय आवश्यकताओं को पूरा करने वाले अनुत्पादक कार्यों में और स्वयं उसका दमन करने के लिए बनाये गये राजकीय यंत्र में लगाया जा रहा है। इसमें एकाधिकार पूंजीवाद का निरन्तर क्षय और परजीवीपन स्पष्ट है।

पूंजीवाद का परजीवी चरित्र पूंजी के निर्यात, सैन्यीकरण के विकास और लडाई द्वारा भी जाहिर होता है। साधनों की बहुत बडी मात्रा भौतिक धन के उत्पादन के लिए नहीं वरन उत्पादक शक्तियों और खासकर समाज की मुख्य

त्पादक शक्ति मानवजाति के विनाश के लिए उपयोग में लायी जाती है। उदा रण के लिए प्रथम विश्वयुद्ध में १ करोड़ लोग मारे गये और २ करोड़ लोग जख्मी ए। लाखों लोग भुखमरी और महामारी के शिकार हुए। द्वितीय विश्वयुद्ध में रीब ५ करोड़ लोग मारे गये। इस प्रकार मानवजाति को साम्राज्यवादियों द्वारा पने अंतर्विरोधों को युद्ध द्वारा हल करने की कोशिश के लिए कीमत चुकानी ड़ी।

साम्राज्यवादी चरण में पूंजीवाद का क्षय अवश्यम्भावी हो जाता है ।कि स्वयं एकाधिकार (जिस हद तक वे कृत्रिम रूप से ऊंची कीमतें रखकर धिक मुनाफे की राशि की गारंटी कर लेते हैं) उत्पादन टेक्नालाजी को उन्नत रने के प्रोत्साहन को कम कर देते हैं। ऐसे कई उदाहरण हैं जिनसे पता चलता कि एकाधिकार संगठन नये आविष्कारों को इस्तेमाल करने के लिए नहीं बल्कि रों को इस्तेमाल न करने देने के लिए खरीदते हैं।

अभी मानवजाति ने वैज्ञानिक और तकनीकी क्रांति के युग में प्रवेश ही या है। इस युग का प्रारम्भ आणविक इंजीनियरिंग अंतरिक्ष अभियान रसायन- स्त्र में तीव्र प्रगति स्वचालित उत्पादन प्रक्रिया और कई प्रमुख वैज्ञानिक एवं नीकी उपलब्धियों से हुआ है। किन्तु उत्पादन के पूंजीवादी सम्बंधों के कारण ानिक और तकनीकी क्रांति की प्रगति असम्भव है। साम्राज्यवाद तकनीकी ति का उपयोग सैनिक कार्यों के लिए कर रहा है मानवीय प्रतिभा की उप धियों को मानवता के विरुद्ध उपयोग में ला रहा है।

किन्तु इसके बावजूद अधिक एकाधिकार मुनाफे की आकांक्षा पूंजीपतियों पुरानी टेक्नालाजी की अपेक्षा अधिक उत्पादक नयी टेक्नालाजी को काम में न के लिए प्रेरित करती है हालांकि राजकीय एकाधिकार पूंजीवाद के अन्तगत तकनीकों के व्यवहार से मजदूर वर्ग का अहित होता है। पूंजीवादी स्वयंचालन दूरों की रोटी छीन लेता है उससे बेरोजगारी बढ़ती है और मेहनतकश जनता ीवन यापन का स्तर नीचे गिरता है।

अतः साम्राज्यवाद की दो मुख्य विरोधी प्रवृत्तियां हैं एक तरफ तकनीकी ाम को प्रोत्साहित करना और दूसरी तरफ उसको रोकना।

पूंजीवाद का क्षय इस तथ्य से भी जाहिर होता है कि साम्राज्यवादी पूंजी- वर्ग अपने मुनाफे का एक भाग दस मजदूरों की ऊपरी श्रेणी (तथाकथित र अभिजात श्रेणी) को अलग से देता है। पूंजीपति वर्ग के समर्थन से श्रमिक जात श्रेणी ट्रेड यूनियनों और अन्य मजदूर संगठनों में ऊंची जगह प्राप्त करने ए कोशिश करती है। छोटे पूंजीपतियों सहित ये तत्व मजदूर आंदोलन के गम्भीर खतरा हैं।

श्रमिक अभिजात श्रेणी के माध्यम से पूंजीपति वर्ग पूंजीवाद को "सुधारने" और वर्ग शान्ति" स्थापित करने के मार्ग की वकालत करता है और इस तरह मजदूरों के दिमाग में जहर भरने के लिए प्रयत्न करता है। श्रमिक अभिजात श्रेणी मजदूर वर्ग में फूट डालकर पूंजीवाद के खिलाफ मजदूरों की शक्तियों के संगठन के काम को कठिन बना देती है।

गृह और परराष्ट्र नीतियों में पूंजीवादी जनवाद से राजनीतिक प्रतिक्रिया की ओर मोड़ आना साम्राज्यवादी युग की एक विशेषता है।

कम्युनिस्ट और मजदूर विरोधी कानून कम्युनिस्ट पार्टियों पर प्रतिबन्ध, कम्युनिस्टों और अन्य प्रगतिशील मजदूरों की बहुत बड़ी संख्या में बर्खास्तगी, कारखानों की काली सूची में नाम लिखना कार्यालयों में काम करने वालों की वफादारी की जांच, जनतान्त्रिक प्रेस का पुलिस द्वारा दमन हड़तालों को कुचलने के लिए फौज का इस्तेमाल—ये सब साम्राज्यवादियों द्वारा अपना आधिपत्य बनाये रखने के आम तरीके हैं। एकाधिकार पूंजी की परजीविता और क्षय के मूल बुनियादी तत्व हैं।

जिन देशों में पूंजीवाद का काफी विकास हो चुका है वहां पूंजीवाद का परजीवीपन और निरन्तर क्षय स्पष्ट नजर आता है। एक समय ऐसा था जब ब्रिटेन सबसे अधिक विकसित पूंजीवादी देश समझा जाता था। किन्तु उसके बाद सबसे अधिक विकसित पूंजीवादी देशों में अमरीका शामिल हुआ। अमरीकी पूंजीवाद का विकास स्पष्ट रूप से संकेत करता है कि पूंजीवादी जगत में अमरीका निरन्तर क्षय और परजीवीपन का केन्द्र हो गया है।

लेनिन ने बताया कि साम्राज्यवाद मरणासन्न या ठूठ पूंजीवाद है। इसका अर्थ है कि साम्राज्यवाद स्वभावतः नश्वर है।

साम्राज्यवाद मरणासन्न (ठूठ) पूंजीवाद है साम्राज्यवाद पूंजीवाद के अंतर्विरोधों को बहुत उग्र कर देता है। उसके बाद ही सर्वहारा क्रांति की शुरुआत होती है।

मुख्य अंतर्विरोध पूंजी और श्रम के बीच रहता है। एकाधिकार पूंजीवाद के काल में मेहनतकश जनता का अभूतपूर्व पैमाने पर शोषण होता है।

शोषण के पुराने तरीकों के पूरक के रूप में नये तरीके अपनाये जाते हैं। बड़े पूंजीपतियों की एकाधिकार स्थिति श्रम की अभूतपूर्व तीव्रता बेरोजगारों की विशाल स्थायी फौज के कारण श्रम शक्ति को कम एकाधिकार कीमत पर खरीद उपभोक्ता वस्तुओं की ऊंची एकाधिकार कीमतों द्वारा मेहनतकश जनता की लूट, कर लगाने इत्यादि के लिए अवसर देती है। साम्राज्यवाद के अन्तर्गत तीव्र गति से बढ़ा शोषण मजदूरों की वास्तविक स्थिति में गिरावट और सर्वहारा वर्ग का बढ़ना

हुआ उत्पीडन मजदूर वर्ग और पूंजीपति वर्ग में संघर्ष को तीव्र कर देता है। संघर्ष के पुराने तरीके अन्ततोगत्वा अपर्याप्त हो जाते हैं और आर्थिक तथा सैद्धान्तिक मोर्चों पर अपना संघर्ष जारी रखते हुए मजदूर वर्ग दृढ़ प्रतिज्ञ होकर क्रान्तिकारी राजनीतिक संघर्ष की ओर उन्मुख होना है।

इस प्रकार साम्राज्यवाद मजदूर वर्ग को समाजवादी क्रान्ति की देहरी पर लाकर खड़ा कर देता है।

साम्राज्यवाद की अवस्था में प्रभाव क्षेत्र बढ़ाने की कोशिशों के चलते साम्राज्यवादी शक्तियों के पारस्परिक अन्तर्विरोध तीव्र हो जाते हैं। पूंजीपतियों का प्रत्येक समूह बाजार कच्चे माल के स्रोत, पूंजी विनियोग के क्षेत्र आदि को हड़पने और उन पर अपना कब्जा जमाये रखने के लिए जी-जान से कोशिश करता है। प्रभाव क्षेत्र हथियाने के लिए पूंजीपतियों के पारस्परिक आर्थिक संघर्ष को उनके राज्यों का समर्थन प्राप्त होता है। परिणामस्वरूप प्रभाव क्षेत्रों पर कब्जा जमाने के लिए पूंजीपतियों के बीच भयंकर सैन्य संघर्ष होते हैं। इस कारण साम्राज्यवाद कमजोर हो जाता है उसकी नींवें हिल जाती है।

साम्राज्यवाद के अन्तर्गत खासकर उसके वर्तमान चरण में एक ओर उपनिवेशों और पराधीन देशों और दूसरी ओर साम्राज्यवादी शक्तियों का पारस्परिक अन्तर्विरोध भड़क उठता है। साम्राज्यवादी शक्तियां अर्द्धविकसित देशों की जनता को लूटती हैं और उनका निर्दयतापूर्वक शोषण करती हैं। इन देशों में पूंजीवाद का विकास और उत्तरोत्तर बढ़ता हुआ साम्राज्यवादी उत्पीडन वहां की जनता को अपनी मुक्ति के लिए संघर्ष करने को बाध्य कर देते हैं।

समाजवाद के उदय और उसके सुदृढ़ीकरण ने उत्पीडित कौमों की मुक्ति के लिए एक नये युग की शुरुआत की है। राष्ट्रीय मुक्ति क्रान्तियों ने उपनिवेशवादियों को एक बड़ा धक्का पहुंचाया है। पिछले २० वर्षों में ६० से भी अधिक स्वतन्त्र राज्य जिनमें करीब एक तिहाई मानवजाति रहती है औपनिवेशिक साम्राज्यों के अवशेषों पर खड़े हो गये हैं।

इन मुख्य अन्तर्विरोधों के कारण साम्राज्यवाद मरणासन्न पूंजीवाद में बदल जाता है किन्तु इसका यह कतई मतलब नहीं है कि पूंजीवाद अपने आप मर या ढह जायेगा। साम्राज्यवाद ने पूंजीवाद के सभी अन्तर्विरोधों को सामने लाकर समाजवादी क्रान्ति को नजदीक कर दिया है और उसे व्यावहारिक तौर पर अवश्यम्भावी बना दिया है।

सर्वप्रथम रूस में और बाद में यूरोप और एशिया के कई अन्य देशों में समाजवादी क्रान्ति की विजय ने इस लेनिनवादी अवधारणा की अच्छी तरह पुष्टि कर दी है कि साम्राज्यवाद मरणासन्न पूंजीवाद है।

राजकीय एकाधिकार पूँजीवाद के मुख्य लक्षण हैं उत्पादन का अत्यधिक समाजीकरण, निजी और राजकीय अधिकारों का परस्पर गुथना और राजकीय यन्त्र के साथ वित्तीय अल्पतन्त्र का आत्मसात्कार। एकाधिकार अधिक धन पाने तथा देश की अर्थव्यवस्था में हस्तक्षेप करने के लिए राजकीय यन्त्र के साथ आत्मसात हो गये हैं।

राजकीय एकाधिकार पूँजीवाद

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी का कार्यक्रम बतलाता है "राजकीय एकाधिकार पूँजीवाद एकाधिकारों और राज्य की ताकतों को एक यन्त्र में एकीकृत करना है जिसका उद्देश्य एकाधिकारों को समृद्ध करना, मजदूर वर्ग आन्दोलन और राष्ट्रीय मुक्ति संघर्ष का दमन करना, पूँजीवादी व्यवस्था की रक्षा करना और आक्रामक युद्ध छेड़ना है।"[१]

साम्राज्यवाद के दौरान पूँजीवादी देशों की सरकारों में शासक एकाधिकारों के विश्वस्त प्रतिनिधि या स्वयं एकाधिकारी रहते हैं। मन्त्रियों, फौजी अफसरों और कूटनीतिज्ञों को बहुधा प्रमुख एकाधिकारों में महत्वपूर्ण और लाभ वाली जगह दी जाती हैं।

उदाहरण के लिए, १९५५ के मध्य में अमरीका के राजकीय यन्त्र की अत्यन्त महत्वपूर्ण २७२ जगहों में से १५० पर बड़े पूँजीपति और ३० पर कारपोरेशन के वकील थे। सरकार में राकफेलर ग्रुप का प्रतिनिधित्व विदेश मन्त्री जान फास्टर डलेस कर रहे थे। डलेस एक कानूनी फर्म के प्रधान और १५ औद्योगिक और वित्तीय फर्मों के डायरेक्टर थे। बहुत लम्बे काल तक सरकार में डूपोंट ग्रुप का प्रतिनिधित्व जनरल मोटर्स के भूतपूर्व अध्यक्ष, रक्षा मन्त्री चार्ल्स विल्सन ने किया। जानसन प्रशासन में फोर्ड मोटर्स का प्रतिनिधित्व रक्षा मन्त्री मक्नमारा आदि कर रहे हैं। अन्य पूँजीवादी देशों में भी यही स्थिति है। स्पष्ट है कि राजकीय यन्त्र को बड़े एकाधिकारों ने अपने अधीन कर लिया है। राज्य एकाधिकारी वर्ग के मामलों की देखभाल करने वाली एक कमिटी बन गया है।

वर्तमान समय में राजकीय एकाधिकार के मुख्य रूप कौन-से हैं? राजकीय एकाधिकार विभिन्न प्रकार के राजकीय नियन्त्रण और देश के आर्थिक जीवन का नियन्त्रण करने वाली विनियमों, एकाधिकारों के हित में राजकीय सम्पत्ति के उपयोग, सरकार द्वारा सरकारी माँग के माध्यम से एकाधिकारों को दी गयी सहायता, राज्य के जरिए पूँजी निर्यात के रूप में देखे जाते हैं। इन सभी का लक्ष्य वित्तीय अल्पतन्त्र को समृद्ध बनाना है।

---

[१] "कम्युनिज्म का मार्ग" (सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की २२वीं कांग्रेस की दस्तावेजें) मास्को, १९६१, पृष्ठ ४७१।

समृद्धि पाने का एक महत्वपूर्ण जरिया बजट के साधना द्वारा राजकीय उद्यमो को बनाना और निजी उद्यमो का राष्ट्रीयकरण कर उन्हे राजकीय सम्पत्ति बना देना है। निजी एकाधिकारो को सरकारी निर्माण योजनाओ के लिए अनुकूल शर्तों पर ठेके दिये जाते हैं। पूरा होने पर ये उद्यम बहुत कम भाडे पर शोषण के लिए उन्हे दे दिये जाते हैं या उनके हाथ कम कीमत पर बेच दिये जाते हैं। साम्राज्यवादी सरकार निजी उद्यमो का राष्ट्रीयकरण पूजीपतियो के हित म ही करती है। राष्ट्रीयकरण किये जाने वाले उद्यमो के स्वामियो को उद्यमो के मूल्य से अधिक मुआवजे की रकम दी जाती है। राष्ट्रीयकरण के बाद इन उद्यमो का सचालन एकाधिकार करते हैं। इस प्रकार दोनो स्थितियो म राजकीय उद्यमो का सचालन पूजीपति वग के हित मे होता है।

राजकीय एकाधिकार पूजीवाद मजदूर वग के शोषण म वद्धि करता है और सम्पूण मेहनतकश जनता को जीवन-यापन का निम्न स्तर प्रदान करता है। राजकीय यत्र द्वारा समर्थित एकाधिकार के कारण सवहारा वग के शोषण की दर बढती है। वे सम्पूण मेहनतकश जनता को दिन प्रतिदिन ऊचे कर तथा ऊची कीमतो द्वारा चूसते हैं। इस प्रकार श्रम और पूजी के पारस्परिक अन्तर्विरोध और सघप उग्र रूप धारण कर लेते हैं।

पूजीवाद के अन्तगत राजकीय एकाधिकार पूजीवाद उत्पादन के समाजीकरण की चरम अवस्था है। यह समाजवाद के निर्माण के लिए पूण भौतिक तयारी की अवस्था है। वास्तव म यह समाजवाद की देहरी है किन्तु समाजवाद की ओर सक्रमण के लिए मजदूर वग के हाथो मे सत्ता का हस्तातरण अनिवाय है।

राजकीय एकाधिकार पूजीवाद विभिन्न काल देश और अथ व्यवस्था की शाखा म असम रूप से विकसित होता है। विश्वयुद्ध और आर्थिक सकट सन्यवाद और राजनीतिक उथल पुथल एकाधिकार पूजीवाद को राजकीय एकाधिकार पूजीवाद के रूप म तेजी से विकसित करते है।

दक्षिणपथी समाजवादी और सशोधनवादी यह दिखलाने की कोशिश करते हैं कि राजकीय एकाधिकार पूजीवाद का चरित्र बदल गया है। उनका दावा है कि पूजीवादी देशो की अथव्यवस्था म राज्य निर्णायक शक्ति बन गया है वह सम्पूण समाज के हित मे अथव्यवस्था के नियोजित सचालन की गारटी दे सकता है इत्यादि। जीवन के अनुभव बतलाते हैं कि यह सवथा गलत है।

राजकीय एकाधिकार पूजीवाद साम्राज्यवाद के स्वभाव को कतई नही बदल सकता। वह सामाजिक उत्पादन व्यवस्था म बुनियादी वर्गों की भूमिका म भी कोई परिवतन नही लाता है बल्कि इसके विपरीत पूजी और श्रम तथा बडे सम्पन्न राष्ट्रो और एकाधिकारो के बीच की खाई को चौडी कर देता है। पूजीवादी

अर्थव्यवस्था के राजकीय नियमन द्वारा प्रतिद्वंद्विता, उत्पादन और वितरण की अराजकता खतम नहीं हो सकती और न समाज के पैमाने पर अर्थव्यवस्था के नियोजित विकास की गारंटी ही सम्भव है क्योंकि उत्पादन का आधार हर हालत में पूंजीवादी स्वामित्व और श्रम का शोषण रहता है।

वर्तमान पूंजीवादी अर्थव्यवस्था के विकास की प्रवृत्ति नियोजित, संकट मुक्त पूंजीवाद सम्बन्धी पूंजीवादी सिद्धांतों के विरुद्ध है। राजकीय पूंजीवाद पूंजीवादी व्यवस्था को ताकतवर बनाने के बदले पूंजीवाद के अन्तर्विरोधों को उग्र करता और उसके पाय को हिला देता है।

कई अर्द्धविकसित देशों—जिन्होंने आर्थिक स्वतन्त्रता का मार्ग अपनाया है (भारत, इंडोनेशिया, इत्यादि)—में राज्य कतिपय आर्थिक कदमों के लिए जिम्मेदार है और भारी उद्योगों का विस्तार कर रहा है, किन्तु वहां राजकीय एकाधिकार पूंजीवाद का नहीं बल्कि राजकीय पूंजीवाद का विकास हो रहा है। आर्थिक दृष्टि से अर्द्धविकसित देशों में यह एक प्रगतिशील कदम है। इसके द्वारा अर्थव्यवस्था के विकास में मदद मिलती है और अर्थव्यवस्था साम्राज्यवादियों के चंगुल से स्वतंत्र होती है।

असम आर्थिक और राजनीतिक विकास का नियम

सम्पूर्ण पूंजीवादी युग की यह एक खास विशेषता है कि विभिन्न उद्यमों, उद्योगों और देशों का असम विकास होता है। असम विकास प्रतिद्वंद्विता और पूंजीवादी उत्पादन की अराजकता के कारण होता है। एकाधिकार के उदय के पहले पूंजीवाद अपेक्षाकृत समरूप से विकसित होने में समर्थ था। एक लम्बे काल में कुछ देश अन्य देशों से आगे बढ़ गये। पूंजीवाद के असम विकास का स्वरूप भी साम्राज्यवाद के आने के साथ बदला। अलग-अलग देश अबाध गति से विकसित होने लगे। टेक्नालाजी के अभूतपूर्व विकास के कारण कुछ देश अपने प्रतिद्वंद्वियों से आगे निकल गये। आगे बढ़े देशों ने कच्चे माल की अधिकतम सम्भव मात्रा, नये बाजार और पूंजी विनियोग के क्षेत्रों को हथियाने की कोशिश की किन्तु ऐसा कोई मुक्त क्षेत्र नहीं था जिस पर कब्जा किया जाय, क्योंकि विश्व का विभाजन पूर्ण हो चुका था।

साम्राज्यवादी शक्तियों के पारस्परिक आर्थिक और फौजी शक्ति संतुलन में परिवर्तन होने के कारण टकराव शुरू हुआ। विभाजित विश्व के पुनर्विभाजन के लिए संघर्ष शुरू हुआ। शक्ति-संतुलन में परिवर्तन के कारण पूंजीवादी विश्व परस्पर विरोधी समूहों में बंट गया। साम्राज्यवादी शिविर के उग्र अन्तर्विरोधों के कारण साम्राज्यवादी परस्पर कमजोर हो गये। साम्राज्यवादी मोर्चे पर जहां कम-

जोर कडी थी और उन देशो म जहा मजदूर वग की विजय के लिए अत्यन्त अनुकूल परिस्थितिया मौजूद थी वहा साम्राज्यवाद का चटखना सम्भव हुआ।

साम्राज्यवादी युग मे पूजीवादी देशा क असम आर्थिक विकास के फल स्वरूप उनका असम राजनीतिक विकास हुआ। हर देश म वग अन्तर्विरोध समान स्तर पर नही थ। मजदूर वग की राजनीतिक चेतना और क्रान्तिकारी निश्चय तथा बहुसख्यक किसानो का अपन साथ एकजुट करने की क्षमता का भी असम विकास हुआ। स्पष्ट है कि विभिन्न देशो म सवहारा क्रान्ति की राजनीतिक स्थितिया असम रूप से परिपक्व हुइ।

साम्राज्यवाद क अन्तगत पूजीवादी देशो के असम आर्थिक और राज नीतिक विकास के नियम को प्रारम्भ बिन्दु क रूप मे लकर लनिन ने सवप्रथम सिफ एक या कई पूजीवादी देशो मे समाजवाद की विजय की सम्भावना और सभी देशो मे एक साथ समाजवाद की विजय की असम्भावना के सम्बध मे ऐति हासिक निष्कष निकाला। इसके अतिरिक्त उन्होने यह भी बताया कि समाजवादी क्रान्ति के लिए किसी भी देश को अवश्यम्भावी रूप से काफी विकसित पूजीवादी देश होना आवश्यक नही है।

एक देश म समाजवादी क्रान्ति की विजय विश्व समाजवादी क्रान्ति की शुरूआत थी।

माक्स और एगेल्स का जमाना पूजीवाद का पूव एकाधिकार काल था। उनका ख्याल था कि सवहारा क्रान्ति क विजयी होने के लिए जरूरी है कि वह एक ही समय म अधिकाश अत्यन्त विकसित देशो म हो। उस जमान म यह निष्कष बिल्कुल सही था। किन्तु साम्राज्यवाद के युग म सवहारा क्रान्ति एक देश म भी विजयी हो सकती है। इस सम्बध म पहल महायुद्ध के समय लेनिन ने कहा असमान आर्थिक और राजनीतिक विकास पूजीवाद का एक निरपक्ष नियम है। इसलिए समाजवाद का विजय सवप्रथम कई देशो म या सिफ एक देश म भी सम्भव है।[*]

लनिन के इन निष्कर्षों ने विभिन्न देशो क सवहारा वग के सामने एक क्रान्तिकारी सम्भावना रखी उनकी पहल करन की शक्ति को मुक्त किया और समाजवादी व्यवस्था की अवश्यम्भावी विजय म उनक विश्वास का दृढ किया। इस तथ्य स कि समाजवाद की विजय विभिन्न देशो म विभिन्न समय पर होगी एक विश्व समाजवादी अथव्यवस्था सगठित करने की आवश्यकता और समाजवादी तथा पूजीवादी व्यवस्थाओ क बीच स्थायी शान्तिपूण सहअस्तित्व की सम्भावना पैदा होती है।

---

* लनिन सग्रहीत रचनाए, खड २१ पृष्ठ ३४२।

महान अक्तूबर समाजवादी क्रान्ति की विजय ने समाजवादी क्रान्ति के लेनिनवादी सिद्धान्त की पुष्टि की। इस क्रान्ति को लेनिन के नेतृत्व में कम्युनिस्ट पार्टी ने सफल बनाया।

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद कई एशियाई और यूरोपीय देश सफल क्रान्ति कर साम्राज्यवादी व्यवस्था से अलग हो गये। ये देश अब समाजवाद का निर्माण कर रहे हैं। इस तथ्य से समाजवादी क्रान्ति के लेनिनवादी सिद्धान्त की और भी पुरजोर पुष्टि होती है।

२. विश्व पूंजीवाद का आम संकट

पूंजीवाद के आम संकट का मूल तत्व और उसके चरण

'हमारा युग, जिसका मुख्य तत्व महान अक्तूबर क्रान्ति से अनुप्रेरित पूंजीवाद से समाजवाद की ओर संक्रमण है, दो परस्पर विरोधी समाज व्यवस्थाओं के संघर्ष, समाजवादी और राष्ट्रीय मुक्ति क्रान्तियों, साम्राज्यवाद के विघटन और औपनिवेशिक व्यवस्था के उन्मूलन, अधिकाधिक जनगण के समाजवादी मार्ग की ओर संक्रमण और विश्व के पैमाने पर समाजवाद और कम्युनिज्म की विजय का युग है।'[१]
मास्को में हुए कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियों के सम्मेलन के कार्यक्रम में प्रतिपादित यह सिद्धान्त पूंजीवाद के आम संकट का मूल तत्व सामने लाता है।

१९१७ में रूस में महान अक्तूबर समाजवादी क्रान्ति की विजय पूंजीवाद के आम संकट की शुरुआत थी। पूंजीवाद अब विश्व की एकमात्र व्यवस्था नहीं रहा। दुनिया के छठे भाग में उत्पादन के साधनों के निजी स्वामित्व नहीं बल्कि समाजीकृत, सामाजिक स्वामित्व पर आधारित राज्य की स्थापना हुई। रूस में सर्वहारा क्रान्ति की विजय के साथ पूंजीवाद की समाप्ति और समाजवाद की विजय का युग शुरू हो गया। प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान लेनिन ने कहा था कि साम्राज्यवादी युग में समाजवाद विभिन्न देशों में एक साथ विजयी नहीं होगा। कालक्रम से एक के बाद एक देश में क्रान्ति होगी और वे विश्व पूंजीवादी व्यवस्था से अलग होते जायेंगे।

हम आर्थिक संकटों की चर्चा पहले कर चुके हैं। पूंजीवाद के अन्तर्गत आर्थिक संकट का मुख्य रूप अत्युत्पादन है। यह संकट आर्थिक क्षेत्र में आता है, किन्तु राजनीतिक जीवन पर भी इसका एक निश्चित प्रभाव पड़ता है। पूंजीवाद का आम संकट पूंजीवादी देशों के जीवन के सभी क्षेत्रों—आर्थिक और राजनीतिक—को प्रभावित करता है। यह पूरी विश्व पूंजीवादी व्यवस्था का चतुर्दिक संकट है। मरणासन्न पूंजीवाद और नवजात समाजवाद का आपसी संघर्ष इस युग

[१] 'फ़ॉर लास्टिंग पीस', डेमोक्रेसी एण्ड सोशलिज्म', पृष्ठ ३८।

सभी अन्तर्विरोधों का केन्द्र बिन्दु हो गया था। रूस में सर्वहारा क्रांति की विजय के परिणामस्वरूप विश्व दो व्यवस्थाओं—पूंजीवादी और समाजवादी—में बंट गया।

अल्पकाल में ही समाजवादी आर्थिक व्यवस्था ने पूंजीवाद की तुलना में अपनी श्रेष्ठता दिखा दी। १९३७ तक औद्योगिक उत्पादन की मात्रा की दृष्टि से सोवियत संघ ने यूरोप में पहला और विश्व में दूसरा स्थान प्राप्त कर लिया था।

द्वितीय विश्वयुद्ध की तैयारी अन्दरूनी प्रतिक्रिया की शक्तियों ने की। इस लड़ाई की शुरुआत फासिस्ट राज्यों—जर्मनी, इटली और जापान—के समूह ने की। युद्ध का अन्त फासिस्ट आक्रमणकारियों की पराजय में हुआ। उनको पराजित करने में सोवियत संघ ने निर्णायक भूमिका अदा की। इसके फलस्वरूप समस्त विश्व में क्रान्तिकारी और राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलनों का अभूतपूर्व विकास हुआ।

यूरोप और एशिया में कई देश पूंजीवादी व्यवस्था से अलग हो गये और परिणामस्वरूप अब १ अरब (विश्व की एक तिहाई जनसंख्या) से भी अधिक लोग पूंजीवादी जुए से मुक्त होकर सफलतापूर्वक समाजवाद का निर्माण कर रहे हैं। इस तथ्य ने समाजवाद और पूंजीवाद के पारस्परिक शक्ति संतुलन में काफी परिवर्तन कर दिया है। यह शक्ति संतुलन समाजवाद के अनुकूल और पूंजीवाद के प्रतिकूल है।

इस युद्ध ने पूंजीवाद के आम संकट को और भी गहरा बना दिया। तब दूसरा चरण शुरू हुआ। एक देश के चौखटे से निकलकर समाजवाद ने एक विश्व व्यवस्था का रूप ले लिया। आज विश्व समाजवादी व्यवस्था के देश भूमंडल के एक-चौथाई में फैले हैं।

थोड़े समय में ही विश्व समाजवादी व्यवस्था ने पूंजीवाद की तुलना में अपनी श्रेष्ठता दिखा दी है। समाजवादी देशों की अर्थव्यवस्था पूंजीवादी अर्थव्यवस्था की तुलना में बड़ी तेजी से विकसित होती है। १९३७ की अपेक्षा १९६२ में समाजवादी देशों ने अपने औद्योगिक उत्पादन की मात्रा ■ गुनी बढ़ायी, जबकि पूंजीवादी देशों का औद्योगिक उत्पादन इस दौरान ढाई गुना ही बढ़ा।

पूंजीवाद के आम संकट का नया तीसरा चरण प्रारम्भ हो गया है। इस चरण की मुख्य विशेषता यह है कि विश्व समाजवादी व्यवस्था मानव समाज के विकास में निर्णायक शक्ति होती जा रही है। फलस्वरूप दो विश्व व्यवस्थाओं में गम्भीर प्रतिद्वंद्विता में समाजवाद की स्थिति निरंतर मजबूत होती जा रही है जबकि साम्राज्यवाद दिनोंदिन कमजोर होता जा रहा है।

अक्तूबर क्रान्ति से प्रभावित होकर उपनिवेशों के जनगण का राष्ट्रीय मुक्ति संघर्ष काफी मजबूत हो गया और साम्राज्यवाद की उपनिवेश व्यवस्था का संकट

साम्राज्यवादी उपनिवेश व्यवस्था मे सकट और उसका विघटन

शुरू हुआ। यह सकट साम्राज्यवादी शक्तियो और उपनिवेशो एव पराधीन देशो के अतर्विरोधो के गम्भीर होने का सूचक था। राष्ट्रीय मुक्ति सघष के परिणाम स्वरूप उपनिवेशो और पराधीन देशो ने अपने आपको साम्राज्यवादी जुए से मुक्त कर लिया। राष्टीय मुक्ति की शक्तिया का जम हुआ और वे अपने आपको विकसित करने लगी। सवहारा वग—आधुनिक समाज का सबसे क्रातिकारी वग—की सख्या बढने लगी। सवहारा वग ने औपनिवेशिक आबादी के एक बहुत बडे हिस्से—कृपक वग को साम्राज्यवाद विरोधी सघष म अपने साथ शामिल किया। राष्टीय पूजीपति वग भी (जिसके हितो और विदेशी एकाधिकारो के शासन मे परस्पर विरोध था) बढने लगा।

पहले महायुद्ध के दौरान बडे साम्राज्यवादी देश उपनिवेशो को तयार माल देने मे असमथ थे, क्योकि उद्योगो मे लडाई के लिए सामाना का उत्पादन हो रहा था। इस वजह से उपनिवेशो मे उद्योगो, विशेषकर कपडा उद्योग का तेजी से विकास हुआ। पुराने कारखानो का विस्तार किया गया और नये कारखानो ने जन्म लिया। उपनिवशो के आर्थिक विकास तथा अक्तूबर क्राति के प्रभाव के कारण राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन ने महायुद्ध के पहले की अपेक्षा अधिक विशाल रूप धारण कर लिया। लेनिन ने लिखा "यहा मे कह सकते हैं कि पहली साम्राज्यवादी लडाई के फलस्वरूप पूर्वी देश निश्चित रूप से क्रातिकारी आन्दोलन म—विश्व क्रातिकारी आन्दोलन के भवर म खिच आये हैं।"[1]

प्रथम विश्वयुद्ध के बाद शायद ही ऐसा कोई उपनिवश या पराधीन राष्ट्र था जहा साम्राज्यवाद के खिलाफ कमोबश गम्भीर विद्रोह नही हुए। राष्ट्राय मुक्ति आन्दोलन ने खासकर चीन म व्यापक रूप धारण कर लिया। वहा साम्राज्यवाद-सामन्तवाद विरोधी एक जन क्राति १६२४ म हुई। आगे चलकर उसने क्रातिकारी युद्धा की एक शृखला का रूप धारण कर लिया। इस क्राति ने कम्युनिस्ट पार्टी के नेतत्व म जन मुक्ति फौज का जम दिया और देश के कुछ हिस्सा म सोवियत सरकार बन गयी। भारत इडोनेशिया और अन्य देशा म भी राष्ट्रीय मुक्ति के लिए एक प्रबल आन्दोलन चल रहा था। साम्राज्यवाद के खिलाफ उत्पीडित जनगण के इस राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन म मजदूर वग जिसने लाखा किसाना पूजीपति वग व जनवादी प्रतिनिधियो इत्यादि से गठबधन किया था अग्रणी शक्ति था।

---

१ लेनिन, "सकलित रचनाए" खण्ड ३, पृष्ठ ८४०।

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद कई उपनिवेशों और पराधीन देशों के जनगण ने मुक्ति प्राप्त कर स्वतंत्र विकास करना शुरू कर दिया। इस प्रकार साम्राज्यवाद की उपनिवेश व्यवस्था का विघटन शुरू हो गया। चीनी, कोरियाई और वियतनामी जनगण के वीरतापूर्ण संघर्ष ने विदेशी साम्राज्यवादियों तथा शोषक वर्गों के आधिपत्य को उखाड़ फेंका और जनता के जनवादी राज्यों—चीन लोक जनतंत्र, कोरिया लोक जनवादी जनतंत्र और वियतनाम जनवादी जनतंत्र—की स्थापना की।

राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन के सामने मजबूर होकर ब्रिटिश साम्राज्यवाद को १९४७ में भारत को एक स्वतंत्र राज्य के रूप में मानना पड़ा। भारत के साथ ही अन्य देशों—इंडोनेशिया, बर्मा, श्रीलंका ने स्वतंत्र विकास के मार्ग पर प्रयाण किया। युद्ध के बाद पूर्वी अरब और अफ्रीका के कई राज्यों ने राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त कर ली। युद्ध के बाद के वर्षों में १ अरब ५० करोड़ से भी अधिक लोगों ने औपनिवेशिक और अर्द्ध औपनिवेशिक पराधीनता के चंगुल से मुक्ति पायी। अमरीका से सिर्फ ९० मील की दूरी पर स्थित और अमरीका के एकाधिकारों के आधिपत्य में फंसे एक छोटे से देश—क्यूबा ने समाजवादी क्रांति का मार्ग अपनाया। १९३९ में ६९.२ प्रतिशत विश्व जनसंख्या औपनिवेशिक जनसंख्या थी जो १९६४ में घटकर १.३ प्रतिशत हो गयी। स्पष्ट है कि शर्मनाक उपनिवेश व्यवस्था ढह चुकी है।

नवस्वतंत्र राष्ट्रों के सम्मुख एक बुनियादी सवाल यह है कि वे विकास के किस मार्ग—पूंजीवादी या गैर पूंजीवादी—को चुनें।

पूंजीवाद इन राष्ट्रों को भला क्या दे सकता है?

पूंजीवाद जनता की मुसीबतों का मार्ग है। यह न तो द्रुत आर्थिक विकास की गारंटी करता है और न दरिद्रता का ही उन्मूलन करता है। ग्रामीण क्षेत्रों का पूंजीवादी विकास कृषक के लिए बर्बादी लाता है। मेहनतकश जनता के भाग्य में पूंजीपतियों की समृद्धि के लिए कठिन परिश्रम और बेरोजगारी लिखी होती है। बड़ी पूंजी के साथ प्रतिद्वंद्विता में छोटे पूंजीपति पिस जाते हैं। संस्कृति और शिक्षा आम जनता की सामर्थ्य के बाहर होती हैं। बुद्धिजीवियों को अपने ज्ञान का सौदा करना पड़ता है।

समाजवाद इन लोगों को क्या दे सकता है?

समाजवाद जनता की स्वतंत्रता और खुशहाली का मार्ग है। समाजवाद बड़ी तेजी से अर्थव्यवस्था और संस्कृति को समुन्नत करता है। एक पीढ़ी के जीवनकाल में ही एक पिछड़े हुए मुल्क को औद्योगिक मुल्क के रूप में बदल देता है। मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण पर आधारित सामाजिक विषमता को खत्म कर

देता है। बेरोजगारी पूर्णतया समाप्त हो जाती है। समाजवाद सभी किसानों को जमीन देता है उनको अपने फार्म विकसित करने के लिए सहायता देता है स्वैच्छिक आधार पर उन्हें सहकारी समितियों में संगठित करता है तथा उन्हें आधुनिक कृषि टैक्नालाजी और कृषि कर्ज मुहैया करता है। समाजवाद मजदूर वर्ग और समस्त मेहनतकश जनता को जीवन यापन का ऊंचा भौतिक और सांस्कृतिक स्तर प्रदान करता है।

जनगण अपने पसन्द का मार्ग अपने आप चुन लेंगे। विश्व के रंगमंच पर शक्तियों के वर्तमान संतुलन और विश्व समाजवादी व्यवस्था से जोरदार समर्थन पाने की वास्तविक सम्भावना के कारण भूतपूर्व उपनिवेशों के जनगण अपने हितों को ध्यान में रखकर निर्णय करने के लिए स्वतंत्र हैं। उनकी पसन्द वर्ग शक्तियों के उनके सम्बन्ध पर निर्भर है। मजदूर वर्ग समस्त मेहनतकश जनता और आम जनवादी आन्दोलन गैर पूंजीवादी मार्ग द्वारा प्रगति को निश्चित बना देते हैं। यह इन राष्ट्रों के हित में है।

उपनिवेशवाद को उत्पीड़ित जनता के प्रबल मुक्ति आन्दोलन से बड़ा धक्का लगा है, किन्तु वह अभी मरा नहीं है।

आज उपनिवेशवादी न सिर्फ खुला हथियारबन्द संघर्ष करते हैं, बल्कि नव स्वतंत्र देशों में छिपे तौर पर घुसपैठ करने की कोशिश करते हैं। उनका उद्देश्य इन देशों को आर्थिक और राजनीतिक तौर पर साम्राज्यवादी शक्तियों पर अवलम्बित रखना है।

आज अमरीका उपनिवेशवाद का मुख्य गढ़ है। अमरीका के नेतृत्व में साम्राज्यवादी भूतपूर्व उपनिवेशों के शोषण के नये रूपों और तरीकों का ताबड़तोड़ प्रयोग करते हैं। लटिन अमरीका एशिया और अफ्रीका में आर्थिक नियंत्रण और राजनीतिक प्रभाव को कायम रखने के लिए एकाधिकार जी जान से कोशिशें कर रहे हैं। वे नवस्वतंत्र देशों की अर्थव्यवस्था में अपना पुराना स्थान बनाए रखना तथा आर्थिक 'सहायता' का नकाब ओढ़कर नये स्थानों पर कब्जा जमाना चाहते हैं। वे इन देशों को फौजी संधियों में घसीटना उन पर फौजी तानाशाही लादना और उनके प्रदेश पर फौजी अड्डे कायम करना चाहते हैं।

उपनिवेश व्यवस्था का विघटन अवश्यम्भावी रूप से पूंजीवादी देशों की आर्थिक और राजनीतिक कठिनाइयां बढ़ाता है और सम्पूर्ण साम्राज्यवाद की जड़ें हिला देता है।

उपनिवेशवाद का पूरी तरह ढहना अवश्यम्भावी है। राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन के उदय के फलस्वरूप औपनिवेशिक गुलामी का विघटन ऐतिहासिक महत्व की दृष्टि से विश्व समाजवादी व्यवस्था की स्थापना के बाद दूसरी बड़ी घटना है।

पूंजीवाद के आम सकट की एक महत्वपूर्ण बात बाजार और पूंजी विनियोग के क्षेत्र की दिनों दिन गम्भीर होती हुई समस्या है। इसका कारण वस्तुओं के उत्पादन और उनकी बिक्री की सम्भावना के बीच निरतर बढती हुई खाई है। पूंजीवाद के आम सकट के प्रथम चरण म रूस जसे देश के पूंजीवादी व्यवस्था से अलग हो जाने के कारण पूंजीवादी देशो के बीच बाजार और पूंजी विनियोग के क्षेत्र के लिए सघष तेज हो गया। पूंजीवाद के आम सकट के दूसरे चरण म विश्व समाजवादी व्यवस्था के उदय के कारण पूंजीवाद को और भी बडे बाजारो और पूंजी विनियोग के क्षेत्रो को खोना पडा।

बाजार की समस्या का गम्भीर होना—मतत बेरोजगारी और अल्प-उत्पादन की अवस्था

विश्व समाजवादी अथव्यवस्था की स्थापना न विश्व समाजवादी बाजार को जन्म दिया। अब दो बाजार—समाजवादी देशो का बाजार और पूंजीवादी देशो का बाजार बन गये हैं।

पूंजीवादी शोषण का सकुचित क्षेत्र साम्राज्यवाद की औपनिवेशिक व्यवस्था का वतमान विघटन मेहनतकश जनता की बदतर स्थिति और अथव्यवस्था का सैन्यीकरण विश्व पूंजीवादी बाजार में अन्तर्विरोध को गम्भीर बना रहे हैं।

नव विकासशील देशों की प्रतिद्वन्द्विता बाजार के लिए होने वाले तीव्र सघष का एक दूसरा कारण है। ये देश अपनी वस्तुओं के लिए औद्योगिक दृष्टि से विकसित देशों के साथ उत्तरोत्तर प्रतिद्वन्द्विता कर रहे हैं। हल्के उद्योगो में बनी वस्तुओं के लिए यह विशेष रूप से सही है।

बाजार और पूंजी विनियोग के क्षेत्र के लिए सघष के कारण पूंजीवादी एकाधिकार सगठनो और साम्राज्यवादी राज्यो के भीतर टकराव पैदा हो जाते हैं।

औद्योगिक उद्यम की कायक्षमता में निरतर ह्रास और स्थायी आम बेरोजगारी बाजार तथा पूंजी विनियोग के क्षेत्रो की उग्र समस्याओ से घनिष्ठ रूप में जुडी हुई है।

पूंजीवादी विकास के पूव एकाधिकार काल में सिफ आर्थिक सकटों के दौरान ही औद्योगिक उद्यम बडे पैमाने पर अपनी कायक्षमता का पूर्ण उपयोग नहीं कर पाते थे। किन्तु अब पूंजीवाद के आम सकट काल में सयत्रों की पूरी कायक्षमता का निरन्तर उपयोग नहीं हो पाता। १९२५-२९ के उत्कष काल में अमरीका के प्रोसेसिंग उद्योग की उत्पादन क्षमता का सिफ ८० प्रतिशत और १९३०-३४ में सिफ ६० प्रतिशत काम में लाया गया। १९६४ में अमरीका अपने इस्पात उद्योग की उत्पादन क्षमता का सिफ ८० प्रतिशत इस्तेमाल कर रहा था।

औद्योगिक उद्यमो द्वारा क्षमता के अपूर्ण उपयोग के कारण पूजीवाद के आम सकट काल म बेरोजगारी का स्वभाव भी बदला है। पहले आर्थिक सकट के दौरान बेरोजगारो की फौज बढती थी और पुनर्प्राप्ति या उत्कर्ष के काल म सबको रोजगार मिल जाता था, किन्तु वतमान समय म आम बेरोजगारो की स्थायी फौज बनती जा रही है। अधिकृत आकडो के अनुसार १९६३ म कनाडा म ५ ५ प्रतिशत, डेनमार्क म ४ ३ प्रतिशत और ब्रिटेन म २ ६ प्रतिशत और अमरीका मे ५ ७ प्रतिशत कार्यशील जनसख्या बेरोजगार थी। १९६३ तक बेरोजगारो की सख्या अमरीका म करीब ५० लाख थी।

कई देशो म आम बेरोजगारी एक वास्तविक राष्ट्रीय सकट बन गयी है।

पूजीवादी चक्र मे परिवतन

स्मरण रहे कि एक आर्थिक सकट के प्रारम्भ होने से लेकर दूसरे आर्थिक सकट के प्रारम्भ होने तक के काल को चक्र कहते हैं। चक्र के चार दौर होते हैं सकट मदी पुनर्प्राप्ति और उत्कर्ष।

पूजीवाद का आम सकट प्रारम्भ हो जाने के बाद पूजीवादी चक्र म भी परिवर्तन होता है। चक्र की अवधि छोटी हो जाने के कारण सकट बहुधा आते हैं। प्रथम विश्वयुद्ध के पहले हर ८ १२ वर्ष पर आर्थिक सकट आया करता था। दो विश्वयुद्धो के बीच की अवधि (१९१९ ३८) म तीन आर्थिक सकट आये। इसका अर्थ हुआ कि हर ६ ७ वर्ष पर एक सकट आया। सकट और पुनर्प्राप्ति के दौर लम्बे थे और उत्कर्ष कम स्थायी था। पहले सकट प्राय १८ महीने से लेकर २ वर्षों तक रहता था किन्तु १९२९ ३३ का सकट चार सालो से अधिक रहा। पूजीवाद के आम सकट के काल म आर्थिक सकट बार बार आते है।

उदाहरण के लिए अमरीका को देखे। पूजीवादी विश्व के कुल औद्योगिक उत्पादन म अमरीका का हिस्सा ४४ ७ प्रतिशत है। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद अमरीका के उद्योगो को १९४९ म एक आर्थिक सकट का मुकाबला करना पडा जो पूरे साल भर गम्भीर रूप म रहा। १९५३ के उत्तरार्द्ध म एक नया आर्थिक सकट शुरू हुआ। इसके कारण औद्योगिक उत्पादन की मात्रा मे कमी और माग की मात्रा म कटौती हुई बेरोजगारी बढी और गोदामो म वस्तु भडार बढा। यह सकट १९५४ के दौरान भी रहा। १९५७ के मध्य म अमरीका मे अत्युत्पादन का एक नया सकट शुरू हुआ। १९५८ म इसने गम्भीर रूप धारण कर लिया। १९५८ के पहले छ महीनो म १९५७ के पहले छ महीनो की तुलना म कच्चे लोहे के उत्पादन मे ३८ ३ प्रतिशत इस्पात के उत्पादन म ३६ ५ प्रतिशत और मोटर गाडियो के उत्पादन मे ३३ ६ प्रतिशत की कमी हुई। यह आर्थिक सकट अन्य देशो मे भी फैला।

१९५७ ५८ के सकट के बाद से अब तक अमरीकी उद्योग मे दीघकालीन उत्कष नही आया है। दो वष बीतने के पूव ही १९६० म अमरीका को एक अय सकट का मुकाबला करना पडा।

इस प्रकार युद्धोत्तर काल म अमरीका की अथयवस्था मे चार बार आर्थिक सकट आये। चक्र के दौरो का सामाय क्रम गडबड हो गया। कुछ दौर सदा के लिए लुप्त हो गये। उदाहरण के लिए सकट से पुनर्प्राप्ति की ओर सक्रमण बहुधा मदी के दौर को छोड देता है और पुनर्प्राप्ति के दौर के बाद उत्कष का दौर बहुधा नही आता है बल्कि उत्कष के बाद एक नया सकट शुरू होता है। इसके अतिरिक्त कई स्थितियो मे अब सकट की ओर एकाएक सक्रमण नही होता बल्कि धीरे धीरे सकटपूण जडता का एक लम्बा काल शुरू होता है। अब स्टाक एक्सचेंज और बैंक विफल नही होते। युद्धोत्तर काल मे सकट उतने स्थायी नही रह, जितने द्वितीय विश्वयुद्ध के पूव थे।

युद्ध के बाद पूजीवादी चक्र मे इन परिवतनो के क्या कारण हैं? मुख्य कारण यह है कि पूजीवादी व्यवस्था ने कुछ शाखाओ और प्राय सभी देशो मे सतत जडता और क्षय के काल म प्रवेश किया है। विकास की आम दर कम हुई है।

कई अय कारण भी हैं जिनकी वजह से पूजीवादी चक्र मे युद्धोत्तरकालीन परिवतन हुए हैं

१ अथव्यवस्था के सयीकरण के फलस्वरूप पूजीवादी चक्र पर दो परस्पर विरोधी असर पडे हैं। सयीकरण हथियार उत्पादन से सम्बधित शाखाओ मे एक अस्थायी उत्कष लाता है लेकिन दूसरी ओर पूजीवादी पुनरुत्पादन के अन्तर्विरोधो को भडकाता है और ऐसे तत्व उत्पन करता है जो और भी गम्भीर सकट लाते हैं।

२ राजकीय एकाधिकार पूजीवाद भी कुछ हद तक पूजीवादी चक्र को प्रभावित करता है। इसका मतलब है कि राज्य आर्थिक दृष्टि से एकाधिकारो के लिए (औद्योगिक और कृषि उत्पादनो की राजकीय खरीद, एकाधिकारो को राजकीय अनुपूर्ति और साख प्रदान कर इत्यादि) उत्पादन की एक निश्चित वृद्धि और स्थिर पूजी के नवीकरण के लिए अवश्यम्भावी तौर पर महत्वपूण है। राजकीय नियामक विधियो के जरिए पूजीवादी एकाधिकार आर्थिक सकटो की विध्वसात्मक शक्ति का असर कम करना चाहते हैं। यद्यपि राजकीय एकाधिकार पूजीवाद पूजीवादी चक्र को प्रभावित करता है, तथापि यह अत्युत्पादन के आर्थिक सकट का उमूलन नही करता।

३ आधुनिक वज्ञानिक और प्राविधिक प्रगति पूजीवादी चक्र को प्रभावित करती है। यह प्रगति स्थिर पूजी के द्रुत अप्रचलन की पूव मायता पर आधारित

है। अतः संकट के दौरान पूंजी विनियोग में कमी हो सकती है और तब भी यह मालों के तौर पर उपभोग पर रह सकता है। इस कारण चक्र के विकास को एक नया रूप मिलता है।

४ पूंजीवादी देशों के वर्ग संघर्ष का चक्र पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। इन देशों में मजदूर जितने ही ताकतवर होते हैं पूंजीपति उन्हें आर्थिक रियायतें देने के लिए उतना ही अधिक मजबूर होता है। इस कारण घरेलू बाजार विस्तृत होता है और अत्युत्पादन के संकट को पैदा होने से रोकता है।

५ औपनिवेशिक साम्राज्य का विघटन भी पूंजीवादी चक्र को प्रभावित करता है क्योंकि जिन देशों ने राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त की है उन्होंने अपनी आर्थिक स्वतंत्रता को मजबूत करना शुरू कर दिया है। उनके लिए औद्योगीकरण ही आर्थिक स्वतंत्रता का मार्ग है। वर्तमान काल में पूंजीवादी देशों और खासकर पश्चिमी यूरोप में तैयार किये गये उपकरणों का काफी भाग अल्पविकसित देशों को जाता है। इस कारण पश्चिमी यूरोप में इंजीनियरिंग उद्योगों के उत्पादन में वृद्धि हुई है और यह युद्धोत्तर काल में पूंजीवादी चक्र में सहायक हुआ।

वर्तमान समय में पूंजीवादी चक्र की प्रकृति को प्रभावित करने वाले ये कुछ तत्व हैं। इन्हीं तत्वों के कारण ऐसी स्थिति आ गयी है जिसमें पूंजीवादी देशों की अर्थव्यवस्था में संकटों की पुनरावृत्ति बढ़ गयी है, परन्तु ये संकट १९२९-३३ के संकट की तुलना में कम गम्भीर होते हैं।

औद्योगिक उद्यम अपनी पूरी क्षमता का उपयोग नहीं कर पाते, स्थायी बेरोजगारी रहती है और आर्थिक संकट जल्दी जल्दी आते हैं। ये सब बातें बतलाती हैं कि पूंजीवाद अपने भीतर विकसित अपार उत्पादक शक्तियों का पूर्ण उपयोग करने में असमर्थ है। मानवजाति के विकास के मार्ग में पूंजीवाद एक बहुत बड़ी बाधा बनकर खड़ा हो गया है। पूंजीवाद फौजी होड़ और अर्थव्यवस्था के सैन्यीकरण द्वारा अपने आर्थिक और राजनीतिक अन्तर्विरोध हल करना चाहता है।

अर्थव्यवस्था का सैन्यीकरण और मेहनतकश जनता की बिगड़ती हुई हालत

अर्थव्यवस्था के सैन्यीकरण का मतलब है कि उद्योग के एक बड़े भाग को अनुत्पादक उत्पादन में लगाकर हथियारों के उत्पादन में सामरिक आरक्षित भंडार के रूप में भौतिक मूल्यों को जमा करने के लिए लगाया जाता है। उदाहरण के लिए, अमरीका में द्वितीय विश्वयुद्ध के समय संघीय प्रशासन का प्रत्यक्ष सैनिक व्यय कुल बजट व्यय का १४ प्रतिशत था, किन्तु १९५१ से लेकर अब तक प्रत्यक्ष सैनिक व्यय प्रतिवर्ष वार्षिक संघीय बजट राशि का दो तिहाई रहा है। १९६४-६५ में सैनिक व्यय ५१ अरब २० करोड़ डालर था। दूसरे

महायुद्ध के बाद ब्रिटेन और फ्रांस में कुल बजट व्यय का एक तिहाई प्रतिवर्ष सेना पर खर्च किया जाता रहा है।

अर्थव्यवस्था का सैन्यीकरण और फौजी होड़ युद्ध का खतरा पैदा करते हैं। अतः सोवियत संघ, अन्य समाजवादी देश और समस्त शान्तिप्रेमी मानवजाति आम और पूर्ण निरस्त्रीकरण के लिए लगातार संघर्ष कर रही है।

फिर भी साम्राज्यवादी शक्तियां आम और पूर्ण निरस्त्रीकरण के लिए तैयार नहीं हैं। क्यों? क्योंकि फौजी होड़ के कारण एकाधिकारों के मुनाफे में अभूतपूर्व रूप से वृद्धि होती है। उदाहरण के लिए, अमरीकी एकाधिकारों का मुनाफा १६३८ और १९५९ के बीच ३ अरब ३० करोड़ डालर से बढ़कर ५१ अरब डालर हो गया, यानी १५ गुनी वृद्धि हुई। ७५० कारपोरेशनों का कुल मुनाफा १९६१ में ७ अरब ५० करोड़ डालर था, जो १९६२ में ८ अरब ८० करोड़ डालर हो गया। इस तरह इसमें १६.४ प्रतिशत की वृद्धि हुई।

इतना होते हुए भी पूंजीवाद के सिद्धान्तकार यह दावा करते हैं कि राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का सैन्यीकरण और फौजी होड़ पूंजीवादी अर्थव्यवस्था को आर्थिक संकटों और बेरोजगारी से मुक्त रखता है। किन्तु तथ्य यह है कि अर्थव्यवस्था का सैन्यीकरण उत्पादन क्षमताओं और जनता की संकुचित होती हुई प्रभावी मांग के बीच की खाई को बढ़ाकर अवश्यम्भावी रूप से नये अधिक गहरे आर्थिक संकट लाता है।

फौजी होड़ सर्वहारा वर्ग और समस्त मेहनतकश जनता पर एक भारी बोझ है। उदाहरण के लिए, अमरीका में प्रति व्यक्ति सैनिक व्यय १९१३-१४ के आर्थिक साल में ३.५ डालर, १९३९-४० के आर्थिक साल में ७ डालर और १९५४-५५ में २५० डालर था। इस प्रकार १९१३-१४ और १९५४-५५ के दौरान सैनिक व्यय ७० गुना बढ़ा। ब्रिटेन का प्रति व्यक्ति सैनिक व्यय १९१३-१४ में १ पौंड १४ शिलिंग था जो १९५४-५५ में बढ़कर २९ पौंड ६ शिलिंग हो गया। इस बड़े व्यय को प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष करों को बढ़ाकर पूरा किया जाता है। अमरीका के १९५९-६० के आर्थिक साल में १९३७-३८ की तुलना में (मुद्रा के अवमूल्यन के लिए छूट देने पर भी) प्रत्यक्ष करों में १५ गुनी वृद्धि हुई। इसी अवधि में इटली में प्रत्यक्ष कर दुगुने और ब्रिटेन तथा फ्रांस में तिगुने हो गये।

युद्धोत्तरकालीन फौजी होड़ पूंजीवादी देशों में मुद्रा-स्फीति ले आया जिसके चलते कागजी मुद्रा की क्रय शक्ति में भारी कमी आयी। १९३७ में अमरीका की कुल प्रचलित मुद्रा की राशि ५ अरब ६० करोड़ डालर थी, जो १९५८ के आरम्भ में बढ़कर २७ अरब ४० करोड़ डालर हो गयी। १९३७ में ब्रिटेन की कुल कागजी मुद्रा राशि ४६ करोड़ पौंड थी, जो १९५८ के आरम्भ में १ अरब

८५ करोड़ पौंड हो गयी। इनकी कुल बाजारी पूंजी १९५७ में १८ अरब डॉलर थी, जो १९५८ में १८२२ अरब डॉलर की विशाल राशि पर पहुंच गयी।

बढ़े हुए कर भार और मुद्रास्फीति के बावजूद सर्वहारा मौद्रिक मजूरी को वास्तविक स्तर (यानी एक स्थिर स्तर पर रखने) के लिए प्रयत्नशील रहता है। इसका मतलब है वास्तविक मजूरी में कमी और मेहनतकश जनता की बदहाली। इस कारण सर्वहारा वर्ग को पूंजीवादी शोषण के खिलाफ कठिन संघर्ष करने के लिए मजबूर होना पड़ता है। हड़ताल-आन्दोलन का बढ़ता हुआ क्षेत्र इसका स्पष्ट सबूत है। अधिकृत आंकड़ों (जो स्पष्ट तौर पर कम करके दिखाये गये हैं) के अनुसार ११ देशों—अमरीका, ब्रिटेन, फ्रांस, पश्चिमी जर्मनी, जापान, कनाडा, आस्ट्रिया, स्वीडन, बेल्जियम, हालैंड और अर्जेन्टाइना में १९३० ३९ की तुलना में १९४५ ५५ में हड़तालों की संख्या ६७ ००० से बढ़कर १०१ ००० हो गयी। उनमें भाग लेने वाले मजदूरों की संख्या २ करोड़ १० लाख से बढ़कर ७ करोड़ ३० लाख हो गयी। १९३० ३९ में २४ करोड़ कार्यदिवसों की हानि हुई थी जबकि १९४५ ५५ के दौरान ६७ करोड़ २० लाख कार्यदिवस नष्ट हुए।

सर्वहारा वर्ग का संघर्ष म[illegible]हान के बल्ल भयंकर रूप से फैल रहा है। १९६१ में हड़तालों में भाग लेने वाले लोगों की संख्या ५ करोड़ से ५ करोड़ ३० लाख के बीच थी। १९६३ में यह संख्या बढ़कर ५ करोड़ ८० लाख हो गयी।

युद्धोत्तर काल में पूंजीवादी देशों के सर्वहारा वर्ग ने अपने को आर्थिक संघर्ष तक ही सीमित नहीं रखा है, बल्कि युद्ध के पहले की अवधि की तुलना में अधिक दृढ़ता के साथ घरेलू और विदेश नीतियों के बुनियादी सवालों पर वह सक्रिय भूमिका अदा करता रहा है। यह शान्ति तथा जनवादी स्वतन्त्रताओं के लिए जन संघर्ष के अगले दस्ते में है।

सर्वहारा वर्ग के संघर्ष का नेतृत्व मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्तों पर आधारित कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियां कर रही हैं। उनकी ताकत और जीवनी शक्ति की पुष्टि वर्तमान युग के अनुभवों से हुई है।

हमारे युग में इसके वैज्ञानिक निष्कर्षों की पुष्टि पूंजीवाद को सदा के लिए उखाड़ फेंकने वाली एक तिहाई मानवजाति के अनुभवों द्वारा हुई है। इसका स्पष्ट अर्थ है कि पूंजीवाद के स्थान पर नयी व्यवस्था—समाजवाद—जरूर स्थापित होगी। सिर्फ समाजवाद ही सर्वहारा वर्ग समेत समस्त मेहनतकश जनता को अन्तिम तौर पर मुक्त कर सकता है। समाजवाद के अन्तर्गत ही मेहनतकश जनता अपनी मेहनत का फल भोग सकती है।

एकाधिकार राष्ट्रीय हितों के विरुद्ध काम करते हैं आज की परिस्थितियों में साम्राज्यवादी देशों के भीतर एकाधिकार पूंजीपति वर्ग और सर्वहारा वर्ग तथा समूचे राष्ट्रीय हितों में असमाधेय टक्कर होते हैं।

एकाधिकार पूंजी सर्वहारा वर्ग और मेहनतकश जनता के अन्य समूहों—किसान और दस्तकार—के शोषण को तीव्र कर देती है। पूंजीवाद के आम संकट के वर्तमान चरण में मजदूरों और किसानों की हालत चिंताजनक हो गयी है। अमरीका में एकाधिकारों ने कीमतें इतनी बढ़ा दी हैं कि १९५९ में किसानों को अपनी खरीद की वस्तुओं के लिए १९५० की अपेक्षा १२ प्रतिशत अधिक कीमतें देनी पड़ीं हालांकि उसी दौरान किसानों की वस्तुओं की कीमतें ७ प्रतिशत घटीं। औद्योगिक और कृषि वस्तुओं की कीमतों में अन्तर, कर्ज का बोझ एकाधिकारी राज्य द्वारा लादा गया करों का भार किसानों को बर्बादी की ओर ले जा रहा है। अमरीका में हर साल करीब १,५०,००० फार्म बन्द हो जाते हैं और उनके मालिक बेरोजगारों या फार्म मजदूरों की फौज में शामिल हो जाते हैं। १९५४ से १९६२ तक फार्मों में २,४२,००० फार्म 'लुप्त' हो गये। किन्तु सबसे बुरा हाल लैटिन अमरीकी देशों और एशिया तथा अफ्रीका के अधिकांश देशों के किसानों का है।

एकाधिकार के हित न सिर्फ सर्वहारा वर्ग के हितों से टकराते हैं बल्कि छोटे और मझोले पूंजीपति वर्ग के स्वार्थों से भी टकराते हैं। राज्य के जरिए एकाधिकार करारोपण, साख, टैरिफ और ठेकों की ऐसी नीति अपनाते हैं जो अधिशेष मूल्य को उनके हित में पुनर्विभाजन की गारंटी करती है। छोटे और मझोले पूंजीपतियों को मुनाफे में हिस्सा नहीं मिलता और वे बर्बाद हो जाते हैं।

सर्वहारा वर्ग के स्वार्थों की तरह ही छोटे पूंजीपति वर्ग और मध्यम श्रेणी के लोगों के स्वार्थ एकाधिकार पूंजीपति वर्ग, उसकी पार्टी और उसके संरक्षक राज्य के स्वार्थों से टकराते हैं। यही कारण है कि सर्वहारा वर्ग, किसान, बुद्धिजीवी और छोटे तथा मध्यम शहरी पूंजीपति एकाधिकारों के शासन के उन्मूलन के लिए तत्पर हैं। इन शक्तियों को एकजुट करने की अनुकूल स्थितियां बन रही हैं।

आज की परिस्थितियों में राष्ट्र की सारी शक्तियां शान्ति, राष्ट्रीय स्वतंत्रता, जनवाद की रक्षा, अत्यन्त महत्वपूर्ण उद्योगों के राष्ट्रीयकरण और उनकी जनवादी व्यवस्था तथा जनता की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था के इस्तेमाल के जरिए एकाधिकारों के विरुद्ध एकजुट की जा सकती हैं।

एकाधिकारों के शासन के विरुद्ध संघर्ष में कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियां अगुआ रहती हैं और जनता को एकजुट कर उसे संघर्ष में निर्देशित करने के लिए पुरजोर कोशिशें करती हैं।

पूजीवादी देशो के पारस्परिक अन्त विरोधो म बढती

द्वितीय विश्वयुद्ध ने पूजीवादी देशों के असम विकास को तेज कर दिया। जमनी, जापान और इटली को फौजी हार खानी पडी। उनकी अथव्यवस्थाओ की कमर टूट गयी। फ्रास को दखल हो जाने पर बहुत बर्बादी सहनी पडी। ब्रिटेन बहुत कमजोर हो गया। सिफ अमरीका को लडाई स फायदा पहुचा। १९४८ में पूजीवादी विश्व के कुल औद्योगिक उत्पादन मे अमरीका का हिस्सा ५६ ६ प्रतिशत ब्रिटेन का ११ ५ पश्चिम जमनी का ४, फ्रास का ४, कनाडा का ३ ५ इटली का २ और जापान का १ ५ प्रतिशत था। तत्पश्चात पूजीवादी विश्व म शक्तियो क सतुलन म महत्वपूण परिवतन हुए हैं। इनके कारण क्या हैं ?

पहला विश्व पूजीवादी उत्पादन और व्यापार मे अमरीका अपनी निरपक्ष श्रेष्ठता खो चुका है। १९४८ से विश्व औद्योगिक उत्पादन मे उसका हिस्सा १० प्रतिशत कम हो गया है। १९६४ मे उसका हिस्सा ४४ ५ प्रतिशत था। उसका नियात २३ ४ प्रतिशत से घटकर १७ प्रतिशत और सुरक्षित स्वण ७४ ५ प्रतिशत मे घटकर ३५ प्रतिशत पर आ गया है। अन्य पूजीवादी शक्तियो के बीच अमरीका की करीब करीब वही स्थिति है जो दूसरे विश्वयुद्ध के पूव थी।

दूसरा, ब्रिटेन और फ्रास स्पष्ट रूप से कमजोर हो गये हैं। ये देश लगातार अपने उपनिवेश खो रहे हैं। विश्व औद्योगिक उत्पादन मे ये देश अपने युद्धपूव के स्थान को पुन पाने मे असमथ हैं। १९३७ मे पूजीवादी औद्योगिक उत्पादन मे उनका हिस्सा १८ ५ प्रतिशत था जो १९६४ म १३ ४ प्रतिशत रह गया।

तीसरा, पराजित देश विशेषकर पश्चिम जमनी और जापान बडी तेजी स आगे बढे हैं। पश्चिम जमनी जापान और इटली मिलकर पूजीवादी विश्व के औद्योगिक उत्पादन का १७ ४ प्रतिशत पैदा करते हैं।

आर्थिक शक्तियो का सतुलन बदल जाने के कारण साम्राज्यवादी देशो मे बाजार के लिए पारस्परिक सघष भयकर रूप से शुरू हो गया है।

अमरीका अपनी आर्थिक श्रेष्ठता का फायदा उठाकर अन्य देशो को पूणतया या आशिक तौर पर अधीनस्थ करने की कोशिशें कर रहा है। वह युद्ध के बाद के प्रारम्भिक वर्षों मे विश्व पूजीवादी बाजार पर अपना कब्जा जमाने म सफल हो गया है किन्तु पश्चिम जमनी, ब्रिटेन, फ्रास और इटली द्वारा अपनी अथव्यवस्थाओ को पुननिर्मित कर लेने के बाद अमरीका को विश्व बाजार म इन देशो की प्रतिद्वद्विता का सामना करना पड रहा है। फलस्वरूप अमरीका ब्रिटेन, पश्चिम जमनी और अन्य देशों के एकाधिकार सगठनो मे बीच बाजार के लिए भयकर सघष शुरू हो गया। बाजार कच्चे माल के स्रोतों और प्रभाव क्षेत्रों के

लिए संघर्ष में अमरीका को पश्चिमी यूरोप के साम्राज्यवादियों के अधिकाधिक प्रतिरोध का सामना अभी भी करना पड़ रहा है। पश्चिमी यूरोप के एकाधिकार अपने ऊंचे मुनाफे पर आंच नहीं आने देना चाहते हैं।

एकाधिकारों के पारस्परिक संघर्ष के कारण पूंजीवादी देशों के अन्तर्विरोध बढ़े हैं। अमरीका और ब्रिटेन के पारस्परिक अन्तर्विरोध साम्राज्यवादी देशों के आपसी गहरे अन्तर्विरोधों के एक उदाहरण हैं। अमरीका की एकाधिकार पूंजी ब्रिटेन के परम्परागत बाजारों और प्रभाव क्षेत्रों पर हमला बोल रही है। अमरीका आर्थिक सफलता के साथ ब्रिटेन के डोमिनियनों और उपनिवेशों के साथ उसके बहुपक्षीय आर्थिक सम्बन्धों को तोड़ रहा है। विदेशी व्यापार और कच्चे माल के स्रोतों को लेकर ब्रिटेन और अमरीका का संघर्ष उग्र होता जा रहा है।

फ्रांस और अमरीका के पारस्परिक अन्तर्विरोध बढ़ रहे हैं। कई अमरीकी फर्में फ्रांस में औद्योगिक उद्यम खोल रही हैं। विदेशी व्यापार के क्षेत्र में भी प्रतिद्वंद्वात्मक संघर्ष बढ़ रहा है। अमरीका फ्रांस के परम्परागत उत्तरी अफ्रीकी बाजारों पर हमला कर रहा है। ऐसे गम्भीर आसार दिखायी दे रहे हैं जिनसे यह स्पष्ट है कि अमरीका फ्रांस को अफ्रीकी बाजारों से खदेड़ना चाहता है। प्रभावशाली अमरीकी क्षेत्र राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलनों के "प्रायोजक" का नकाब ओढ़कर काम करते हैं और अफ्रीकी देशों पर फ्रांसीसी आधिपत्य के बदले अमरीकी आधिपत्य कायम करना चाहते हैं, जैसा कि उन्होंने दक्षिण वियतनाम में किया है। इस कारण फ्रांस के शासक क्षेत्रों में चिंता व्याप्त है।

विश्व बाजार में पश्चिम जर्मनी और जापान के प्रवेश के बाद साम्राज्यवादी देशों के पारस्परिक अन्तर्विरोध भयंकर हो गये हैं। युद्धोत्तर काल में अमरीका पश्चिम जर्मनी के एकाधिकारों को अपने वश में करने और वहां की अर्थव्यवस्था की महत्वपूर्ण शाखाओं में सुदृढ़ स्थान पाने की कोशिशें कर रहा है। ब्रिटेन भी इसी दिशा में प्रयत्नशील है। अपनी बढ़ती हुई औद्योगिक क्षमता के आधार पर पश्चिम जर्मनी में एकाधिकारों ने एक विस्तारवादी कार्यक्रम शुरू किया है। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद के प्रारम्भिक वर्षों में निर्यात की दृष्टि से पश्चिम जर्मनी का स्थान पूंजीवादी देशों में बहुत नीचे था, किन्तु अब अमरीका के बाद दूसरा है।

साम्राज्यवादियों के आंतरिक अन्तर्विरोध समाधान से परे हैं। लेनिन ने बताया था कि पूंजीवादी शिविर में अन्तर्विरोध अचानक नहीं पैदा हो गये हैं बल्कि वे 'साम्राज्यवादियों के आर्थिक स्वार्थों के अवश्यम्भावी टकराव की अभिव्यक्ति हैं।' उन्होंने कहा कि "पूंजीवादी शक्तियों की मैत्री डाकुओं की मैत्री है, प्रत्येक दूसरे से कुछ छीनना चाहता है।"[1]

१ लेनिन, "संग्रहीत रचनाएं", रूसी संस्करण, खंड ३१, पृष्ठ ४३६, २६८-२६६।

पूँजीवाद के बुनियादी अन्तर्विरोध—उत्पादन का सामाजिक चरित्र और पूँजीपतियो द्वारा फल प्राप्त करने का निजी रूप—से ही अन्तर्साम्राज्यवादी अन्तर्विरोध पैदा हुए है। किसी भी करार लेन देन, संधि या समझौते द्वारा साम्राज्यवादियो के पारस्परिक अन्तर्विरोध खत्म नही किये जा सकते।

वर्तमान युग का मुख्य अन्तर्विरोध—प्रगतिशील समाजवाद और मरणासन्न पूँजीवाद का पारस्परिक संघर्ष—पूँजीवादी शिविर के आन्तरिक विरोधो का उन्मूलन नही कर देता। हमारे युग के इस मुख्य अन्तर्विरोध का अन्तर्साम्राज्यवादी सम्बधो पर दुहरा असर पडता है। यह एक तरफ पूँजीवादी देशो की एकता को बढावा देता है नाटो सियाटो, सेन्टो, आदि खेमो की स्थापना के लिए आधार प्रस्तुत करता है और साम्राज्यवादियो के बीच सशस्त्र टकराव को मुश्किल बना देता है, तो दूसरी तरफ वर्तमान विश्व विकास की बुनियादी समस्याओ के संदर्भ मे पूँजीवादी देशो के बीच अन्तर्विरोधो और टकराव के नये स्रोत पैदा करता है।

अन्तर्साम्राज्यवादी अन्तर्विरोध अवश्यम्भावी रूप से विश्वयुद्ध नही ला सकते। जब पूँजीवाद विश्व पर छा जाने वाली शक्ति था तब अन्तर्साम्राज्यवादी अन्तर्विरोधो और देशो के बीच शक्ति सतुलन बदलने के कारण विश्वयुद्ध शुरू होते थे। आज पूँजीवाद एकमात्र राजकीय व्यवस्था के रूप मे अपना स्थान खो चुका है। आज विश्व समाजवादी व्यवस्था भी है, जो मानवीय विकास का निर्णायक तत्व बनती जा रही है। अब एक नयी ऐतिहासिक स्थिति आ गयी है, जिसने विश्व की सगठित शक्तियो को विश्व समाजवादी व्यवस्था के नेतृत्व में आक्रामक शक्तियो पर अंकुश लगाने और सामाजिक जीवन से विश्वयुद्ध को सदा के लिए दूर कर देने का अवसर दिया है।

× × ×

हमने मजूरी श्रम के शोषण पर आधारित पूँजीवादी उत्पादन व्यवस्था का अध्ययन कर लिया। पूँजीवाद के अन्तर्गत खासकर उसके विकास की चरम सीमा पर श्रम और पूँजी साम्राज्यवादी देशो तथा उपनिवेशों और स्वयं साम्राज्यवादी शक्तियो के बीच अन्तर्विरोध बेहद उग्र हो गये हैं। इन संकटो के गहरे होने के कारण पूँजीवादी विश्व को नवीन आर्थिक और सामाजिक उथल पुथल का सामना करना पडता है और अन्ततोगत्वा क्रान्ति द्वारा पूँजीवाद के स्थान पर समाजवाद आता है।

मार्क्स ने आज से १०० साल पहले कहा था कि पूँजीवादी उत्पादन व्यवस्था का ऐतिहासिक तौर पर पतन अवश्यम्भावी है। वर्तमान तथ्य इस निष्कर्ष की जोरदार पुष्टि करते हैं।

उत्पादन की कम्युनिस्ट पद्धति

कई पीढ़ियों से मेहनतकश जनता एक सुरक्षित और सुखी जीवन का सपना देखती आयी है। एक लम्बे समय तक ये सपने साकार नहीं हो सके, क्योंकि जनता स्वतन्त्रता के मार्ग से अनभिज्ञ थी। सर्वहारा वर्ग के महान नेताओं—मार्क्स एंगेल्स और लेनिन—ने मेहनतकश जनता को कम्युनिज्म का मार्ग मानवजाति के उज्ज्वल भविष्य का रास्ता दिखलाया।

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम में लिखा है "कम्युनिज्म सब लोगों को सामाजिक विषमता, हर तरह के उत्पीड़न और शोषण तथा युद्ध की विभीषिका से मुक्त कराने का ऐतिहासिक कार्य सम्पन्न करता है और संसार की सम्पूर्ण जनता के लिए शान्ति, श्रम, आजादी, समता, भाईचारा और समृद्धि लाता है।"[1]

कम्युनिस्ट समाज को विकास के दो दौरों से गुजरना पड़ता है। पहले दौर को समाजवाद और दूसरे को (जो श्रेष्ठतर है) कम्युनिज्म कहते हैं।

हर देश की मेहनतकश जनता के मुक्ति संघर्ष का आखिरी उद्देश्य कम्युनिज्म का निर्माण करना है। लेनिन ने लिखा है "समाजवाद की ओर संक्रमण करते समय हम साफ तौर पर समझ लेना चाहिए कि कम्युनिस्ट समाज का निर्माण हमारा अन्तिम लक्ष्य है।"[2]

मार्क्सवाद-लेनिनवाद बतलाता है कि पूँजीवाद के बाद तुरन्त ही कम्युनिस्ट सामाजिक-आर्थिक संरचना पूर्ण-विकसित रूप में नहीं मिल सकती।

सर्वहारा वर्ग द्वारा राजसत्ता प्राप्त करते ही कम्युनिस्ट समाज नहीं बन सकता। कम्युनिज्म के निर्माण के लिए समय की एक लम्बी अवधि और सर्वहारा वर्ग कृषक वर्ग और बुद्धिजीवी वर्ग द्वारा कठिन प्रयास की आवश्यकता है।

१ "कम्युनिज्म का मार्ग", पृष्ठ ५५०।
२ लेनिन, "संग्रहीत रचनाएं", खंड २६, पृष्ठ १२७।

समाज पूंजीवाद से सीधे कम्युनिज्म की ओर नही जा सकता। कठिन सघर्ष के फलस्वरूप ही समाज पूंजीवाद से समाजवाद की ओर जा सकता है और तभी समाजवाद कम्युनिज्म के रूप म विकसित हो सकता है।

कम्युनिस्ट सामाजिक आर्थिक सरचना का वणन करते हुए वनानिक कम्युनिज्म के प्रतिपादक काल मार्क्स ने गोथा कार्यक्रम की आलोचना म लिखा कि समाजवाद और कम्युनिज्म एक ही उत्पादन व्यवस्था की आर्थिक परिपक्वता की स्थिति के दो भिन्न चरण हैं। काल मार्क्स ने समाजवाद को कम्युनिज्म का पहला दौर बताया और कहा कि इस अवस्था मे हम अपने पाम पर विकसित कम्युनिस्ट समाज के बारे मे विचार नही करते हैं बल्कि एक ऐसे समाज के विषय म विचार करते हैं जिसका उदय पूंजीवाद के भीतर से होना है और जो इस कारण हर दृष्टि—आर्थिक, नैतिक और बौद्धिक—से पुराने समाज के अवशेषो से युक्त है। लेनिन ने इस बात पर जोर दिया कि "समाजवाद और कम्युनिज्म मे एकमात्र वनानिक अन्तर यह है कि पहला शब्द पूंजीवाद के भीतर से जन्म लेने वाले नये समाज के पहले चरण को सूचित करता है जबकि दूसरा शब्द बाद के उच्चतर चरण का द्योतक है।"[1]

समाजवाद के विकास के परिणामस्वरूप समाज द्वितीय उच्चतर चरण—कम्युनिज्म की ओर बढता है।

इस प्रकार समाजवाद और कम्युनिज्म एक ही कम्युनिस्ट समाज के दो चरण, दो दौर हैं।

---

१ लनिन, 'सकलित रचनाए", खड ३, पृष्ठ २४३।

३ समाजवाद—कम्युनिस्ट समाज का पहला दौर

अध्याय ६

समाजवाद का उदय और उसकी स्थापना

१ पूंजीवाद से समाजवाद की ओर संक्रमण काल के सम्बंध में मार्क्सवादी लेनिनवादी दृष्टिकोण

पूंजीवाद से समाजवाद की ओर क्रान्तिकारी संक्रमण

समाज के आर्थिक विकास की धारा पर विचार करते समय मार्क्सवाद लेनिनवाद के प्रतिपादकों ने पूंजीवाद के उदय, विकास और पतन सम्बंधी नियम ढूंढ निकाले। मार्क्स ने लिखा कि आर्थिक गरीबी और राजनीतिक उन्माद से युक्त पुराने समाज के स्थान पर एक नये समाज का आना अवश्यम्भावी है। शान्ति इस नये समाज की अन्तर्राष्ट्रीय नीति होगी, क्योंकि तब प्रत्येक राष्ट्र का एक ही स्वामी होगा—श्रम। ऐसे समाज को ही समाजवाद कहते हैं। ऐसे समाज की स्थापना दुनिया में पहली बार सोवियत संघ में हुई।

फासिस्ट जर्मनी और सैन्यवादी जापान की द्वितीय विश्वयुद्ध (जिसमें सोवियत संघ ने निर्णायक भूमिका अदा की थी) में पराजय और समाजवादी क्रान्तियों की विजय के बाद दूसरे देशों के जनगण ने समाजवाद का निर्माण शुरू किया।

महान अक्तूबर समाजवादी क्रान्ति की विजय (जो मानव समाज के विकास में एक नये युग की शुरुआत थी) ने साबित कर दिया कि पूंजीवाद के

दिन लद गए हैं और उत्पादन के पूंजीवादी सम्बंध उत्पादक शक्तियों के विकास में मार्ग में बाधक हो गए हैं।

यूरोप एशिया और अमरीका के देशों में समाजवादी क्रांतियों ने विश्व पूंजीवाद को एक जबर्दस्त धक्का दिया। अक्तूबर क्रांति के बाद विश्व इतिहास में ये महानतम घटनाएं हैं। पूंजीवाद को अवश्यम्भावी रूप से नये समाज—समाजवादी समाज—के लिए जगह खाली करनी होगी।

किन्तु समाजवाद स्वतः पूंजीवाद को हटाकर उसकी जगह पर नहीं आ सकता। पूंजीवादी व्यवस्था का सम्पूर्ण जनता के दृढ़ संघर्ष—सर्वहारा क्रांति—के द्वारा ही खात्मा किया जा सकता है और पूंजीपतियों के शक्ति-शोषण तथा जनता के शोषण और उत्पीड़न को समाप्त किया जा सकता है। मार्क्स ने लिखा है कि " क्रांति के बिना समाजवाद नहीं हासिल किया जा सकता। उसके लिए इस राजनीतिक कार्य की उतनी ही जरूरत है जितनी पुराने समाज के ध्वंस और विनाश की।

निजी स्वामित्व के उन्मूलन के लिए क्रांति अत्यावश्यक है। क्रान्ति द्वारा ही पूंजीपतियों के हाथों से उत्पादन के बुनियादी साधनों को छीनकर सम्पूर्ण जनता को दिया जा सकता है और इस तरह समाजवादी स्वामित्व कायम किया जा सकता है।

पूंजीवाद से समाजवाद की ओर क्रांतिकारी संक्रमण दो तरीकों—शांतिपूर्ण और गैर शांतिपूर्ण—से हो सकता है।

सर्वहारा वर्ग और उसका कम्युनिस्ट हिरावल दस्ता शांतिपूर्ण तरीके से समाजवादी क्रांति करना चाहते हैं। यह सर्वहारा वर्ग और सम्पूर्ण जनता के हितों के अनुकूल ही है।

समाजवादी क्रान्ति के शान्तिपूर्ण तरीके के पीछे यह पूर्वमान्यता है कि सर्वहारा वर्ग ने बिना गृह युद्ध के राजसत्ता हासिल कर ली है।

विशाल बहुसंख्यक जनता को अपने नेतृत्व में संगठित कर सर्वहारा वर्ग पार्लियामेंट में स्थायी बहुमत प्राप्त कर सकता है और इस तरह पार्लियामेंट को पूंजीपति वर्ग के वर्ग स्वार्थों की पूर्ति के यंत्र से सर्वहारा के वर्ग स्वार्थों की पूर्ति के यंत्र के रूप में बदल सकता है। इस तरह की पार्लियामेंट समाजवादी क्रान्ति के कार्यों को सफलतापूर्वक सम्पन्न कर सकती है। यह सब बड़े एकाधिकार पूंजीपतियों और प्रतिक्रिया के विरुद्ध व्यापक सामाजिक सुधार शांति और समाजवाद के लिए मजदूर वर्ग और तमाम अन्य मेहनतकश जनता के वर्ग संघर्ष के व्यापक और निर्बाध विकास पर निर्भर है।

निरन्तर विकसित होने वाली विश्व समाजवादी व्यवस्था जो मानव समाज के विकास की दृष्टि से निर्णायक होती जा रही है उपयुक्त प्रक्रिया को तेज करती है। विश्व पूंजीवादी व्यवस्था के कमजोर होने और उसमे अन्तर्विरोधो का अभूतपूर्व रूप से उग्र होने, साम्राज्यवाद की औपनिवेशिक व्यवस्था के विघटन पूंजीवादी देशो मे मजदूर वर्ग की बढती हुई सागठनिक शक्ति और वर्ग चेतना तथा कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियो की उत्तरोत्तर बढती हुई प्रतिष्ठा ने मजदूर वर्ग की लडाई को और आगे बढाया है।

यह सम्भव है कि समाजवाद की ताकत की उत्तरोत्तर वृद्धि मजदूर वर्ग आन्दोलन की बढती हुई मजबूती और साम्राज्यवाद की दिनोदिन बदतर होती हुई स्थिति के कारण कतिपय देशो मे जैसाकि मार्क्स और लेनिन ने बताया ऐसी स्थिति आ जाये, जब पूंजीपति वर्ग अपने हित को देखते हुए उत्पादन के बुनियादी साधनो के सर्वहारा वर्ग द्वारा खरीदे जाने के लिए तैयार हो जाये और सर्वहारा वर्ग भी उसे इस तरह "मिटा दे।

जहा शोषक वर्ग जनता के विरुद्ध हिंसा का सहारा लेते हैं वहा समाजवाद की ओर सक्रमण की अन्य सम्भावना को भी ध्यान मे रखना चाहिए। लेनिनवाद की यह शिक्षा है कि सत्ताधारी वर्ग स्वेच्छा से सत्ता का त्याग नही कर सकते। इतिहास के अनुभवो ने इस शिक्षा की पुष्टि कर दी है। इस स्थिति मे क्रान्तिकारी बल प्रयोग आवश्यक हो जाता है। समाजवाद की ओर गैर शान्तिपूर्ण सक्रमण के लिए जरूरी है कि हथियारबन्द बगावत हो गृह युद्ध छिडे और पूंजीपति वर्ग से जबरदस्ती राजनीतिक शक्ति छीन ली जाये।

किसी भी देश मे वहा की मूर्त ऐतिहासिक स्थितिया ही समाजवादी क्रान्ति के स्वरूप का निर्धारण करती हैं। क्रान्ति की सफलता इस बात पर निर्भर है कि किस हद तक मजदूर वर्ग और उसकी पार्टी ने सघर्ष के सभी तरीको—शान्तिपूर्ण और गैर शान्तिपूर्ण—के विषय मे ज्ञान प्राप्त कर लिया है और किस सफलता के साथ वे सघर्ष के एक तरीके को छोडकर तेजी से और एकाएक दूसरे तरीके को अपना सकते हैं।

आज की स्थितियो मे समाजवादी देशो के समर्थन के फलस्वरूप समाजवादी क्रान्ति एक पिछडे हुए मुल्क मे भी सफल हो सकती है। अत्यन्त विकसित समाजवादी देशो की सहायता का सहारा लेकर पिछडे हुए मुल्क भी विकास के पूंजीवादी चरण से गुजरे बिना समाजवाद की ओर जा सकते हैं। ऐसी बात मगोलिया में हुई है।

शान्तिपूर्ण या गैर शान्तिपूर्ण—जिस ढग से भी समाजवादी क्रान्ति हो उसका मतलब घिसे पिटे पूंजीवादी सम्बधो को तेजी से तोडना और उनकी जगह

नये समाजवादी सम्बन्धो की स्थापना करता है। ये काय मजदूर वग की सरकार सम्पूण जनता के हित म सम्पन्न करती है।

सक्रमण काल की आवश्यकता	पूजीवादी समाज के समाजवादी समाज क रूप म क्रान्तिकारी परिवतन क काल को सक्रमण काल कहते हैं।

पूजीवाद स समाजवाद की ओर जान क लिए सक्रमण काल आवश्यक है क्योंकि समाजवाद पूजीवाद के भीतर नही पनप सकता। पूजीवाद क अन्तगत समाजवाद की सिफ पूवस्थितिया ही उत्पन्न हो सकती हैं।

पूजीवाद बडे पैमाने के मशीन उद्योग की स्थापना करता है और यही समाजवाद की वस्तुगत पूवस्थिति है। दूसरी तरफ, औद्योगिक उत्पादन का विकास और बडे पमाने पर उसका प्रसार मजदूर वग की सख्यात्मक शक्ति म वद्धि करते हैं। वह बडे उद्योगो और औद्योगिक केन्द्रो म एकत्र हो जाता है। वह सगठित और अपने वग हितो के प्रति जागरूक हो जाता है। फलस्वरूप वह पूजीवाद के विनाश के लिए एक सक्षम सामाजिक शक्ति बन जाता है।

मजदूर वग के हितो और अन्य समस्त मेहनतकश जनता के हितो म मेल होता है। मजदूर वग ही पूजीवाद का उखाड फकने क लिए शोषित जनता के सघष का नेतृत्व करता है। यह समाजवाद की एक मनोगत पूवस्थिति है जो पूजीवाद के भीतर जन्म लेती है। कृषक वग के साथ मिलकर एक नवीन समाजवादी समाज के निर्माण क लिए मजदूर वग क्रान्तिकारी तरीको स राजसत्ता हथिया लता है।

जिस काल के दौरान निजी स्वामित्व और शोषक वर्गों का उन्मूलन होता है और सम्पूण अथव्यवस्था सस्कृति और राज्य को समाजवादी दृष्टि से पुनस्सगठित किया जाता है, उस काल को पूजीवाद से समाजवाद की ओर सक्रमण का काल कहा जाता है। इस काल म समाजवाद अपने निर्माण की प्रक्रिया में रहता है। पूजीवाद के उन्मूलन की प्रक्रिया भी चलती रहती है।

सवहारा वग द्वारा राजसत्ता हस्तगत कर लेने और राष्ट्रीय अथव्यवस्था के प्रमुख स्थानो पर कब्जा कर लने के कारण पूजीवाद का जबदस्त हार खाना पडती है लेकिन वह पूणतया नष्ट नही हो जाता है। कुछ समय तक पूजीवादी निजी उद्यम उद्योग कृषि और व्यवसाय म रहते हैं। नगरो और गावो म पूजीवादी तत्वो के प्रतिरोध का सामना करना ही सिफ आवश्यक नही है बल्कि प्रतिरोध को जन्म दने वाले तत्वो स मुक्ति प्राप्त करना भी जरूरी है।

सक्रमण काल के दौरान छोटे कृषक फार्मों को समाजवादी तरीको स पुनगठित करने का काय बहुत ही आवश्यक है।

संक्रमण काल के दौरान समाजवाद के भौतिक और तकनीकी आधार तयार किये जाते हैं।

समाजवाद का रास्ता अख्तियार करने वाले प्रत्येक देश के लिए संक्रमण काल से गुजरना आवश्यक है। देश औद्योगिक रूप से विकसित हो या पिछड़ा हुआ हो, बड़ा हो या छोटा, उसके लिए पूंजीवाद से समाजवाद की ओर संक्रमण के लिए समय की एक निश्चित अवधि आवश्यक होती है।

संक्रमण काल के अन्तगत वह सम्पूर्ण ऐतिहासिक अवधि आती है जो सर्वहारा क्रान्ति की विजय और सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व की स्थापना से प्रारम्भ होकर कम्युनिस्ट समाज के पहले दौर—समाजवाद—के पूर्ण निर्माण में समाप्त होती है।

पूंजीवाद से समाजवाद की ओर संक्रमण के सिद्धान्त का अन्वेषण मार्क्स, एंगेल्स और लेनिन ने किया। इन लोगों ने मजदूर वर्ग और सम्पूर्ण मेहनतकश जनता को समाजवाद के निर्माण के तरीकों के वैज्ञानिक ज्ञान से अवगत कराया। कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियां संक्रमण काल के मार्क्सवादी लेनिनवादी सिद्धान्त में अभिवृद्धि कर रही हैं।

मार्क्स ने बताया कि पूंजीवादी और कम्युनिस्ट समाज के बीच एक दौर आता है जिसमें एक समाज का दूसरे में क्रान्तिकारी परिवर्तन होता है। इसी के अनुकूल एक राजनीतिक संक्रमण काल भी होता है जिसमें राज्य का स्वरूप सर्वहारा वर्ग के क्रान्तिकारी अधिनायकत्व का होता है।

सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व आवश्यक है, क्योंकि सिर्फ मजदूर वर्ग ही पूंजीवादी जुए को उतार फेंकने के संघर्ष और समाजवादी समाज के निर्माण के अभियान में मेहनतकश जनता का नेतृत्व कर सकता है। सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व का मतलब समाज का मजदूर वर्ग द्वारा राजकीय नेतृत्व है। सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व एक विशाल जन-समूह का अल्पसंख्यक लोगों पर अधिनायकत्व है, यह शोषकों और राष्ट्र के उत्पीड़कों के विरुद्ध है। इसका मुख्य उद्देश्य मनुष्य के द्वारा मनुष्य के शोषण को समाप्त करना है। सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व न सिर्फ मजदूर वर्ग के हितों का रक्षक है बल्कि सम्पूर्ण मेहनतकश जनता के हितों का साधक है।"[1] मजदूर वर्ग राजसत्ता का इस्तेमाल सम्पूर्ण शोषित जनता के हित में करता है। शोषकों के विरुद्ध लड़ाई और समाजवाद के निर्माण के लिए मजदूर वर्ग और कृषक वर्ग का संयुक्त

सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व समाजवाद के निर्माण का उपकरण

१ "कम्युनिज्म का मार्ग" पृष्ठ ४८७।

संघर्ष उन्हें एक अटूट मैत्री के सूत्र में बांध देता है। सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व का सबसे बड़ा सिद्धान्त यह है कि मजदूर वर्ग और मेहनतकश कृषक वर्ग में दृढ मैत्री हो।

सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व का मतलब आर्थिक व्यवस्था, राजकाज और सामाजिक तथा सांस्कृतिक जीवन के सभी क्षेत्रों के मार्ग दर्शन के कार्यों में भारी तादाद में मेहनतकश जनता का प्रत्यक्ष, सक्रिय सहयोग है।

समाजवादी क्रान्ति के परिणामस्वरूप निर्मित राजनीतिक ऊपरि संरचना के एक अंग के रूप में सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व का कार्य मेहनतकश जनता का दमन और शोषण करने वाले पुराने राज्य यंत्र को तोड़ना है। सर्वहारा वर्ग राज सत्ता का इस्तेमाल पूंजीपति वर्ग के आर्थिक शासन और मनुष्य के द्वारा मनुष्य के सभी प्रकार से होने वाले शोषण को खत्म करने के लिए करता है।

किन्तु सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व का मतलब बल प्रयोग के अतिरिक्त कुछ और भी है। सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व मुख्य रूप से बल प्रयोग नहीं है। इसका मूल उद्देश्य बल प्रयोग नहीं, बल्कि रचनात्मक कार्य—समाजवादी समाज का निर्माण और समाजवाद के शत्रुओं से इसकी रक्षा—है। सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व को वस्तुगत परिस्थितियों—पूंजीपति वर्ग के प्रतिरोध—के कारण ही बल प्रयोग करना पड़ता है। बल प्रयोग सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व का एक आवश्यक कार्य है। शोषक वर्गों द्वारा स्वेच्छा से सर्वहारा वर्ग को राजसत्ता न सौंप देने के कारण ही बल प्रयोग जरूरी हो जाता है।

सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व समाजवाद के निर्माण का एक साधन है। सर्वहारा वर्ग का राज्य एक समाजवादी अर्थव्यवस्था कायम करने के लिए प्रयत्नशील रहता है। आर्थिक क्षेत्र में राज्य के कामों के फलस्वरूप उत्पादन-सम्बन्धों की एक नयी व्यवस्था जन्म लेती है। इन सम्बन्धों के आधार के रूप में उत्पादन के साधनों का समाजवादी स्वामित्व, सौहार्दपूर्ण सहयोग और शोषणमुक्त जनता के बीच पारस्परिक समाजवादी मदद है।

कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियां—समाजवाद और कम्युनिज्म के निर्माण के लिए मेहनतकश जनता के संघर्ष का हिरावल दस्ता—सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व का नेतृत्व और निर्देशन करने वाली शक्ति हैं।

मार्क्सवाद-लेनिनवाद के अनुसार पूंजीवाद से समाजवाद की ओर संक्रमण के कई राजनीतिक रूप हो सकते हैं, किन्तु मूलतः सभी एक होते हैं। सभी सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व के ही रूप हैं।

समाज विकास के नियमों से स्वाभाविक तौर पर स्पष्ट है कि सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व के विभिन्न रूप हो सकते हैं। लेनिन ने लिखा कि "पूंजीवाद

से कम्युनिज्म की ओर सक्रमण के कई राजनीतिक रूप हो सकते हैं, किन्तु सबका सार एक ही—सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व—होगा।"[1]

सोवियत सघ म अक्तूबर क्रान्ति की विजय के फलस्वरूप सोवियतो के रूप मे सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व की स्थापना हुई। दो रूसी क्रान्तिया (१६०५ और १६१७ की) के अनुभव के आधार पर लेनिन ने सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व के राजकीय रूप के लिए सोवियत सत्ता को उपयुक्त बताया।

सोवियत सघ म समाजवाद की जीत और द्वितीय विश्वयुद्ध म फासिज्म की पराजय के फलस्वरूप पैदा हुई नयी ऐतिहासिक स्थितियो मे जनवादी जनतत्र (पीपुल्स डेमोक्रेसी) यूरोप और एशिया के कई देशो मे विजयी हुआ। जनता का जनवाद समाज के राजनीतिक सगठन का एक रूप है। यह मूलत सर्वहारा का अधिनायकत्व है। कमजोर पडे साम्राज्यवाद और समाजवाद के पक्ष म बदले शक्ति सतुलन की स्थिति मे यह समाजवादी क्रान्ति के विशिष्ट लक्षणो का द्योतक था। इसके द्वारा अलग अलग देशो की ऐतिहासिक और राष्ट्रीय स्थितियो की अभिव्यक्ति हुई।

समाजवादी क्रान्ति के फलस्वरूप आने वाला सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व समाजवाद की विजय की गारन्टी करता है, हालांकि समाजवादी निर्माण के दौरान इसके चरित्र मे परिवर्तन होता है। शोषक वर्गों के उन्मूलन के कारण उनको दमन करने की आवश्यकता नही रह जाती, किन्तु समाजवादी निर्माण के दौरान उस आर्थिक सगठन को विकसित करने सास्कृतिक प्रगति और शिक्षा के प्रसार के लिए नये कदम उठाने पडते हैं। समाजवाद की पूर्ण और अन्तिम जीत हासिल कर लेने के बाद सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व का कार्य खत्म हो जाता है। उसका ऐतिहासिक अभियान पूरा हो जाता है और आन्तरिक विकास के कार्यों की दृष्टि से उसका कोई महत्व नही रह जाता। सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व के रूप म कार्य करने वाला राज्य सम्पूर्ण जनता के राज्य के रूप मे परिवर्तित हो जाता है और उसके हितो और इच्छाओ की अभिव्यक्ति होता है। राज्य के लुप्त हो जाने के पहले ही सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व समाप्त हो जाता है। कम्युनिस्ट निर्माण के दौरान राज्य के विकास का यही द्वन्द्वात्मक नियम है।

समाजवाद का मार्ग अपनाने वाले सभी देशो मे पूजीवाद से समाजवाद की ओर सक्रमण समान रास्तों से होता है। वे हैं क) मजदूर वर्ग द्वारा राजसत्ता हासिल करना सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व—मजदूर वर्ग के जनतत्र—की स्थापना मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी की मुख्य भूमिका ख) मजदूर वर्ग और बहुसख्यक कृषक वर्ग तथा मेहनतकश जनता के अन्य तबको के बीच मैत्री ग)

१ लेनिन 'सग्रहीत रचनाए," खड २६, पृष्ठ ४१३।

समाजवादी क्रांति के विकास और समाजवादी निर्माण के मुख्य नियम

पूंजीवादी स्वामित्व का उन्मूलन और उत्पादन के बुनियादी साधनों के ऊपर सार्वजनिक स्वामित्व की स्थापना, घ) सहकारिता के आधार पर कृषि में धीरे धीरे समाजवादी परिवर्तन, च) समाजवाद और कम्युनिज्म के निर्माण तथा मेहनतकश जनता के जीवन-यापन के स्तर को ऊंचा उठाने के लिए राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था का नियोजित विकास, छ) विचारधारा और संस्कृति के क्षेत्र में समाजवादी क्रांति की विजय तथा मजदूर वर्ग, सभी मेहनतकश जनता और समाजवाद में निष्ठा रखने वाले बुद्धिजीवियों का बहुत बडी संख्या मे प्रशिक्षण, ज) कौमी उत्पीडन का खात्मा और कौमो के बीच समान अधिकार तथा सौहार्दपूर्ण मैत्री की स्थापना, झ) समाजवादी राज्य को मजबूत बनाना और उसका विकास करना, भीतरी और बाहरी दुश्मनों से समाजवादी उपलब्धियों की रक्षा करना, ट) उस देश विशेष के मजदूर वर्ग के साथ मैत्री अर्थात सर्वहारा अंतर्राष्ट्रीयतावाद की स्थापना।

समाजवादी क्रांति और समाजवादी निर्माण के मुख्य नियम यह बतलाते हैं कि समाजवादी क्रांति के दौरान प्रत्येक देश मे मुख्य तौर पर समान कार्य—पूंजीपतियो का उन्मूलन और समाजवाद का निर्माण—होता है।

समाजवादी क्रांति के विकास और समाजवादी निर्माण से सम्बंधित मार्क्सवादी लेनिनवादी सिद्धान्त समाजवादी देशो की कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियो की नीति के आधार हैं। समाजवादी समाज का सफल निर्माण इस कारण सुनिश्चित हो जाता है।

समाजवाद के निर्माण के रूप और तरीके देश विशेष की मूर्त ऐतिहासिक स्थितियों के अनुसार अलग अलग होंगे। यद्यपि सभी देशो के लिए मुख्य रास्ते समान हैं तथापि ऐतिहासिक तौर पर निर्धारित राष्ट्रीय विशेषताओ और परम्पराओ की विभिन्नता के कारण समाजवादी क्रांति के विकास और समाजवाद के निर्माण के लिए कतिपय विशिष्ट स्थितियों की आवश्यकता होती है। लेनिन ने बताया कि "सब देश समाजवाद तक पहुंचेंगे। यह अवश्यम्भावी है। किन्तु सब एक ही रास्ते से नहीं जायेंगे। हर देश जनतंत्र का अपना रूप रखेंगे सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व अपनी तरह से कायम करेंगे और सामाजिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में समाजवादी परिवर्तन की दरें अलग अलग होंगी।"[1]

किन्तु ये खास विशेषताए इस तथ्य को नहीं बदल सकती कि समाजवादी क्रांति और समाजवादी निर्माण का विकास कतिपय मुख्य रास्तों पर होता है। समाजवादी निर्माण के व्यावहारिक कार्य में भिन्नताए सर्वहारा वर्ग के अधि

१ लेनिन "संग्रहीत रचनाएं" खंड २३ पृष्ठ ७०।

नायकत्व और उत्पादन के प्रबन्ध के रूपों तथा कृषि में सहकारिता के विभिन्न तरीकों में देखी जाती हैं किन्तु सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व उत्पादन के साधनों पर से निजी स्वामित्व का उन्मूलन कृषि में सहकारिता इत्यादि वे आवश्यक तत्व हैं जिनके बिना समाजवादी व्यवस्था का सफल विकास नहीं हो सकता।

समाजवादी क्रांति और समाजवादी निर्माण के मुख्य वस्तुगत नियमों को त्याग देने के कारण तथा राष्ट्रीयता एवं राष्ट्रीय विशेषताओं को बढ़ा-चढ़ाकर रखने की वजह से समाजवाद के निर्माण के दौरान क्षति ही उठानी पड़ती है।

२ संक्रमण काल की अर्थव्यवस्था

संक्रमण काल की अर्थव्यवस्था को न तो पूंजीवादी कहा जा सकता है और न समाजवादी। यह कई आर्थिक क्षेत्रों का मिला जुला रूप है। आर्थिक क्षेत्र उत्पादन के साधनों के स्वामित्व के एक या दूसरे रूप पर आधारित हैं और प्रत्येक देश विशेष के विकास के एक निश्चित काल के लिए विशिष्ट हैं।

संक्रमण काल के दौरान हर देश की अर्थव्यवस्था में भिन्न आर्थिक क्षेत्र हो सकते हैं। यह समाजवाद के रास्ते पर उन्मुख देश की मूल आर्थिक स्थितियों पर निर्भर है किन्तु पूंजीवाद से समाजवाद की ओर संक्रमण काल में देश की अर्थव्यवस्था में तीन मुख्य क्षेत्रों—समाजवादी, लघु वस्तु उत्पादन और पूंजीवादी—का होना लाजिमी है।

समाजवादी क्षेत्र राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में समाजवादी क्षेत्र की स्थापना उत्पादन के साधनों के समाजवादी समाजीकरण के द्वारा होती है।

सर्वहारा वर्ग के राज्य द्वारा इस दिशा में पहला और महत्वपूर्ण कदम समाजवादी राष्ट्रीयकरण का होना है। इसके द्वारा वह राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में अपनी प्रमुख स्थिति बना लेता है।

समाजवादी राष्ट्रीयकरण का मतलब सर्वहारा वर्ग के राज्य द्वारा शोषक वर्गों की सम्पत्ति को क्रान्तिकारी तरीकों से छीन कर राजकीय समाजवादी सम्पत्ति (सम्पूर्ण जनता की सम्पत्ति) में बदल देना है। पूंजीपति वर्ग के सम्पूर्ण धन का सृजन मजदूर वर्ग की कई पुश्तों के द्वारा किया गया है। जब समाजवादी क्रान्ति के दौरान मजदूर वर्ग पूंजीपतियों से उत्पादन के साधन छीन लेता है तब उसके इस न्यायपूर्ण कार्य द्वारा ऐतिहासिक न्याय प्रतिष्ठित होता है। जिसे जनता की मेहनत ने बनाया है उस पर जनता का अधिकार होना ही चाहिए।

उत्पादन के साधनों का समाजवादी राष्ट्रीयकरण पूंजीवाद के बुनियादी अन्तर्विरोध—उत्पादन के सामाजिक चरित्र और पूंजीपतियों द्वारा फल प्राप्ति के

निजी रूप—को समाप्त कर देता है। राष्ट्रीयकरण उत्पादन के सम्बधो को उत्पादक शक्तियो के अनुकूल बनाता है और उनके विकास के मार्ग से बाधाओ को हटा देता है।

उत्पादन के साधनो का राष्ट्रीयकरण अर्थव्यवस्था पर से पूजीपतियो का आधिपत्य खत्म कर देता है। श्रमजीवी लोगो के हाथो मे उत्पादन के साधनो के आ जाने पर वे अपने देश के मौलिक और समाज की मुख्य आर्थिक शक्ति बन जाते हैं।

राष्ट्रीयकरण का कार्य सर्वप्रथम भारी उद्योग, बैंक, रेल यातायात व्यावसायिक जहाजों, सचार के साधनो, बडे पैमाने के व्यावसायिक प्रतिष्ठानो, इत्यादि और कृषि (पूर्ण या आशिक तौर पर जमीन का राष्ट्रीयकरण) मे होता है।

सक्रमण काल के दौरान वर्ग सघर्ष के रूप और तीव्रता के अनुकूल प्रत्येक देश मे राष्ट्रीयकरण की अपनी विशेषताए होती हैं। उदाहरण के लिए सोवियत सघ को ही लें। वहा पूजीपति वर्ग ने सोवियतो की सत्ता के खिलाफ हथियारबन्द लडाई छेडी और तोड फोड के हर तरीके का इस्तेमाल किया। अत वहा राष्ट्रीयकरण का कार्य भूतपूर्व स्वामियो को बिना किसी प्रकार का मुआवजा दिये पूरा किया गया। बहुतेरे यूरोपीय जनवादी जनतत्रो मे उद्योग मे उत्पादन परिवहन और सचार के बुनियादी साधनो और बैंको के राष्ट्रीयकरण का रूप कुछ दूसरा ही रहा। राज्य ने छोटे और मझोले स्वामियो तथा हिटलर के विरुद्ध लडाई मे साथ देने वाले देश के पूजीपतियो से उनके उद्यमो को खरीद लिया। जर्मन और इटालियन स्वामियो या नाजियो का साथ देने वाले पूजीपतियो के उद्यमो को बिना किसी मुआवजे के ले लिया गया।

चीन लोक जनतत्र मे सिर्फ साम्राज्यवाद के पिट्ठू एकाधिकार पूजीपति वर्ग के उद्यमो को ही बलात छीना गया। राष्ट्रीय पूजीपति वर्ग के बहुसख्यक उद्यम सयुक्त राजकीय और निजी उद्यम बन गये। अब ये धीरे धीरे राजकीय समाजवादी उद्यमो मे परिवर्तित हो रहे हैं।

उत्पादन के महत्वपूर्ण साधनो के राष्ट्रीयकरण के बाद अन्य कदम उठाये जाते हैं। समाजवादी राज्य राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था मे एक बिल्कुल नये क्षेत्र—समाजवादी क्षेत्र—की स्थापना करता है। इस क्षेत्र मे अन्तर्गत कारखाने और परिवहन राजकीय फार्म व्यावसायिक उद्यम सहकारी समितिया (कृषि और विपणन माल उपभोक्ता और उत्पादन सहकारी समितिया) आते हैं। राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था मे समाजवादी क्षेत्र की स्थापना होने से निर्माण के उस व्यापक कार्य की नींव पड जाती है जिसे पूर्ण समाजवादी अर्थव्यवस्था की बुनियाद के निर्माण की प्रक्रिया मे जनता पूरा करती है।

सक्रमणकालीन अथव्यवस्था म समाजवादी क्षेत्र प्रमुग भूमिका अदा करता है, क्योंकि इसके अन्तगत राष्टीय अथव्यवस्था की प्रमुख शाखाए शामिल रहती हैं और वह अत्यन्त आधुनिक और कुशल तकनीकों साज सामान का प्रयोग करता है। इस क्षेत्र म अत्यन्त प्रगतिशील उत्पादन-सम्बध पाये जाते हैं।

समाजवादी उद्यमो म मनुष्य का मनुष्य के द्वारा कोई शोषण नही होता और श्रम शक्ति वस्तु के रूप म नही रहती। मजदूर का श्रम उसके और समाज के कल्याण का साधन बन जाता है। समाजवादी क्षेत्र मे उत्पन्न होने वाली प्रत्येक चीज पर सम्पूण मेहनतकश जनता का अधिकार रहता है।

समाजवादी क्षेत्र, जहा उत्पादन के साधनों के समाजवादी स्वामित्व क बोलबाला रहता है, नयी आर्थिक स्थितियो को जन्म देता है। उनके आधार प समाजवाद के नये आर्थिक नियम जन्म लेते और विकसित होते हैं। धीरे धीरे उनके परिचालन का क्षेत्र विस्तृत होता है। पूजीवादी आर्थिक नियम धीरे धीरे अपन ताकत खो देते हैं और अन्ततोगत्वा उनका परिचालन बन्द हो जाता है।

लघु वस्तु क्षेत्र के अन्तगत किसानो के छोटे फाम दस्तकार और शिल्प कार आते हैं। उनकी अथव्यवस्था का आधार उत्पादन के साधनो का निर्ज

लघु वस्तु क्षेत्र और पूजीवादी क्षेत्र

स्वामित्व और उनका व्यक्तिगत श्रम है। वे सब कमो बेश बाजार से सम्बद्ध रहते हैं। लघु वस्तु-उत्पादन निर्ज स्वामित्व पर आधारित होने के कारण पूजीवादी उत्पा दन के नजदीक पडता है। दूसरी ओर, छोटे किसा सभी प्रकार के शोषण का उन्मूलन करना चाहते हैं। व मेहनतकश किसान होते और इस तरह वे सवहारा वग के नजदीक पडते हैं।

सक्रमण काल के प्रारम्भिक चरणो म बहुत से समाजवादी देशों की बहु सख्यक जनता लघु वस्तु-उत्पादन के क्षेत्र म थी। समाजवाद के निर्माण के दौरा लघु वस्तु-उत्पादन सहकारी समितियो की स्थापना के जरिए समाजवादी उत्पाद म बदल जाता है।

पूजीवादी क्षेत्र के अन्तगत उत्पादन के साधनो के निजी स्वामित्व औ भाडे के श्रम पर आधारित आर्थिक उद्यम आते हैं। देहातो का धनी कृषक व (कुलक) और शहरो के छोटे और मझोले पूजीवादी उद्यमो (जिनका राष्टीयकर अब तक नही हुआ है) के स्वामी आते हैं। यहा शोषण वतमान रहता है औ श्रम शक्ति वस्तु के रूप म रहती है। अधिशेष मूल्य का उत्पादन के साधनो के स्वामी हडप जाते हैं।

समाजवादी राज्य सर्वप्रथम पूंजीवादी क्षेत्र पर, विकासक्रम में शोषण पर प्रतिबंध लगाता है और उसके बाद अपनी नीति उसके पूर्णतया उन्मूलन के लिए चलाता है।

संक्रमण काल के दौरान समाजवादी, लघु वस्तु और पूंजीवादी क्षेत्र प्रमुख होते हैं। इनके अतिरिक्त पितृसत्तात्मक कृषक अर्थव्यवस्था (प्राकृतिक अर्थव्यवस्था) और राजकीय पूंजीवाद भी रहते हैं। ये क्षेत्र (यद्यपि कोई आवश्यक नहीं है) वर्तमान रह सकते हैं।

सोवियत संघ में संक्रमण काल के दौरान पितृसत्तात्मक कृषक अर्थव्यवस्था थी और उसके साथ ही विदेशी पूंजीपतियों को सोवियत सरकार द्वारा दी गयी रियायतों के रूप में राजकीय पूंजीवाद भी था, वह सोवियत अर्थव्यवस्था में बहुत दूर तक विकसित नहीं हो सका था।

राजकीय पूंजीवाद चीन लोक जनतंत्र और कई अन्य जनवादी जनतंत्रों में काफी विकसित हुआ है।

संक्रमण काल का कार्य समाजवादी क्षेत्र का पूर्ण विकास करना, पूंजीवादी क्षेत्र का पूर्ण उन्मूलन करना और लघु वस्तु क्षेत्र को अर्थव्यवस्था के समाजवादी रूप (जिसका अर्थव्यवस्था पर पूर्ण आधिपत्य होना चाहिए) में बदलना और इस तरह समाजवाद का आधार तैयार करना है।

संक्रमण काल में वर्ग	संक्रमण काल के आर्थिक क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व वर्ग विशेष करते हैं

समाजवादी क्षेत्र सहकारी उद्यमों में एक साथ सम्मिलित मजदूर वर्ग और कृषक वर्ग

लघु वस्तु क्षेत्र छोटे और मझोले ग्रामीण किसान, शहरी दस्तकार और शिल्पकार,

पूंजीवादी क्षेत्र शहरी पूंजीपति वर्ग और धनी किसान।

पूंजीवाद से समाजवाद की ओर संक्रमण के काल में वर्गों का ढांचा उपयुक्त होता है।

इस काल में वर्गों की स्थिति पूंजीवाद की तुलना में पूर्णतया भिन्न होती है।

सर्वहारा वर्ग जो पूंजीवाद के अंतर्गत उत्पीड़ित और शोषित वर्ग रहता है, सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व की स्थापना के बाद समाज में मुख्य भूमिका अदा करता है। वह शासक वर्ग बन जाता है, राजसत्ता का प्रयोग करता है और अन्य सारी मेहनतकश जनता के साथ उत्पादन के समाजीकृत साधनों का नियंत्रण करता है।

कृषक वर्ग को समाजवादी राज्य से जमीन प्राप्त होती है, बड़े भूस्वामियों पर उसकी निर्भरता समाप्त हो जाती है, धनी किसानों के शोषण से उसकी रक्षा की जाती है और सहकारी समितियां बनाने के लिए उसे सहायता दी जाती है।

संक्रमण काल में समाजवादी राज्य की कृषक वर्ग सम्बंधी नीति का आधार लेनिनवादी सूत्र—मझोले किसानों के साथ मैत्री, गरीब किसानों के ऊपर भरोसा और धनी किसानों के विरुद्ध संघर्ष—होता है। इस नीति के अनुसरण के फलस्वरूप बहुसंख्यक किसान समाजवाद के निर्माण के कार्य में मजदूर वर्ग के सहयोगी हो जाते हैं।

संक्रमण काल में मजदूर वर्ग और किसान वर्ग ही मुख्य वर्ग होते हैं। मजदूर वर्ग किसानों के अतिरिक्त मेहनतकश जनता के सभी अन्य समूहों—श्रमजीवी बुद्धिजीवियों, शहरी दस्तकारों और हस्तशिल्पियों—को अपने इर्द गिर्द इकट्ठा करता है।

राजसत्ता और उत्पादन के बुनियादी साधनों पर से अधिकार खत्म होने के बाद पूंजीपति वर्ग संक्रमण काल में प्रमुख वर्ग के रूप में अपनी हस्ती खो देता है, यद्यपि बहुत वर्षों तक वह ताकतवर रहता है। इसका कारण यह है कि लघु वस्तु उत्पादन स्वतः एक बड़े पैमाने पर पूंजीवाद को बढ़ाता है। इसके अतिरिक्त अपना आधिपत्य खो देने के बाद भी पूंजीपति वर्ग को अन्तर्राष्ट्रीय पूंजी का समर्थन प्राप्त रहता है।

संक्रमण काल के अन्तर्विरोध

संक्रमण काल की बहुसरचनात्मक अर्थव्यवस्था और परस्पर विरोधी वर्गों की उपस्थिति के कारण कई अन्तर्विरोध पैदा हो जाते हैं।

इस काल में समाजवादी क्षेत्र सर्वव्यापी नहीं होता और न उसके अन्तर्गत राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्र ही आते हैं, उसके अन्तर्गत खासकर सम्पूर्ण कृषि नहीं आती है। इसलिए लेनिन ने बताया कि पूंजीवाद से समाजवाद की ओर संक्रमण का काल मरणासन्न पूंजीवाद और नवजात कम्युनिज्म—या यों कहें कि पूंजीवाद जो पराजित हो गया है किन्तु नष्ट नहीं हुआ है, और कम्युनिज्म जिसका जन्म हो चुका है लेकिन अभी बहुत कमजोर है, के आपसी संघर्ष का दौर है।[1]

समाजवाद और पूंजीवाद का पारस्परिक अन्तर्विरोध ही संक्रमण काल का मुख्य अन्तर्विरोध है। कौन किसको हरायेगा इसका फैसला कटु वर्ग संघर्ष के दौरान ही होता है। संघर्ष का नतीजा इस बात पर निर्भर करता है कि कृषक वर्ग किसका साथ देता है।

---

१ लेनिन, "संकलित रचनाएं," खंड ३, पृष्ठ २०९।

कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियों की सही नीति—मजदूर वर्ग और कृषक वर्ग के बीच स्थायी आर्थिक और राजनीतिक मैत्री—के कारण मजदूर वर्ग अपने नेतृत्व में कृषक वर्ग को लाने में सफल हो जाता है। इस तरह संघर्ष का परिणाम समाजवाद के पक्ष में होता है।

संक्रमण काल में अन्य अंतर्विरोध भी होते हैं। उदाहरण के लिए, कई देशों में विकसित राजनीतिक व्यवस्था और तकनीकी एवं आर्थिक पिछड़ेपन के बीच अन्तर्विरोध होता है। संक्रमण काल के दौरान यह अंतर्विरोध सोवियत संघ में भी था। कमोबेश यह बहुसंख्यक जनवादी जनतन्त्रों में मौजूद है। इसके अतिरिक्त वहां बड़े पैमाने के एकीकृत समाजवादी उद्योग और छोटे बिखरे हुए निजी स्वामित्वाधीन कृषक अर्थव्यवस्था के बीच भी अन्तर्विरोध रहता है।

संक्रमण काल के दौरान इन सभी अन्तर्विरोधों का हल समाजवादी राज्य की आर्थिक नीति के द्वारा किया जाता है।

३ संक्रमण काल के दौरान आर्थिक नीति। समाजवाद के निर्माण के लिए लेनिनवादी योजना

समाजवाद के निर्माण के लिए समुचित आर्थिक नीति (पूंजीवादी तत्वों के निराकरण और समाजवाद की विजय की गारंटी के लिए समाजवादी राज्य द्वारा उठाये जाने वाले कदम) निर्धारित करना और कार्यान्वित करना होता है।

संक्रमण काल के दौरान समाजवादी राज्य का लक्ष्य मजदूर वर्ग और कृषक वर्ग की मैत्री को सुदृढ़ करना, सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व को मजबूत करना देश की उत्पादक शक्तियों को विकसित करना, शोषक वर्गों का उन्मूलन करना और समाजवाद का निर्माण करना है।

समाजवादी मार्ग अपनाने वाले प्रत्येक देश की आर्थिक नीति का निर्धारण संक्रमण काल में अर्थव्यवस्था की स्थिति और वर्ग शक्तियों के संतुलन द्वारा होता है। किन्तु उसके मुख्य सिद्धान्त समाजवाद के निर्माण में संलग्न सभी देशों में समान रूप से लागू होते हैं।

सोवियत सरकार ने १६१८ के वसन्त में इस नीति का अनुसरण प्रारम्भ किया किन्तु फौजी हस्तक्षेप गृह-युद्ध के परिणामों तथा बर्बादियों के कारण उसे 'युद्ध कम्युनिज्म' की नीति अपनाने के लिए बाध्य होना पड़ा।

युद्ध कम्युनिज्म" के काल में सोवियत सरकार ने हिरावल दस्ते की मदद *के लिए पिछले दस्ते का समर्थन प्राप्त किया।* छोटे और मझोले उद्योग समेत सम्पूर्ण उद्योग क्षेत्र का राष्ट्रीयकरण किया गया, निजी व्यापार पर रोक लगा दी गयी अतिरिक्त अन्न को ले लिया गया (तात्पर्य यह कि फौज और मजदूरों की

माग को पूरा करने के लिए विभाना से उनका अतिरिक्त कृषि उत्पादन ले लिया गया)। गृह-युद्ध और विदेशी सशस्त्र हस्तक्षेप से उत्पन्न कठिन स्थितियों के कारण सोवियत सरकार को खाद्यान्न राशनिंग और मजदूरों की आम अनिवार्य भरती करनी पड़ी। यह एक अवश्यम्भावी अस्थायी नीति थी और उसका मुख्य उद्देश्य गृह-युद्ध और विदेशी सशस्त्र हस्तक्षेप की कठिन परिस्थितियों मे सोवियत राज्य की विजय हासिल करना था।

गृह युद्ध और विदेशी हस्तक्षेप के समाप्त होते ही १९२१ म सोवियत सरकार ने १९१८ के बसन्त मे घोषित अपनी नीति को फिर अपनाना शुरू किया। 'युद्ध कम्युनिज्म' से इस नीति को अलग करने के लिए इसे नवीन आर्थिक नीति (नेप) कहा गया। अतिरिक्त खाद्यान्न वसूली के स्थान पर खाद्य कर लगाया गया। वसूली के अन्तर्गत ली गयी खाद्यान्न की मात्रा की अपेक्षा इस कर की मात्रा कम थी। राज्य को खाद्य कर अदा करने के बाद किसान अपने शेष उत्पादन का अपनी इच्छानुसार इस्तेमाल कर सकता था। वह अपने अतिरिक्त उत्पादन को स्वतन्त्रतापूर्वक बाजार म बेच सकता था।

कृषि को उन्नत करने के लिए किसानों को आर्थिक प्रोत्साहन प्रदान करने हल्के और भारी उद्योगों के पुनर्निर्माण और आवश्यक शक्ति और साधन जुटाकर देश म पूँजीवाद के अवशेषों के विरुद्ध प्रबल प्रहार करने के लिए खाद्य कर और निजी व्यापार करने की अनुमति जरूरी थी।

सक्रमणकालीन सोवियत आर्थिक नीति का निर्माण पूँजीवादी घेरे से उत्पन्न परिस्थिति और एक देश म समाजवाद के निर्माण के सदर्भ में हुआ। जिस प्रकार नीति का कार्यान्वित किया गया, उसमे यह स्पष्ट जाहिर है।

सक्रमणकालीन सोवियत आर्थिक नीति के मुख्य सिद्धान्त अन्तर्राष्ट्रीय महत्व रखते हैं। विभिन्न देश सक्रमण काल म अपनी आर्थिक नीतियों के कार्यान्वयन के विशेष रूप और तरीके अपनाते हैं। ये रूप और तरीके उनके विकास की परिस्थितियों पर निर्भर होते हैं। समाजवादी देश अपनी आर्थिक नीतियों का कार्यान्वयन अपेक्षाकृत अनुकूल परिस्थितियों मे कर रहे हैं। हर देश सोवियत सघ के अनुभव भडार उसकी वैज्ञानिक तकनीकी और आर्थिक सहायता तथा समाजवादी बिरादरी के अन्य देशों के अनुभव और सहायता का इस्तेमाल कर सकता है।

सक्रमणकालीन आर्थिक नीति समाजवाद के निर्माण की लेनिनवादी योजना की मूर्त अभिव्यक्ति थी।

सोवियत सघ म समाजवाद के निर्माण के लिए लेनिन ने एक वैज्ञानिक योजना बनायी। इस योजना का लक्ष्य देश के तकनीकी और आर्थिक पिछड़ेपन को

खत्म करना, समाजवादी औद्योगीकरण, कृषि म समाजवादी परिवतन करना और सास्कृतिक क्रान्ति लाना था।

समाजवादी औद्योगीकरण

समाजवादी औद्योगीकरण समाजवाद के निर्माण की लेनिनवादी योजना का एक मुख्य अग है। समाजवाद का निर्माण अथ-यवस्था की सभी शाखाओ म बडे पमाने के मशीनी उत्पादन क आधार पर ही हो सकता है।

लेनिन ने लिखा 'कृषि को पुनसगठित करन म सक्षम बडे पमाने का मशीन उद्योग ही समाजवाद के निर्माण के लिए सम्भव भौतिक आधार है।'[1]

कि तु समाजवाद का माग अपनाने वाले बहुसरयक देशो को पूजीवाद स अत्यन्त विकसित भौतिक और तकनीकी आधार की विरासत नही मिली है। पूजीवाद अपने लम्बे अस्तित्व काल म सिफ कुछ देशो का ही औद्योगीकरण कर सका है। इन देशो की जनसख्या विश्व की कुल जनसख्या के १५ प्रतिशत से भी कम है। इसलिए समाजवाद के निर्माण का माग अपनाने वाले बहुसख्यक देशों के लिए औद्योगीकरण बहुत आवश्यक है।

समाजवादी औद्योगीकरण के लिए विकसित टेक्नालाजी के आधार पर कृषि समेत सम्पूण राष्ट्रीय अथव्यवस्था के आमूल पुनर्निर्माण म सक्षम बडे पमाने के उद्योगो, मुख्यत भारी उद्योगो की आवश्यकता होती है।

समाजवादी औद्योगीकरण मे उत्पादन के साधन—धातु इधन मशीन और साज सामान, इमारती सामान—उत्पन्न करने वाले भारी उद्योगो क विकास की प्राथमिकता मुख्य कडी का काम करती है। आधुनिक इजीनियरिंग उद्योग की स्थापना औद्योगीकरण के लिए विशेष महत्व रखती है।

समाजवादी औद्योगीकरण की प्रक्रिया क दौरान उद्योग और कृषि क क्षेत्र मे राजकीय और सहकारी उद्यमो के विकास के लिए भौतिक आधार तयार किया जाता है। पूजीवादी और लघु वस्तु उत्पादन के ऊपर अंतिम विजय प्राप्त करने के लिए इन्हे औद्योगीकरण से आवश्यक तकनीकी साज-सामान प्राप्त होते हैं।

सोवियत सघ के लिए समाजवादी औद्योगीकरण का विशेष महत्व था।

समाजवादी औद्योगीकरण समाजवाद के निर्माण के सभी कार्यों—पूजीवादी क्षेत्र का पूण निराकरण कृषि म समाजवादी परिवतन देश के तकनीकी और आर्थिक पिछडेपन का खात्मा—की पूर्ति की कुजी है।

समाजवादी औद्योगीकरण की नीति सोवियत सघ म १९२५ में कम्युनिस्ट पार्टी की १४वीं काग्रेस म अपनायी गयी। इस काग्रेस ने इस बात को दुहराया कि मुख्य काय देश का कम-से-कम समय म औद्योगीकरण करना है।

१ लेनिन "सकलित रचनाए" खड ३ पृष्ठ ६७१।

यह दो कारणों से आवश्यक हो गया था। प्रथम सोवियत संघ अन्य विकसित पूंजीवादी देशों की तुलना में तकनीकी और आर्थिक तौर पर पिछड़ा हुआ था। यह छोटे किसानों का देश था जहां पर आर्थिक आधार समाजवाद की अपेक्षा पूंजीवाद के विकास के लिए अधिक अनुकूल था। द्वितीय सोवियत राज्य उसे नष्ट करने (या कमजोर करने) के लिए प्रयत्नशील पूंजीवादी राज्यों से घिरा था।

इन सबके कारण अत्यन्त द्रुत समाजवादी औद्योगीकरण आवश्यक हो गया। समाजवादी अर्थव्यवस्था के फायदों और औद्योगीकरण की समाजवादी विधि (रास्ते) की विशेषताओं के कारण इसकी सफलता के प्रति सभी आश्वस्त थे।

उत्पादन के साधनों के ऊपर समाजवादी स्वामित्व होने के कारण देश का औद्योगीकरण भारी उद्योगों के विकास से सम्भव हो सका। इसके विपरीत पूंजीवादी देशों में औद्योगीकरण का आधार हल्के उद्योगों का विकास रहा है। समाजवादी आर्थिक व्यवस्था के फलस्वरूप आन्तरिक साधनों को जुटाकर उन्हें सर्वप्रथम बड़े पैमाने के मशीन उद्योग में लगाया जा सका।

सोवियत संघ के औद्योगीकरण के लिए आवश्यक कोष राष्ट्रीयकृत उद्योग कृषि घरेलू और विदेशी व्यापार तथा बैंकों की आय से प्राप्त हुआ। आन्तरिक संचय के इन सभी स्रोतों से करोड़ों रूबल प्राप्त हुए। इस तरह उद्योग और खासकर भारी उद्योग में बड़ी पूंजी का विनियोग करना सम्भव हो सका।

लड़ाई के पहले की पंचवर्षीय योजनाओं (१९२९ ४१) के दौरान उद्योग की नयी शाखाएं—ट्रैक्टर, मोटरगाड़ी रसायन मशीनी औजार, उड्डयन इत्यादि—बनीं। हजारों कारखाने बने और उनमें उत्पादन होने लगा। नये उद्यमों ने प्रधान भूमिका अदा करना शुरू किया। औद्योगिक उत्पादन में उनका बहुत बड़ा हिस्सा हो गया।

औद्योगिक कार्यक्रम की सफलता के फलस्वरूप पहली दो पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान (१९२९ ३७) सोवियत संघ एक पिछड़े हुए कृषि प्रधान देश से एक शक्तिशाली औद्योगिक शक्ति के रूप में बदल गया। उसने पूंजीवादी देशों के चंगुल से अपने को आर्थिक दृष्टि से पूर्णतया आजाद कर लिया और अपनी प्रतिरक्षा क्षमता को काफी बढ़ा लिया। समग्र औद्योगिक उत्पादन में उत्पादन के साधनों का हिस्सा १९१३ में ४२ १ प्रतिशत था जो १९३७ में बढ़कर ५७ ४ प्रतिशत हो गया। दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्त (१९३७) तक सोवियत संघ ने औद्योगिक उत्पादन के परिमाण की दृष्टि से यूरोप में पहला और विश्व में दूसरा स्थान प्राप्त कर लिया।

सोवियत संघ के सफल औद्योगीकरण ने दुनिया की अत्यन्त विकसित राजकीय व्यवस्था और जारशाही रूस से विरासत के रूप में प्राप्त दकियानूसी तकनीकी और आर्थिक आधार के पारस्परिक अन्तर्विरोध को दूर कर दिया।

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम में लिखा है 'सोवियत संघ का औद्योगीकरण मजदूर वर्ग और सम्पूर्ण जनता द्वारा सम्पन्न एक बहुत बड़ा चमत्कार था। उन्होंने कोई कोशिश उठा न रखी और देश को पिछड़ेपन की अवस्था से ऊपर उठाने के लिए उन्होंने सचेत मन से सब तरह के बलिदान किये।' १

अन्य समाजवादी देशों के लिए समाजवादी औद्योगीकरण का कम महत्व नहीं है।

जनवादी जनतन्त्रों का औद्योगीकरण सोवियत संघ की तुलना में काफी अनुकूल स्थितियों में हो रहा है। कम विकसित देश सोवियत संघ और औद्योगिक तौर पर विकसित समाजवादी राज्यों की सब प्रकार की मदद पर भरोसा करते हैं और यह मदद उनके औद्योगिक विकास के मार्ग को प्रशस्त करती तथा उसकी गति को तेज करती है।

कृषि में समाजवादी परिवर्तन

समाजवाद का मार्ग अपनाने वाले देशों की सर्वहारा सरकारों का पहला कदम कृषि में सुधार करना है। शोषकों से जमीन छीन कर मेहनतकश किसानों को दे दी जाती है।

लेनिन ने जब पार्टी का कृषि सम्बन्धी कार्यक्रम बनाया, तभी उन्होंने बतलाया कि विभिन्न देशों में भूमि सुधार सम्पूर्ण जमीन का राष्ट्रीयकरण या भूमि को किसानों की निजी सम्पत्ति बनाकर किया जा सकता है। लेनिन की भविष्यवाणी सोलहों आने सही साबित हुई है।

उदाहरण के लिए सोवियत संघ को लें। वहां समाजवादी क्रान्ति की विजय के तुरत बाद सम्पूर्ण जमीन का राष्ट्रीयकरण कर लिया गया। किसानों को हमेशा के लिए जमीन निःशुल्क इस्तेमाल के लिए दे दी गयी किन्तु राज्य जमीन का स्वामी बना रहा। जनवादी जनतन्त्रों में बड़े भूस्वामियों की जमीन छीन ली गयी। इसका अधिकांश किसानों की निजी सम्पत्ति के रूप में परिवर्तित हो गया। जमीन के सिर्फ एक हिस्से का ही राष्ट्रीयकरण किया गया और उस भाग पर राजकीय उद्यम खुले।

जमीन का राष्ट्रीयकरण और उसका किसानों के बीच वितरण अपने आप देहातों में समाजवादी उत्पादन सम्बन्धों को जन्म नहीं देता है।

---

१ 'कम्युनिज्म का मार्ग', पृष्ठ ४५८।

भूमि सुधार के बाद अर्थव्यवस्था का मुख्य रूप लघु, निजी स्वामित्व की कृषक खेती होना है किन्तु समाजवाद के लिए कृषि और उद्योग दोनों क्षेत्रों में उत्पादन के साधनों का समाजीकरण जरूरी है।

कृषि में बडे पैमाने के समाजवादी उत्पादन का कारण स्पष्ट है। समाजवाद का निर्माण दो विरोधी आधारों (बड़े पैमाने के समाजवादी उद्योग और बिखरी हुई पिछडी छोटे पैमाने की कृषक खेती) पर नहीं हो सकता। छोटे छोटे फार्मों में बहुत कम उत्पादन होता है और उन पर काम करने वाले मजदूरों की उत्पादकता बहुत कम होती है। इस प्रकार के छोटे, खण्डित, बिखरे हुए कृषक फार्म कृषि की मशीनों और विकसित तकनीकों के इस्तेमाल के मार्ग में बाधक होते हैं।

इस स्थिति में नये औद्योगिक नगरों की जनसंख्या के लिए पर्याप्त मात्रा में खाना जुटाना असम्भव हो जाता है। उद्योग को पर्याप्त मात्रा में कच्चे माल नहीं मिल पाते हैं। किसानों की खुशहाली बढाना सम्भव नहीं होता है।

लेनिन ने सहकारिता पर आधारित कृषि के समाजवादी परिवर्तन के रास्ते और तरीके बताये।

लेनिन ने सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व के अन्तर्गत काम करने वाली सहकारी समितियों और पूँजीवाद में काम करने वाली सहकारी समितियों के सैद्धान्तिक अन्तर को स्पष्ट किया। सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व में उत्पादन के अत्यन्त महत्वपूर्ण साधनों के राजकीय स्वामित्व के आधार पर कृषि सहकारी समितियों का विकास समाजवाद का विकास है। बडे पैमाने के सहकारी उत्पादन में किसानों के सम्मिलित हो जाने पर कृषि को नयी मशीनों से लैस करना सम्भव हो जाता है। किसानों के लिए कृषि सहकारी समितियाँ समाजवाद के आसान सरल और स्वीकार्य मार्ग हैं। लेनिन ने कहा कि यह देहातों में समाजवाद के निर्माण का वह रूप है जिसमें "कोई भी छोटा किसान" हिस्सा ले सकता है।

इसमें आरम्भ करते हुए लेनिन ने बतलाया कि किसान वर्ग को सहकारी समितियों के द्वारा संगठित करना समाजवाद के निर्माण का एक महत्वपूर्ण कार्य है।

लेनिन ने व तरीके बतलाये जिनके द्वारा कृषि में सहकारी समितियों के संगठन के जरिए समाजवादी परिवर्तन हो सकता है। उन्होंने स्वच्छिक सहयोग के सिद्धान्त की पुष्टि की। किसानों के ऊपर समाजवादी अर्थव्यवस्था को जबर्दस्ती नहीं लादना चाहिए। उन्होंने कहा कि सहकारिता आन्दोलन को आदेश के रूप में नहीं लादा जा सकता।

लेनिन की सहकारी योजना का सबसे महत्वपूर्ण सिद्धान्त यह है कि कृषि में सहकारिता को धीरे धीरे शुरू किया जाये। शुरू में सहकारिता प्रारम्भिक रूपों

में लागू की जाये। इस प्रकार वर्ग उन्मूलन, कृषि और किसान, माल और साधारण उत्पादक सहकारी समितियों की स्थापना कर अपनी समाजवादी यात्रा प्रारम्भ कर सकता है। यानी ये समाजवादी ढंग के सहकारी उद्यम भी बनाये जा सकते हैं।

कृषि विपणन और माल के क्षेत्र में सहकारिता के सरल रूपों का विकास और सामूहिक तथा राजकीय फार्मों पर काम के अनुभव किसानों के लिए बड़े पैमाने की समाजवादी खेती के लाभ व्यावहारिक रूप से स्पष्ट कर देते हैं। सामूहिक फार्मों को सुदृढ़ करने के लिए उन्हें व्यावहारिक आधार भी प्राप्त होता है।

कृषि में सहकारिता की सफलता के लिए मजदूर वर्ग को अपने नेतृत्व में किसानों में समाजवादी निर्माण-कार्य शुरू करना चाहिए और सर्वहारा राज्य को हर सम्भव सुविधा देनी चाहिए। राजकीय सहायता कई रूपों (किसानों के लिए खेती की मशीनों की व्यवस्था, कर्ज या बीज की व्यवस्था इत्यादि) में दी जा सकती है।

लेनिन की सहकारी योजना को सबसे पहले सोवियत संघ में कार्यान्वित किया गया। कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत सरकार के शैक्षणिक और सांगठनिक कार्यों का ही यह नतीजा था कि १९२९ के उत्तरार्द्ध में किसान बड़ी तेजी से सामूहिक खेती की ओर उन्मुख हुए। बहुसंख्यक किसान सामूहिक खेती में शामिल हुए। समूहीकरण के कारण सबसे बड़ा शोषक वर्ग (कुलक) खत्म हो गया। "कौन किसको पराजित करेगा ?"—इस प्रश्न का फैसला हर जगह देहात हो या शहर समाजवाद के पक्ष में हो गया।

समूहीकरण ने सोवियत राज्य को कृषि के क्षेत्र में एक समाजवादी आधार प्रदान किया। राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की यह शाखा अत्यन्त विस्तृत और महत्वपूर्ण होने के साथ ही सबसे अधिक पिछड़ी हुई थी। उद्योग की तरह ही कृषि का विकास भी उत्पादन के साधनों के समाजवादी स्वामित्व के आधार पर हुआ।

किसान वर्ग ने कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में मजदूर वर्ग की सहायता और समर्थन से समाजवाद का रास्ता अपनाया।

सोवियत संघ में सामूहिक खेती का मुख्य रूप कृषि आरटेल थे। यह सामूहिक फार्म व्यवस्था का एक रूप है, जो उत्पादन के बुनियादी साधनों के समाजीकरण और किसानों के सामूहिक श्रम पर आधारित होता है किन्तु इसके अंतर्गत हर किसान अपने व्यक्तिगत गौण फार्म को रखने के लिए स्वतंत्र होता है। कृषि सहकारिता सामूहिक फार्मों में शामिल किसानों के निजी और सामाजिक हितों में उचित सामंजस्य स्थापित करती है और उत्पादक शक्तियों के विकास को प्रोत्साहित करती है।

सोवियत सघ में समूहीकरण के कारण कुछ ही वर्षों मे विकसित टेक्नालाजी पर आधारित विशाल समाजवादी कृषि का निर्माण सम्भव हो सका। फलस्वरूप देश को वस्तुओ की उपलब्धि बडी मात्रा म होने लगी। सामूहिक फार्मों पर काम करने वाले किसानो की खुशहाली म काफी वृद्धि हुई।

सोवियत सघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम म बतलाया गया है 'सोवियत सघ के देहात म बडे पैमाने की समाजवादी कृषि के निर्माण का मतलब था कृषक वर्ग के आर्थिक सम्बन्धों तथा उसके जीवन यापन के ढग मे क्रान्तिकारी परिवर्तन। समूहीकरण न देहात को कुलक-गुलामी वर्ग विभेद, बर्बादी और गरीबी से सदा के लिए मुक्त कर दिया। लेनिन की सहकारी योजना के फलस्वरूप ही किसानो की स्थायी समस्या का समाधान हो सका।'[1]

अब जनवादी जनतत्रों के किसान सोवियत सघ के मेहनतकश किसानो द्वारा दिखाये गये मार्ग पर दृढतापूर्वक बढ रहे हैं। बहुसख्यक समाजवादी देशो मे कृषि क्षेत्र म समाजवादी परिवर्तन अब तक पूरा हो चुका है।

सोवियत सघ और अन्य समाजवादी देशो के अनुभवो से स्पष्ट है कि लेनिनवादी सहकारी योजना के बुनियादी सिद्धान्त आज भी समाजवाद का रास्ता अपनाने वाले हर देश के लिए सही हैं। विभिन्न समाजवादी देशो म कृषि सहकारिता की अपनी अलग विशेषताए भी हो सकती हैं।

अत कृषि के समाजवाद की ओर सक्रमण के काल म समाजवादी देशो मे जहा भूमि निजी सम्पत्ति के रूप म किसानो के बीच बाटी गयी थी, सोवियत सघ की तुलना म सहकारी खेती के अलग सक्रमणकालीन रूप सामने आये। इन फार्मों म भूमि सहकारी किसानो की सम्पत्ति के रूप म रही और आय का वितरण किये गये काम के आधार पर नहीं हुआ बल्कि सहकारी समिति म दी गयी जमीन के क्षेत्रफल और किस्म के आधार पर हुआ।

कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियो न अपने देश की मूर्त स्थितियो का ध्यान म रखकर लेनिन की सहकारी योजना की बुनियादी बातो को सृजनात्मक रूप से व्यवहार मे लागू किया है। इस प्रकार उन्होंने मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त को बढाने म अपना योगदान किया है और समाजवाद के निर्माण के क्रम म प्राप्त अनुभवो से उसे समृद्ध बनाया है।

सास्कृतिक क्रान्ति

समाजवादी देशो की मेहनतकश जनता की शिक्षा मे उन्नति होती है। ऐसा करना समाजवाद का स्वभाव ही है। मेहनतकश जनता सत्ता की बागडोर इसलिए

---

[1] कम्युनिज्म का मार्ग" पृष्ठ ४६८।

अपने हाथो मे लेती है कि उसे नये भौतिक और आध्यात्मिक मूल्य प्राप्त हो सकें।

समाजवादी उत्पादन की वास्तविक जरूरता को देखते हुए मेहनतकश जनता के सांस्कृतिक और शैक्षणिक स्तर को ऊंचा उठाना अत्यंत आवश्यक है। समाजवादी उत्पादन के विकास के लिए राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के हर क्षेत्र में काफी दक्ष, शिक्षित और सामाजिक चेतनायुक्त मजदूरो की जरूरत होती है। इसलिए हम इस सवाल को जिस तरह भी देखें, एक ही निष्कर्ष निकलता है सत्ता प्राप्त करते ही मेहनतकश जनता को शिक्षा की ओर ध्यान देना चाहिए और समाजवाद के निर्माताओ के प्रशिक्षण की व्यवस्था करनी चाहिए।

समाजवादी राज्य को पूंजीवादी व्यवस्था और उससे भी अधिक सामंतवादी व्यवस्था से विरासत के रूप में अशिक्षा और निरक्षरता मिली। इसलिए मजदूर वर्ग को प्रारम्भ से ही सारे देश के पैमाने पर आम मेहनतकश जनता की निरक्षरता और संस्कृति के अभाव को दूर करने के लिए ठोस क्रांतिकारी कदम उठाने पड़े। इसीलिए लेनिन ने निरक्षरता के उन्मूलन व्यापक शिक्षा प्रसार और सांस्कृतिक प्रबुद्धता के लिए उठाये गये कदमों को 'सांस्कृतिक क्रांति' का नाम दिया।

सांस्कृतिक क्रांति के द्वारा आम मेहनतकश जन समूह को संस्कृति की सभी उपलब्धियां प्राप्त होती हैं। अतीत में ये उपलब्धियां सिर्फ शोषक वर्गों को ही प्राप्त थी।

इतिहास के एक छोटे काल में सोवियत संघ में प्रौढ़ निरक्षरता मिटा दी गया और सार्वजनिक शिक्षा की व्यवस्था लागू की गयी। प्राथमिक सप्तवर्षीय तथा माध्यमिक स्कूलो के रूप में आम शिक्षा दी जाने लगी। सभी स्कूलों में मातृभाषा में मुफ्त शिक्षा दी जाने लगी।

उच्च शिक्षा और माध्यमिक विशेषीकृत शिक्षा के क्षेत्र में भी प्रभावकारी कदम उठाये गये। थोड़े समय में ही इस क्षेत्र ने नये सोवियत बुद्धिजीवी वर्ग का निर्माण कर लिया है। वैज्ञानिक संस्थानो की स्थापना बड़े पैमाने पर हुई है। मजदूर वर्ग के ज्ञान का व्यावसायिक तथा प्राविधिक स्तर ऊपर उठा है। इंजीनियरिंग टेक्नीशियन शिल्प उद्योग, साहित्य और कला तथा आम जनता के बीच सांस्कृतिक काम में काफी प्रगति हुई है।

सांस्कृतिक क्रांति ने मेहनतकश जनता को आध्यात्मिक दासता और अज्ञानता से मुक्त कर दिया। उसे मानवजाति द्वारा संचित सांस्कृतिक समृद्धि से परिचित कराया।

सोवियत सघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कायक्रम मे कहा गया है "वह देश जिसकी बहुसख्यक जनसख्या अशिक्षित थी, आज विज्ञान तथा सस्कृति के क्षेत्र में आश्चयजनक प्रगति कर रहा है।"[1]

४ समाजवाद की विजय

आर्थिक क्षेत्रो की विविधता की समाप्ति अथव्यवस्था, राजनीति और सस्कृति म सक्रमणकालीन आमूल क्रान्तिकारी परिवतनो के परिणामस्वरूप नये, समाजवादी समाज का निर्माण हुआ। इस तरह समाज वाद विजयी हुआ।

समाजवाद की विजय के फलस्वरूप उत्पादन के साधनो पर निजी स्वामित्व के बदले सामाजिक स्वामित्व कायम किया गया है। बहुरूपी अथ यवस्था का स्थान समाजवादी क्षेत्र न ले लिया है। समाजवादी क्षेत्र का ही बोलबाला कायम हो गया है। समाजवादी क्षेत्र न यत्रीकृत उद्यमो का रूप ले लिया है। इस प्रक्रिया मे शोषक वग खत्म हो गय हैं और मानव के शोषण का अन्त हो गया है।

समाजवाद की विजय के बाद देश के सम्पूण आर्थिक जीवन का निर्धारण और निर्देशन राजकीय नियोजन द्वारा होने लगता है। प्रतिस्पर्द्धा, उत्पादन की अराजकता और सकट सदा के लिए खत्म हो जाते हैं। सामाजिक उत्पादन का सयोजन लोगो की बढती हुई भौतिक और सास्कृतिक आवश्यकताओ की पूण सतुष्टि के लिए होता है।

समाजवाद म श्रम का वितरण लोगो के काम की मात्रा और किस्म के अनुसार होता है। यह सिद्धान्त स्थापित किया जाता है कि 'हर एक से उसकी योग्यता के अनुसार काम लिया जाये और हर एक को उसके काम के आधार पर भुगतान किया जाय।" इस सिद्धान्त के कारण समाजवादी समाज के सदस्य अपने श्रम के प्रतिफल म दिलचस्पी रखते हैं। व्यक्तिगत और सामाजिक हितो का सबसे उत्तम सम वय होता है। इस तरह यह सिद्धान्त श्रम उत्पादकता को बढाने और लोगो की आर्थिक स्थिति और खुशहाली म वद्धि क लिए प्रोत्साहन देता है। मेहनतकश जनता को यह एहसास रहता है कि वह शोषको के लिए नही बल्कि अपने लिए काम कर रही है। इसके चलते श्रम, आविष्कार, पहल तथा समाजवादी प्रतिस्पद्धा क लिए एक नया जोश उभरता है।

१९३३ ३७ के दौरान सोवियत सघ म समाजवादी परिवतनो क पूण हो जान पर समाजवादी समाज का निर्माण-काय मुख्य रूप से पूरा हो गया।

---

१ "कम्युनिज्म का मार्ग", पृष्ठ ४८८ ४९।

समाजवाद की विजय के फलस्वरूप समाज के वर्ग ढांचे में आमूल परिवर्तन हुए। मजदूर वर्ग अब उत्पादन के साधनों से वंचित न रहा। वह शोषणमुक्त होकर सम्पूर्ण जनता के साथ उत्पादन के साधनों का मालिक हो गया। वह प्रमुख वर्ग तथा सामाजिक विकास की अग्रणी शक्ति बन गया।

किसान वर्ग छोटे, बिखरे हुए उत्पादकों का वर्ग नहीं रहा। वह शोषण से मुक्त एक पूर्णतया नये वर्ग के रूप में उभरा। मजदूर वर्ग के साथ सामूहिक काम कर काम करने वाले मेहनतकश समाजवादी राज्य के संचालन में सक्रिय हिस्सा लेते हैं। स्वामित्व के दोनों रूपों के समाजवादी होने के कारण मजदूर वर्ग और किसान वर्ग में मैत्री हो जाती है। उनका सम्बन्ध सुदृढ़ तथा अक्षुण्ण हो जाता है।

जनता के बीच से एक नये बुद्धिजीवी वर्ग ने जन्म लिया है। यह वर्ग समाजवाद में निष्ठा रखता है। जनता के हित में अपने ज्ञान का रचनात्मक उपयोग करने के लिए इस वर्ग को पूर्ण अवसर प्राप्त है। बुद्धिजीवी वर्ग मजदूर वर्ग तथा कृषक वर्ग के साथ देश के मामलों के संचालन में सक्रिय रूप से शामिल है।

समाजवाद की विजय ने राष्ट्रों की आपसी राजनीतिक और आर्थिक विषमता, शहर और देहात के बीच तथा शारीरिक और मानसिक श्रम के बीच के पहले के विभेद खत्म कर दिये हैं।

चूंकि मजदूरों, किसानों और बुद्धिजीवियों के बुनियादी हित समान हैं इसलिए सोवियत जनता के बीच सामाजिक राजनीतिक और सैद्धान्तिक एकता कौमों के बीच मित्रता और सोवियत देशभक्ति की भावना विद्यमान है।

सोवियत संघ में समाजवाद की विजय के बाद आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक क्षेत्रों में होने वाले गहन परिवर्तनों को कानूनी तौर पर १९३६ में स्वीकृत सोवियत संघ के संविधान में शामिल किया गया।

समाजवादी राज्य के सम्पूर्ण जीवन का निर्माण व्यापक जनवाद के आधार पर हुआ है। सोवियतों ट्रेड यूनियनों और अन्य सामूहिक संगठनों के जरिए मेहनतकश जनता राजकीय कार्यों के संचालन तथा आर्थिक और सांस्कृतिक निर्माण की समस्याओं के समाधान में सक्रिय रूप से हिस्सा लेती है। समाजवादी समाज में व्यक्ति की स्वतन्त्रता सुरक्षित रहती है।

विश्व में सर्वप्रथम समाजवाद की मशाल प्रज्वलित करने वाली सोवियत जनता पर सामाजिक विकास के नये मार्ग के निर्माण में अग्रदूत होने का ऐतिहासिक उत्तरदायित्व है।

सोवियत संघ में समाजवाद की विजय का व्यापक अन्तर्राष्ट्रीय प्रभाव पड़ा। विश्व पूंजीवादी व्यवस्था को इससे बहुत बड़ा धक्का लगा। इतिहास के अल्पकाल में ही समाजवाद ने पूंजीवाद के ऊपर अपनी श्रेष्ठता सिद्ध कर दी।

फलस्वरूप मेहनतकश जनता का मजदूर वर्ग और समाजवाद की विश्वव्यापी विजय म अटूट विश्वास हो गया।

समाजवादी बिरादरी के देशों म समाजवाद विजय पर विजय प्राप्त करता जा रहा है।

समाजवादी औद्योगीकरण और कृषि म समाजवादी सहयोग की योजनाओं की सफलता के फलस्वरूप बहुसख्यक देशों की अथव्यवस्थाओं मे क्षेत्रों की बहुतायत का खात्मा हो गया है और समाजवादी उत्पादन-सम्बध प्रमुख हो गये हैं।

इसका मतलब है कि इन देशों ने पूजीवाद से समाजवाद के बीच सक्रमण काल को तय कर लिया है या करने ही वाले हैं।

जनवादी जनतत्रों म समाजवादी क्रान्तियों की विजय का मतलब यह है कि समाजवाद ने एक देश—सोवियत सघ—की सीमाओं को पार कर विश्व व्यवस्था का रूप धारण कर लिया है।

समाजवादी देशों म पूजीवाद को पुनस्स्थापित करने की सम्भावना का अन्त

सोवियत सघ म समाजवाद की विजय पूर्ण थी। इसका मतलब है कि देश की सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था म समाजवादी उत्पादन सम्बध स्थापित किये गये और पूजीवादी सम्बधों तथा शोषक वर्गों का उन्मूलन किया गया। समाजवाद की पूर्ण विजय के फलस्वरूप देश म नये समाज का अखण्ड राज्य हो गया।

परन्तु सोवियत सघ मे समाजवाद की जीत अन्तिम नही थी। सोवियत सघ समाजवाद का निर्माण करने वाला अकेला देश था। वह पूजीवादी घेरे के बीच पडा था। साम्राज्यवादी ताकतवर थे। इसलिए खतरा था कि अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिक्रियावादी ताकतें पूजीवादी भूस्वामी व्यवस्था को पुनस्स्थापित न कर दें।

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद विश्व की स्थिति बदली। देशों की एक बहुत बडी सख्या ने समाजवाद का रास्ता अपनाया। समाजवाद का निर्माण समाप्त कर सोवियत सघ ने पूरे पैमाने पर कम्युनिस्ट निर्माण का काम शुरू किया। पूजीवादी घेरा अब न रहा।

सोवियत सघ की बढी हुई आर्थिक और राजनीतिक ताकत तथा विश्व समाजवादी व्यवस्था के दृढ सगठन के कारण समाजवादी उपलब्धियों को मिटा देने का सवाल अब नही उठता। अब सोवियत सघ म समाजवाद की अन्तिम विजय हो गयी है। न सिर्फ सोवियत सघ मे बल्कि अन्य समाजवादी देशों म पूजीवाद के पुनस्स्थापन की सामाजिक-आर्थिक सम्भावनाए खत्म हो चुकी हैं।

सोवियत सघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम मे बताया गया है समाजवादी खेमे की सयुक्त शक्ति साम्राज्यवादी प्रतिक्रिया के विरुद्ध प्रत्येक समाजवादी

देश के लिए एक पक्की गारंटी है। समाजवादी देशों का एक खेमे के अन्तर्गत संगठन, उनकी बढ़ती हुई एकता तथा स्थायी रूप से बढ़ती हुई शक्ति इस सम्पूर्ण व्यवस्था के चौखटे के अन्दर समाजवाद और कम्युनिज्म की पूर्ण विजय को सुनिश्चित बनाती है।' [1]

समाजवाद की कामयाबियां महान ऐतिहासिक महत्व रखती हैं। मेहनतकश जनता को पूरा विश्वास होता जा रहा है कि नया समाज पूंजीवाद का स्थान ग्रहण करने के लिए निश्चित रूप से आ रहा है। यह समाज पुरानी दुनिया की तुलना में श्रेष्ठ है।

सिर्फ समाजवादी समाज में जनता को सच्ची आजादी और खुशहाली मिलती है। समाजवाद ही आदमी को उत्पीड़न से मुक्त करता है और उसे व्यापक अधिकार देता है तथा मनुष्य का भविष्य में विश्वास हो जाता है।

यही कारण है कि समाजवाद की शानदार कामयाबियां पूंजीवादी देशों की मेहनतकश जनता को अपने अधिकारों आजादी और पूंजीवादी उत्पीड़न से मुक्ति के लिए संघर्ष करने के वास्ते प्रोत्साहित करती हैं।

सोवियत संघ में समाजवाद का पूर्ण निर्माण और जनवादी जनतंत्रों में समाजवाद की सफल स्थापना मार्क्सवादी लेनिनवादी सिद्धान्तों की विजय का स्पष्ट प्रमाण है। मार्क्सवादी लेनिनवादी सिद्धान्त पूंजीवादी दासता से मेहनतकश जनता की मुक्ति और नयी सामाजिक संरचना—कम्युनिज्म—की ओर संक्रमण के मार्ग को प्रकाशित करते हैं।

---

१ "कम्युनिज्म का मार्ग", पृष्ठ ४६६।

अध्याय १०

समाजवादी समाज में उत्पादक शक्तिया और उत्पादन-सम्बध

पिछले अध्याय म हमने समाजवाद की विजय और एक विश्व "यवस्था के रूप मे उसके उदय पर विचार किया। समाजवा" क आर्थिक नियमो और कोटिया के बारे म विचार करने क पूव आवश्यक है कि हम समाजवा" समाज की उत्पादक "क्तियो और उत्पादन-सम्बधो का एक सामा य विवरण प्रस्तुत करें।

१ उत्पादक शक्तिया

समाजवादी समाज म उत्पादक "क्तियो क प्रतिनिधि स्वरूप राष्ट्रीय अथव्यवस्था की सभी "ाखाओ म प्रयुक्त उच्चतम टकनालाजी और "ोषण से मुक्त मजदूरों के श्रम पर आधारित बडे पैमाने के म"ीनी उत्पादन को ले सकते हैं।

समाजवाद के अन्तगत बडे पैमाने का म"ीनी उत्पादन नियोजित तौर पर विकसित होता है और समस्त मेहनतक" जनता की भौतिक खु"हाली को बढाता है और सास्कृतिक स्तर को ऊचा उठाता है। समाजवादी और पूजीवादी उत्पादन मे यही मौलिक विभेद है।

समाजवादी समाज में बडे पमाने के म"ीनी उत्पादन की एक महत्वपूण वि"ोपता उसका उच्च तकनीकी स्तर तथा तीव्र गति से निबाध प्राविधिक प्रगति है।

तकनीकी प्रगति

राष्ट्रीय अथव्यवस्था म तकनीकी प्रगति का अथ है वि"ान और तकनीक का स्थायी विकास तथा मेहनतक" जनता क सास्कृतिक और तकनीकी स्तरो म सुधार उत्पादन का सर्वोत्तम सगठन और उनक आधार पर सामाजिक श्रम की उत्पादकता म हर सम्भव वद्धि।

समाजवाद के अ तगत उत्पादन की विभि न शाखाओ म नियोजित रूप स निर तर तकनीकी प्रगति होती है। विज्ञान की सबस आधुनिक उपल धियो तथा समस्त मेहनतक श जनता के रचनात्मक प्रयासो का प्रयोग होता है। तकनीकी प्रगति जनता के जीवन-यापन के स्तर को स्थायी तौर पर ऊपर उठाने क उद्देश्य से सामाजिक श्रम म वद्धि करने का शक्तिशाली साधन है। वह वस्तुओ की कोटि और प्रकार म वद्धि क लिए नये अवसर प्रस्तुत करती है। इस तरह वह सामाजिक श्रम की ऊची उत्पादकता और उपभोक्ता की बढती माग को सतुष्ट करती है।

समाजवाद के अ तगत तकनीकी प्रगति की मुख्य प्रवृत्तिया हैं उत्पादन के उपकरणो म सुधार और प्राविधिक प्रगति श्रम की प्रक्रियाओ का यत्रीकरण तथा स्वयचालन राष्ट्रीय अथ यवस्था म विद्युतीकरण, उत्पादन म रसायन विज्ञान का व्यापक प्रयोग शा तिपूण उद्देश्यो की पूर्ति के लिए अणु शक्ति का इस्तेमाल। य प्रवत्तिया घनिष्ठ रूप से एक दूसरे स सम्बद्ध और अ यो याश्रित हैं। स्वयचालन के लिए यत्रीकरण एक पूवस्थिति है। यत्रीकरण और स्वयचालन का विकास उद्योग और कृषि के आधार पर होता है। कि तु व्यापक यत्रीकरण और स्वय चालन के बिना विद्युतीकरण की कल्पना ही नही की जा सकती। इसी तरह यत्रीकरण स्वयचालन और विद्युतीकरण के बिना उद्योग और कृषि का रसायनीकरण असम्भव है। साथ ही यत्रीकरण स्वयचालन और विद्युतीकरण बहुत हद तक रसायनीकरण पर निभर करते है।

उत्पादन के उपकरणों मे सुधार तकनीकी प्रगति का आधार है। इसके अ तगत कम खर्चीली और अधिक उत्पादक मशीनो के आविष्कार और प्रयोग आते है। यह टेकनालाजी के विकास के साथ अभि न रूप से सम्बद्ध है। टेकनालाजी के अ तगत कच्चे और अ य मालों के निष्कषण के तरीके, प्रासेसिंग और इस्तेमाल, नये प्रकार के कच्चे और अ य मालो क प्रयोग उच्च और अति उच्च प्रवेगो शक्ति और तापमानो तथा उत्पादन प्रक्रियाए तीव्र करन के अ य तरीको के व्यवहार आते हैं।

साज सामान के आधुनिकीकरण का तकनीकी प्रगति के लिए काफी महत्व है। प्रयोग म आने वाले साज सामान की घिसी पिटी इकाइयो भागो आदि का प्रतिस्थापन किया जाता है। इस प्रकार व्यवहार मे आने वाले साज-सामान मे सुधार और पुननवीकरण की प्रक्रिया को आधुनिकीकरण कहते है। आधुनिकीकरण उत्पादन की मात्रा को बढाता है और अपेक्षाकृत कम लागत से उद्यमो के काय म सुधार लाता है। उत्पादन के उपकरणो म सुधार देश की उत्पादक शक्तियो के निर तर विकास का आधार है।

श्रम की प्रक्रियाओं के यंत्रीकरण का समाजवाद के अन्तर्गत उत्पादन बढ़ाने की दृष्टि से काफी महत्व है। इसमें हाथ की अपेक्षा मशीनों से काम लिया जाता है। मशीनें काम को हल्का और अधिक उत्पादक बनाती हैं। व समाजवादी अर्थव्यवस्था के विकास की गति को अधिक तेज कर देती हैं।

१९६२ में सोवियत संघ की इंजीनियरिंग और धातु प्रोसेसिंग इकाइयों ने १९१३ की अपेक्षा ३५० गुना अधिक उत्पादन किया। इस कारण राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की सभी शाखाओं में व्यापक यंत्रीकरण सम्भव हो सका।

समाजवाद के अन्तर्गत व्यापक यंत्रीकरण का विकास होता है। इसका मतलब है कि सभी अंतस्सम्बद्ध उत्पादन प्रक्रियाओं (बुनियादी और सहायक दोनों) का यंत्रीकरण होता है। व्यापक यंत्रीकरण श्रम उत्पादकता को बढ़ाता तथा उत्पादन में स्वयचालन के लिए आधार तैयार करता है।

स्वयचालन (स्वयं नियमित होने वाली स्वयचालित मशीनों का प्रयोग जो हाथों से काम करने की आवश्यकता को समाप्त कर देती हैं) यंत्रीकरण का एक ऊंचा चरण है।

समाजवादी उत्पादन में स्वयचालन का व्यवहार श्रम को आसान बनाता तथा बचाता है। यह किस्म को सुधारने और लागत को कम करने में सहायता देता है। स्वयचालन (विशेषकर व्यापक स्वयचालन का सभी उत्पादन प्रक्रियाओं में प्रयोग) के कारण साज सामान की जिन्दगी बढ़ जाती है और उसका टिकाऊपन अधिक हो जाता है। शक्ति का व्यय कम मात्रा में होता है। उत्पादन के स्तर ऊंचे हो जाते हैं तथा देखरेख करने वाले कर्मचारियों की संख्या में कमी हो जाती है। फलस्वरूप सामाजिक श्रम की उत्पादकता काफी बढ़ जाती है।

पूंजीवाद में यंत्रीकरण और स्वयचालन के फलस्वरूप लाखों मजदूर बेकार हो जाते हैं और बेरोजगारी में वृद्धि होती है। इसके विपरीत समाजवाद में यंत्रीकरण और स्वयचालन न तो बेरोजगारी लाते हैं और न ला सकते हैं। समाजवादी समाज में उत्पादन प्रक्रियाओं का व्यापक यंत्रीकरण और स्वयचालन मेहनतकश जनता के हित में होता है। लाखों मजदूरों के काम आसान हो जाते हैं। काम का स्वरूप बदल जाता है। उत्पादकता बढ़ती है तथा कार्य दिवस छोटा हो जाता है। मानसिक और शारीरिक काम का बुनियादी विभेद खत्म हो जाता है।

उत्पादन प्रक्रियाओं का यंत्रीकरण और स्वयचालन विद्युतीकरण से अभिन्न रूप में सम्बद्ध है। विद्युतीकरण का मतलब राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की सभी शाखाओं और दैनिक जीवन में बिजली का इस्तेमाल है। आधुनिक टेक्नालाजी में शक्ति का सबसे महत्वपूर्ण स्रोत बिजली है। यह अत्यन्त आधुनिक टेक्नालाजी का आधार है। यह उत्पादन प्रक्रियाओं की गति को तेज करती है। बिजली के आधार

पर उद्योग की नयी शाखाएं (विद्युत धातु विज्ञान, विद्युत रसायन विज्ञान और धातु प्रोसेसिंग के नये तरीके) पनपी हैं।

१९६५ में सोवियत संघ का कुल विद्युत शक्ति उत्पादन ५२,००० करोड़ किलोवाट से अधिक था। १९१३ में यह उत्पादन १९० करोड़ किलोवाट था। शक्ति क्षमताओं के विकास को तेज करने के लिए सस्ते कोयले, प्राकृतिक गैस और भविष्य में उच्च ताप में चलने वाले ताप बिजलीघरों के निर्माण को प्राथमिकता दी जायेगी। साथ ही बड़े पन बिजलीघरों के निर्माण का काम भी चलेगा।

राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की तकनीकी उन्नति में सबसे बड़ा तत्व रसायनीकरण है। इसके लिए जरूरी है कि उत्पादन के रासायनिक तरीकों का विकास हो और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की सभी शाखाओं में उनका इस्तेमाल हो। व्यापक पैमाने पर रसायनों एवं रासायनिक वस्तुओं के इस्तेमाल से राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की सभी शाखाओं में तीव्र विकास को बढ़ावा मिलता है।

उत्पादन के क्षेत्र में भारी पैमाने पर परिवर्तन के लिए रसायनशास्त्र को विद्युत शक्ति का सहारा लेना पड़ता है। प्राकृतिक पदार्थों के गुण में परिवर्तन करने, प्रकृति में न पाये जाने वाले गुणों से युक्त नये पदार्थों का निर्माण करने, यानी श्रम की वस्तु में कई गुनी वृद्धि करने तथा उद्योग एवं कृषि के क्षेत्र में उत्पादन की मात्रा को तेज करने में लोगों का दखल बढ़ जाता है।

कृत्रिम पदार्थों के उत्पादन में रसायनविज्ञान की नयी शाखाओं (जैसे अणु शक्ति का विकास, रेडियो इलेक्ट्रानिक्स, राकेट विज्ञान आदि) के विकास का

राकट मावियत सघ ने ही भेजे। लेनिन अणुशक्ति वर्फ-तोडक भी यही बना। सोवियत विनान और टक्नालाजी की उपलब्धिया के य मापदण्ड हैं।

आदमी का अन्तरिक्ष म भेजना सोवियत वैज्ञानिको और इजीनियरो की शानदार उपलब्धि है।

समाजवादी देशा की कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टिया सदैव तज टेक्नालाजिकल प्रगति चाहती हैं। सोवियत सघ की कम्युनिस्ट पार्टी की २२वी काग्रेस ने सोवियत सघ की तक्नीकी प्रगति के लिए एक शानदार कायक्रम बनाया। विनान और टक्नालाजी द्वारा सृजित प्रत्येक चीज के पूण उपयोग की आवश्यकता पर जोर दिया गया। उद्योग के व्यापक यत्रीकरण और स्वयचालन की गति तज करने अत्यन्त आधुनिक मशीनी औजार बनाने उत्पादन स्तर निश्चित करने, स्वयचालन लाने तथा उत्पादन प्रक्रियाए उन्नत करने पर जोर दिया गया।

समाजवाद का भौतिक और तक्नीकी आधार समाज का भौतिक और तक्नीकी आधार उत्पादक शक्तियों के विकास के स्तर पर निभर करता है। वह उत्पादन के प्रभावी सम्बधो के अनुकूल होता है।

समाजवाद अपना भौतिक और तक्नीकी आधार बनाता है। वह धीरे धीरे कम्युनिज्म के आधार के रूप म विकसित हो जाता है। समाजवाद का भौतिक और तक्नीकी आधार राष्ट्रीय अथव्यवस्था की सभी शाखाओ मे नियोजित ढग से विकसित होने वाले बडे पैमाने व मशीनी उत्पादन पर निभर है। बडे पैमाने के मशीनी उत्पादन के विकास म उत्पादन के साधनो के उत्पादन को प्राथमिकता दी जाती है।

बडे पैमाने के मशीनी उत्पादन के होने पर श्रम के आधुनिक उपकरणो, वैज्ञानिक और तक्नीकी उपलब्धियो तथा विकसित टक्नालाजी का सम्पूण समाज द्वारा समाज के पैमाने पर इस्तेमाल सम्भव है। इस तरह बडे पैमाने का मशीनी उत्पादन श्रम उत्पादकता के निरतर विकास को प्रोत्साहित करता है। इस कारण समाजवादी समाज श्रम के बोझ को हल्का करता है और काय दिवस छोटा बनाता है। इस प्रकार समाजवादी समाज औद्योगिक कर्मियो के सास्कृतिक और तक्नीकी स्तर म स्थायी सुधार लाने के लिए पर्याप्त समय की बचत करता है।

उद्योग म सकेन्द्रण के रूप मे समाजीकरण का ऊचा स्तर, विशेषीकरण और सहयोग समाजवाद के भौतिक और तक्नीकी आधार के विशिष्ट लक्षण हैं। सकेन्द्रण न सिर्फ उत्पादन का होता है बल्कि श्रम शक्ति और उत्तरोत्तर विस्तृत होने वाले उद्यमों के उत्पादन का भी होता है। समाजवादी उत्पादन म सकेन्द्रण का स्तर विश्व म सबसे अधिक है। सकेन्द्रण का एक रूप सयोजन है।

एक-दूसरे से उत्पादन प्रक्रिया द्वारा सम्बद्ध उद्योग की विभिन्न शाखाओं में एक विशाल उद्यम में संकेन्द्रण को उत्पादन का संयोजन कहते हैं। उदाहरण के लिए, मैग्नीतोगोर्स्क मेटेलर्जिकल कम्बाइन के अन्तर्गत लोहे और इस्पात के उत्पादन का पूरा चक्र आता है। चक्र का मतलब खनन और कोक भट्ठी उत्पादन के लिए विशाल लोहे और इस्पात खाता और औद्योगिक उद्यमों गलनरोधियों (रिफैक्टरीज) इत्यादि से है। संयोजन एक समन्वित टेक्नालाजिकल उत्पादन इकाई होता है।

संयोजन का एक और उदाहरण तेल की व्यापक रासायनिक प्रासंगिता के लिए तल और रासायनिक कम्बाइनें भी हैं। ये पेट्रोल और चिकनाई (लुब्रिकेन्टस) कृत्रिम रबड़ और स्प्रिट एसेटिक तेजाब, एसीटोन प्लास्टिक और अन्य जैव रासायनिक वस्तुएं उत्पन्न करती हैं। लकड़ी और कागज खाद्य कपड़ा और अन्य उद्योगों में उत्पादन संयोजन काफी प्रचलित हैं।

विस्तृत, नियोजित विशेषीकरण और सहयोग समाजवाद के भौतिक और तकनीकी आधार के विशिष्ट लक्षण हैं। विशेषीकरण उस प्रकार के उद्यमों को अलग कर लेने की प्रक्रिया है जिसमें स्वभावत खास प्रकार के साज-सामान उत्पादन प्रक्रियाएं और विशेष प्रशिक्षित कर्मचारी होते हैं जो खास तरह के तैयार माल या उनके हिस्सों को बनाते हैं।

विशेषीकरण उद्यमों के बीच श्रम विभाजन पर निर्भर होता है। विशेषीकृत उद्यमों में अत्यधिक उत्पादक साज सामानों मानकीकरण तथा विस्तृत स्वयं संचालन और यन्त्रीकरण का बड़ी मात्रा में पंक्ति प्रवाही उत्पादन के प्रयोग के लिए काफी अवसर होते हैं। विशेषीकरण से श्रम उत्पादकता में स्थायी वृद्धि होती है।

विशेषीकृत उद्यमों में पारस्परिक घनिष्ठता आवश्यक है। यह सम्बन्ध सहयोग द्वारा स्थापित होता है। समाजवाद के अन्तर्गत कई उद्यम एक साथ मिलकर कोई वस्तु उत्पन्न करते हैं यद्यपि वे उद्यम आर्थिक दृष्टि से स्वतन्त्र होते हैं। ऐसे उद्यमों के बीच स्थायी सम्बन्धों की नियोजित स्थापना ही सहयोग है।

क्षेत्रों के भीतर सहयोग और क्षेत्रों के बीच सहयोग में अन्तर करना आवश्यक है। जब एक ही आर्थिक क्षेत्र में स्थित उद्यमों के बीच सम्बन्ध स्थापित किये जाते हैं तो पहले प्रकार का सहयोग होता है किन्तु जब भिन्न आर्थिक प्रशासकीय क्षेत्रों में स्थित उद्यमों के बीच उत्पादन-सम्बन्ध होते हैं तो दूसरे प्रकार का सहयोग देखने में आता है।

समाजवादी उद्योग के विशेषीकरण के उपयुक्त स्वरूप कृषि समेत उसकी सभी शाखाओं में मिलते हैं। कृषि की फली फूली हुई व्यवस्था उत्पादन के विशेषीकरण से घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध है।

उत्पादन का विशेषीकरण और सहयोग न सिर्फ एक देश में विकसित होता है, बल्कि समाजवादी देशों के बीच भी होना है।

वैज्ञानिक और तकनीकी प्रगति के परिणामस्वरूप अर्थव्यवस्था में प्राप्त उच्च तकनीकी स्तर समाजवाद के भौतिक और तकनीकी आधार का विशिष्ट लक्षण है। समाजवादी अर्थव्यवस्था में जहां भी मशीन का प्रयोग लाभप्रद होता है (यानी श्रम की बचत होती है और काम आसान हो जाता है) वहां उसे काम में लाया जाता है।

अत्यन्त विकसित तकनीक पर आधारित बड़े पैमाने के उद्यम समाजवादी समाज में उत्पादक शक्तियों का एक पक्ष हैं। दूसरे पक्ष का प्रतिनिधित्व श्रम दक्षतासम्पन्न लोग करते हैं।

भौतिक धन के उत्पादन के दौरान लोग श्रम के उपकरणों को उन्नत करते हैं मशीनों का आविष्कार करते हैं और प्राकृतिक वैभव का इस्तेमाल करते हैं।

मेहनतकश जनता—समाज की मुख्य उत्पादक शक्ति

इस प्रकार वे अपने अनुभव और तकनीकी जानकारी को बढ़ाते हैं और पूर्ण करते हैं। अकेले लोग नयी तकनीक प्रारम्भ करते हैं। इस प्रकार उत्पादन को बढ़ाने में जनता ही निर्णायक भूमिका अदा करती है। लेनिन ने कहा था कि मानवजाति की पहली उत्पादक शक्ति मेहनतकश हैं। राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की सभी शाखाओं में बड़े पैमाने के मशीनी उत्पादन और तकनीकी प्रगति के लिए बड़ी संख्या में दक्ष और प्रशिक्षित मजदूरों की आवश्यकता होती है। समाजवादी समाज को इस बात में दिलचस्पी रहती है कि लोगों की तकनीकी योग्यता और सामान्य सांस्कृतिक स्तर क्रमिक रूप में ऊंचे उठें। सोवियत संघ में राजकीय व्यावसायिक और तकनीकी स्कूलों के द्वारा दक्ष मजदूरों को नियोजित रूप से प्रशिक्षित किया जाता है। विभिन्न प्रकार के पाठ्यक्रम और कक्षाओं तथा सामूहिक और व्यक्तिगत प्रशिक्षण के फलस्वरूप प्रतिवर्ष बहुत बड़ी संख्या में प्रशिक्षित दक्ष कर्मचारी कारखानों में भेजे जाते हैं।

सायंकालीन कक्षाओं तकनीकी स्कूलों और उच्चतर शैक्षणिक संस्थानों द्वारा नौजवान मजदूरों को एक बहुत बड़ी संख्या को विशेषीकृत और सामान्य शिक्षा दी जाती है। सामान्य शिक्षा के पुनर्संगठन द्वारा स्कूली पाठ को उत्पादक काम के साथ जोड़ दिया गया है। सोवियत संघ में अत्यन्त शिक्षित और दक्ष कर्मचारियों के प्रशिक्षण को उन्नत करने में इसका काफी हाथ है।

समाजवाद के द्वारा पूरी मेहनतकश जनता सांस्कृतिक और तकनीकी विकास के उच्चतम शिखर पर पहुंच जाती है। यह मेहनतकश जनता के व्यवसाय के बदलते ढांचे और शिक्षा के उच्च स्तर द्वारा जाहिर है। विशेषीकृत माध्यमिक

या उच्चतर शिक्षा (नौकरी पेशे वाला को छोडकर) पाये लोगो की सख्या रूस म १६१३ म १ ६०,००० थी, जो १६६२ म वढकर ६६ ५६,००० हो गयी।

बडे पमाने के मशीनी उत्पादन के विकास के फलस्वरूप मजदूर वग की सख्यात्मक सरचना भी बदली है। सोवियत सघ म महनतकशो और अय रोजगार प्राप्त लोगो की कुल सख्या १६२८ म १ करोड ८ लाख थी। यह सख्या १६६५ म ७ करोड ३० लाख तक पहुच गयी।

लोगो के अभूतपूव सृजनात्मक कायकलाप के लिए समाजवादी व्यवस्था ही जिम्मेदार है। समाजवाद के अन्तगत काम करने वाले प्रत्येक व्यक्ति की दिलचस्पी श्रम उत्पादकता को बढाने मे और उत्पादक शक्तियो के स्थायी और द्रुत विकास म होती है, क्योकि वहा प्रत्येक व्यक्ति अपने और अपने समाज के लिए काय करता है।

२ उत्पादन-सम्बध

समाजवादी उत्पादन सम्बध पूजीवादी तथा उत्पादन के साधनो के निजी स्वामित्व पर आधारित अन्य सामाजिक सरचनाओ के उत्पादन-सम्बधो से मूलत भिन्न होते हैं।

समाजवादी उत्पादन सम्बधो का आधार

समाजवादी उत्पादन सम्बधो का आधार उत्पादन के साधनों का सामाजिक स्वामित्व है। राष्ट्रीय अथ व्यवस्था की सभी शाखाओ म उत्पादन के साधना पर सामाजिक स्वामित्व होता है।

उत्पादन के साधनो और उपभोग की सामग्रियो के ऊपर स्वामित्व सदा रहा है और रहेगा। झूठ बोलने वाले ही कहते हैं कि कम्युनिस्ट सब प्रकार के स्वामित्व को खत्म कर देना चाहते हैं। वैज्ञानिक समाजवाद के कायक्रम सम्बधी सबसे पहली दस्तावेज कम्युनिस्ट घोषणापत्र म मार्क्स और एगेल्स ने लिखा था 'कम्युनिज्म की मुख्य विशेषता सब प्रकार की सम्पत्ति का उन्मूलन नही बल्कि पूजीवादी सम्पत्ति का उन्मूलन है।'[१]

उत्पादन-सम्बधो की किसी व्यवस्था म यह बात बहुत महत्व रखती है कि मजदूर किस रूप म उत्पादन के साधनो से सम्बद्ध हैं। पूजीवाद के अन्तगत दोनो एक दूसरे से सम्बद्ध नही रहते। चूकि उत्पादन के साधन पूजीपतियो की सम्पत्ति होते हैं इसलिए मजदूरो और उत्पादन के साधनो के बीच विरोध रहता है। फलस्वरूप महनतकश जनता पूजीवाद के अन्तर्गत निजी स्वामित्व के उन्मूलन के लिए अविराम सघष करती रहती है।

१ मार्क्स और एगेल्स, "सकलित रचनाए", खण्ड १, पृष्ठ ४७।

समाजवादी समाज मे मेहनतकशो का उत्पादन के साधनो से कोई विरोध नही होता। इसीलिए समाजवाद मे मेहनतकश लोग समाजीकृत स्वामित्व को पूरी तरह मजबूत बनाने और विकसित करने मे दिलचस्पी रखते हैं।

उत्पादन के साधनो के समाजीकृत स्वामित्व का क्या मतलब है ? सर्व प्रथम इसका मतलब यह है कि उत्पादन के साधनो पर काम करने वाले लोगो का अधिकार रहता है। उत्पादन के साधन समाजवादी समाज मे न पूजी होते हैं और न ही शोषण के साधन।

उत्पादन के साधनो का समाजीकृत, समाजवादी स्वामित्व ही लोगो के पारस्परिक उत्पादन विनिमय और वितरण सम्बधो को निश्चित करता है। शोषणमुक्त लोगो के बीच सौहार्दपूर्ण सहयोग और समाजवादी पारस्परिक सहायता तथा "हर एक को उसके काम के अनुसार" वेतन के सिद्धान्त के आधार पर वस्तुओ का मेहनतकश जनता के हित मे वितरण इन सम्बधों मे मुख्य हैं।

जब उत्पादन के साधनो पर मेहनतकश जनता का अधिकार होता है और समाज का प्रत्येक सदस्य तथा पूरा समाज उत्पादन को बढाने मे दिलचस्पी लेता है, तो लोगों के सम्बध निस्सदेह मत्रीपूर्ण होते हैं। उपभोग के लिए अधिकाधिक वस्तुओ के उत्पादन के प्रयास मे लोग एक दूसरे की दिल खोलकर सहायता करते हैं जिससे काफी सफलता प्राप्त की जा सके। समाजवादी समाज के शोषणमुक्त सदस्यो—मजदूर वर्ग किसान वर्ग और बुद्धिजीवी वर्ग—के हितो की समानता मत्रीपूर्ण सहयोग और समाजवादी पारस्परिक सहायता का आधार है। ये सम्बध उद्यमो के भीतर विभिन्न उद्यमों के बीच राजकीय उद्यमो और सामूहिक फार्मों के बीच और मजदूर वर्ग तथा किसान वर्ग के बीच विकसित होते हैं। मत्रीपूर्ण सहयोग और पारस्परिक सहायता तथा सजनात्मक क्रियाशीलता के सम्बध उत्पादक शक्तियो के विकास के लिए असीमित अवसर प्रदान करते हैं।

उत्पादन के सामाजिक चरित्र और उत्पादन के फल प्राप्त करने के निजी पूजीवादी रूप के अतर्विरोध को समाजवाद दूर करता है। समाजवाद मे श्रम के उत्पादन का सामाजिक उपभोग उत्पादन के सामाजिक चरित्र के अनुकूल होता है। इसीलिए उत्पादन के समाजवादी सम्बध उत्पादक शक्तियो के द्रुत निर्बाध विकास के लिए महान अवसर प्रदान करते हैं।

इनके विकास के साथ उत्पादन के समाजवादी सम्बध धीरे धीरे बदलते और उन्नत होते हैं। ये उत्पादक शक्तियो की दृष्टि से निष्क्रिय नही रहते। वे उन्नत होकर उत्पादक शक्तियो के विकास के लिए असीमित अवसर प्रदान करते हैं।

पूँजीवाद से समाजवाद की ओर संक्रमण काल के दौरान समाजवादी सम्पत्ति का जन्म होता है। मजदूर वर्ग द्वारा राजनीतिक शक्ति प्राप्त कर लेने के बाद एक ओर बड़े पैमाने की पूँजीवादी सम्पत्ति होती है। वह उसका राष्ट्रीयकरण कर उसे समाजवादी राज्य को सौंप देता है। यही राजकीय समाजवादी सम्पत्ति की शुरुआत है। दूसरी ओर व्यक्तिगत श्रम पर आधारित किसानों, हस्तशिल्पकारों और दस्तकारों की छोटी निजी सम्पत्ति होती है। ये छोटे और मझोले वस्तु उत्पादक उत्पादक सहकारी समितियों में स्वेच्छा से शामिल हो जाते हैं। उनकी सम्पत्ति सहकारी सिद्धान्तों के आधार पर समाजीकृत हो जाती है। यह सामूहिक फार्म और सहकारी सम्पत्ति की शुरुआत है।

समाजवादी सम्पत्ति के दो रूप

स्पष्ट है कि समाजवाद के अन्तर्गत सामाजिक सम्पत्ति के दो रूप होते हैं

१) राजकीय (सार्वजनिक) सम्पत्ति, यह समस्त जनता की सम्पत्ति होती है।
२) सामूहिक फार्म और सहकारी सम्पत्ति यानी सामूहिक फार्मों और सहकारी संगठनों की सम्पत्ति। समाजवादी सम्पत्ति के दो रूप होने के कारण समाजवादी उद्यमों के दो रूप---राजकीय तथा सामूहिक फार्म और सहकारी उद्यम---होते हैं। इनका सामाजिक स्वरूप समान होता है। सभी समाजवादी देशों में राजकीय (सार्वजनिक) सम्पत्ति ही सम्पत्ति का मुख्य रूप होती है।

सोवियत संघ में राजकीय (सार्वजनिक) सम्पत्ति के अन्तर्गत भूमि, खनिज सम्पदा, पानी, वन, कारखाने, खानें, जल और वायु परिवहन, बैंक, संचार व्यवस्था, राजकीय फार्म, मरम्मती और सर्विसिंग स्टेशन, राजकीय व्यापार और अन्य उद्यम, सामुदायिक सुविधाएं, शहरों तथा मजदूरों की रिहायशी बस्तियों में कुल आवास व्यवस्था और राजकीय उद्यमों के उत्पादन आते हैं।

सोवियत संघ में २ ००,००० राजकीय औद्योगिक उद्यम हैं। इनके अतिरिक्त सम्पूर्ण रेल व्यवस्था (१९६२ में स्थायी मार्गों की कुल लम्बाई १ २७,७०० किलोमीटर थी), वायु परिवहन और नौपरिवहन करीब ८ ६०० राजकीय फार्मों इत्यादि पर सम्पूर्ण जनता का अधिकार है।

सोवियत संघ में सामूहिक फार्म और सहकारी सम्पत्ति के अन्तर्गत ४० ५०० सामूहिक फार्म---खेती की मशीनें (ट्रैक्टर, कम्बाइनें, इत्यादि) फार्म की इमारतें सामूहिक स्वामित्व के अन्तर्गत रहने वाले भारवाही पशु मांस और दूध देने वाले पशु कच्चे माल को प्रोसेस करने वाले सहायक उद्यम सामूहिक बिजलीघर सांस्कृतिक सुख-सुविधाओं तथा सामुदायिक सेवाओं की विस्तृत व्यवस्था और सामूहिक फार्मों और अन्य सहकारी उद्यमों के उत्पादन---आते हैं।

सावजनिक स्वामित्व वाली सामूहिक सम्पत्ति स्थायी रूप से बढ़नी है। उदाहरण के लिए १९६२ म सामूहिक फार्मों की वितरित न होन वाली परि सम्पत्ति १९३२ की तुलना म ६० गुनी बढ़ी।

सम्पत्ति का सहकारी रूप न सिफ कृषि म बल्कि उपभोक्ता सहकारी समितियो के रूप म व्यापार म भी देखन को मिलता है। इन उपभोक्ता सहकारी समितियो के सदस्य मुख्यत गावा क लोग होते हैं।

सोवियत सघ क सहकारी सगठनो के य मुख्य रूप हैं। सगठनो के य रूप *अन्य समाजवादी देशो म भी देखन को मिलत हैं।*

आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से राजकीय (सावजनिक) सम्पत्ति और सामूहिक फाम तथा सहकारी सम्पत्ति समान कोटि की हैं। प्रथम दोनो उत्पादन के समाजीकृत समाजवादी साधनो पर आधारित हैं द्वितीय, इन दोनों म मनुष्य द्वारा मनुष्य क शोषण का अभाव है ततीय दोनो की अथव्यवस्था नियोजित ढग से महत्तम जनता की खुशहाली बढाने के लिए होनी है और चतुथ दोनो *प्रकार की सम्पत्तियो म 'हर एक को उसके काय क अनुसार मजूरी' मिलती है।*

इसका मतलब यह नही है कि इन दो प्रकार की सम्पत्तियो मे कोई अन्तर नही है। राजकीय सम्पत्ति और सहकारी तथा सामूहिक फाम की सम्पत्ति म मुख्य अन्तर उत्पादन के साधनो क समाजीकरण की दृष्टि से है। राजकीय उद्यमो म उत्पादन के समस्त साधनो का समाजीकरण होता है। वे सम्पूण जनता की सम्पत्ति होत हैं। किन्तु सहकारी और सामूहिक फाम उद्यमो म उत्पादन क साधनो पर *लोगो के अलग-अलग समूहो (फाम या सहकारी सगठनो) का स्वामित्व रहता है।* राजकीय उद्यमो क उत्पादन पर सम्पूण जनता की मिल्कियत रहती है जबकि सामूहिक खेती के उत्पादन पर फाम विशेष का अधिकार रहता है।

उत्पादन के समाजीकरण के स्तर म भिन्नता के कारण उत्पादन प्रक्रिया *म सम्मिलित लोगो को मिलन वाले भुगतान*[१] *तथा प्रबन्ध के रूप अलग-अलग होते* हैं। राजकीय उद्यमो का प्रशासन समाजवादी राज्य अपन प्रतिनिधियो—मन्त्रालयों *के द्वारा करता है।* डायरेक्टरों की नियुक्ति और बर्खास्तगी राज्य करता है। सहकारी सगठनो और सामूहिक फार्मों का प्रशासन सदस्यो की साधारण सभा और सदस्यो द्वारा चुनी गयी व्यवस्थापक परिषद और उसके अध्यक्ष के जिम्मे होता है।

उत्पादक शक्तियो म विकसित होने के साथ सामूहिक फाम उत्पादन उत्त रोत्तर समाजीकृत होता जाता है। सामूहिक फाम और सहकारी सम्पत्ति राष्ट्रीय सम्पत्ति के रूप म बदल जाती है। कम्युनिज्म क निर्माण की प्रगति के साथ सामूहिक

१ देखें अध्याय १४।

फाम और सहकारी सम्पत्ति राजकीय सम्पत्ति म मिल जायेगी और सामाजिक स्वामित्व पर आधारित कम्युनिस्ट सम्पत्ति का एक ही रूप रह जायेगा।[१]

व्यक्तिगत सम्पत्ति

समाजवाद मे सामाजिक सम्पत्ति के अन्तगत उत्पादन के साधन और उनके उत्पादन आते हैं। इस उत्पादन का एक भाग उपभोक्ता वस्तुओ क रूप मे होता है। इस भाग का वितरण मेहनतकश जनता के बीच होता है। इस वितरण का आधार काय की मात्रा और कोटि होता है। भुगतान के रूप मे प्राप्त उत्पादन लोगो का निजी सम्पत्ति होता है।

समाजवाद के अन्तगत व्यक्तिगत सम्पत्ति का तात्पय व्यक्तिगत उपभोग की चीजो पर निजी स्वामित्व से है। सोवियत सघ म व्यक्तिगत सम्पत्ति मे अर्जित आय और व्यक्तिगत बचत, आवास स्थान का एक भाग घरेलू और पारिवारिक वस्तुए, व्यक्तिगत इस्तेमाल तथा सहूलियत की वस्तुए, इत्यादि आती हैं।

समाजवाद क अन्तगत व्यक्तिगत सम्पत्ति का एक विशेष रूप सामूहिक फाम पर काम करने वाले किसान की घर गहस्थी है। इस सम्पत्ति मे उसका घर फाम की इमारतें पालतू मवेशी और मुर्गीखाना और खेत की जुताई के लिए खेती के औजार होते हैं। व्यक्तिगत खेत को सामूहिक फाम पर काम करने वाला किसान और उसका परिवार जोतता है। इसका अथव्यवस्था म गौण स्थान है। सामूहिक फाम की अथव्यवस्था के विकास के साथ ऐसी सम्पत्ति का महत्व खत्म हो जायगा।

समाजवादी समाज म व्यक्तिगत सम्पत्ति का स्रोत सामाजिक उत्पादन म सहयोग है। समाजवाद के अन्तगत उत्पादन के साधनो का समाजवादी स्वामित्व ही वह दृढ आधार है जिससे मेहनतकश जनता की जरूरतें अधिकाधिक पूरी होती जायँगी और उसकी निजी सम्पत्ति म वृद्धि होती जायगी। काय की मात्रा और कोटि के अनुसार भुगतान किया जाता है। इस तरह व्यक्तिगत भौतिक प्रोत्साहन के सिद्धान्त को व्यावहारिक रूप म सुनिश्चित किया जाता है। किन्तु, व्यक्तिगत सम्पत्ति मे वृद्धि की एक सीमा है।

समाजवाद क अन्तगत व्यक्तिगत सम्पत्ति का इस्तेमाल नागरिकों या सम्पूण राज्य के हित क विरुद्ध नही होता।

आर्थिक नियम

उत्पादन के साधनों के समाजवादी स्वामित्व क फलस्वरूप निम्नलिखित आर्थिक नियम जन्म लेते हैं समाजवाद क बुनियादी आर्थिक नियम राष्ट्रीय अथव्यवस्था क नियोजित सानुपातिक विकास का नियम काम के अनुसार वितरण का नियम आदि। समाजवादी आर्थिक नियम उत्पादन के समाजवादी सम्बधों के

---

१ देखें अध्याय १०, पैरा १।

सार हैं और उनका स्वरूप वस्तुगत है। उनका उद्भव और परिचालन लोगों की इच्छा या अभिलाषा के परे हैं। किन्तु इसका यह मतलब नहीं है कि आर्थिक नियम लोगों की क्रियाओं से परे स्वयचालित होने वाले प्राकृतिक नियमों के सदृश हैं। आर्थिक नियम उत्पादन-सम्बन्धों के नियम हैं अतः उनका परिचालन वहां नहीं हो सकता जहां न तो लोग हों, न सामाजिक उत्पादन। समाजवादी आर्थिक नियमों के वस्तुगत स्वरूप का सिर्फ यही मतलब है कि लोगों को अपने कार्यकलाप में इन नियमों का ध्यान रखना होता है। वे इन नियमों के परिचालन के ढंग को अवहेलना नहीं कर सकते।

समाजवाद के आर्थिक नियमों के वस्तुगत स्वरूप को नहीं समझ पाने और आर्थिक कार्यों में उनका ध्यान नहीं रखने पर प्रतिकूल नतीजे निकलते हैं। जब कभी लोग आर्थिक नियमों का उल्लंघन करते हैं आर्थिक नियम प्रतिकूल दिशा में काम करते हैं।

समाजवादी आर्थिक नियमों के काम करने का ढंग पूंजीवाद के अन्तर्गत काम करने वाले आर्थिक नियमों के ढंग से मूलतः भिन्न होता है। समाजवादी आर्थिक नियम पूंजीवादी आर्थिक नियमों की तरह स्वतः काम नहीं करते बल्कि उनका प्रयोग समाज के द्वारा चेतन मन से व्यवस्थित तौर पर होता है। जैसा कि एंगेल्स ने कहा पूंजीवादी और समाजवादी आर्थिक नियमों में वही अन्तर है जो बादल में बिजली कौंधने और बिजली के आदमी द्वारा व्यवहार में है।

समाजवादी स्वामित्व लोगों की क्रियाओं को एक अर्थव्यवस्था के रूप में एक नेतृत्व के अन्तर्गत सूत्रबद्ध करता है। समाजवाद के अन्तर्गत समाज के स्वतः विकास का सवाल ही नहीं उठता। पूरे समाज के पैमाने पर समाजवादी आर्थिक नियमों का चेतन मन से प्रयोग सम्भव और आवश्यक हो जाता है। उदाहरण के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण आर्थिक समस्याओं के समाधान के लिए बिना एक केन्द्रीय संगठन बनाये अर्थव्यवस्था का नियोजित विकास असम्भव है। बिना एक सूत्रबद्ध राजकीय नेतृत्व के उद्यम विशेषों की योजना का सब महत्व खत्म हो जायगा अन्यथा उनमें से प्रत्येक बाजार में अपने आप होने वाले उतार-चढ़ावों के अनुकूल काम करेगा। स्वतः प्रवृत्ति और समाजवाद में असंगति और परस्पर अपवर्जन का सम्बन्ध है।

समाजवादी आर्थिक नियम निश्चित परिस्थितियों में उत्पन्न होते और काम करते हैं। इसलिए जब परिस्थितियां बदल जाती हैं तब आर्थिक नियमों के परिचालन का क्षेत्र या तो बढ़ता है या घटता है। परिचालन क्षेत्र के संकुचित होने पर वे नियम धीरे धीरे खत्म हो जाते हैं।

उदाहरण के लिए राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के नियोजित, सानुपातिक विकास के नियम की भूमिका कम्युनिस्ट स्वामित्व की ओर संक्रमण के साथ महत्वपूर्ण होता जाती है। काम के अनुसार वितरण के नियम का परिचालन क्षेत्र कम्युनिज्म की ओर संक्रमण के दौरान कम होता जाता है। पूर्ण विकसित कम्युनिस्ट समाज में वितरण का आधार जरूरत रहेगा इसलिए यह नियम वहा खत्म हो जायगा।

समाजवाद के आर्थिक नियमों का वैज्ञानिक ज्ञान प्राप्त होने पर ही उनका स्वरूप उपस्थित किया जा सकता है और कम्युनिस्ट पार्टी तथा समाजवादी राज्य की नीति को कार्यान्वित किया जा सकता है। इन सबका लक्ष्य कम्युनिज्म का निर्माण करना होता है।

३ समाजवाद के बुनियादी आर्थिक नियम

अन्ततोगत्वा समाजवाद के अन्तर्गत अपनी बहतरी की मेहनतकश जनता की चिरकालीन आशाएं पूरी होती हैं। समाजवादी उत्पादन का संगठन समाज के सभी सदस्यों की भौतिक और आध्यात्मिक आवश्यकताओं की सतुष्टि के लिए होता है। यही उसका प्रत्यक्ष लक्ष्य और पूरा मकसद है। सिर्फ लोगों के जीवन यापन के स्तर को ऊंचा उठाने और सम्पूर्ण जनता की बढ़ती हुई आवश्यकताओं की पूर्ण सतुष्टि के लिए ही समाजवादी उत्पादन सफलतापूर्वक विकसित किया जा सकता है।

जैसा कि सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम में कहा गया है, समाजवाद का लक्ष्य लोगों की दिनोदिन बढ़ती भौतिक और सांस्कृतिक जरूरतों को पूरा करना है। वैज्ञानिक कम्युनिज्म के प्रतिपादकों ने भी इस ओर संकेत किया था।

समाजवादी समाज की चर्चा करते हुए मार्क्स और एंगेल्स ने कहा कि पूंजीवादी समाज में पैसा बनाना हर प्रकार के व्यवसाय का लक्ष्य है और पूंजीपतियों द्वारा अधिशेष मूल्य प्राप्त करना ही उत्पादन का प्रयोजन और अन्तिम परिणाम है। समाजवाद के अन्तर्गत उत्पादन का विकास समाज और उसके सभी सदस्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए होना है। एंगेल्स ने लिखा वर्तमान उत्पादक शक्तियों के वास्तविक स्वरूप को इस तरह समझ लेने पर उत्पादन की सामाजिक अराजकता खत्म हो जाती है और उसका स्थान समुदाय और प्रत्येक व्यक्ति की आवश्यकताओं की दृष्टि से उत्पादन का एक निश्चित योजना के आधार पर सामाजिक नियमन ले लेता है।"[१]

---

[१] फ्रेडरिक एंगेल्स ड्यूहरिंग मत खंडन," पृष्ठ ३८७ ८८।

लेनिन ने बताया कि समाज के सभी सदस्यों की समृद्धि और उनके सम्पूर्ण विकास के लिए पूंजीवादी समाज की जगह समाजवादी समाज की स्थापना आवश्यक है। लेनिन ने इस बात पर बार बार जोर दिया कि सिर्फ समाजवाद में ही वैज्ञानिक आधार पर सामाजिक उत्पादन और वितरण को काबू में रखा जा सकता है जिससे लोगों का हित सधे और उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति हो। परिणाम स्वरूप सभी मेहनतकशों का जीवन जहां तक सम्भव हो उलझनों से परे समृद्ध और सुखी हो।

लेनिन ने बताया कि जहां पुराने जमाने में मनुष्य की प्रतिभा का इस्तेमाल कुछ लोगों को टेक्नालाजी और संस्कृति के लाभ देने और साथ ही दूसरों को प्रबुद्धि और विकास से वंचित रखने के लिए होता था, वहां समाजवाद के अन्तर्गत टेक्नालाजी के सभी चमत्कारों और संस्कृति की सभी उपलब्धियों पर जनता का अधिकार होता है। समाजवाद की स्थापना के बाद अब फिर कभी मानव प्रतिभा उत्पीड़न और शोषण का साधन नहीं बनेगी।

समाज के सभी सदस्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति ही समाजवाद के अन्तर्गत उत्पादन का वस्तुगत रूप से निर्धारित लक्ष्य होगी। समाजवाद के अन्तर्गत उत्पादन का दूसरा कोई लक्ष्य हो ही नहीं सकता क्योंकि जहां समाजवादी समाज होता है वहां उत्पादन के साधनों पर निजी स्वामित्व नहीं होता और फलस्वरूप मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण के लिए कोई आर्थिक आधार नहीं होता है। उत्पादन के सभी साधन और श्रम के फल उत्पादन के साधनों के समाजवादी स्वामित्व के आधार पर संगठित मेहनतकश जनता के अधिकार में होते हैं। उत्पादन के साधनों और श्रम के फल की स्वामी मेहनतकश जनता के आर्थिक हित ही समाजवाद के अन्तर्गत उत्पादन की मुख्य प्रेरक शक्ति हैं। सामाजिक उत्पादन का आदर्श मनुष्य के फायदे के लिए ही प्रत्येक चीज का उत्पादन करना है। समाजवादी उत्पादन की इस मुख्य विशेषता की वैज्ञानिक अभिव्यक्ति **समाजवाद के बुनियादी आर्थिक नियम** के रूप में होती है। इसका सारांश यह है कि समाजवादी उत्पादन का प्रत्यक्ष लक्ष्य उच्चतम टेक्नालाजी पर आधारित सामाजिक उत्पादन के निरन्तर विकास और उन्नति के द्वारा सम्पूर्ण जनता की बराबर बढ़ती हुई भौतिक और सांस्कृतिक जरूरतों को सदा पूरी तरह संतुष्ट करना है।

समाजवाद का बुनियादी आर्थिक नियम समाजवादी उत्पादन के लक्ष्य को बताता है और उसकी प्राप्ति के तरीकों पर भी प्रकाश डालता है। वह समाजवादी समाज की चालक शक्ति को निर्धारित करता है तथा समाजवाद और पूंजीवाद के मूल अन्तर को स्पष्ट करता है।

मार्क्सवादी लेनिनवादी पार्टी और समाजवादी राज्य जनता की भौतिक और सांस्कृतिक आवश्यकताओं की पूर्ण संतुष्टि तथा उसके सम्पूर्ण विकास के मूल मानवीय लक्ष्य को प्राथमिकता देते हैं। अर्थव्यवस्था और समाजवादी संस्कृति को विकसित करने का कार्य इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए होना है।

इस लक्ष्य की पूर्ति किस चीज पर निर्भर है? उच्चतम टेक्नालाजी के आधार पर सामाजिक उत्पादन का निरंतर विकास और सुधार ही इस लक्ष्य की पूर्ति की कुंजी है। और इसका मतलब यह है कि समाजवादी समाज में प्रत्येक मेहनतकश को यथाशक्ति मेहनत करनी चाहिए जिससे लोगों की खुशहाली बराबर बढ़े। मेहनतकश यह समझते हैं कि सामाजिक उत्पादन में निरन्तर वृद्धि ही उनके जीवन यापन के स्तर में सुधार की गारंटी होगी।

सामाजिक उत्पादन के विकास और सुधार के दौरान कम्युनिस्ट समाज की स्थापना के लिए भौतिक और आध्यात्मिक पूर्वस्थितियां बनती हैं।

फलस्वरूप समाजवाद का मूल आर्थिक नियम ही समाजवादी समाज के कम्युनिज्म की दिशा में बढ़ने तथा विकसित होने का नियम है।

समाजवादी देशों में मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों द्वारा उठाये गये सभी कदमों का उद्देश्य लोगों के जीवन-यापन के स्तर में बराबर सुधार करना है।

प्रत्येक सोवियत नागरिक कम्युनिस्ट पार्टी की नीति के नतीजों के प्रति जागरूक है। दिन प्रतिदिन सोवियत संघ में जीवन बेहतर और अधिक समृद्ध होता जा रहा है। सोवियत सत्ताकाल में सोवियत जनता के जीवन-यापन का स्तर क्रांति के पहले की रूसी मेहनतकश जनता की तुलना में अतुलनीय रूप में ऊंचा उठा है।

१९१३ की तुलना में सोवियत संघ की राष्ट्रीय आय १९६१ में २५ गुनी थी। अमरीका की राष्ट्रीय आय इसी दौरान ३.६ गुनी बढ़ी। सोवियत संघ की प्रति व्यक्ति आय १९१३ और १९६१ के बीच १८ गुनी से भी अधिक बढ़ी जबकि अमरीका ब्रिटेन और फ्रांस (१९६०) में प्रति व्यक्ति आय क्रमशः सिर्फ १.६, १.८ और १.६ गुनी बढ़ी। क्रांति के पहले के दिनों की तुलना में १९६२ में सोवियत संघ में मेहनतकश जनता की वास्तविक आय ६ गुनी और किसानों की आय ७ गुनी बढ़ी।

जीवन-यापन के ऊंचे स्तर की अभिव्यक्ति ऊंची क्रय शक्ति के द्वारा होती है।

सार्वजनिक उपभोग प्रतिवर्ष बढ़ता जा रहा है। १९६३ में जनता ने १९५३ की तुलना में १८० प्रतिशत अधिक मांस और मांसजन्य खाद्य पदार्थ, ६० प्रतिशत अधिक मक्खन और १२० प्रतिशत अधिक चीनी खरीदी।

भविष्य मे और भी अधिक राष्ट्रीय समृद्धि होगी। १९६१ ८० के दौरान प्रति व्यक्ति वास्तविक आय ३ ५ गुनी से भी अधिक बढेगी। पहले दशक मे औद्योगिक पेशेवर और दफ्तर मे काम करने वालो की आय करीब दुगुनी हो जायेगी, कम वतन पाने वाले लोगा की कमाई करीब तिगुनी हो जायगी।

जनता की आय के बढने के साथ ही जनता के उपभोग का आम स्तर भी तेजी से बढेगा। सम्पूण जनता उच्च कोटि और विविध प्रकार के खाद्य पदार्थों और उपभोक्ता वस्तुओ—वस्त्र, जूत फर्नीचर, घरेलू वस्तुआ सास्कृतिक आवश्यकता की वस्तुआ इत्यादि—की जरूरतो को पूरा करन म सक्षम हो जायगी।

बीस वर्षों म आवास की समस्या का पूण समाधान हो जायगा। पहले दशक मे आवास का अभाव खत्म हो जायेगा। दूसरे दशक के दौरान प्रत्येक परिवार को आरामदेह घर मिल जायगा जो स्वास्थ्यकर और सुसस्कृत निवास के उपयुक्त होगा। इसके लिए सोवियत सघ के कुल आवास स्थानो म तिगुनी वृद्धि करनी होगी।

काम के घटों म और भी कटौती होगी जिससे जनता के सास्कृतिक और तकनीकी स्तर म तेजी से सुधार करन का अवसर प्राप्त होगा। लोगा को विश्राम के लिए और भी समय प्राप्त होगा। कारखाना और दफ्तरा मे काम करने वाले लोगा का काय दिवस अब सात घटों का हो गया है। कुछ शाखाओं म काम करने वाला को छ घटे ही काम करने पडते हैं। १९७० के पहले ही अधिकाश मेहनतकशों के लिए छ घटे का काय दिवस या ३५ घटे का काय-सप्ताह लागू कर दिया जायगा। जमीन के भीतर और खतरनाक स्थितियों वाले उद्यमों मे काम करन वालों के लिए ३० घटे का काय सप्ताह होगा। १९७० और १९८० के बीच काय-सप्ताह और भी छोटा किया जायगा।

साथ-साथ सभी मेहनतकश जनता की वार्षिक सवेतनिक छुट्टी तीन हफ्तों की होगी जो आगे चलकर एक महीने की हो जायगी। बीस वर्षों मे सावजनिक स्नान-पान छुट्टी की सुविधा डाक्टरी देखभाल, इत्यादि सावजनिक आवश्यकताए पूणतया पूरी हो जायेंगी।

जनता की खुशहाली बढान के लिए कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा बताय गये कार्यों की पूर्ति के बाद सोवियत सघ पूजीवादी देशा की अपेक्षा उच्चतर जीवन यापन का स्तर प्राप्त कर लेगा।

४ समाजवादी राज्य की आर्थिक भूमिका

उत्पादक शक्तियो का विकास और उत्पादन-सम्बधों में सुधार अपन आप नही होते। समाजवादी निर्माण के हर चरण में उत्पादन, वितरण और विनिमय

के सगठन म मार्क्सवाद-लेनिनवाद के निर्देशन मे राज्य निर्णायक भूमिका अदा करता है।

राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था के महत्वपूर्ण क्षेत्रो पर राज्य का नियत्रण रहता है, इसीलिए राज्य देश के आर्थिक जीवन म निर्णायक भूमिका अदा करता है। समाजवादी देशो म उत्पादन के साधनो के अधिकांश (सोवियत सघ म ६० प्रतिशत) पर सम्पूर्ण जनता का अधिकार है। केन्द्रीय और स्थानीय दोनो स्तरो पर राज्य और उसके प्रतिनिधियो का उन पर नियत्रण है। उत्पादन के शेष साधनो पर सहकारी उद्यमो का अधिकार है। किसी न किसी रूप म उनका नियत्रण और नियोजन केन्द्र द्वारा होता है।

मानवजाति के इतिहास म समाजवादी राज्य मजदूरों का पहला राज्य है। यह राज्य भौतिक मूल्यो का सृजन करने वाली और अपने रचनात्मक काय द्वारा समाज के अस्तित्व और विकास की रक्षा करने वाली जनता के हितो को प्रतिबिम्बित करता है। समाजवादी राज्य आम मेहनतकश जनता के समथन और सक्रिय सहयोग से ही अपने सभी काय पूरे करता है।

दनिक कार्यों म समाजवादी राज्य का निर्देशन सामाजिक विकास के नियमो के मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त द्वारा होता है। समाजवादी राज्य की आर्थिक नीति समाजवादी समाज के वस्तुगत विकास के वज्ञानिक विश्लेषण पर आधारित रहती है। इस वज्ञानिक विश्लेषण स न सिफ अतीत के परिणामो का सही मूल्याकन होता है, बल्कि विकास की भावी प्रवृत्तियो का भी निर्धारण होता है।

आर्थिक विकास और सगठन सास्कृतिक काय और सावजनिक शिक्षा समाजवादी राज्य के मुख्य काय हैं।

समाजवाद के आर्थिक नियमो के आधार पर समाजवादी राज्य अथ व्यवस्था और सस्कृति के विकास के लिए योजनाए बनाता है और उनकी सफल पूर्ति के लिए सभी मेहनतकश जनता को एकजुट कर उ हे कार्यान्वित करता है। सरकार अथ-व्यवस्था की सभी शाखाओ के विकास के पमाने गति और अनुपात तथा पूजी विनियोग के स्वरूप और मात्रा को निर्धारित करती है। वह वित्त और साख जुटाती है राजकीय बजट तयार करती है और उसकी कार्यान्विति की गारटी करती है राष्ट्रीय आय का वितरण करती है और यह निणय करती है कि सचय और उपभोग म राष्ट्रीय आय की कितनी मात्रा जानी चाहिए। राज्य श्रम की मात्रा और उपभोग की मात्रा का पक्का लेखा जोखा रखता है और उनको नियत्रित करता है। वह मजूरी की नीति का निर्धारण, वस्तु-उत्पादन का सगठन और

वस्तुओं की कीमतें निश्चित करता है तथा इसी तरह के अन्य कार्यों का भी संगठन करता है। राज्य कार्यकर्ताओं की ट्रेनिंग और शिक्षा का इंतजाम करता है। वह उनको विभिन्न कार्यों में लगाता है। वह प्रशासकीय यंत्र की प्रत्येक कड़ी का निर्माण करता है।

समाजवादी राज्य का निर्देशन और संगठन करने वाली शक्ति मार्क्सवादी लेनिनवादी पार्टी है। वह राज्य के सभी विभागों और मेहनतकश जनता के संगठनों (सोवियत ट्रेड यूनियनों, तरुण कम्युनिस्ट लीग, इत्यादि) के कार्यों का निर्देशन करती है। वह आर्थिक और राजनीतिक कार्यों की पूर्ति के लिए मजदूरों, किसानों और बुद्धिजीवियों को एकजुट करती है। वह जनता को शिक्षित करती है और उनमें कम्युनिस्ट चेतना का प्रसार करती है।

इस प्रकार मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी के नेतृत्व में समाजवादी राज्य महान कार्य सम्पादित करता है, जिनमें देश के आर्थिक जीवन के सभी पहलू आ जाते हैं।

समाजवादी राज्य अर्थव्यवस्था का पथ प्रदर्शन जनवादी केन्द्रीयता के सिद्धांत के आधार पर करता है। आर्थिक क्षेत्र में जनवादी केन्द्रीयता ही वह बुनियादी सिद्धांत है जो अर्थव्यवस्था के नियोजित नेतृत्व और समाजवादी जनवाद को एक साथ मिलाता है और जो मेहनतकश जनता की पहल और क्रियाशीलता पर आधारित होता है।

जनवादी केन्द्रीयता के आधार पर अर्थव्यवस्था के संगठन का मतलब है कि केन्द्रीय निकाय सिर्फ मुख्य प्रश्नों के सम्बंध में ही नियोजित मार्ग दर्शन प्रदान करें। केन्द्रीभूत प्रशासन के साथ स्थानीय पहल और आम मेहनतकशों के सृजनात्मक कार्यकलाप के अधिकतम विकास का मेल बैठाया जाता है। लेनिन ने लिखा कि जनवादी केन्द्रीयता से "आधारभूत एकता गड़बड़ नहीं होती, बल्कि विस्तार विशिष्ट स्थानीय विशेषताओं, दृष्टिकोण के तरीकों और नियन्त्रित करने के तरीकों की दृष्टि से विविधता के कारण दृढ़ होती है।"[1]

अर्थव्यवस्था के संगठन और सांस्कृतिक तथा शैक्षणिक कार्यों के अतिरिक्त समाजवादी राज्य अन्य कार्य भी करता है। वह देश की सुरक्षा और समाजवादी सम्पत्ति के बचाव का भी कार्य करता है।

समाजवादी विश्व व्यवस्था के उदय ने समाजवादी देशों की कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियों के जिम्मे नये अन्तर्राष्ट्रीय सम्बंधों (समाजवादी देशों के बीच बिरादराना सम्बंध) की स्थापना का भी कार्य सौंपा है। इस दृष्टि से समाजवादी

१ ब्ला० इ० लेनिन, "संकलित रचनाएं", खंड २, पृष्ठ २६५।

देशों की वैदेशिक नीतियों का दायरा बढ़ गया है। सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व के अन्तर्राष्ट्रीय चरित्र से समाजवादी राज्य पर एक सर्वथा नवीन उत्तरदायित्व आया है। यह उत्तरदायित्व है अन्य देशों को समाजवादी निर्माण में सहायता करने का।

जब पूरे पैमाने पर कम्युनिस्ट निर्माण होने लगता है तब राज्य की आर्थिक भूमिका काफी बढ़ जाती है। समाजवाद के भावी विकास सुदृढ़ता और कम्युनिस्ट समाज के निर्माण के लिए समाजवादी राज्य एक उपकरण है।

अध्याय ११

समाजवाद के अन्तर्गत राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का नियोजित विकास

१ राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के नियोजित, सानुपातिक विकास का नियम

समाजवादी उत्पादन के नियोजित विकास की आवश्यकता

समाजवादी अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत उत्पादन की विभिन्न शाखाएं और उत्पादन में कई प्रकार से सम्बन्धित औद्योगिक तथा व्यावसायिक उद्यम और कृषि एवं परिवहन तथा अन्य उद्यम शामिल रहते हैं। घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध उद्यमों, शाखाओं और आर्थिक क्षेत्रों का समूह एक सूत्रबद्ध विस्तृत उत्पादन व्यवस्था—अर्थतन्त्र की समाजवादी व्यवस्था का रूप लेता है। इसके अन्तर्गत राजकीय और सहकारी दोनों प्रकार के उद्यम आते हैं।

विशाल सामाजिक अर्थव्यवस्था नियोजित रूप से विकसित होती है। लेनिन के अनुसार राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में नियोजन का तात्पर्य निरन्तर चेतनमन से सानुपातिक (राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की विभिन्न कड़ियों के बीच सन्तुलन) बनाये रखना है। सामाजिक उत्पादन में अनुपातों को नियोजित रूप से स्थापित करना सिर्फ समाजवाद में ही सम्भव है।

जैसा कि हम जानते हैं पूंजीवादी अर्थव्यवस्था प्रतिद्वंद्विता और अराजकता के माध्यम से स्वतः विकसित होती है। वहां न कोई नियोजन होता है और न जानबूझ कर अनुपात बनाये रखने की कोई कोशिश होती है।

पूंजीपति अपना व्यवसाय अपनी जिम्मेदारी पर चलाते हैं उनके लिए एकमात्र निर्देशक तत्व है उनके निजी हित और बाजार की स्थितियां। वे उन्हीं

वस्तुओं का उत्पादन बढ़ाते हैं, जिनकी कीमतें चढ़ रही होती हैं ताकि वे अधिकतम मुनाफा कमा सकें।

किन्तु कोई भी पूंजीपति निश्चित रूप से नहीं जानता कि किसी वस्तु विशेष की कितनी मात्रा में जरूरत है। इस वजह से वस्तुएं इतनी अधिक मात्रा में उत्पन्न कर दी जाती हैं कि बाजार में उनकी पूरी तरह से खपत नहीं हो पाती है। फलस्वरूप वस्तुओं को कोई नहीं खरीदता, इसलिए उनकी कीमतें गिरती हैं और उनके उत्पादन में घटौती होती है। इसके बाद पूंजी किसी दूसरी वस्तु के उत्पादन में लगायी जाती है। इस तरह यह प्रक्रिया फिर दुहरायी जाती है।

एकीकृत योजना के अभाव का मतलब है कि पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में अनुपात अपने आप स्थापित हो जाते हैं। यह सतुलन अस्थायी होता है। संतुलन हमेशा गड़बड़ होता रहता है। निस्सदेह इसका मतलब यह नहीं है कि विभिन्न शाखाओं और उद्यमों के बीच कोई तालमेल है ही नहीं। उत्पादन में आवश्यक अनुपात संतुलन की अनगिनत गड़बड़ियों और अत्युत्पादन के संकटों के बाद जाकर कहीं स्थापित होता है।

इसलिए निष्कर्ष यह है कि उत्पादन के साधनों का निजी स्वामित्व वस्तु उत्पादकों को एक दूसरे से अलग कर सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था के नियोजन की कोई सम्भावना नहीं छोड़ता। इसका मतलब है कि पूंजीवाद के अंतर्गत जानबूझ कर कोई संतुलन नहीं स्थापित किया जा सकता।

समाजवाद में स्थिति बिल्कुल भिन्न होती है। उत्पादन के समाजीकरण और समाजवादी स्वामित्व की व्यवस्था के परिणामस्वरूप समाज, जैसा कि लेनिन ने कहा, 'एक दफ्तर, एक कारखाना' के रूप में बदल जाता है। सामाजिक स्वामित्व उत्पादन की अराजकता और स्वतःप्रवृत्ति को खत्म कर देता है। उत्पादन का विकास सम्पूर्ण जनता के हित में होता है। ऐसा होने पर राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था सिर्फ नियोजित रूप में ही विकसित हो सकती है। मजदूर अपने राज्य के माध्यम से समाजवाद के अंतर्गत समाज की सभी आवश्यकताओं, उत्पादन स्रोतों और जनहित में होने वाले प्रत्यक्ष उत्पादन का लेखा जोखा पहले ही कर लेते हैं। निश्चित लक्ष्यों को ध्यान में रखकर समाज आवश्यक अनुपात स्थापित करता है और उसे निरंतर जागरूक होकर बनाये रखता है।

किन्तु लोग किसी भी तरह के अनुपात के सम्बंध में यों ही निर्णय नहीं कर लेते बल्कि वे निश्चित आर्थिक स्थितियों को ध्यान में रखकर ही आर्थिक नीति बनाते हैं। उदाहरण के लिए, उपभोक्ता वस्तुओं को उत्पन्न करने वाले उद्योग उत्पादन के साधनों को निर्मित करने वाले उद्योग में द्रुत गति से बिना विकास किये, एकाकी रूप से विकसित नहीं होने चाहिए। अगर ऐसा नहीं होता

है तो विफलता ही हाथ लगेगी। उदाहरण के लिए, यह सम्भव है कि हल्के और खाद्य उद्योगों के काम आने वाले कृषिगत कच्चे माल बहुत बड़ी मात्रा में पैदा किए जायें। अगर इनको उपभोक्ता वस्तुओं के रूप में परिवर्तित करने के लिए बड़ी मात्रा में मशीन और विद्युत शक्ति उपलब्ध नहीं है तो यह कच्चा माल भी बेकार पूंजी होगा। इसलिए उपभोक्ता वस्तुओं की सामाजिक मांग को पूरा करने के लिए उत्पादन के साधनों का उत्पादन और भी तेज गति से विकसित होना चाहिए। स्पष्ट है कि हल्के और खाद्य पदार्थ उत्पन्न करने वाले उद्योगों के विकास की दर इंजीनियरिंग और विद्युत शक्ति का पर्याप्त विकास करके ही तेज करनी चाहिए। उनके विकास की दर बिना सोचे समझे नहीं निश्चित होनी चाहिए।

सामाजिक उत्पादन के विभाग १ और २ के विकास की दरों के बीच निश्चित अनुपात होना चाहिए। उदाहरण के लिए बड़ी संख्या में ट्रैक्टर, मोटर गाड़ियां, हवाई जहाज और आन्तरिक दहन इंजन वाली अन्य मशीनें बनायी जा सकती हैं लेकिन अगर उचित मात्रा में तरल ईंधन का उत्पादन न हो तो ये सब मशीनें बेकार होंगी। उनको बनाने के लिए लगाया गया श्रम मूल्यहीन होगा। कहा जा सकता है कि उत्पादन के अनुपलब्ध साधनों को अन्य देशों से खरीदा जा सकता है। किन्तु पहली बात यह है कि उनको खरीदना हर समय सम्भव नहीं होता। यह अच्छा भी नहीं है कि जिन वस्तुओं का उत्पादन देश के अन्दर हो सकता है उन्हें बाहर से खरीदा जाय। अन्त में अगर हम विदेशी बाजार को भी ले लें तो भी उत्पादन की विभिन्न शाखाओं के बीच अनुपात निश्चित करने का सवाल रहता ही है।

आर्थिक विकास की प्रक्रियाओं के इस वस्तुगत सम्बन्ध के कारण मनुष्य की इच्छाओं से परे निश्चित अनुपातों की नियोजित स्थापना आवश्यक हो जाती है। यही वस्तुगत सम्बन्ध राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के नियोजित सानुपातिक विकास के नियम के रूप में अभिव्यक्त होता है।

नियोजित, सानुपातिक आर्थिक विकास का नियम अर्थव्यवस्था के समाज द्वारा पथ प्रदर्शन पर जोर देता है जिससे अर्थव्यवस्था की विभिन्न शाखाओं वगैरह में तालमेल बैठाया जा सके और वे सब एक आर्थिक इकाई बन सकें। इसलिए उनके विकास के क्रम में अनुपात रखना चाहिए और भौतिक तथा श्रम-साधनों का विवेकपूर्ण और कुशलता के साथ प्रयोग होना चाहिए।

राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के नियोजित, सानुपातिक विकास का नियम लागू कर उत्पादन के साधनों और श्रम भंडार को सही रूप से राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों के बीच बांटा जा सकता है। इस प्रकार उनका विवेकपूर्ण प्रयोग हो सकता है, सभी शाखाओं और उद्यमों के कार्यों के बीच पारस्परिक तालमेल स्थापित

किया जा सकता है। उत्पादन, वितरण और विनिमय के विकास के लिए आवश्यक सम्बंध कायम किये जा सकते हैं।

नियोजित, आनुपातिक विकास का नियम सामाजिक उत्पादन की सभी शाखाओं के विकास में निरंतर अनुपात बनाये रखने की वस्तुगत आवश्यकता पर जोर देता है। यह नियम अन्य सब आर्थिक नियमों, खासकर मूल आर्थिक नियम से सम्बद्ध है।

जनता की दिनोदिन बढ़ती हुई भौतिक एवं सांस्कृतिक आवश्यकताओं को अच्छी तरह से संतुष्ट करने के लिए समाजवादी उत्पादन में निरंतर तेजी से वृद्धि जरूरी है और यही जरूरत राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के अंतर्गत अनुपातों का निर्धारण करती है।

प्रत्येक चरण में उपर्युक्त लक्ष्य की पूर्ति उत्पादक शक्तियों के विकास के स्तर, भौतिक साधनों की उपलब्धि और समाजवादी देश की आंतरिक और बाह्य स्थिति पर निर्भर करती है। इन तत्वों का ध्यान में रखकर ही अर्थव्यवस्था में नियोजित, आनुपातिक विकास के नियम के आधार पर निश्चित अनुपात निर्धारित किये जाते हैं।

समाजवादी स्वामित्व और अर्थव्यवस्था के समाजवादी क्षेत्र की स्थापना के बाद से ही राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के नियोजित, आनुपातिक विकास का नियम समाजवादी देशों में काम कर रहा है। किंतु प्रारम्भिक काल में इस नियम का परिचालन सीमित था, क्योंकि उस समय समाजवादी देशों में गैर समाजवादी आर्थिक क्षेत्र भी समाजवादी आर्थिक क्षेत्र के साथ साथ मौजूद थे। समाजवादी क्षेत्र के विकसित और ताकतवर होने के साथ ही इस नियम के परिचालन का दायरा भी बढ़ता है। आर्थिक जीवन में समाजवादी उद्यमों का बोलबाला हो जाने के बाद राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के नियोजित, आनुपातिक विकास का नियम पूरी तरह काम करता है।

एक देश के चौखटे से बाहर समाजवाद के प्रसार के कारण विश्व समाजवादी व्यवस्था का जन्म हुआ। नियोजित, आनुपातिक विकास का नियम समाजवादी देशों के आपसी सम्बंधों पर भी लागू होने लगा।

समाजवादी अर्थव्यवस्था में अनुपात

राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के नियोजित, आनुपातिक विकास के नियम को लागू कर समाजवादी राज्य जानबूझ कर नियोजित रूप से सामाजिक उत्पादन के विभिन्न अंतस्सम्बद्ध और अन्योन्याश्रित आर्थिक कड़ियों के बीच एक स्थायी संतुलन बनाये रखता है।

राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के विकास के लिए उस प्रकार का अनुपात होना चाहिए जो अन्य अनुपातों या यों कहें कि सामाजिक उत्पादन की सम्पूर्ण दिशा को निर्धारित करे। संक्षेप में वह है उत्पादन के साधन के उत्पादन और उपभोक्ता वस्तुओं के उत्पादन का पारस्परिक अनुपात (यानी सामाजिक उत्पादन के विभाग १ और विभाग २ का अनुपात)। समाजवाद और कम्युनिज्म के निर्माण के लिए उत्पादन के साधनों के विकास को प्राथमिकता देनी चाहिए।

उत्पादक शक्तियों के विकास, उत्पादन के तकनीकी स्तर को ऊंचा उठाने के लिए, श्रम उत्पादकता के विकास को बढ़ावा देने और श्रम को हल्का बनाने, देश की प्रतिरक्षा शक्ति को मजबूत करने और उपभोक्ता वस्तुओं के उत्पादन को बढ़ाने एवं राष्ट्र के जीवन में तरक्की के लिए उत्पादन के साधनों की आवश्यकता है।

नियोजित आर्थिक विकास के लिए उद्योग और कृषि के बीच सही अनुपात स्थापित करना भी कम जरूरी नहीं है। इन शाखाओं के विकास में सही अनुपात स्थापित होने पर ही उद्योग अपनी प्रमुख भूमिका अदा कर सकता है और कृषि उत्पादन का पर्याप्त विकास हो सकता है जिससे शहरी जनसंख्या को अपेक्षित खाद्यान्न और हल्के उद्योग को कच्चे माल मिल सकें। उद्योग और कृषि के भीतर भी विभिन्न शाखाओं के बीच सही अनुपात स्थापित होना चाहिए।

राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में ये मूल सानुपातिक सम्बंध आवश्यक हैं: उत्पादन और उपभोग, संचय और उपभोग, जनता की बढ़ती हुई नकदी आय और खुदरा व्यापार के विकास तथा देश के विभिन्न क्षेत्रों के बीच आदि।

इस तरह बड़ी संख्या में आर्थिक अनुपात स्थापित किए जाते हैं। समाजवादी राज्य का यह महत्वपूर्ण कार्य है कि वह इन अनुपातों को निरंतर बनाये रखे।

अर्थव्यवस्था की विभिन्न शाखाओं के बीच अनुपात मनमाने ढंग या किसी व्यक्ति विशेष की इच्छा अनिच्छा के आधार पर नहीं बल्कि निश्चित वस्तुगत नियमों के आधार पर तय होते हैं। इन अनुपातों को बिगाड़ने पर अर्थव्यवस्था में गड़बड़ियां आ जाती हैं।

सामाजिक उत्पादन के विभिन्न हिस्सों के बीच सही अनुपात कई चीजों पर निर्भर होता है। उत्पादक शक्तियों तथा तकनीकी प्रगति के विकास के वर्तमान स्तर, श्रम उत्पादकता, भौतिक साधनों की मात्रा, समाजवादी देश विशेष की वर्तमान आंतरिक और बाह्य स्थितियों, इत्यादि को ध्यान में रखकर ही अर्थव्यवस्था के भीतर सही सानुपातिक सम्बंध स्थापित किये जाते हैं। ये सम्बंध सदा के लिए निश्चित नहीं होते बल्कि उनमें परिवर्तन और सुधार होता रहता है

सोवियत संघ में कम्युनिज्म के पूर्ण पैमाने पर निर्माण के दौरान भारी उद्योग के त्वरित विकास के साथ साथ उपभोक्ता वस्तुओं के उत्पादन के काफी विस्तार की सम्भावना पैदा हो गयी है। जब सोवियत संघ में भारी उद्योग का निर्माण हो हो रहा था उस समय राज्य को साधन वटन में उत्पादन के साधन उत्पादित करने वाले उद्यमों के विकास को प्राथमिकता देनी पडी। हल्के और खाद्य उद्योग, कृषि, आवास और जन-कल्याण सेवाओं के लिए उत्पादन के साधन उत्पादित करने वाले उद्यमों में विनियोग पर रोक लगाना पडा। अब इन उद्यमों में विनियोग काफी मात्रा में बढ़ाये जा सकते हैं। इसका मतलब है कि जनता के उपभोग की मात्रा काफी तेजी से बढ़ेगी। अतः १९६० की तुलना में १९८० में पहले प्रकार के उद्यमों में उत्पादन ६ गुना बढेगा और दूसरे प्रकार के उद्यमों के उत्पादन में १३ गुनी वृद्धि होगी।

इसी के अनुकूल उत्पादन के साधनों और उपभोक्ता वस्तुओं के उत्पादन के विकास की दरों को एक-दूसरे के नजदीक रखने की योजना बनायी गयी है। १९२९ ४० के दौरान उत्पादन के साधनों के उत्पादन की वृद्धि की दर उपभोक्ता वस्तुओं के उत्पादन की वृद्धि की दर से ७० फीसदी अधिक था लेकिन १९६१ ८० के दौरान यह अन्तर सिर्फ २० प्रतिशत रहेगा।

इन दो दशकों (१९६१ ८०) के दौरान अनुपातों में काफी परिवर्तन होगा क्योंकि सोवियत अर्थव्यवस्था की कुछ शाखाएं अन्य शाखाओं की अपेक्षा अधिक तेजी से विकसित होंगी। इन बीस वर्षों के दौरान औद्योगिक उत्पादन में औसतन ५२० से ५४० प्रतिशत की वृद्धि होने पर रसायन उद्योग अपना उत्पादन १७ गुना गैस निष्कासन अपना उत्पादन १४ गुना, विद्युत शक्ति अपना उत्पादन ९ १० गुना, इंजीनियरिंग और धातुकर्म उद्योग अपना उत्पादन १० ११ गुना बढ़ायेंगे।

इन अनुपातों को कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत जनता के मुख्य उद्देश्यों—कम्युनिज्म के भौतिक और तकनीकी आधार का निर्माण—की पूर्ति के लिए ही निश्चित किया गया है।

राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के नियोजित सानुपातिक विकास के लिए उत्पादक शक्तियों का सानुपातिक वितरण भी आवश्यक है। सामाजिक श्रम की उत्पादकता में वृद्धि, लोगों की खुशहाली में बढ़ोतरी तथा समाजवादी राज्य की आर्थिक और प्रतिरक्षा क्षमताओं की सुदृढ़ता के लिए यह वितरण नियोजित रूप से किया जाता है।

समाजवाद में उत्पादन की स्थितियां इन मुख्य सिद्धान्तों पर निर्भर होती हैं उद्योग की स्थापना कच्चे माल और शक्ति के स्रोतों और तैयार माल के

उपभोग के क्षेत्र के निकट होनी चाहिए। इस तरह माल का परिवहन आसान हो जायेगा। आर्थिक क्षेत्रों के बीच श्रम का नियोजित विभाजन हो सकेगा। साथ ही प्रत्येक क्षेत्र में व्यापक आर्थिक विकास होगा और सभी राष्ट्रीय जनतंत्रों की अर्थ व्यवस्थाएं स्थायी तरक्की करेंगी। कौमों के बीच दोस्ती और सहयोग बढ़ाने का यही आर्थिक आधार है।

सोवियत सत्ताकाल में उत्पादक शक्तियों के वितरण में आमूल परिवर्तन हुए हैं। १९२१ में लेनिन ने लिखा[1] सोवियत संघ के नक्शे को देखें। वोलोग्दा के उत्तर, रोस्तोव आन-दोन और सारातोव के दक्षिण-पूर्व, ओरेनबर्ग और ओम्स्क के दक्षिण और तोम्स्क के उत्तर असीमित क्षेत्र पड़े हैं जहां बीसियों बड़े सभ्य राज्य बस सकते हैं। इन सभी भागों में पितृसत्तावाद, अर्द्ध जंगलीपन और वास्तविक जंगलीपन का बोलबाला है।

तब से चालीस वर्ष बीत गये हैं। आज उन क्षेत्रों की सूरत क्या है? वोलोग्दा के पास चेरपोवेत्स लौह और इस्पात कारखाना बन चुका है। कोला प्रायद्वीप में अब खान उद्यम, जहाज बनाने का कारखाना और कागज तथा सेल्युलोज कम्बाइन हैं। देश के पूर्वी भाग में लोहा और इस्पात तथा इंजीनियरिंग के बड़े कारखाने, बड़े पैमाने के रासायनिक और खाद्य उद्योग और विशाल अन्न उद्यम हैं। लाखों एकड़ बेकार जमीन पर खेती शुरू हो गयी है। तोम्स्क के उत्तर में यनीसी नदी के किनारे एक बड़ा बंदरगाह दुदीन्का, लकड़ी उद्योग का केन्द्र इगारका और तांबा एवं निकल का केन्द्र नोरील्स्क बने हैं।

१९६० में देश का पूर्वी क्षेत्र देश के कुल औद्योगिक उत्पादन का करीब एक तिहाई, कुल तेल उत्पादन का करीब ३० प्रतिशत, इस्पात, बेल्लित धातु और कोयले के कुल उत्पादन का करीब करीब आधा और कुल विद्युत शक्ति का ४० प्रतिशत से भी अधिक उत्पन्न करता था।

कृषि उत्पादन के वितरण में बड़े परिवर्तन हुए हैं। पहले के पिछड़े हुए भाग, मिसाल के तौर पर, साइबेरिया और कजाखस्तान बिक्री के लिए गल्ला प्राप्त करने के मुख्य स्रोत हैं।

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की २२वीं कांग्रेस ने उत्पादक शक्तियों के वितरण में सुधार के लिए एक विस्तृत कार्यक्रम बनाया। अगले बीस वर्षों के दौरान साइबेरिया और कजाखस्तान में सस्ते कोयले के भंडार या अंगारा और यनीसी नदियों की जल शक्ति का इस्तेमाल करने वाले नये बिजलीघर तथा बिजली से सचालित होने वाले उद्योगों के बड़े केन्द्र बनेंगे। कच्ची धातु, कोयले और तेल के नये समृद्ध भंडार विकसित होंगे। मशीन बनाने वाले कई बड़े केन्द्र बनेंगे।

[1] ब्ला॰ इ॰ लेनिन, 'संकलित रचनाएं', खंड ३, पृष्ठ ६५३।

वोल्गा के पास के क्षेत्र, यूराल्स, उत्तर काकेशस और मध्य एशिया में तेल गैस और रासायनिक उद्योगो का तेजी से प्रसार होगा और कच्ची धातु के भंडार विकसित होगे।

यूराल्स और यूक्रेन में पुराने धातु केन्द्रो के विकास और साइबेरिया में दस के तीसरे धातु केन्द्र के निर्माण की समाप्ति के साथ साथ सोवियत सघ के मध्य यूरोपीय भाग और कजाखस्तान में दो नये धातु केन्द्रों की स्थापना की योजना है।

इनके अतिरिक्त सोवियत सघ के यूरोपीय भाग की कुछ उत्तरी नदियो की धाराओ को वोल्गा बेसिन की ओर मोडने केन्द्रीय कजाखस्तान सलिनी क्षेत्र दोनेत्स बेसिन और यूराल्स को पानी पहुचने मध्य एशिया, वोल्गा, द्नीपर, द्नीस्तर और डग के किनारे नियमित जलागार बनाने तथा बड़े पमाने पर सिंचाई व्यवस्था के विकास और सुधार के लिए दीर्घकालीन योजनाए बनी हैं जिनके अन्तगत बड़े पमाने पर काम शुरू होगा।

समाजवाद के अ तगत उत्पादन व्यवस्था होने पर प्राकृतिक साधनो पूजी विनियोगो और मानव शक्ति के साधनो का उचित उपयोग हो सकेगा।

इसका मतलब है कि सामाजिक श्रम की उत्पादकता बढ़ेगी उत्पादन की वद्धि की दर तेज होगी और लोगो की आवश्यकताओ की सतुष्टि अच्छी तरह हो सकेगी।

२ समाजवादी नियोजन

समाजवादी नियोजन के सिद्धात — नियोजन शब्द का मतलब समाजवादी अर्थव्यवस्था के विकास के लिए योजनाए बनाने और एक राजकीय योजना के आधार पर उत्पादन के सगठन से है।

आर्थिक नियोजन मुख्य रूप से समाजवादी राज्य के आर्थिक और सागठनिक कार्यों का ब्योरा है।

सम्पूर्ण राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को नियोजित करते समय राज्य समाजवादी आर्थिक नियमो के आधार पर आगे बढता है और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के नियोजित सानुपातिक विकास के नियम को जानबूझ कर व्यवहार मे लाता है और मुख्य रूप से इसी पर वह निर्भर रहता है।

समाजवादी नियोजन म मुख्य काय अनुपातो का तय करना है जिनके अनुसार राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की शाखाए विकसित हो सके और सामाजिक उत्पादन की निरन्तर तेज प्रगति और उन्नति हो सके फलस्वरूप लोगो की खुशहाली बढ़े। सोवियत सघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कायक्रम में कहा गया है यह

आवश्यक है कि राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था ठीक सानुपातिक आधार पर विकसित हो और आर्थिक असंतुलन समय रहते सुधारे जायें, आर्थिक विकास की स्थायी उच्च दर के लिए पर्याप्त आर्थिक आरक्षित कोष हो तथा उद्यमों का निर्बाध परिचालन एवं लोगों की खुशहाली में लगातार वृद्धि हो।"[१] सामाजिक विकास की जरूरतों को ध्यान में रखकर समाजवादी राज्य आर्थिक योजनाएं बनाता है। सम्पूर्ण समाज के पैमाने पर उत्पादन, वितरण और विनिमय को नियोजित ढंग से संगठित करता है। राज्य भौतिक, श्रम और वित्तीय साधनों का वितरण करता है, उत्पादन और पूंजी निर्माण की मात्रा और ढांचे का निर्धारण करता है नयी टेक्नालाजी के प्रयोग पर आधारित श्रम उत्पादकता की दर निश्चित करता है और देश के आन्तरिक और बाह्य वस्तु आवर्त की मात्रा और ढांचे को निर्धारित करता है। राज्य ही राजकीय या सहकारी व्यापार के लिए वस्तुओं की कीमतें निश्चित करता है और मजदूरों और अन्य काम पर लगे लोगों की मजूरी का स्तर निर्धारित करता है।

कम्युनिस्ट पार्टी की कांग्रेसों के निर्णयों के आधार पर ही नियोजन का संगठन होता है और यह निर्धारित होता है कि एक लम्बे समय तक समाजवादी समाज कैसे विकसित होगा।

सोवियत राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की प्रत्येक योजना पार्टी की नीति का ही मूर्त रूप है। पार्टी की इस नीति का उद्देश्य कम्युनिज्म की स्थापना है। इस प्रकार आर्थिक कार्यों की पूर्ति के लिए पार्टी और राज्य का दृष्टिकोण स्पष्ट हो जाता है।

राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की योजनाएं न तो भविष्यवाणियां हैं और न सिर्फ अन्दाज मात्र बल्कि निश्चित अवधियों के लिए मूर्त योजनाएं हैं। चूंकि राजकीय योजनाओं में आर्थिक और सांस्कृतिक निर्माण के तात्कालिक कार्य शामिल होते हैं इसलिए उनकी पूर्ति अत्यन्त आवश्यक है। राष्ट्रीय आर्थिक योजना पर मेहनतकश लोगों द्वारा विचार कर लेने के बाद उसे उच्च राजकीय समिति के सामने रखा जाता है। राजकीय समिति की स्वीकृति के बाद वह कानून का रूप धारण कर लेती है और उसकी कार्यान्विति के लिए सब लोग जिम्मेदार हो जाते हैं।

समाजवादी नियोजन का यह मुख्य सिद्धान्त है कि योजनाएं आदेश के रूप में मानी जायें और उनके कार्यान्वयन के लिए सब लोग जिम्मेदार हों। ऐसा न होने पर नियोजन का कोई अर्थ ही नहीं होगा। अगर राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की कोई शाखा जैसे लकड़ी उद्योग योजना को कार्यान्वित करने में असफल रहती है तो उन सभी शाखाओं में जिनमें योजना के अन्तर्गत निश्चित मात्रा में चीरी हुई लकड़ी दी जानी चाहिए योजना के लक्ष्य पूरे नहीं हो पाते। इसीलिए समाजवादी देशों में योजना की सभी जरूरतों को पूरा करना आवश्यक है।

१ 'कम्युनिज्म का मार्ग', पृष्ठ ८३४।

भौतिक उत्पादन की सभी शाखाओं में नियोजित, आनुपातिक विकास के लिए आवश्यक है कि सभी उद्यमों और उद्योगों की योजनाओं को एक समन्वित रूप दिया जाय। राज्य का नियोजित मार्ग दर्शन सामूहिक फार्मों और सहकारी समितियों में अतिरिक्त राजकीय उद्यमों को भी मिलता है। इसका यह मतलब नहीं है कि राजकीय नियोजन समितियां प्रत्येक सामूहिक फार्म के लिए योजनाएं बनाती हैं। प्रत्येक उद्यम निर्धारित सामान्य राजकीय लक्ष्यों के आधार पर अपनी योजना बनाता है। राजकीय उद्योग के उद्यम विशेषतः सामूहिक और राजकीय फार्मों की योजनाओं पर पहले स्थानीय तौर पर विचार होता है और फिर उन्हें केन्द्रीय नियोजन समितियों के सामने रखा जाता है। वहां उन्हें एक समन्वित राष्ट्रीय आर्थिक योजना का रूप दिया जाता है।

केन्द्रीय मार्ग-दर्शन और स्थानीय पहल का सम्मिलित रूप ही नियोजन में जनवादी केन्द्रीयता का सिद्धान्त है।

आर्थिक नेतृत्व के जनवादी तरीकों के विकास के साथ नियोजन हर साल सुसंगठित होता जाता है। सोवियत संघ में प्रबन्ध कार्य और आर्थिक नियोजन के पुनर्निर्माण के फलस्वरूप अत्यधिक केन्द्रीयता समाप्त हो गयी और संघ जनतन्त्रों, आर्थिक क्षेत्रों, प्रदेशों, उद्यमों और निर्माण योजनाओं की भूमिका योजना के निर्माण में बढ़ी। सामूहिक फार्मों को अब कृषि उत्पादन के संगठन और नियोजन के लिए काफी स्वतन्त्रता प्राप्त है। उनमें कृषि प्रबन्ध की नयी व्यवस्था भी अपनायी गयी है। पार्टी नियोजन की गलतियों को सामने लाती है और उनकी पूरी आलोचना करती है। वह पुराने दकियानूसी और प्रगति में बाधा डालने वाले तत्वों का उन्मूलन करती है। सितम्बर १९६५ में सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय समिति के पूर्णाधिवेशन में राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के नियोजन में सुधार लाने की समस्या पर विचार हुआ। अब कार्यों को केन्द्रीय नियोजन विभागों के बीच स्पष्ट तौर पर बांटा जा रहा है और उनका पूर्ण संशोधन भी किया जा रहा है।

एक महीने तीन महीने या एक साल की चालू योजनाओं और पांच सात या बीस साल की दीर्घकालीन योजनाओं में अन्तर है। लेनिन ने बताया कि बिना कई सालों के लिए योजनाएं बनाये अर्थव्यवस्था विकसित नहीं हो सकती। दीर्घकालीन योजनाएं कई वर्षों के लिए आर्थिक विकास की मुख्य दिशाएं निर्धारित करती हैं और चालू योजनाएं अल्पकाल के लिए मूल कार्यक्रम का समूह होती हैं। दीर्घकालीन योजनाएं बड़े सामाजिक आर्थिक कार्यों का हल निकालती हैं।

राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के विकास के लिए पहली दीर्घकालीन योजना रूस में बिजली लगाने की राजकीय योजना (गोयलरो योजना) थी। इसे १९२० में लेनिन की पहल के फलस्वरूप और उन्हीं के निर्देशन में तैयार किया गया। योजना

द्वारा निर्धारित मुख्य काय राष्ट्रीय अथव्यवस्था को विद्युतीकरण के आधार पर बुनियादी रूप से पुनर्निर्मित करना और समाजवाद के भौतिक आधार—बडे पमान का मशीन उद्योग—का विकसित करना था। १९२९ के बाद दीघकालीन नियोजन ने पचवर्षीय योजनाओं का रूप ले लिया। सप्तवर्षीय योजना (१९५९ ६५) और बीस वर्षीय आर्थिक विकास योजना (१९६१ ८०) के लिए साधारण दीघकालीन योजनाए सोवियत सघ मे कम्युनिज्म के भौतिक और तकनीकी आधार के निर्माण का कायक्रम हैं।

दीघकालीन योजनाओ में सिफ अत्य त सामान्य रूपरखाए और निर्देश ही होते हैं। उन्हे चालू योजनाओ म मूत रूप दिया जाता है। चालू योजना (मासिक त्रमासिक वार्षिक) और दीघकालीन योजना का समन्वय भी समाजवादी नियोजन का एक सिद्धान्त है। दीघकालीन और चालू योजनाओ के सही सयोजन से नियोजन म अविच्छिन्नता आती है और भावी योजना क्रमिक रूप से चलती रहती है। उद्यमो को नियमित रूप से वित्तीय साधन प्राप्त होते रहते हैं। कच्चे माल, तकनीकी उपकरण, इत्यादि की पूर्ति भी होती रहती है।

कोई भी योजना तब तक नहीं बन सकती, जब तक हम उन आर्थिक कडियो को नहीं जान लें जिन्हें विकास के लिए प्राथमिकता देनी चाहिए। सभी प्रकार के नियोजन म राष्ट्रीय अथव्यवस्था की प्रमुख शाखाओ का विकास शामिल रहता है। उनके विकास की दर अन्य शाखाओ के विकास की दर को निर्धारित करती है। उदाहरण के लिए, वतमान काल म पमाने और महत्व की दृष्टि से रासायनिक उद्योग उसी तरह की प्रगतिशील प्रवत्ति है क्योंकि यह उद्योग अत्यन्त कुशलता के साथ उन बहुत सारी वस्तुओ को उत्पन्न कर सकता है जो अभी प्राकृतिक पदार्थों से बनती हैं। इसलिए रासायनिक उद्योग और सम्बद्ध उद्योगो म तेजी से प्रगति आवश्यक है।

उनके विकास की दरो के अनुकूल ही राष्ट्रीय अथव्यवस्था की अन्य शाखाओ के विकास की दरें निर्धारित की जाती हैं। महत्वपूण आर्थिक कडियों को अलग कर लेना समाजवादी नियोजन के महत्वपूण सिद्धान्तो मे से एक है।

समाजवादी समाज मे योजनाए वास्तविक और वज्ञानिक तौर पर ठोस होती हैं। इसका मतलब है कि जब कोई आर्थिक योजना बनती है तब नियोजन का यत्र वतमान आर्थिक परिस्थितियो और सम्भावनाओ, उत्पादक शक्तियो, विज्ञान और टेक्नालाजी के विकास के वतमान स्तर के आधार पर आगे बढता है और उत्पादन के उच्च अनुभवो का व्यापक प्रयोग करता है। पार्टी तथा आम जन सगठनो के सागठनिक काय और मेहनतकश जनता की सजनात्मक पहल ही योजनाओ की वास्तविकता की गारन्टी हैं।

योजनाएं तैयार करना नियोजन की दिशा में पहला कदम है। नियोजन का महत्वपूर्ण पहलू योजना के लक्ष्यों की पूर्ति की जांच करना है जिससे नियोजन की गलतियां समय रहते मालूम हो जायें और आवश्यक हेर फेर किए जा सकें। अगर गलत नियोजन या किन्हीं अन्य कारणों से राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में असंतुलन आ जाता है तो वे शीघ्र मालूम हो जायेंगे और उन्हें सुधारा जा सकेगा। राजकीय रिजर्व के रूप में समाजवादी राज्य के पास नियोजन में होने वाली गलतियों को सुधारने और किसी असंतुलन विशेष को नियंत्रित करने का यह एक महत्वपूर्ण तरीका है।

आर्थिक विकास के लिए योजनाएं बनाते समय समाजवादी नियोजन को मूर्त रूप दिया जाता है।

नियोजनकर्ताओं द्वारा आर्थिक योजनाओं के बुनियादी सूचकांक निर्धारित करते समय एक संतुलन व्यवस्था का भी इस्तेमाल होता है।

नियोजन में संतुलन व्यवस्था

संतुलन व्यवस्था के माध्यम से हम राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की मुख्य शाखाओं के विकास लक्ष्यों की पूर्व तुलना कर लेते हैं। उनकी भौतिक और तकनीकी आवश्यकताओं की पूर्ति की सम्भावनाओं का भी अन्दाज मालूम हो जाता है। सोवियत संघ में चल रहे विशाल भवन निर्माण कार्यक्रम के कार्यान्वयन के लिए इमारती सामानों इमारती मशीनों कर्मचारियों एवं वित्तीय साधनों का लेखा जोखा रखना आवश्यक है। इमारती सामानों की आवश्यकताओं और पूर्ति की उपलब्ध सम्भावनाओं की तुलना करने पर ज्ञात होता है कि इमारती सामान बनाने वाले उद्यमों की क्षमताएं इतनी नहीं है कि वे जरूरतों को पूरी कर सकें। इस स्थिति में इमारती सामान बनाने वाले उद्योग के विकास के लिए योजनाएं बननी हैं।

संतुलन व्यवस्था को बनाते समय यह देखा जाता है कि विभिन्न शाखाओं के नियोजित विकास की दरों में कहां तक तालमेल बिठाया गया है और उत्पादन की शाखा विशेषों द्वारा लक्ष्य से आगे निकल जाने या लक्ष्य को पूरा करने में विफल रहने पर किस प्रकार के आरक्षित कोषों की व्यवस्था की गयी है, जिससे कोई गडबडी पैदा न हो।

राजकीय नियोजन निकाय भौतिक संतुलनों मूल्य संतुलनों और मानव शक्ति संतुलनों की व्यवस्था करते हैं।

श्रम के सभी महत्वपूर्ण उत्पादनों (जैसे धातु मशीनों औजार कोयला तेल अन्न मक्खन इत्यादि) के लिए भौतिक संतुलनों की व्यवस्था की जाती है। संतुलन की व्यवस्था करते समय वस्तु विशेष की पूर्ति के साधनों का लेखा दिया

जाता है। प्राप्त आकडा की तुलना उस वस्तु के लिए समाज की आवश्यकताओं से की जाती है।

मूल्य सतुलन मे लोगो की नकद आय और व्यय राष्ट्रीय आय, राजकीय बजट और अन्य प्रकार के सतुलन शामिल हैं।

मानव शक्ति सतुलन शाखावार तौर पर राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की मानव शक्ति की जरूरता को सामान्यतया और व्यवसायो एव योग्यताओ की दृष्टि से निर्धारित करता है। यहा भी उन स्रोतो का इगित कर दिया जाता है, जो राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का श्रम की आवश्यक मात्रा देंगे।

राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का सतुलन सबसे व्यापक होता है। इसमे समाजवादी अर्थव्यवस्था के सानुपातिक सम्बधो के सभी सूचकाक शामिल होते हैं।

नियोजन मे सतुलन व्यवस्था के प्रयोग के फलस्वरूप राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की विभिन्न शाखाओ के विकास के सही अनुपात अच्छी तरह निर्धारित किये जा सकते हैं।

३ नियोजित अर्थव्यवस्था के लाभ

अर्थव्यवस्था का नियोजित सचालन पूजीवाद की तुलना मे समाजवाद की निर्णायक विशेषता है। यह व्यवहार मे सोवियत सघ एव जनवादी जनतत्रो के विकास के दौरान प्राप्त शानदार परिणामो से साबित हो गया है।

नियोजित अर्थव्यवस्था के लाभ क्या हैं?

समाजवादी अर्थव्यवस्था लगातार आरोही क्रम से विकसित होती है।

पूजीवाद के अन्तर्गत उत्पादन के सामाजिक चरित्र और उत्पादन के परिणामो के वितरण के निजी रूप मे अन्तर्विरोध के कारण समाज मे आर्थिक सकट आते रहते हैं। समाजवाद के अन्तर्गत इस अन्तर्विरोध का उन्मूलन हो जाता है। समाजवादी परिस्थितियो मे सामाजिक स्वामित्व उत्पादन के सामाजिक चरित्र के अनुकूल होता है। इस वजह से समाजवादी उत्पादन व्यवस्था मे अत्युत्पादन का आर्थिक सकट नही आता। नियोजित समाजवादी अर्थव्यवस्था के कारण उपकरणों और उद्यमो की स्थिर परिसम्पत्ति का पूर्ण उपयोग होता है।

समाजवादी नियोजित अर्थव्यवस्था समाज को भौतिक एव मानव शक्ति साधनो की भयकर बर्बादी से बचाती है। इसके विपरीत पूजीवाद मे आर्थिक सकट अराजकता तथा प्रतिद्वन्द्विता, बेरोजगारी उद्यमो मे पूरी क्षमता का अनुपयोग इत्यादि साथ-साथ चलते हैं।

समाजवादी राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था नियोजित रूप से जनता की भौतिक एवं सांस्कृतिक जरूरतों की पूर्ण संतुष्टि प्रदान करने के लिए, समाज द्वारा निर्धारित अनुपातों के आधार पर विकसित होती है।

वैज्ञानिक एवं तकनीकी प्रगति में नियोजित अर्थव्यवस्था एक जोरदार तत्व है। पूंजीवाद में अनगिनत एकाधिकार दूसरों से तकनीकी रहस्य छिपाने की कोशिशें करते हैं। वहां उद्यमों की पूरी क्षमताओं का उपयोग नहीं होता। फलस्वरूप विज्ञान और टेक्नालाजी के नये अन्वेषणों का प्रयोग मन्द गति से होता है। समाजवादी समाज में विज्ञान और टेक्नालाजी के विकास के लिए असीम अवसर होते हैं। पहले दरजे की वैज्ञानिक और टेक्नालाजिकल समस्याओं के हल के लिए मानव शक्ति, भौतिक एवं वित्तीय साधन नियोजित अर्थव्यवस्था के कारण आसानी से जुटाये जा सकते हैं।

पूंजीवाद की तुलना में समाजवाद की एक अन्य विशेषता मानव शक्ति साधनों का नियोजित इस्तेमाल है। इस कारण समाजवाद में सम्पूर्ण कार्यशील जनसंख्या को पूर्ण रोजगार प्राप्त हो जाता है। समाजवाद में कोई बेरोजगारी नहीं रहती, बल्कि इसके विपरीत राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में काम करने वाले लोगों की संख्या में निरन्तर वृद्धि होती है, इन कर्मचारियों का प्रशिक्षण और अर्थव्यवस्था की विभिन्न शाखाओं में उनका वितरण नियोजित रूप से होता है।

नियोजित अर्थव्यवस्था के लाभ समाजवादी विकास की उच्च दर से स्पष्ट हैं। समाजवादी देशों में हर साल औद्योगिक उत्पादन की मात्रा इतनी ऊंची दर से बढ़ती है कि जिसे प्राप्त करना पूंजीवाद के लिए असम्भव है। आर्थिक विकास की दर अधिक होने के कारण इतिहास की अल्पावधि में ही समाजवाद पूंजीवाद को आर्थिक प्रतिद्वंद्विता में पछाड़ देगा।

समाजवादी आर्थिक विकास के नियोजित चरित्र के कारण समाजवादी देशों में उत्पादन तथा जनता के सांस्कृतिक एवं भौतिक स्तरों में निरन्तर तेज वृद्धि होती है।

यह कोई आकस्मिक बात नहीं है कि पूंजीपति वर्ग के विचारक और संशोधनवादी यह साबित करने की कोशिश कर रहे हैं कि नियोजित अर्थव्यवस्था पूंजीवाद के अन्तर्गत भी हो सकती है। इन तर्कों से संशोधनवादी पूंजीवादी व्यवस्था के दोषों को छिपाना और मेहनतकश जनता को यह विश्वास दिलाना चाहते हैं कि पूंजीवाद को समाप्त किये बिना ही उसकी सामाजिक बुराइयों को हटाया जा सकता है। किन्तु पूंजीवादी अर्थव्यवस्था के अन्तर्विरोध, उत्पादन की अराजकता और संकट, पूंजीवादी देशों में बेरोजगारी और वहां की मेहनतकश जनता की बिगड़ती हुई हालत—ये सब बातें इन तर्कों का पूरी तरह खंडन कर देती हैं।

अ याय १२

समाजवाद के अन्तर्गत सामाजिक श्रम और उत्पादकता

१ समाजवाद के अ तगत सामाजिक श्रम

भौतिक धन के उत्पादन के लिए लगायी गयी लोगो की रचनात्मक क्रियाओ का ही नाम श्रम है। श्रम प्रत्यक समाज क जीवन के लिए आवश्यक है।

समाजवाद के अ तगत श्रम का स्वरूप

कि तु विभि न सामाजिक-आर्थिक सरचनाओ म श्रम का स्वरूप एक-सा नही रहता। वह समाज के तत्कालीन उत्पादन के सम्बधा पर निभर होता है। श्रम स्वच्छिक और नि शुल्क हो सकता है और अपन या अपन समाज के लिए किया जा सकता है। श्रम शोपका के लिए अनिवाय हो सकता है। यह सब इस बात पर निभर है कि उत्पादन के साधनो का स्वामी कौन है।

सभी शोपक सामाजिक सरचनाओ म श्रम का स्वरूप सदा अनिवाय रहा है। शोपका की समद्धि की सष्टि के लिए श्रमिका को बाध्य करने के कइ तरीके इस्तेमाल किय जात रह है। इसका कारण यह है कि प्रत्यक्ष उत्पादक उत्पादन के साधना से विहीन रह हैं। उत्पादन के साधना का निजी स्वामित्व श्रम की अनिवायता का मूल कारण है और इसीलिए श्रम एक भारी बोझ मालूम पडता है। श्रम के अनिवाय चरित्र को खत्म करने के लिए उत्पादन के साधनो के निजी स्वामित्व से मुक्ति पाना आवश्यक है।

समाजवादी समाज म स्थिति भिन्न होती है। वहा लोग अपन और अपने समाज के लिए काय करते हैं। उत्पादन के क्षेत्र म प्रत्येक उपलब्धि और काय म हर सफलता प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से मेहनतकश जनता के भौतिक और

सांस्कृतिक स्तरों को उन्नत करती है। उत्पन्न वस्तुओं की मात्रा जितनी ही अधिक होगी वे उतनी ही सस्ती होंगी और समाजवादी समाज में उनका अधिकांश मेहनतकश जनता को श्रम की मात्रा पर प्राप्त होगा।

समाजवाद में अन्तर्गत श्रम के सम्बन्ध में लिखते हुए लेनिन ने बताया कि सदियों तक दूसरों के लिए काम करने और शोषकों के अधीन रहने के बाद पहली बार अपने लिए काम करना और आधुनिक तकनीक एवं संस्कृति को अपने काम में प्रयोग करना सम्भव हो सका है।[1]

समाजवाद श्रम के प्रति लोगों के दृष्टिकोण में बुनियादी परिवर्तन करता है। लोगों का श्रम के प्रति नया दृष्टिकोण हो जाता है। श्रम प्रतिष्ठा गौरव, शौर्य और बहादुरी की वस्तु के रूप में परिवर्तित हो जाता है। समाजवादी देशों में श्रम का सृजनात्मक चरित्र इस बात से स्पष्ट होता है कि मजदूर स्वयं मशीनों का आविष्कार और सुधार करने और उत्पादन प्रक्रियाओं तथा उत्पादन के संगठन को पुष्ट करने में हैं। विवेकीकरण करने वालों और आविष्कारकों की तादाद निरन्तर बढ़ रही है। उदाहरण के लिए १९६३ में तकनीकी सुधार के लिए ४३ लाख से अधिक सुझाव सोवियत संघ में आये जिनमें से २७ लाख सुझाव राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था में लागू किये गये। फलस्वरूप एक साल के दौरान १७,००० लाख रूबल की बचत हुई।

समाजवादी राज्य सृजनात्मक काम और श्रम के प्रति सृजनात्मक दृष्टिकोण को हर तरह—भौतिक और नैतिक—से बढ़ावा देता है। समाजवादी देश में सबसे प्रतिष्ठित नागरिक उत्पादन को विकसित और देश की सम्पत्ति को बढ़ाने वाला श्रमजीवी होता है। वह नवीन क्रियाओं का अन्वेषण करता है।

पूंजीवादी समाज में श्रम एक क्रूर और हीनतापूर्ण दुखदायी बोझ है। मजदूर बहुत कम नवीन क्रियाएं सुझाते हैं। वहां क्या सृजनात्मक दृष्टिकोण हो सकता है जहां आविष्कार का प्रत्येक लाभ पूंजीपति को मिलता है?

सामाजिक उत्पादन के सभी क्षेत्रों में श्रम के तकनीकी उपकरण तेजी से बढ़ाने के लिए समाजवाद व्यापक अवसर प्रदान करता है। मशीनों का बढ़ता हुआ इस्तेमाल सोवियत संघ में खासकर प्रति औद्योगिक मजदूर बढ़ी विद्युत शक्ति की खपत के रूप में देखा जा सकता है। यह मजदूरों के श्रम को आसान बनाता है और उन्हें अत्यन्त निपुण मजदूरों के रूप में परिवर्तित करता है तथा मानसिक और शारीरिक श्रम के बीच की खाई को पाटता है।

समाजवादी समाज के मजदूर का श्रम काफी यन्त्रीकृत और दक्ष होता है। अत्यन्त आधुनिक तकनीक पर आधारित समाजवादी उत्पादन के लिए तकनीकी

१ व्ला० इ० लेनिन "संकलित रचनाएं", खंड २ पृष्ठ ५६०।

दृष्टिकोण से दक्ष प्रशिक्षित लोगो की जरूरत है। प्रत्येक मजदूर को अपनी दक्षता और निष्ठा के स्तर को ऊंचा उठाने के लिए काफी अवसर प्राप्त होता है। समाजवाद के अन्तर्गत सभी प्रकार के प्रशिक्षण मुफ्त होते हैं।

मानव इतिहास में पहली बार समाजवाद काम करने की ऐसी स्थितियां लाता है जिनमें मजदूरो के स्वास्थ्य के लिए किसी बुरे असर की कोई गुंजाइश नहीं रहती।

लेनिन ने बार-बार बताया कि समाजवाद के अंतर्गत विज्ञान और टेक्नालाजी की प्रत्येक उपलब्धि का प्रयोग श्रम को हल्का, काम दिवस को छोटा और काम करने की दशाओं में सुधार करने के लिए हो।

समाजवाद के अन्तर्गत प्रत्येक व्यक्ति को काम पाने का अधिकार होता है। इस अधिकार (अपने देश और अपने व्यवसाय में काम पाने और उस काम के लिए पारिश्रमिक पाने का अधिकार) का प्रयोग समाजवाद की महान उपलब्धियों में से एक है। राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के नियोजित विकास और उत्पादन में निरन्तर वृद्धि के परिणामस्वरूप यह अधिकार वास्तव में सुरक्षित रहता है। समाजवाद के अन्तर्गत निर्वाह के साधन छीने जाने का मजदूर को कोई भय नहीं रहता। सभी प्रकार की बेरोजगारी के खत्म हो जाने से भविष्य और वास्तविक स्वतन्त्रता के प्रति मजदूरों के मन में पूर्ण विश्वास जगता है।

प्रत्येक नागरिक को काम पाने का अधिकार देने के साथ ही समाजवाद यह अपेक्षा करता है कि सभी लोग काम करें और समाजवादी उत्पादन में अपनी भूमिका अदा करें। सामाजिक उद्भव, लिंग, जाति आदि का बिना विचार किये सामाजिक श्रम में हिस्सा लेना समाजवादी समाज में प्रत्येक नागरिक का सम्मानपूर्ण दायित्व है।

समाजवाद के अन्तर्गत श्रम की एक खास विशेषता उसका प्रत्यक्ष सामाजिक चरित्र है। समाजवादी श्रम वह श्रम है जिसका संगठन नियोजित रूप से और उसके लिए भुगतान सम्पूर्ण समाज के पैमाने पर होता है। समाजवाद पूंजीवाद के अन्तर्गत होने वाले श्रम विभाजन से मूलतः भिन्न एक नये सामाजिक श्रम विभाजन को जन्म देता है। समाजवादी श्रम विभाजन की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि वह नियोजित होता है। समाजवाद बिखरी हुई अर्थव्यवस्था को समाप्त कर सभी उद्यमों को एक आर्थिक संरचना के रूप में एकीकृत करता है और लोगों को एक कार्यशील समूह के रूप में परिवर्तित करता है। इस प्रकार मजदूरों, किसानों और बुद्धिजीवियों का श्रम सम्पूर्ण सामाजिक श्रम का ही एक हिस्सा है और प्रत्यक्षतः सामाजिक है।

इसलिए समाजवाद के अन्तर्गत श्रम की अत्यन्त महत्वपूर्ण विशेषताएं हैं : मेहनतकश जनता शोषण से मुक्त होती है और इस प्रकार वह शोषकों के लिए

काम करने को बाध्य न होने से अपने लिए काम कर सकता है, श्रम के प्रति दृष्टिकोण विवेकपूर्ण और सृजनात्मक हो जाता है, समस्त मेहनतकश जनता को काम पाने का अधिकार होता है तथा काम करना सबका कर्तव्य होता है और श्रम का चरित्र प्रत्यक्षतः सामाजिक होता है।

समाजवाद के अन्तर्गत सामाजिक श्रम के चरित्र में आमूल परिवर्तन होता है। इस परिवर्तन के फलस्वरूप श्रम के संगठन के रूप और विधि में भी आमूल परिवर्तन होता है। समाजवादी श्रम सामूहिक श्रम है। वह मजदूरों, किसानों और बुद्धिजीवियों की संयुक्त क्रिया है।

श्रम का समाजवादी सहयोग

हर समाज में उत्पादन प्रक्रिया श्रम के सहयोग (लोगों के श्रम के एक या दूसरे प्रकार के संयोग) के आधार पर चलती है। श्रम के समाजवादी सहयोग का मतलब उस श्रम से है जिसका संयोग, संगठन और नियोजन शोषणमुक्त मेहनतकश जनता के मैत्रीपूर्ण सहयोग पर निर्भर है। श्रम का समाजवादी सहयोग सैद्धांतिक रूप से पूंजीवाद के अन्तर्गत पाये जाने वाले सहयोग से भिन्न होता है।

पूंजीवाद के अन्तर्गत श्रम सहयोग उत्पादन के साधनों पर पूंजीपति के निजी स्वामित्व पर आधारित होता है। इस प्रकार पूंजीवादी श्रम सहयोग के मूल में मनुष्य का मनुष्य द्वारा शोषण निहित होता है। उत्पादन का संचालन एक व्यक्ति—पूंजीपति—करता है। पूंजीपति को ही श्रम सहयोग के सारे लाभ मिलते हैं।

समाजवाद के अन्तर्गत श्रम सहयोग का आधार उत्पादन के साधनों का समाजवादी स्वामित्व होता है। वहां मनुष्य मनुष्य का शोषण नहीं करता।

समाजवादी श्रम सहयोग के अन्तर्गत सिर्फ एक उद्यम में काम करने वाले मजदूरों का श्रम ही नहीं आता, बल्कि समाज के सभी सदस्यों का श्रम आता है। समाजवाद के अन्तर्गत उनका श्रम एकीकृत सामूहिक श्रम होता है जिसका संगठन नियोजित रूप से सारे समाज के पैमाने पर होता है। उसका उद्देश्य उत्पादन के साधनों और श्रम शक्ति का अत्यन्त विवेकपूर्ण प्रयोग करना होता है।

पूंजीवाद के अन्तर्गत श्रम-सहयोग अधिशेष मूल्य का उत्पादन और मजदूरों के शोषण की मात्रा बढ़ाने का तरीका है। फलस्वरूप इस सहयोग में शामिल मजदूरों और उनका संगठन करने वाले पूंजीपतियों के बीच स्थायी और असमाधेय अन्तर्विरोध पैदा होते हैं। पूंजीवादी श्रम सहयोग को भूख की विद्यमानता और रोटी के चन्द टुकड़ों के लिए श्रम शक्ति बेचने की गम्भीर आवश्यकता के द्वारा बनाये रखा जाता है।

भौतिक धन के उत्पादन को बढ़ाने और मेहनतकश जनता की आवश्यकताओं की पूर्ण संतुष्टि के लिए समाजवादी श्रम-सहयोग लोगों के कार्यकलाप का सम्मिलित रूप होता है। इसीलिए पूंजीवादी सहयोग में निहित कोई भी अन्तर्विरोध समाजवादी श्रम विभाजन में नहीं पाया जाता।

श्रम-सहयोग (वस्तुतः मजदूरों का संयुक्त श्रम) को संगठित करने की जरूरत होती है। समाजवाद के अन्तर्गत श्रम-संगठन के कई महत्वपूर्ण तत्व हैं।

समाजवादी श्रम सहयोग में एक नये प्रकार का श्रम अनुशासन होता है, जो पहले किसी सामाजिक संरचना में नहीं पाया जाता। समाजवादी श्रम अनुशासन मेहनतकश जनता का विवेकपूर्ण और सौहार्दपूर्ण अनुशासन होता है। लेनिन ने बताया कि यह नया अनुशासन लोगों की शुभेच्छाओं के कारण जन्म नहीं लेता, बल्कि समाजवाद के निर्माण के दौरान पूंजीवाद के अवशेषों के विरुद्ध निरन्तर संघर्ष की प्रक्रिया में विकसित होता है। समाजवादी उद्यमों के मजदूरों में अब भी ऐसे लोग हैं, जो श्रम के प्रति पुराने दृष्टिकोण से चिपके हुए हैं। वे सदा कम काम करने और अधिक हड़पने की कोशिश करते हैं। इसलिए राज्य का एक महत्वपूर्ण काम लोगों में श्रम के प्रति समाजवादी दृष्टिकोण पैदा करना और श्रम अनुशासन के उल्लंघन को निरन्तर रोकना है।

श्रम के समाजवादी सहयोग का मतलब राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का नियोजित माग दर्शन है। इसका अर्थ एक ओर उत्पादन प्रक्रिया में एक व्यक्ति की जिम्मेदारी के सिद्धान्त पर दृढ़ता से अमल करना और दूसरी ओर समाजवादी उद्यमों और सम्पूर्ण सामाजिक उत्पादन के प्रबन्ध में मेहनतकश जनता का व्यापक और सक्रिय सहयोग है। कम्युनिज्म की दिशा में प्रगति के साथ मेहनतकश जनता प्रबन्ध कार्य में अधिकाधिक हाथ बटायेगी।

समाजवादी होड़ और उसकी भूमिका

हम कह चुके हैं कि समाजवाद के अन्तर्गत श्रम के चरित्र में परिवर्तन के कारण श्रम के प्रति मजदूर वर्ग का एक नया दृष्टिकोण हो जाता है। इस नये दृष्टिकोण को समाजवादी होड़ शब्द से अच्छी तरह व्यक्त कर सकते हैं।

समाजवादी होड़ समाजवादी उत्पादन सम्बन्धों, समाजवादी समाज के मेहनतकशों के मैत्रीपूर्ण सहयोग और पारस्परिक सहायता के सम्बन्धों और आर्थिक विकास योजनाओं को पूरा करने तथा लक्ष्य से भी आगे बढ़ने और सम्पूर्ण उत्पादन को आगे बढ़ाने के प्रयत्नों की ही अभिव्यक्ति है।

समाजवादी होड़ मेहनतकश जनता की क्रियाओं और सृजनात्मक पहल के द्वारा श्रम उत्पादकता बढ़ाने और उत्पादन को उन्नत करने की एक महत्वपूर्ण विधि है। लेनिन ने कहा कि समाजवादी होड़ कम्युनिज्म के निर्माण की एक विधि है।

लेनिन ने समाजवादी होड के अत्यत महत्वपूर्ण सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया। उदाहरण के लिए होड का व्यापक प्रचार होना चाहिए, यह आवश्यक है कि उसके परिणाम तुलनात्मक रूप में हों, अग्रणी मजदूरों के अनुभवों का व्यापक रूप से प्रसार हो और प्रतियोगी एक दूसरे की मदद करें।

उत्पादन को उन्नत करने की होड में लगे मजदूर और काम के उत्तम तरीकों को अपनाने वाले प्रत्येक मजदूर को आशा करनी चाहिए कि उत्पादन के अच्छे सगठन के परिणामस्वरूप श्रम हल्का होगा और अच्छे सगठनकर्ताओं के लिए उपभोग की मात्रा में वृद्धि होगी।' [1]

सोवियत सघ में समाजवादी होड का अपना गौरवमय इतिहास है। वह पहले पहल गृह युद्ध के समय कम्युनिस्ट सुब्बोतनिकों[2] के रूप में सामने आया। तब से वह कई चरणों—मजदूरों का अगला दस्ता स्ताखानोवपथी आन्दोलन और अन्य आन्दोलनों से गुजरा है। प्रारम्भ से ही समाजवादी होड आन्दोलन का पथ प्रदर्शन कम्युनिस्ट पार्टी कर रही है।

पूरे पैमाने पर कम्युनिस्ट निर्माण शुरू करने के फलस्वरूप सोवियत सघ में समाजवादी होड का एक नया रूप सामने आया है। मजदूरों के अगले दस्तों और कम्युनिस्ट काय समूहों का आन्दोलन तेजी से सारे देश में फैल रहा है।

इस आन्दोलन में शामिल लोगों ने ससार में उच्चतम श्रम उत्पादकता को प्राप्त करने का लक्ष्य अपने सामने रखा है। वे नयी मशीनों और प्रगतिशील तकनीकों को विकसित करने और व्यवहार में लाने के लिए सक्रिय प्रयत्न करते हैं और निरन्तर तकनीकी रूढिवादिता के खिलाफ सघर्ष करते हैं।

कम्युनिस्ट निर्माण काय विज्ञान और प्राविधिक उपलब्धियों पर आधारित होना है। अथक परिश्रम और निरन्तर तथा क्रमिक ज्ञान के विस्तार से ही इन्हें सीखा जा सकता है। इसीलिए कम्युनिस्ट निर्माण काय की सफलता के लिए जरूरी है कि सारे सदस्य निरन्तर सीखने की दिशा में प्रयत्नशील रहें।

समाजवादी देशों में हर साल समाजवादी होड व्यापक रूप से विकसित हो रही है। जहा कहीं भी मेहनतकश जनता के हाथों में राजसत्ता है और वह पूजीपतियों तथा भूस्वामियों के बदले अपने लिए काम करती है वहा श्रम के प्रति एक नया सृजनात्मक दृष्टिकोण सामने आया है। समाजवादी होड व्यापक हो गयी है।

---

१ लेनिन "सग्रहीत रचनाए," रूसी सस्करण खड २६ पृष्ठ २ ६।

२ सोवियत जनतत्र के लाभार्थ काय घण्टों के बाद किया गया स्वैच्छिक काय। पहला "सुब्बोतनिक' मास्को-कजान रेलवे के कम्युनिस्ट मजदूरों ने रविवार, १२ अप्रैल, १९१९ को आयोजित किया था ("सुब्बोता" रूसी शब्द है जिसका मतलब होता है रविवार)।—सम्पादक

समाजवादी देशों में समाजवादी होड सामाजिक विकास को प्रोत्साहित करने वाली बहुत बड़ी शक्ति है। समाजवादी होड के कारण ही अर्थव्यवस्था तेजी से विकसित होती है और सामाजिक श्रम उत्पादकता में निरन्तर वृद्धि होती है। समाजवादी होड इस बात का सबूत है कि शोषणमुक्त समाज में उत्पादन के विकास को प्रोत्साहित करने वाले ऐसे नये तत्व होते हैं जो पूंजीवादी व्यवस्था में नहीं होते। पूंजीवादी व्यवस्था के अन्तर्गत प्रतिस्पर्द्धात्मक संघर्ष में अनुभवों के व्यापक वास्तविक आदान-प्रदान, बंधुत्वपूर्ण सहयोग और पारस्परिक सहायता यानी विशिष्ट मानवीय सम्बन्धों का प्रश्न ही नहीं उठता है। ये सब सिर्फ समाजवादी समाज व्यवस्था में ही होते हैं।

२ श्रम उत्पादकता की निरन्तर वृद्धि समाजवाद का एक आर्थिक नियम है

श्रम उत्पादकता की अवधारणा श्रम की उत्पादकता मजदूर द्वारा एक समय इकाई के दौरान उत्पन्न किये गये माल की मात्रा के रूप में अभिव्यक्त होती है।

श्रम उत्पादकता में वृद्धि का मतलब वर्तमान और विगत (कृत) श्रम की मितव्ययिता में है। मार्क्स ने कहा कि "श्रम उत्पादकता में वृद्धि के फलस्वरूप वर्तमान श्रम का हिस्सा घट जाता है लेकिन विगत श्रम का हिस्सा बढ़ जाता है। परिणामस्वरूप उस वस्तु में निहित श्रम की मात्रा के घटने के कारण वर्तमान श्रम की मात्रा में विगत श्रम की वृद्धि की अपेक्षा अधिक ह्रास होता है।"[१]

'श्रम उत्पादकता में वृद्धि' का मतलब सामाजिक उत्पादन के लिए आवश्यक श्रम काल के व्यय में कटौती या समय की प्रति इकाई के दौरान उत्पन्न वस्तुओं की मात्रा में वृद्धि से है।

सामाजिक श्रम का समाजवादी संगठन समाज के श्रम-संगठन का उच्चतम रूप है जिसके कारण सामाजिक श्रम की उत्पादकता बढ़ती है।

पूंजीवाद के ऊपर समाजवाद की विजय और कम्युनिज्म के सफल निर्माण के लिए श्रम उत्पादकता की निरन्तर वृद्धि एक महत्वपूर्ण स्थिति है। समाजवाद के अन्तर्गत श्रम उत्पादकता की भूमिका की चर्चा करते हुए लेनिन ने लिखा कि "अन्तिम विश्लेषण में नयी समाज व्यवस्था की विजय के लिए श्रम की उत्पादकता अत्यन्त महत्वपूर्ण तत्व है। पूंजीवाद ने श्रम की एक ऐसी उत्पादकता को जन्म दिया जो सामन्तवाद में मौजूद नहीं थी। पूंजीवाद पूर्ण रूप से लुप्त हो सकता है

१ कार्ल मार्क्स "पूंजी", खंड ३ पृष्ठ ५५।

और हो जायगा, क्योंकि समाजवाद के अन्तर्गत एक नयी, उच्च प्रकार की श्रम उत्पादकता जन्म लेती है।[1]

श्रम उत्पादकता में निरंतर वृद्धि का नियम

वर्तमान श्रम उत्पादकता एक व्यापक आर्थिक नियम है जो सभी सामाजिक आर्थिक संरचनाओं में काम करता है।

किन्तु यह नियम अलग अलग संरचनाओं में अलग अलग ढंग से काम करता है। इस नियम का परिचालन समाज के प्रमुख उत्पादन-सम्बन्धों, प्रकृति, राज्य और सामाजिक उत्पादन के उद्देश्य पर निर्भर है। पूंजीवाद के अन्तर्गत इस नियम का परिचालन सीमित होता है, श्रम उत्पादकता की वृद्धि असम होती है और कभी कभी श्रम उत्पादकता में ह्रास हो जाता है।

समाजवाद के अन्तर्गत उत्पादन के साधनों पर निजी स्वामित्व खत्म हो जाता है, परिणामस्वरूप श्रम-उत्पादकता की वृद्धि के मार्ग से सारी बाधाएं हट जाती हैं।

समाजवादी समाज में श्रम उत्पादकता की निरंतर वृद्धि एक वस्तुगत आवश्यकता है, जिसका जन्म समाजवादी उत्पादन-सम्बन्धों के कारण होता है।

मार्क्स ने लिखा कि "समय की मितव्ययिता और कार्य-काल का उत्पादन की विभिन्न शाखाओं के बीच नियोजित वितरण सामूहिक उत्पादन पर आधारित पहला आर्थिक नियम है। यह इस कारण भी उच्च कोटि का नियम हो जाता है।"[2]

ऊपर जो कुछ कहा गया है उससे निष्कर्ष निकलता है कि पूंजीवादी समाज के विपरीत समाजवादी समाज श्रम उत्पादकता की निरंतर वृद्धि के नियम के संचालन के लिए पूर्ण अवसर प्रदान करता है। स्मरण रहे पूंजीवादी समाज में इस नियम का कोई निर्णयकारी परिचालक महत्व नहीं होता है। इस नियम का सार यह है कि वर्तमान और विगत श्रम की अधिकतम बचत हो और समाजवादी समाज की जरूरतों की पूर्ण संतुष्टि के लिए भौतिक धन की अधिकाधिक मात्रा की सृष्टि कम से कम श्रम की लागत से हो।

श्रम-उत्पादकता की वृद्धि के तत्व

मार्क्स ने उन मुख्य तत्वों को बताया जिन पर श्रम उत्पादकता निर्भर करती है। उन्होंने कहा कि यह उत्पादकता कई स्थितियों से निर्धारित होती है। उनमें अन्य तत्वों के अतिरिक्त मेहनतकशों की औसत दक्षता, विज्ञान की स्थिति और उसका व्यावहारिक प्रयोग, उत्पादन का

---

१ लेनिन, "संकलित रचनाएं", खंड ३, पृष्ठ २८३।

२ 'मार्क्स एंगेल्स आरकीव', रूसी संस्करण, खंड ४, पृष्ठ ११६।

सामाजिक सगठन उत्पादन के साधनों की मात्रा और उनकी क्षमता तथा भौतिक स्थितिया शामिल होती हैं।"[1]

उत्पादकता का सार, सवप्रथम, उद्यमों के तकनीकी उपकरणों के मानदण्ड स निश्चित होता है। कारखाने क मजदूर नयी, उन्नत मशीनो स जितना ही सम्पन्न होगे, उनका श्रम उतना ही फलदायक होगा। श्रम-उत्पादकता बढाने के सघष म सबसे अधिक सफलता उन उद्यमो को मिलती है, जिनमे उत्पादन प्रक्रियाओ म सभी क्षेत्रा और सभी स्तरों पर आधुनिक तकनीकी उपकरणो का व्यापक प्रयोग होता है।

उदाहरण के लिए, अगर उत्पादन के मुख्य क्षेत्रों म नयी मशीनें लगायी जाती हैं और परिणामस्वरूप श्रम-उत्पादकता में वद्धि होती है तो जरूरी है कि इन मुख्य क्षेत्रा से सम्बद्ध अन्य श्रम प्रक्रियाओ का भी यन्त्रीकरण किया जाय। सबस पहले परिवहन, सामान ढोने नियन्त्रण कल पुर्जों को आपस म सम्बद्ध करने आदि कार्यों क लिए यन्त्रा और उन्नत तरीकों का इस्तमाल किया जाता है। कई उद्यमा म अब भी य काय हाथ स किय जाते हैं। यन्त्रा के प्रयोग से इन क्षेत्रा म उत्पादकता बढेगी। कृषि एव उद्योगा क क्षेत्र म इन कार्यों क लिए मशीनो का प्रयोग करने स हाथ म काम करने की आवश्यकता नही रहगी और उत्पादकता म कई गुनी वद्धि होगी।

सोवियत सघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कायक्रम म जार देकर कहा गया है कि व्यापक यन्त्रीकरण और स्वयचालन अथ यवस्था की सभी शाखाओ के तकनीकी पुनर्निमाण के लिए अत्यन्त आवश्यक है। समाजवादी उत्पादन क व्यापक यन्त्रीकरण और स्वयचालन के विकास के गुणात्मक रूप से नय चरण म प्रवश करते ही श्रम उत्पादकता ससार म सबस ऊची हो जायगी।

आधुनिक उत्पादन म तकनीक का जो भी महत्व हो मनुष्य समाज की मुख्य उत्पादक शक्ति है। इसीलिए अधिकाश कमचारियो और मुख्यतया महनत कशों की दक्षता की मात्रा और तकनीकी योग्यताओ के स्तर पर श्रम उत्पादकता का स्तर और भावी विकास की सम्भावना बहुत हद तक निभर करती है। सिफ इतना ही नहा है कि दक्ष मजदूर का श्रम अधिक उत्पादक होता है बल्कि उच्च तकनीकी योग्यताओ स सम्पन्न मजदूर ही तकनीकी उपकरण का अच्छी तरह इस्तेमाल कर सकता है और उसका उन्नत करने के तरीक निकाल सकता है।

औद्योगिक उद्यमो म श्रम उत्पादकता मुख्य रूप स उत्पादन और श्रम के सगठन पर निभर है।

---

[1] कार्ल मार्क्स, "पूजी", खड १, पृष्ठ ४०।

प्रत्येक उत्पादन प्रक्रिया उन सभी चरणो का योग है जिनसे श्रम का विषय विभिन्न उत्पादन क्षेत्रो मे अपने निर्माण काल के दौरान गुजरता है। उन क्षेत्रो का अच्छी तरह विशेषीकरण होना चाहिए और उनका काय समन्वित और सुसतुलित होना चाहिए। दूसरे शब्दो मे, उनके बीच पक्का सांगठनिक तालमेल होना चाहिए। प्रत्यक श्रमिक बेंच और उत्पादन के प्रत्यक क्षेत्र की कुशल देखरेख होनी चाहिए। इस प्रकार की सागठनिक कडी प्रत्यक उद्यम के भीतर और विभिन्न उद्यमो के बीच होनी चाहिए। सम्पूर्ण उत्पादन प्रक्रिया का सही और कुशल सगठन और प्रत्येक श्रमिक बेंच के श्रम का सुनियोजित सगठन काय-काल की बर्बादी और अविवेकपूर्ण व्यय को रोकता है।

श्रम उत्पादकता सदा उद्यमो के भीतर और उद्यमो के बीच विकसित होने वाली विभिन्न प्रकार की होड द्वारा आगे बढती है।

प्राकृतिक स्थितिया भी श्रम उत्पादकता को प्रभावित करती है। बहुत हद तक कृषि और निष्कषण उद्योगो (कोयला तल, लौह अयस्क आदि) मे वे उत्पादकता का निर्धारण करती हैं।

श्रम की बढी हुई उत्पादकता इस बात पर निभर है कि श्रम के लिए किस प्रकार भुगतान किया जाता है और किस प्रकार सबसे अधिक सफलता प्राप्त करने वाले मजदूरो को भौतिक प्रोत्साहन दिया जाता है।

समाजवादी समाज मे नतिक प्रोत्साहन भी महत्वपूर्ण है। समाजवादी राज्य विभिन्न उद्यमो के सफल श्रमिको और अग्रणी समूहो को प्रोत्साहित करता है। दर्जे पदक और योग्यता के प्रमाणपत्र अच्छे काय के लिए दिये जाते हैं। सफल श्रमिको को सम्मानसूचक उपाधिया आदि दी जाती हैं। इन सबके कारण काय मे अधिकाधिक सफलता प्राप्त करने अच्छा और अधिक काम करने तथा ऊचे स्तर का काय करने की भावना श्रमिको मे जगती है।

विज्ञान का स्तर जितना ही ऊचा होगा और उसकी आधुनिक उपलब्धिया जितनी ही तेजी से व्यवहार मे लायी जायगी सामाजिक उत्पादकता उतनी ही अधिक होगी। सिफ समाजवादी अथव्यवस्था में ही विज्ञान और भौतिक उत्पादन हर तरह से सम्बद्ध हो सकता है क्योकि समाजवादी अथव्यवस्था मे खुली या गुप्त किसी प्रकार की प्रतिद्वद्विता नही रहती।

अन्त मे उत्पादन का विवेकपूर्ण स्थानीकरण श्रम उत्पादकता बढाने के लिए एक महत्वपूर्ण तत्व है। उत्पादन के स्थानीकरण के फलस्वरूप एक ओर उद्यमो मे स्पष्ट रूप से विशेषीकरण और सहयोग होना चाहिए और दूसरी ओर प्राकृतिक साधनो का पूर्ण रूप से आर्थिक उपयोग होना चाहिए।

उत्पादन का उचित स्थानीकरण भौतिक मूल्यों के उत्पादन, परिवहन, भडार और वसूली म सामाजिक श्रम के व्यय को घटाता है। श्रम के व्यय म ह्रास का मतलब श्रम उत्पादकता म वृद्धि है।

राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की सभी शाखाओ म तकनीकी प्रगति सामाजिक श्रम की उत्पादकता का बढान के लिए निर्णायक तत्व है। इसीलिए कम्युनिस्ट समाज के पूरे पैमाने पर निमाण के दौरान उत्पादन प्रक्रियाओ के व्यापक यत्रीकरण, स्वयचालन रसायनीकरण और विद्युतीकरण उत्पादन और श्रम के सगठन मे सुधार और मजदूरो की कुशलता और तकनीकी योग्यताओ को बढ़ाने का अधिक महत्व हो जाता है।

श्रम-उत्पादकता को बढाने के लिए समाजवाद काफी अवसर प्रदान करता है। उत्पादकता वृद्धि की दर की दृष्टि से समाजवादी देश सबसे आगे हैं। सोवियत सघ म श्रम उत्पादकता पूजीवादी देशो की अपेक्षा ४ ५ गुनी अधिक है। १९१३ म रूस के औद्योगिक क्षेत्र म श्रम उत्पादकता अमरीका की श्रम उत्पादकता का नौवा हिस्सा थी। किन्तु १९६४ मे खाई बहुत कम रह गयी। सोवियत सघ म श्रम उत्पादकता अमरीका की तुलना मे ६५ प्रतिशत थी। सोवियत सघ की श्रम उत्पादकता ब्रिटेन और फ्रास जसे पूजीवादी देशो म काफी अधिक है।

२० वर्षों (१९६१ १९८०) म श्रम उत्पादकता सोवियत औद्योगिक क्षेत्र म ३०० ३५० प्रतिशत और कृषि के क्षेत्र मे ४०० ५०० प्रतिशत बढ जायगी। सोवियत सघ की कम्युनिस्ट पार्टी की २२वी काग्रेस के प्रस्ताव मे कहा गया है कि 'श्रम उत्पादकता को बढाने की समस्या कम्युनिस्ट निर्माण की नीति और व्यवहार की मुख्य समस्या है जनता की खुशहाली बढाने और महनतकश जनता क लिए विपुल भौतिक और सास्कृतिक लाभ की सृष्टि के लिए एक आवश्यक स्थिति है।'[१]

श्रम उत्पादकता की तीव्र वृद्धि उत्पादन की गति को बढाने और कम्युनिस्ट निर्माण की समस्याओ के हल के लिए आवश्यक है। इसीलिए श्रम-उत्पादकता को बढाने के लिए समाजवादी समाज के प्रत्येक उद्यम और प्रत्येक श्रमिक बेंच म प्राप्त सम्भावनाओ का पूर्ण इस्तेमाल अधिक महत्व रखता है।

---

१ "कम्युनिज्म का मार्ग", पृष्ठ ४२७।

अध्याय १३

समाजवाद के अन्तर्गत वस्तु-उत्पादन, मुद्रा और व्यापार

१ समाजवाद के अन्तगत वस्तु-उत्पादन

समाजवाद के अन्तगत वस्तु उत्पादन की खास विशेषताए

समाजवादी समाज म वस्तु उत्पादन अव यम्भावी है क्योकि वहा समाजवादी सम्पत्ति दो रूपों म रहती है—राजकीय (सारी जनता की) सम्पत्ति और सहकारी एव सामूहिक फाम सम्पत्ति।

समाजवादी सम्पत्ति क इन दो रूपो क आधार पर सामाजिक श्रम विभाजन विकसित होता है इसलिए भी समाजवाद क अन्तगत वस्तु मुद्रा सम्बध रहता है।

यही नही, समाजवाद म अन्तगत भी उत्पादक शक्तियो के विकसित होने के बावजूद श्रम का सामाजिक आर्थिक अन्तर रहता है। मानसिक एव शारीरिक, प्रशिक्षित एव अप्रशिक्षित और मजदूर के श्रम एव सामूहिक किसान के श्रम के बीच स्पष्ट अन्तर होने के कारण सब प्रकार क श्रम को समरूप नही किया जा सकता। यह काय सिफ मूल्य के द्वारा ही किया जा सकता है। इन सब कारणो से वस्तु मुद्रा सम्बध समाजवाद के अन्तगत बना रहता है।

सोवियत सघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कायक्रम म कहा गया है कि कम्युनिस्ट निर्माण म वस्तु मुद्रा सम्बधो का समाजवादी काल के उनके नवीन रूप को ध्यान मे रखते हुए पूण इस्तेमाल करना आवश्यक है।"[१]

---

१ 'कम्युनिज्म का माग' पृष्ठ ५३६।

समाजवाद के अन्तर्गत वस्तु मुद्रा सम्बधो का नवीन रूप होता है, क्योंकि यहां वस्तु उत्पादन उत्पादन साधनो के समाजवादी स्वामित्व के आधार पर सयुक्त समाजवादी उत्पादको (राज्य और सहकारी संस्थाओं) के द्वारा नियोजित तौर पर होता है। इन खास विशेषताओ के कारण समाजवाद के अन्तर्गत वस्तु-उत्पादन पूजीवादी वस्तु उत्पादन मे नहीं बदल सकता।

समाजवाद के अन्तर्गत वस्तु उत्पादन उतना व्यापक नही होता, जितना पूजीवाद मे होता है। समाजवाद के अन्तर्गत वस्तु उत्पादन और वस्तु प्रचलन का दायरा सीमित होता है। उदाहरण के लिए श्रम शक्ति वस्तु के रूप म नही होती इसकी खरीद बिक्री नही होती। भूमि अपने खनिज पदार्थों समेत व्यापार के क्षेत्र से बाहर रहती है (यानी भूमि न तो खरीदी जा सकती है और न बेची)। समाजवादी उद्यम और उनकी स्थिर परिसम्पत्ति (मशीनें, इमारतें उपकरण, आदि) न तो खरीदी जा सकती है और न बेची जा सकती है।

समाजवाद के अन्तर्गत वस्तु उत्पादन के स्वरूप मे आमूल परिवतन होने के फलस्वरूप उसकी कोटिया भी बदलती हैं। कई कोटिया (जैसे वस्तु के रूप मे श्रम शक्ति अधिशेष मूल्य और अन्य जो वस्तु उत्पादन के पूजीवादी स्वरूप के सूचक होते हैं) लुप्त हो जाती है। वस्तु मुद्रा मूल्य कीमत मुनाफा, साख, आदि वस्तु उत्पादन की अन्य आर्थिक कोटिया रहती हैं यद्यपि उनके स्वभाव म परिवतन हो जाता है।

समाजवादी समाज म वस्तु-मुद्रा सम्बध सवप्रथम राजकीय उद्यमों, सहकारी सगठनो और सामूहिक फार्मों के बीच जन्म लेता है। राजकीय उद्यम ऐसी वस्तुओं को उत्पन्न करते हैं जो सहकारी उद्यमो के लिए उत्पादन के साधन और उसम काम करने वालो के लिए उपभोक्ता वस्तुओं का काम करती हैं। सहकारी उद्यम ऐसी वस्तुओ का उत्पादन करते हैं जो उद्योग के लिए कच्चे माल और जनता के लिए खाद्य पदार्थ और अन्य उपभोक्ता वस्तुओं का काम करती हैं।

वस्तु विनिमय राजकीय उद्योग और सहकारी खेती के पारस्परिक आर्थिक सम्बधो का एक आवश्यक रूप है।

द्वितीय राजकीय और सहकारी क्षेत्रो तथा सामूहिक किसानो द्वारा अपने गौण भूखण्डो पर उत्पन्न सम्पूर्ण वस्तुए वस्तु उत्पादन और विनिमय के अन्तर्गत आती हैं। ये वस्तुए खरीद बिक्री के द्वारा शहरी और ग्रामीण आबादी की व्यक्तिगत सम्पत्ति हो जाती हैं।

तृतीय राजकीय उद्यमो म वस्तु-सम्बध उत्पादन के साधनो के उत्पादन क्षेत्रो म उत्पन्न होते हैं। राजकीय उद्यमों द्वारा उत्पन्न उत्पादन के साधनो (मशीनी औजार, मशीनें, धातुएं कोयला तेल, सिमेंट, आदि) का विनिमय उद्यमो

के बीच खरीद बिक्री के माध्यम से होता है। इस प्रकार उत्पादन के साधन वस्तुओं के रूप में होते हैं।

अंतिम, विदेशी व्यापार के आवर्त द्वारा समाजवादी राज्य और अन्य देशों के बीच वस्तु सम्बंध उत्पन्न होते हैं।

समाजवादी समाज में वस्तु उत्पादन उत्पादक शक्तियों के विकास और उसके माध्यम से समाजवाद से कम्युनिज्म की ओर संक्रमण को प्रोत्साहित करता है। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम में कहा गया है कि "जन सम्पत्ति के कम्युनिस्ट रूप और कम्युनिस्ट वितरण-व्यवस्था के स्थापित होने पर वस्तु मुद्रा सम्बंध आर्थिक तौर पर दकियानूसी हो जायेंगे और अन्ततोगत्वा लुप्त हो जायेंगे।'[1]

वस्तु का उपयोग मूल्य और मूल्य

जैसा कि हम जानते हैं वस्तु के दो पक्ष, दो गुण धर्म होते हैं उपयोग मूल्य और मूल्य। समाजवाद के अंतर्गत पूजीवादी स्थितियों की तुलना में इन दो गुणधर्मों के बिलकुल भिन्न अर्थ होते हैं।

पूजीपति की दिलचस्पी वस्तु के मूल्य में होती है। इसी से अधिशेष मूल्य प्राप्त किया जा सकता है। उपयोग मूल्य का उत्पादन उसी हद तक होता है जिस हद तक वह अधिशेष मूल्य के उत्पादन के लिए आवश्यक रहता है।

समाजवादी अर्थव्यवस्था में वस्तु के उपयोग मूल्य का एक विशेष महत्व होता है। समाजवादी समाज उपयोग मूल्य और वस्तुओं की कोटि उन्नत करना चाहता है। समाजवादी समाज उपयोग मूल्यों की किस्म और मात्रा का ही नियोजन नहीं करता, बल्कि वस्तुओं की अच्छी किस्मों के लिए भी कोशिश करता है।

समाजवादी समाज के लिए वस्तु का मूल्य पक्ष भी महत्वपूर्ण है। उत्पादन का नियोजन न सिर्फ भौतिक सूचकांकों बल्कि मुद्रा (मूल्य) सूचकांकों के रूप में भी होता है। मुद्रा सूचकांकों का इस्तेमाल वस्तुओं के मूल्य में व्यवस्थित रूप से कटौती करने और उसके आधार पर वस्तुओं की कीमतें कम करने, समाजवादी संचय को निरन्तर बढाने और समाजवादी समाज के सदस्यों की जरूरतों को पूर्ण रूप से संतुष्ट करने के लिए होता है।

समाजवादी उत्पादन में उपयोग मूल्य और मूल्य में परस्पर कोई अन्त विरोध नहीं होता क्योंकि निजी और सामाजिक श्रम के बीच विरोध नहीं होता।

हालांकि इसका यह मतलब नहीं है कि समाजवाद के अन्तर्गत उपयोग मूल्य और मूल्य के बीच कोई विरोध होता ही नहीं। विरोध होता है लेकिन

---

1 'कम्युनिज्म का मार्ग' पृष्ठ ५३१।

उसका स्वभाव विध्वसात्मक नही होता। जैसे कि जब वस्तुए अच्छी किस्म की नही होती तब उनको बेचने म कठिनाइया होती हैं। दुकानो म ऐसे विभाग होते हैं जहा तैयार वस्तुए घटी हुई कीमतो पर बेची जाती हैं। यह बताता है कि वस्तुओं के उपयोग मूल्य और मूल्य के बीच विरोध पदा हो गया है। वस्तुओ के न बिकने का कारण यह नही है कि व आवश्यक नही हैं, बल्कि उनके मूल्य और उनकी कोटि म कोई समन्वय नही है। उनके मूल्य पर उनकी बिक्री न होने का कारण यह है कि उनका उपयोग मूल्य उनके मूल्य क बराबर नही है इसलिए कीमतो म कटौती होती है।

समाजवादी अर्थव्यवस्था मे नियोजित नेतृत्व, उत्पादन की किस्म और दायरे की वृद्धि और मूल्य मे कटौती के द्वारा उपयोग मूल्य और मूल्य का अन्त विरोध खत्म कर दिया जाता है।

वस्तु का दुहरा चरित्र वस्तु को उत्पन्न करने वाले श्रम के दुहरे स्वभाव के कारण होता है।

पूजीवादी समाज म श्रम का दुहरा स्वभाव वस्तु उत्पादन का अन्तर्विरोध जाहिर करता है। यह अन्तर्विरोध निजी और सामाजिक श्रम मे होता है।

समाजवादी समाज मे स्थिति बिल्कुल भिन्न होती है। समाजवादी समाज का आर्थिक आधार सामाजिक स्वामित्व होता है। मजूरी देकर मजदूरो को काम पर लगाने की व्यवस्था खत्म हो जाती है। इसलिए श्रम के सामाजिक और निजी स्वरूप का अन्तर्विरोध खत्म हो जाता है। समाजवाद के अन्तगत श्रम निजी नही बल्कि प्रत्यक्षत सामाजिक हो जाता है। समाजवादी समाज म लोगो का श्रम सारे देश के पैमाने पर नियोजित और सगठित मानवीय क्रिया होता है। समाजवादी श्रम के स्वरूप म इस परिवतन के फलस्वरूप उत्पादन प्रक्रिया के दौरान कारखाना और राजकीय या सामूहिक फाम आदि म लगाया गया श्रम प्रत्यक्ष रूप से सामाजिक श्रम जान पडता है।

समाजवादी चरण मे यह प्रत्यक्ष सामाजिक श्रम मूल्य और उसके अन्य रूपो म अप्रत्यक्ष रूप से अभिव्यक्त होता है।

समाजवाद के अन्तगत किसी भी वस्तु के मूल्य का परिमाण उसके उत्पादन के लिए लगाये गये सामाजिक तौर पर आवश्यक श्रम-काल से निर्धारित होता है।

वस्तु के मूल्य का परिमाण

सामाजिक तौर पर आवश्यक श्रम काल का मतलब उत्पादन की उस शाखा मे उस वस्तु की बहुसख्यक इकाइया को उत्पन्न करने वाले उद्यमो द्वारा व्यय किया गया औसत श्रम काल है। ये उद्यम उत्पादन की औसत स्थितियो मे काम करते हैं।

समाजवाद में मुद्रा समाजवादी संचय और बचत का साधन होती है। यह कार्य तब होता है जब मेहनतकश जनता के साधन और उसकी आय (जो तत्काल इस्तेमाल में नहीं है) और समाजवादी उद्यमों तथा विभिन्न संगठनों की संचित मुद्रा राशि बैंक में जमा की जाती है तथा संचय के लिए प्रयुक्त होती है। बचत बैंकों में मेहनतकश जनता अपनी बचत को मुद्रा के रूप में जमा करती है।

समाजवादी परिस्थितियों में पूंजीवाद की तरह संचित मुद्रा के कारण मनुष्य द्वारा मनुष्य का शोषण नहीं होता।

समाजवादी समाज में सोना विश्व करेंसी की भूमिका अदा करता है। यह भुगतान का अन्तर्राष्ट्रीय साधन, सर्वदेशीय क्रय माध्यम और आरक्षित कोष का कार्य करता है।

समाजवाद के अन्तर्गत मुद्रा के ये ही कार्य हैं। ये कार्य एक दूसरे से अलग नहीं हैं बल्कि एक दूसरे से घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध हैं। कार्यों के इस पारस्परिक सम्बंध में हम मुद्रा को एक व्यापक समतुल्य सूचकांक के रूप में देखते हैं और समाजवादी अर्थव्यवस्था में इसकी भूमिका को महसूस करते हैं।

समाजवाद में मुद्रा-प्रचलन

सामान्यतया मुद्रा सर्वदेशीय तुल्यांक की भूमिका तभी अदा कर सकती है जब मुद्रा की प्राप्त राशि राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की वास्तविक जरूरतों के अनुकूल हो। राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था इन वास्तविक जरूरतों को मुद्रा प्रचलन के माध्यम और भुगतान के साधन के रूप में पूरा करती है।

प्रचलन के लिए अपेक्षित मुद्रा राशि प्रचलन क्षेत्र में उपस्थित वस्तुओं की कीमतों के योग को मुद्रा के प्रचलन वेग से विभाजित करने पर प्राप्त होती है।

देश के सामान्य आर्थिक जीवन को बनाये रखने के लिए वस्तुओं की कुल कीमतों और प्रचलन में रहने वाली मुद्रा की कुल राशि में सही सन्तुलन रहना अत्यन्त आवश्यक है। मुद्रा प्रचलन के नियम के आधार पर राज्य मुद्रा प्रचलन का नियमन करता है और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का विकसित करने के लिए उसका नियोजित प्रयोग करता है। प्रचलन के क्षेत्र में कार्य करने वाली मुद्रा का नियमन राजकीय वित्त और नकद मुद्रा तथा साख योजनाओं द्वारा होता है।

जनसंख्या की आय और वस्तु आवर्त की मात्रा तथा जनसंख्या द्वारा खरीदी जाने वाली सेवाओं की मात्रा का अनुपात मुद्रा प्रचलन को प्रभावित करने वाला एक महत्वपूर्ण तत्व है। स्टेट बैंक की चालू नकद मुद्रा-योजना सरकार की स्वीकृति के लिए जनता की मौद्रिक आय और उसके व्यय में सन्तुलन के आधार पर बनती है।

स्टेट बक की चालू नकद मुद्रा-योजना स्टेट बक को प्राप्त होने वाले सभी सम्भावित नकद भुगतानों को दिखलाती है। इन सम्भावित नकद भुगतानो मे व्यवसायी सगठनो से प्राप्त होने वाली मुद्रा राशि (कुल जमा के ८० प्रतिशत से भी अधिक) सार्वजनिक सेवा उद्यमो परिवहन सचार आदि मे प्राप्त होन वाली राशि कर भुगतान, बचत बक की जमा राशि इत्यादि हैं। योजना म मजदूरो की मजूरी सामूहिक फार्म के किसानो को कार्य दिवस इकाइयो के बदले मिलने वाले भुगतान, सामूहिक फार्म और उनके सदस्यो को उत्पादन की राजकीय खरीद के बदले मिलने वाले भुगतान, पेंशनयाफ्ता लोगो को मिलने वाले भुगतान भत्ते इत्यादि के रूप म स्टेट बक द्वारा दी जाने वाली मुद्रा राशि दिखलायी जाती है। चालू नकद मुद्रा-योजना म आय और व्यय के निर्धारित अनुपात के माध्यम से स्टेट बक प्रचलन के क्षेत्र म मुद्रा की राशि का नियमन करता है।

समाजवाद के अतर्गत मुद्रा प्रचलन का नियोजित सचालन प्रचलन व्यवस्था को मजबूत बनाने और मुद्रा को स्थायित्व प्रदान करने म सहायक होता है।

समाजवाद के अतर्गत मुद्रा का स्थायित्व न सिर्फ आरक्षित स्वर्ण-कोष से सम्भव है बल्कि बहुत बडी मात्रा मे वस्तुओ को निश्चित स्थायी कीमतो पर प्रदान करने म सम्भव है। इसीलिए सोवियत करेंसी विश्व म सबसे स्थायी करेंसी है। समाजवादी उत्पादन के विकास के साथ सोवियत रूबल प्रतिष्ठा प्राप्त करता जा रहा है। इस दिशा म १ जनवरी १९६१ से कीमतो के पमाने म दस गुनी वृद्धि और रूबल के स्वर्ण अश की वृद्धि महत्वपूर्ण कदम हैं।

३ समाजवादी अर्थव्यवस्था मे मूल्य का नियम

समाजवाद के अन्तर्गत वस्तु उत्पादन होता है। इसका मतलब है कि समाजवादी अर्थव्यवस्था मे मूल्य का नियम काम करता है।

समाजवाद के अन्तर्गत मूल्य के नियम का सारतत्व यह है वस्तुओ का उत्पादन एव विनिमय उनमे निहित सामाजिक रूप से आवश्यक श्रम की मात्रा के अनुसार होना है।

ज्योही वस्तु उत्पादन शुरू हुआ, मूल्य का नियम काम करने लगा। वस्तु उत्पादन के विकसित होने के साथ-साथ मूल्य के नियम का प्रभाव क्षेत्र भी विस्तृत हो गया। पूजीवाद के अन्तर्गत मूल्य का नियम व्यापक हो गया है। पूजीवादी अर्थव्यवस्था म उत्पादन की विभिन्न शाखाओ म पूजी एव श्रम शक्ति का उत्पादन, प्रवाह एव वितरण इसी के द्वारा नियमित होना है।

समाजवाद मे मूल्य का नियम उसी प्रकार नही लागू होता जिस प्रकार पूजीवाद मे। समाजवादी व्यवस्था मे उसका काय क्षेत्र सीमित होता है क्योकि वहा उत्पादन के साधनो पर समाजवादी स्वामित्व होता है और अथव्यवस्था नियोजित होती है।

समाजवादी अथ यवस्था मे मूल्य का नियम उत्पादन और राष्ट्रीय अथ व्यवस्था की विभिन्न शाखाओ म उत्पादन के साधनो और श्रम के वितरण का नियामक नही है। ये सब काय राष्ट्रीय अथ यवस्था के नियोजित, सानुपातिक विकास के नियम के आधार पर राजकीय नियाजन समितिया करती हैं। समाजवाद मे मूल्य क नियम का परिचालन क्षेत्र और उसके परिचालन का तरीका भी भिन्न होता है। वह एक बाह्य शक्ति के रूप म लोगो को अपने काबू म नही रखता।

समाजवादी अथव्यवस्था के नियोजन मे इस बात पर ध्यान देना होगा कि किस प्रकार मूल्य का नियम काय करता है। सर्वोपरि कीमत निर्धारण के लिए मूल्य के नियम का प्रयोग किया जाता है। मूल्य का नियम कीमत यत्र के माध्यम से काम करता है। समाजवादी समाज मे कीमतो का निर्धारण अपने आप नही होता बल्कि उनका नियोजन होता है। वस्तुओ के उत्पादन के लिए लगाय गये सामाजिक तौर पर आवश्यक श्रम की मात्रा के आधार पर (यानी मूल्य के आधार पर) समाजवादी राज्य कीमतो का निर्धारण करता है।

राष्ट्रीय आर्थिक कारणो से समाजवादी राज्य वस्तुओ की कीमतें उनके मूल्य से ऊपर या नीचे रखता है। अपनी कीमत-नीति के द्वारा राज्य अथव्यवस्था की एक शाखा की आय के एक हिस्से का दूसरी शाखाओ म द्रुत विकास के लिए इस्तेमाल करता है। फलस्वरूप कीमत और मूल्य के परिवतन को राज्य पहले स ही नियोजित करता है।

उदाहरण के लिए उपभोक्ता वस्तुओ की कीमतें निश्चित करते समय राज्य न सिफ उनके मूल्य को आधार बनाता है बल्कि पूर्ति और माग के अनुपात पर भी ध्यान देता है।

समाजवादी राज्य मूल्य के नियम का प्रयोग उत्पादन की वृद्धि तेज करने श्रम-उत्पादकता बढाने और उत्पादन लागत कम करने तथा उत्पादन को लाभप्रद बनाने के लिए करता है।

४ समाजवाद के अन्तगत व्यापार

समाजवाद के अ तगत समाजवादी समाज म श्रम द्वारा वस्तुए उत्प न होती हैं। इसलिए उत्पादन और उपभोग के बीच कडी क रूप म वस्तु प्रचलन आवश्यक है।

व्यापार का स्वरूप और उसकी भूमिका

समाजवाद के अंतर्गत वस्तु प्रचलन व्यापार का रूप लेता है। व्यापार के माध्यम से समाजवादी उद्यमों, शहर और गांव तथा समाजवादी उत्पादन एवं उपभोग के बीच सम्बंध स्थापित किये जाते हैं। इस प्रकार मेहनतकश जनता की बढ़ती हुई आवश्यकताओं को संतुष्ट किया जाता है।

समाजवादी व्यापार और पूंजीवादी व्यापार में मौलिक विभेद है।

समाजवादी व्यापार उत्पादन के साधनों के सामाजिक स्वामित्व पर आधारित होता है। समाजवादी देशों में इसीलिए व्यापार नियोजित होता है। राज्य व्यापार के आवर्त्त, कीमत, प्रचलन लागत, आदि का नियोजन करता है। समाजवाद के अन्तर्गत व्यापार का उद्देश्य मुनाफा कमाना और अन्य लोगों का शोषण कर कुछ लोगों को धनी बनाना नहीं है। समाजवादी व्यापार को पूंजीवादी व्यापार की तरह विक्रय-संकटों का सामना नहीं करना पड़ता है।

समाजवादी उत्पादन के विकास, घरेलू बाजार के विस्तार, [illegible] किस्मों को सुधारने, आदि में व्यापार बहुत सहायक है। राष्ट्रीय [illegible] राजकीय क्षेत्र के भीतर और राजकीय क्षेत्र तथा सहकारी क्षेत्र के [illegible] कड़ी के रूप में समाजवादी राज्य समाजवादी पुनरुत्पादन की [illegible] बढ़ाता है।

श्रम के अनुसार वितरण के लिए व्यापार एक [illegible] समाजवादी व्यापार के जरिए मेहनतकश जनता अपने श्रम [illegible] राशि से अपनी जरूरत की उपभोक्ता वस्तुएं खरीदती है। [illegible] उपभोग और उत्पादन पर व्यापार का निश्चित असर पड़ता है। [illegible] में नयी उपभोक्ता वस्तुएं लाने में सहायक होता है और [illegible] रहन तथा नयी रुचियों को ग्रहण करने के लिए जनता को [illegible]

व्यापार देश की वित्तीय साख और मौद्रिक व्यवस्था [illegible] वाला एक महत्वपूर्ण तत्व है।

समाजवाद के अन्तर्गत व्यापार के रूप

सोवियत संघ के अनुभव से [illegible] अन्तर्गत व्यापार के तीन रूप [illegible] सामूहिक फार्म व्यापार [illegible]

राजकीय व्यापार वस्तु प्रचलन का प्रमुख [illegible] उसका संचालन व्यापारिक संगठन करते हैं। [illegible] साधनों और मुद्रा राशि पर राज्य का अधिकार [illegible]

समाजवाद के अंतर्गत व्यापार संगठन [illegible] भूमिका होती है। राजकीय उद्यमों द्वारा उत्पन्न [illegible] लायक कृषि उत्पादन का एक बहुत बड़ा हिस्सा [illegible]

हाथो म होता है। उदाहरण के लिए १९६१ म सोवियत खदरा यापार आवत का ६७ ३ प्रतिशत राजकीय यापार के दायरे म था। राजकीय यापारिक सगठन मुख्य रूप से शहरो और औद्योगिक केद्रा की जनता की सेवा करते हैं।

सहकारी व्यापार का सचालन मुख्य रूप से उपभोक्ता सहकारी समितियो के यापारिक उद्यमो द्वारा होता है। उपभोक्ता सहकारी समितिया सहकारी व्यापार का करीब ९० प्रतिशत सचालित करती है। वे ग्रामीण जनता को तयार माल देती हैं और कृषि उत्पादन को खरीदती और कमीशन लेकर बचती हैं। १९६२ म सोवियत सघ मे सहकारी व्यापार म कुल खुदरा व्यापार आवत का २८ ४ प्रतिशत था।

राजकीय और सहकारी व्यापार व्यवस्थाओ के अतगत सावजनिक भोजन गह—कारखाना के भोजनालय सावजनिक होटल रेस्तरा आदि भी आते हैं। राजकीय और सहकारी यापार सयुक्त रूप से १९६२ म देश के कुल व्यापार आवत के ९५ ७ प्रतिशत को सचालित करते थ। ये दो प्रकार के यापार मिलकर सगठित बाजार बनाते हैं। इसके अतिरिक्त सामूहिक फाम व्यापार के रूप म एक असगठित बाजार भी है।

सामूहिक फाम यापार का सचालन सामूहिक फार्मों और उनके सदस्यो के द्वारा होता है जो अपने अतिरिक्त उत्पादन को जनता के हाथो माग और पूर्ति द्वारा निर्धारित कीमता पर बचते हैं। इन कीमतों के स्तर को राजकीय और सहकारी व्यापार आर्थिक दृष्टि स प्रभावित करते हैं।

राजकीय और सहकारी यापार के विस्तार के साथ असगठित बाजार का महत्व घटता है। १९४० म कुल यापार आवत के १४ ३ प्रतिशत पर सामूहिक फाम बाजार का अधिकार था किन्तु १९५५ म ८ ७ प्रतिशत और १९६२ म ४ ३ प्रतिशत पर अधिकार था।

व्यापार म खुदरा कीमतें और प्रचलन-लागत समाजवाद म दो प्रकार के बाजार होने के कारण दो प्रकार की कीमतें होना हैं सगठित बाजार की कीमतें और असगठित बाजार की कीमतें।

सोवियत सघ म सगठित बाजार की कीमता के अतगत उद्योग और व्यापारिक सगठना की थोक कीमतें राजकीय और सहकारी व्यापारिक उद्यमो की खुदरा कीमतें और सामूहिक फामों और उनके सदस्या द्वारा बची जाने वाली वस्तुओ के लिए राज्य द्वारा दी जाने वाली खरीद कीमतें आती हैं।

राजकीय खुदरा कीमतें (जनता को राज्य द्वारा बची जाने वाली तयार वस्तुओ तथा खाद्य पदार्थों की कीमतें) समाजवादी व्यापार व्यवस्था म प्रमुख

मिका अदा करती हैं। उनका नियोजन और निर्धारण प्रत्येक प्रकार की वस्तु के लिए राज्य द्वारा होना है।

बहुसख्यक तैयार वस्तुओ के लिए सारे सोवियत सघ मे एक ही कीमतें होती हैं, किन्तु कतिपय खाद्य पदार्थों की कीमतें विभिन्न क्षेत्रो और मौसमो म अलग अलग होती हैं।

सगठित बाजार म खुदरा कीमतो म अपने आप उतार चढाव नही होता । राज्य तात्कालिक आर्थिक और राजनीतिक कार्यों की पूर्ति के लिए उनमे आवश्यकतानुसार परिवर्तन करता है। किन्तु राज्य मनमाने ढग से कीमतें निश्चित नही करता । वह वस्तुओ के मूल्य पर भी ध्यान देता है।

समाजवादी उत्पादन म निरतर वद्धि और उत्पादन लागत म कमी और श्रम उत्पादकता मे लगातार वद्धि के फलस्वरूप खुदरा कीमतो मे नियोजित रूप से कमी करना सम्भव हो जाता है। समाजवाद के अन्तगत खुदरा कीमतो मे लगातार कमी के द्वारा लोगो की खुशहाली को बढाया जाता है।

प्रचलन-लागत के बिना कोई व्यापार नही चल सकता। समाजवादी व्यापार मे य लागतें पूजीवादी प्रचलन-लागतो से बिल्कुल भिन्न होती हैं। समाजवाद के अतगत प्रचलन लागत म वस्तुओ को उनके उत्पादन स्थान से उपभोक्ता तक पहुचाने म व्यापारिक उद्यमो और सगठनो द्वारा किय गये व्यय आते हैं। य व्यय व्यापारिक उद्यमो म काम करने वाले लोगो की मजूरी, परिवहन व्यय, व्यापारिक सगठनो की देखरेख और भडार की सुविधाओ, पकिंग लागत साख पर ली गई मुद्रा के सूद, आदि के रूप मे होत हैं। प्रचलन-लागत की माप व्यापार आवत्त क प्रतिशत के रूप म होती है। उसका नियोजन और निर्धारण राज्य करता है।

प्रचलन-लागत म कटौती समाजवादी व्यापार की विशेषता है। उदाहरण के लिए, सोवियत सघ म १६२८ म प्रचलन लागत व्यापार आवत्त का १६ ७ प्रतिशत १६४० म ६ ७ प्रतिशत और १६६२ म ७ १ प्रतिशत थी।

प्रचलन लागत मे कटौती व्यापारिक सगठनो के कार्यों के स्तर का गुणात्मक सूचक है। इस कटौती के फलस्वरूप समाजवादी सचय बढता है।

समाजवादी व्यापार म प्रचलन लागत पूजीवादी देशो की तुलना म काफी कम है। उदाहरण के लिए अमरीका मे प्रचलन लागत कुल खुदरा कीमतो की एक तिहाई है।

विदेश व्यापार

समाजवादी देशो मे घरेलू व्यापार के साथ-साथ विदेश व्यापार भी चलता है। विदेश व्यापार द्वारा श्रम के अतर्राष्ट्रीय विभाजन से लाभ प्राप्त हो सकता है।

पूंजीवादी देशों में विदेश व्यापार मुख्य रूप से निजी विदेशी एकाधिकार चलाते हैं। समाजवादी देशों में विदेश व्यापार का संचालन राज्य करता है। सोवियत राजसत्ता की पहली आज्ञप्तियों में से एक आज्ञप्ति के द्वारा विदेश व्यापार पर राजकीय एकाधिकार कायम किया गया। विदेश व्यापार पर एकाधिकार का मतलब है कि वस्तुओं के आयात और निर्यात से सम्बंधित सारे व्यापारिक काम राज्य सम्पादित करे।

विदेश व्यापार पर एकाधिकार रहने से समाजवादी देश पूंजीवादी विश्व से आर्थिक तौर पर स्वतंत्र रहते हैं। उनका घरेलू बाजार विदेशी पूंजी से सुरक्षित रहता है। साथ ही विदेश व्यापार पर एकाधिकार समाजवादी देशों के बीच आर्थिक सहयोग बढ़ाता है।

विदेश व्यापार पूंजीवादी दुनिया के देशों के साथ आर्थिक सम्बंधों का एक महत्वपूर्ण रूप है। समाजवादी देश श्रम के अंतर्राष्ट्रीय विभाजन के आधार पर परस्पर व्यापार बढ़ाने के लिए यथाशक्ति प्रयास करते हैं किन्तु वे पूंजीवादी देशों के साथ भी व्यापार करते हैं। समाजवादी देशों का विदेश व्यापार राष्ट्रीय प्रभुसत्ता की प्रतिष्ठा व्यापार करने वाले देशों की पूर्ण पारस्परिक समानता और बिना राजनीतिक शर्तों और मजबूरी के पारस्परिक लाभ पर आधारित होता है।

सोवियत संघ और अन्य समाजवादी देशों की राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाओं के निरंतर विकास के फलस्वरूप विदेश व्यापार का आवर्त लगातार विस्तृत होता जा रहा है।

अध्याय १४

समाजवाद के अन्तर्गत कार्य के अनुसार वितरण और भुगतान के रूप

१ कार्य के अनुसार वितरण का आर्थिक नियम

हर उत्पादन व्यवस्था के अनुकूल उसकी वितरण व्यवस्था भी होती है। वितरण-सम्बंध उत्पादन-सम्बंधों के ही अनुकूल होते हैं।

पूंजीवाद के अन्तर्गत वितरण शोषक वर्गों के हित में होता है। वे मजदूरों के श्रम से उत्पन्न सामाजिक उत्पादन का एक बड़ा भाग अधिशेष मूल्य के रूप में हड़प जाते हैं। वितरण कार्य की मात्रा के अनुसार नहीं अपितु लगायी गयी पूंजी की मात्रा के अनुसार होता है।

समाजवाद के अन्तर्गत सामाजिक उत्पादन का वितरण किये गये कार्य के अनुसार होता है। वितरण का यह रूप एक वस्तुगत आवश्यकता है। उत्पादन एक तरफ उत्पादन के साधनों के समाजवादी स्वामित्व के आधार पर चलता है और दूसरी ओर समाजवादी दौर में उत्पादक शक्तियां इतनी विकसित नहीं रहती हैं कि भौतिक धन का वितरण जरूरतों के अनुसार हो सके। इसके अतिरिक्त श्रम जीवन की प्रधान आवश्यकता नहीं होता, बल्कि इस अवस्था में भी निर्वाह का साधन होता है। फलस्वरूप श्रम के लिए समुचित पुरस्कार देना जरूरी होता है। अन्त में, समाजवाद के अन्तर्गत मानसिक और शारीरिक कार्य तथा दक्ष और साधारण कार्य का अन्तर बना रहता है।

समाजवाद में कार्य ही समाज में व्यक्ति के स्थान और उसकी खुशहाली को निर्धारित करता है। इस तरह समाज के हर सदस्य द्वारा किये गये कार्य की मात्रा और किस्म ही उपभोक्ता वस्तुओं के वितरण का मापदण्ड हो सकती हैं।

काम के अनुसार वितरण समाजवादी समाज का एक आर्थिक नियम है।

काम के अनुसार वितरण पूंजीवाद की तुलना में समाजवाद की एक महत्वपूर्ण विशेषता है। काम के अनुसार भौतिक धन के वितरण में बिना कमायी हुई आय और परजीविता के लिए कोई स्थान नहीं है। परजीविता और बिना कमाया हुई आय उत्पादन और मेहनतकश जनता की जरूरतों की संतुष्टि के लिए विपुल साधनों का इस्तेमाल नहीं होने देती। यह सिद्धान्त उत्पादन के विकास को प्रोत्साहित करता है। यह मेहनतकश जनता को अपनी क्षमताओं के विकास के लिए असीमित अवसर प्रदान करता है। लेनिन ने बताया कि "जो काम नहीं करेगा वह खाना नहीं पायेगा।" इस सिद्धान्त में समाजवाद का आधार, उसकी शक्ति का अपराजेय स्रोत और उसकी अन्तिम विजय की निश्चित उम्मीद निहित हैं।"[1]

काम के अनुसार वितरण के नियम का मतलब है कि १) व्यक्तिगत उपभोग की वस्तुओं के भंडार का वितरण किये गये काम की मात्रा और किस्म के अनुसार होगा। इसके फलस्वरूप मेहनतकश जनता की अपने काम के घंटों के पूर्ण और अत्यन्त कुशल इस्तेमाल में दिलचस्पी होगी। २) दक्ष काम के लिए साधारण काम की अपेक्षा (समान श्रम काल के लिए) अधिक मजूरी मिलेगी। इस तरह मेहनतकश जनता को अपनी तकनीकी योग्यता बढ़ाने के लिए प्रोत्साहन मिलेगा। ३) सामान्य स्थितियों की अपेक्षा उत्पादन की कठिन शाखाओं (लौह और इस्पात उद्योग, कोयला खानों और अन्य उद्योगों) में श्रम करने वालों को अधिक भौतिक प्रोत्साहन मिलेगा। इस प्रकार अतिरिक्त काम के लिए भौतिक मुआवजा मिलेगा।

वितरण का यह आर्थिक नियम प्रत्येक व्यक्ति को उसके काम की मात्रा और किस्म के अनुसार प्रतिफल देता है। सभी नागरिकों को समान काम के लिए लिंग, उम्र, जाति या राष्ट्रीयता का बिना ख्याल किये समान पारिश्रमिक मिलता है।

वितरण का यह नियम कम्युनिस्ट निर्माण की सम्पूर्ण अवधि में काम करता है। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम में बताया गया है कि 'आने वाले बीस वर्षों में काम के अनुसार भुगतान का नियम मजदूरों की भौतिक और सांस्कृतिक आवश्यकताओं की संतुष्टि का प्रमुख स्थान रखेगा।'[2] भौतिक धन और सांस्कृतिक मूल्यों की विपुलता हो जाने और काम के जीवन की प्रमुख आवश्यकता बन जाने पर ही कम्युनिस्ट वितरण की ओर संक्रमण होगा।

समग्र सामाजिक उत्पादन के सिर्फ एक हिस्से का ही वितरण समाजवाद के अन्तर्गत काम के अनुसार होता है।

---

१ लेनिन, संकलित रचनाएं, खंड २, पृष्ठ ७ ७।

२ कम्युनिस्ट ... [illegible] पृष्ठ ३३=।

मार्क्स ने अपनी रचना गोथा कार्यक्रम की आलोचना में बताया कि समाजवादी समाज के काय करने और सामान्य रूप से विकसित होने के लिए आवश्यक है कि क) उत्पादन के साधनों के पुनर्स्थापन, ख) उत्पादन के विस्तार ग) आरक्षण या बीमा कोष घ) स्कूल अस्पताल आदि के प्रशासकीय व्यय और च) काम करने में अक्षम लोगों के निर्वाह के लिए कोष के वास्ते कुल सामाजिक उत्पादन से समुचित भाग अलग कर दिया जाय।

देश की प्रतिरक्षा के लिए आवश्यक भाग भी समग्र सामाजिक उत्पादन में अलग कर लेना चाहिए।

स्पष्ट है कि कुल सामाजिक उत्पादन का सिर्फ वही भाग जो व्यक्तिगत उपभोग कोष के लिए आवश्यक है काम के अनुसार वितरित होता है।

श्रम के उत्पादन का वह हिस्सा जो भौतिक उत्पादन में लगे श्रमिकों के व्यक्तिगत उपभोग के लिए उपयोग किया जाता है आवश्यक उत्पादन कहलाता है। इसे उत्पन्न करने के लिए लगाये गये श्रम को आवश्यक श्रम कहते हैं।

श्रम के उत्पादन का एक हिस्सा सार्वजनिक कोष (उत्पादन के साधनों को पुनर्स्थापित करने वाला भाग इसमें शामिल नहीं है) जैसे सार्वजनिक उपभोग संचय प्रतिरक्षा आदि के लिए उपयोग में लाया जाता है। इस हिस्से को अधिशेष उत्पादन और इसे उत्पन्न करने वाले श्रम को अधिशेष श्रम कहते हैं। सामाजिक उत्पादन का अधिकाधिक हिस्सा मेहनतकश जनता को सार्वजनिक कोष द्वारा प्राप्त होता है। सार्वजनिक कोष हर साल निरपेक्ष और सापेक्ष दोनों दृष्टियों से बढ़ता जा रहा है।

समाजवाद में अधिशेष उत्पादन का इस्तेमाल व्यक्तियों के हित में नहीं बल्कि सम्पूर्ण समाज और व्यक्तिगत तौर पर प्रत्येक मेहनतकश की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए किया जाता है। यह अधिशेष मूल्य नहीं है क्योंकि समाजवाद में न तो कोई शासक वर्ग होता है और न शोषण।

काम के अनुसार वितरण से उत्पादन के परिणामों में लोगों की भौतिक दृष्टि से दिलचस्पी हो जाती है। श्रम उत्पादकता की वृद्धि को प्रोत्साहन मिलता है मजदूरों की दक्षता बढ़ती है और उत्पादन के तकनीक उन्नत होते हैं। काम के अनुसार वितरण का एक शैक्षणिक पहलू भी है। इसके द्वारा लोग समाजवादी अनुशासन सीखते हैं। वह काम को व्यापक और अनिवार्य बनाता है।

समाजवाद में भौतिक प्रोत्साहन आवश्यक है क्योंकि काम समाज के सभी सदस्यों के लिए प्रमुख आवश्यकता नहीं है। समाजवाद के अन्तर्गत लोगों के दिमाग से पूंजीवाद के अवशेष सदा के लिए खत्म नहीं हो जाते। समाज के प्रति अपने कर्तव्य को निष्ठा से पूरा करने वाले बहुसंख्यक मजदूरों के साथ ऐसे लोग भी

रहते हैं जो अपने काम के प्रति निष्ठा नही रखते या श्रम अनुशासन को भग करते हैं।

भौतिक प्रोत्साहना के सिद्धान्त के कारण भौतिक धन के वितरण म समानता सम्भव नही है।

उत्पादन के समान वितरण का समाजवाद के साथ मेल नही है। काम के अनुसार वितरण का आर्थिक नियम मजूरी की समानता के विरुद्ध सघर्ष आवश्यक बना देता है। निम्न पूजीवादी सिद्धान्तकार" मार्क्सवाद-लेनिनवाद पर "निरपेक्ष' समानता का विचार थोपकर उसे तोडने मरोडने की जानबूझ कर कोशिशें करते हैं।

मार्क्सवादी-लेनिनवादी दृष्टिकोण से समाजवाद के अतगत समानता का मतलब व्यक्तिगत जरूरतो और दैनिक जीवन (उपभोग की समानता) की समानता नही, बल्कि सामाजिक समानता (यानी उत्पादन के साधनो की दृष्टि से समानता) शोषण से सम्पूर्ण मजदूर वग की समान रूप से मुक्ति, उत्पादन के साधनो पर से सब लोगो के निजी स्वामित्व की समाप्ति सब लोगो को काम करने और भौतिक धन म लगाये गये श्रम के अनुसार हिस्सा पाने का समान अधिकार है।

इस तरह समाजवाद का मतलब समानता नही बल्कि काम के अनुसार वितरण है। यह वितरण दो प्रकार से होता है औद्योगिक दफ्तर के और अन्य मेहनतकशो की मजूरी के रूप म और सहकारी तथा सामूहिक फाम उद्यमो के कार्यों के भुगतान के रूप मे। काम के अनुसार वितरण के इन दो रूपो म भिन्नता का कारण उत्पादन के साधनो के स्वामित्व के रूपो—राजकीय स्वामित्व और सहकारी एव सामूहिक फाम स्वामित्व—की भिन्नता है।

२ समाजवाद के अतगत मजूरी

समाजवाद के अतगत वस्तु-उत्पादन और मूल्य के नियम के अस्तित्व के कारण मजूरी का मौद्रिक रूप आवश्यक हो जाता है। काम की मात्रा और किस्म के अनुसार सामाजिक उत्पादन म प्रत्येक मजदूर का हिस्सा निर्धारित करने के तरीके को मजूरी का मौद्रिक रूप लोचपूर्ण बनाता है। इसके द्वारा हम मेहनतकशो के हिस्सा म आसानी से भिन्नता भी कर सकते हैं।

मजूरी का स्वरूप और सगठन

समाजवाद मे श्रम शक्ति वस्तु नही होती। इसका क्रय विक्रय नहीं होता। इसलिए इसका न कोई मूल्य होता है और न कोई कीमत। इस कारण

मजूरी श्रम शक्ति के मूल्य या कीमत का रूप नहीं होती, बल्कि काम के अनुसार भौतिक धन के वितरण का एक तरीका होती है।

समाजवाद के अन्तर्गत मजूरी सामाजिक उत्पादन का एक हिस्सा होती है। वह मौद्रिक रूप में होती है। यह हिस्सा आवश्यक श्रम के व्यय को पूरा करता है। राजकीय समाजवादी उद्यमों के हर मेहनतकश को उसके द्वारा किये गये काम की मात्रा और किस्म के अनुसार राज्य द्वारा मजूरी मिलती है।

समाजवाद के अंतर्गत मजूरी का स्तर समाज द्वारा उत्पादन की तत्कालीन स्थिति के आधार पर नियोजित होता है। काम के अनुसार वितरण के कोष का आकार राज्य निर्धारित करता है। यह कोष लोगों को अपने व्यक्तिगत इस्तेमाल के लिए मजूरी के रूप में मिलता है। राज्य कोष की वृद्धि की दर भी निर्धारित करता है। ऐसा करते समय वह व्यक्तिगत और सार्वजनिक दोनों हितों पर ध्यान देता है।

समाजवादी राज्य श्रम उत्पादकता बढ़ाने, मजदूरों की तकनीकी योग्यताओं में वृद्धि करने और राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था की महत्वपूर्ण शाखाओं को श्रम शक्ति की पूर्ति में प्राथमिकता देने के लिए मजूरी का इस्तेमाल एक महत्वपूर्ण विधि के रूप में करता है। मजूरी के द्वारा मजदूर वर्ग के व्यक्तिगत भौतिक हितों और राज्य (सम्पूर्ण जनता) के हितों में समुचित सामंजस्य की स्थापना सम्भव है।

मजूरी मजदूर की योग्यताओं तथा काम के स्वरूप और उसकी जटिलता के अनुसार होती है।

समाजवाद के अंतर्गत मजूरी का हिसाब लगाने की व्यवस्था सरल और स्पष्ट होनी चाहिए जिससे वह हर मजदूर की समझ में आ सके।

समाजवाद के अंतर्गत मजूरी की व्यवस्था में काम का मूल्यांकन और क्रम निर्धारण व्यवस्था मुख्य तत्व है।

काम के मूल्यांकन का मतलब किसी निश्चित काम को पूरा करने के लिए मानव श्रम की मात्रा को निश्चित करना है। दूसरे शब्दों में काम के मूल्यांकन का तात्पर्य समय की प्रति इकाई में उत्पन्न वस्तुओं की मात्रा निर्धारित करने से है।

समाजवादी उद्यमों में काम का मूल्यांकन पूंजीवादी व्यवस्था में होने वाले मूल्यांकन से सिद्धान्ततः भिन्न होता है। पूंजीवाद के अंतर्गत काम का मूल्यांकन मजदूरों का शोषण तेज कर मुनाफा बढ़ाने का एक तरीका है।

समाजवादी समाज में काम के मूल्यांकन द्वारा आधुनिकतम वैज्ञानिक और तकनीकी उपलब्धियों के आधार पर लोग श्रम और उत्पादन की अच्छी तरह व्यवस्था कर सकते हैं।

श्रम का सही मूल्यांकन टेक्नालाजी और अग्रणी मजदूरों एवं नवीन क्रिया व शोधकों की उपलब्धियों के पूर्णतम उपयोग पर आधारित तकनीकी दृष्टि से उचित उत्पादन मानकों पर निर्भर होता है। तकनीकी दृष्टि से उचित उत्पादन मानक प्रगतिशील मानक होते हैं। वे अग्रणी मजदूरों की उपलब्धियों पर आधारित होते हैं, किन्तु इन उपलब्धियों का महत्व महान व्यक्तिगत कार्यों से नहीं है।

प्रगतिशील तकनीकी दृष्टि से उचित मानक औसत से अधिक श्रम उत्पादकता वाले मजदूरों द्वारा स्थापित प्रवृत्तियों के सूचक हैं। ये मानक सभी मजदूरों द्वारा प्राप्त किये जा सकते हैं इसलिए ये वास्तविक मानक हैं।

उत्पादन में सुधार होने के फलस्वरूप पुरानी प्रगतिशील तकनीक से सम्बद्ध मानक पुराने पड़ जाते हैं। इसलिए मानकों में परिवर्तन करने की आवश्यकता आ जाती है। इस परिवर्तन का उद्देश्य मजूरी की वृद्धि की तुलना में श्रम उत्पादकता में अधिक तेजी से वृद्धि करना और श्रम के भुगतान में सही अनुपात स्थापित करना है।

मानकों में परिवर्तन के फलस्वरूप सार्वजनिक हित और हर कर्मचारी के व्यक्तिगत हित में सामंजस्य स्थापित होता है। समाजवाद में ही यह हो सकता है।

मजूरी की सही व्यवस्था में श्रम निर्धारण व्यवस्था की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। श्रम निर्धारण व्यवस्था के द्वारा समाजवादी राज्य श्रम के स्वरूप विषम और दशाओं के आधार पर विभिन्न प्रकार के कार्यों के लिए होने वाले भुगतान में अन्तर करता है। इसी प्रकार उत्पादन की विभिन्न शाखाओं देश के विभिन्न भागों इत्यादि में मजूरी की दरों में भिन्नता की जाती है। औद्योगिक दफ्तर व और पेशेवर मेहनतकशों की मजूरी का केन्द्रित नियमन भी श्रम निर्धारण व्यवस्था द्वारा किया जाता है।

श्रम निर्धारण व्यवस्था में तीन तत्व होते हैं १) दक्षता श्रम निर्धारण की पुस्तिका। इसके द्वारा काम के श्रम (कौन काम कितना जटिल है) और मजदूरों की योग्यताएं निर्धारित की जाती हैं। पुस्तिका कार्यों को श्रम में बांट कर मजदूर को श्रमों की अनुसूची में उचित स्थान पर रखती है। २) श्रमों की अनुसूची। इसके द्वारा विभिन्न दक्षताओं के लिए भुगतान की मात्रा निर्धारित की जाती है। श्रमों की संख्या और श्रमों के बीच मजूरी के अनुपात उद्योग की शाखा विशेष की खास विशेषताओं पर निर्भर होते हैं। ३) बुनियादी दर। श्रम १ के काम की मजूरी ही बुनियादी दर होती है।

श्रम उत्पादकता बढ़ाने और समाजवादी उद्यमों के मजदूरों की तकनीकी योग्यताओं का स्तर उन्नत करने के लिए कार्यों का सही श्रमिक विभाजन और

उनके लिए भिन्न भुगतान जरूरी है। इसलिए श्रम निर्धारण व्यवस्था में बराबर सुधार किये जा रहे हैं।

मजूरी की व्यवस्था में मजूरी कोष का निर्माण बड़ा महत्व रखता है। मजूरी कोष औद्योगिक, दफ्तर के और पेशेवर मजदूरों की मजूरी का योग होता है। उपयुक्त मजदूरों की मजूरी निश्चित अवधि (एक वर्ष, महीना आदि) के लिए श्रम के अनुसार वितरण की योजना के आधार पर राज्य द्वारा निर्धारित होती है। यह कोष सम्पूर्ण राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था, प्रत्येक संघ जनतंत्र उद्योग की प्रत्येक शाखा और प्रत्येक उद्यम के लिए निर्धारित होता है।

समाजवादी समाज के विकास के साथ मजूरी की व्यवस्था के रूप परिवर्तित और विकसित होते हैं।

आवश्यक है कि सम्पूर्ण मजूरी व्यवस्था में निरंतर सुधार और दोषों का निराकरण हो।

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की बीसवीं कांग्रेस ने वहां की मजूरी व्यवस्था में कतिपय भयंकर दोष दिखलाये। बीसवीं कांग्रेस के बाद मजूरी व्यवस्था में सुधार की दिशा में काफी काम हुए हैं। पार्टी की केन्द्रीय समिति द्वारा काम के लिए भुगतान की व्यवस्था को ठीक करने के तरीके बताये गये थे। कांग्रेस ने उन तरीकों को अपनी स्वीकृति दी। उत्पादन के क्षेत्र में आधुनिक स्तर की टेक्नालाजी और उत्पादन संगठन के अनुकूल तकनीकी दृष्टि से उचित उत्पादन मानकों को प्रयुक्त करने की आवश्यकता को कांग्रेस ने स्वीकृति प्रदान की। इसके अतिरिक्त कांग्रेस ने मजदूरों की कमाई की बुनियादी दर बढ़ाने और मजदूरों की योग्यता तथा गर्म खातों में मुश्किल काम करने वाले मजदूरों के लिए अधिक मजूरी देने की आवश्यकता को ध्यान में रखकर उद्योग के शाखा विशेषों और उद्योग विशेषों की बुनियादी दरों के बीच सही अनुपात स्थापित करने की बात मान ली। कांग्रेस ने इंजीनियरों तकनीकी विशेषज्ञों और अन्य कर्मचारियों की कतिपय श्रेणियों की मजूरी व्यवस्था को नियमित करने तथा भुगतान की बहुविध व्यवस्था और उनमें एकरूपता के अभाव को खत्म करने की भी बात की। बोनस व्यवस्था को अधिक महत्व देने की बात भी मान ली गयी। इससे नयी टेक्नालाजी और उच्च श्रम उत्पादकता प्राप्त हो सकेगी तथा उत्पादन लागत में कमी हो सकेगी।

पिछले पांच वर्षों में कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत सरकार ने जो कदम उठाये हैं उनके फलस्वरूप उद्योग, निर्माण परिवहन और राज्य संचालित कृषि उद्यमों में औसत मजूरी १३ से लेकर २८ प्रतिशत तक बढ़ी है। १९६४ और १९६५ में शिक्षा सार्वजनिक स्वास्थ्य आवास मुद्रा व्यापार सार्वजनिक भोजनालय और अन्य सेवाओं के क्षेत्र में मजूरी में २१ प्रतिशत वृद्धि हुई है। इस तरह

शाखाओं के क्षेत्र में और भौतिक उत्पादन के क्षेत्र में मजूरी एक सी हो गयी है। १ जनवरी १९६८ से सारे देश में मजदूरों एवं अन्य कर्मचारियों की न्यूनतम मजूरी बढ़ाकर ६० ४५ रूबल प्रति माह कर दी गयी है।

मजूरी व्यवस्था में सुधार होने के कारण श्रम के अनुसार वितरण के नियम का पूरा इस्तेमाल सम्भव हो गया है और फलस्वरूप मजदूरों एवं अन्य कर्मचारियों की रचनात्मक पहल एवं उत्साह में वृद्धि हुई है।

मजूरी के रूप और व्यवस्थाएं

मजूरी के दो बुनियादी रूप हैं कार्य-दर और काल-दर। कार्य-दर में मजदूर की कमाई उत्पादन की मात्रा के द्वारा निश्चित होती है। कार्य दर के द्वारा समाज के हितों (उच्च श्रम उत्पादकता) और प्रत्येक मजदूर के निजी हितों (उच्च व्यक्तिगत कमाई) का समन्वय होता है।

समाजवादी उद्यम में कार्य दर की कई व्यवस्थाएं हैं

क) *प्रत्यक्ष कार्य दर व्यवस्था।* इसके अन्तर्गत उत्पादन की प्रत्येक इकाई के लिए समान काम करने वालों को एक दर से मजूरी मिलती है।

ख) प्रगतिशील कार्य दर व्यवस्था। इस व्यवस्था में अन्तर्गत प्रारम्भिक कोटे के अतिरिक्त उत्पादन की प्रत्येक इकाई के लिए ऊंची दर पर मजूरी दी जाती है। इस तरह दर ऊंची होती जाती है।

ग) बोनस की कार्य दर व्यवस्था। इसके अन्तर्गत उत्पादन की कुल इकाइयों के लिए सामान्य कार्य-दर के आधार पर मजूरी दी जाती है किन्तु कतिपय सूचकांकों (कच्चे माल और ईंधन की मितव्ययिता उच्च कोटि के उत्पादन आदि) के आधार पर बोनस दिया जाता है।

कार्य दर व्यक्तिगत या सामूहिक हो सकती है। व्यक्तिगत कार्य-दर लागू होने पर कमाई की मात्रा व्यक्तिगत मजदूर के उत्पादन पर प्रत्यक्ष रूप से निर्भर होती है। सामूहिक कार्य दर व्यवस्था (इस व्यवस्था को तब लागू किया जाता है जब कार्य की दशाएं प्रत्येक व्यक्ति द्वारा किये गये काम की मात्रा की गणना कठिन बना देती हैं) में मजदूर की कमाई सिर्फ उसके उत्पादन पर निर्भर नहीं होती बल्कि सामूहिक उत्पादन पर निर्भर होती है। अपने श्रम के उत्पादन में मजदूर की भौतिक दिलचस्पी बढ़ाने के लिए सामूहिक कार्य को व्यक्तिगत कार्य-दर भुगतान से जोड़ दिया जाता है। इसलिए समूह के प्रत्येक सदस्य की कमाई का हिसाब लगाते समय मजदूर की दक्षता (अनुसूची में उसके दर्जे) और काम के घंटों पर ध्यान दिया जाता है।

श्रम के लिए काल दर के आधार पर भुगतान की राशि काम के घंटों के अनुसार होती है। मजदूर की दक्षता पर भी ध्यान दिया जाता है।

इस व्यवस्था के अन्तर्गत मजदूर के उत्पादन और उसकी मजूरी में कोई सीधा सम्बन्ध नहीं होता। जहां मूल्यांकन करना और हिसाब लगाना सम्भव नहीं होता, वहीं काल-दर व्यवहार में लायी जाती है। काल-दर भुगतान व्यवस्था में काल बोनस व्यवस्था का प्रयोग सोवियत संघ में मजदूरों को प्रोत्साहन देने के लिए बड़े पैमाने पर किया जाता है। कमाई काम की मात्रा और किस्म के साथ ही लगाये गये समय और मजदूर की योग्यताओं पर भी निर्भर होती है। उदाहरण के लिए उत्पादन के अत्यंत यंत्रीकृत एवं स्वयंचालित क्षेत्रों में साज-सामान के पर्यवेक्षक के रूप में काम करने वाले प्रशिक्षित मजदूरों को काल-लाभांश देने की व्यवस्था है। व्यापक यंत्रीकरण एवं स्वयंचालन की प्रगति के साथ काल लाभांश देने की व्यवस्था का भी विस्तार होता है।

काल-दर के अनुसार उद्यमों के मैनेजर, इंजीनियर, तकनीकी लोग और दफ्तर के कर्मचारी मजूरी पाते हैं। इन सब लोगों को निश्चित वेतन प्राप्त होते हैं। काम के अनुसार वितरण के आर्थिक नियम के आधार पर ही वेतन निश्चित किये जाते हैं।

इन वेतन पाने वाले मजदूरों को पुरस्कार व्यवस्था द्वारा प्रोत्साहित किया जाता है। ये पुरस्कार उत्पादन कार्यक्रमों की पूर्ति या लक्ष्य से भी अधिक उत्पादन के लिए दिये जाते हैं। हां, इस बात पर ध्यान दिया जाता है कि वस्तुएं गुणात्मक रूप से निर्धारित स्तर की हों और उत्पादन लागत कम हो।

वर्तमान वास्तविक मजूरी और आय

समाज के सभी सदस्यों की निरंतर बढ़ती हुई भौतिक और सांस्कृतिक आवश्यकताओं की संतुष्टि वास्तविक मजूरी की वृद्धि से स्पष्ट है।

वास्तविक मजूरी उपभोक्ता वस्तुओं और सेवाओं की वह मात्रा है जो मजदूर और उसका परिवार अपनी मजूरी द्वारा खरीद सकता है।

समाजवादी उत्पादन के विकास के साथ वास्तविक मजूरी भी निरंतर बढ़ती है। जनता की क्रय शक्ति की वृद्धि से यह स्पष्ट है।

वास्तविक मजूरी में निरंतर वृद्धि समाजवादी राज्य की नीति का परिणाम है। इस नीति के अन्तर्गत राजकीय कर्ज में धन देने की नीति की समाप्ति घटा हुआ कृषि कर और अन्य कदम शामिल हैं।

समाजवादी समाज में मेहनतकश जनता के जीवन-यापन का स्तर सिर्फ उसकी मजूरी की राशि पर ही निर्भर नहीं होता। समाजवाद के अन्तर्गत लोगों की बहुत-सी आवश्यकताएं सार्वजनिक उपभोग कोषों द्वारा पूरी की जाती हैं। इन कोषों द्वारा बेहतर आवास, सामुदायिक सेवाएं, बच्चों के लिए पर्याप्त संख्या में

शैक्षणिक संस्थाएं, निःशुल्क शिक्षा, शिशुगृहों और मेडिकल सेवाओं की व्यवस्था, सांस्कृतिक कार्यों के लिए इमारतें, पेंशन आदि की व्यवस्था जाती है।

सोवियत संघ में सार्वजनिक उपभोग कोष निरंतर बढ़ते जा रहे हैं। उनकी मात्रा १९५३ में १,४८० करोड़ रूबल थी जो १९६४ में बढ़कर २,६६० करोड़ रूबल हो गयी। १९६३ में सार्वजनिक कोषों से राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में लगे हर व्यक्ति को अनुदान और लाभ के रूप में औसतन ३८७ रूबल मिले।

काम की मात्रा और किस्म के अनुसार भुगतान और सार्वजनिक उपभोग कोषों से प्राप्त सुविधाओं से मेहनतकश जनता को प्राप्त जीवन की मुफ्त सुविधाओं का कुल योग ही जनता की वास्तविक आय के स्तर को सूचित करता है। सोवियत संघ में मजदूरों एवं अन्य कर्मचारियों की वास्तविक आय निरंतर बढ़ रही है। १९५४-६३ के दौरान (कामकाजी धंधे में लगे प्रत्येक व्यक्ति की) वास्तविक आय में ६१ प्रतिशत की वृद्धि हुई।

३ सामूहिक फार्मों पर काम के लिए भुगतान

सामूहिक फार्म की अर्थव्यवस्था उसके सदस्यों के सामूहिक काम के आधार पर चलती है। सामूहिक फार्म की अर्थव्यवस्था नियोजित होती है और सम्पूर्ण समाजवादी समाज के संयुक्त श्रम का एक हिस्सा होती है।

सामूहिक फार्म का उत्पादन आय और उसके सदस्यों की खुशहाली सामूहिक फार्म के किसानों के काम की मात्रा और कार्य-कुशलता पर निर्भर है।

सामूहिक फार्म की आय उत्पादन और मुद्रा के रूप में होती है। उसका वितरण निम्नलिखित रूप से होता है।

वस्तु के रूप में आय के अंतर्गत फसलों की पैदावार और माल मवेशी से प्राप्त वस्तुएं आती हैं। फसलों की पैदावार और माल मवेशी से प्राप्त वस्तुओं को सामूहिक फार्म राज्य को बुनियादी कीमतों पर बेचते हैं और बाद में कई मुख्य वस्तुओं की अतिरिक्त मात्रा को स्वेच्छा से विशेष ऊंची कीमतों पर बेचते हैं। सामूहिक फार्मों द्वारा समय पर कोटे की पूर्ति के फलस्वरूप फार्मों और सम्पूर्ण सोवियत समाज के हितों के बीच सही समन्वय स्थापित हो जाता है।

राज्य के प्रति उत्तरदायित्व को पूरा करने के बाद सामूहिक फार्म अपने कोषों का निर्माण करते हैं। इन कोषों में १) बीज २) चारा ३) भविष्य के लिए साधन (फसल मारी जाने या चारे का अभाव होने पर इस्तेमाल के लिए बीज और चारे का भंडार), ४) फसल मारी जाने पर इस्तेमाल के लिए खाद्यान्नों का भंडार, ५) अपंग व्यक्तियों या मोर्चे पर लगे लोगों के परिवारों के लिए सहायता कोष और नर्सरी बाल विहार तथा स्कूल भोजनालयों के लिए भंडार आते हैं।

सरकार के प्रति अपने उत्तरदायित्व को पूरा करने और अपना कोष बनाने के बाद सामूहिक फाम अपनी आय का शेष भाग अपने सदस्यों के बीच उनके काय (काम के दिनों के रूप मे) के अनुसार बाट देते हैं।

सामूहिक फाम अपनी नकद आय का अधिकांश राज्य सहकारी सगठनों तथा जनता को सामूहिक फाम के बाजार म फसल बेचकर प्राप्त करते हैं। इस आय से सबसे पहले आय कर बीमा भुगतान और बैंक ऋण अदा किये जाते हैं।

राज्य को य भुगतान अदा करने के बाद सामूहिक फाम अपनी नकद आय का एक हिस्सा अपनी आम जरूरतों के लिए रखते हैं। इन जरूरतो मे १) फाम की विनिरित न होने वाली परिसम्पत्ति के लिए व्यवस्था, २) उत्पादन की तात्कालिक जरूरतो—खनिज खाद अतिरिक्त पुर्जो मशीनों के लिए इधन कीटाणुओ और पौधो के रोगो से बचाव की व्यवस्था, आदि ३) प्रशासकीय व्यय की पूर्ति, ४) सास्कृतिक जरूरतो—बच्चो के लिए इमारतें और साधन, पुस्तकालय वाचनालय सिनेमा रेडियो आदि हैं। इन जरूरतो के लिए वित्तीय साधनो का वितरण करते समय सामूहिक फाम की अथव्यवस्था और उपभोग एव सचय के उचित सम्बध पर ध्यान दिया जाता है। सामूहिक फाम के वित्तीय साधनो के शेषाश को उसके सदस्यो के बीच बाट दिया जाता है।

राज्य को फाम उत्पादन बेचने के निश्चित लक्ष्य से राज्य एव सामूहिक फाम के हितो म सामजस्य स्थापित होता है और सामूहिक फार्मों की आय बढती है। आगामी वर्षों के लिए बिक्री के निश्चित लक्ष्य से सामूहिक फाम के किसानो म भविष्य के सम्बध म निश्चितता आती है। फसल और मवेशी पालन के कार्यों म वे निश्चित होकर कदम उठाते हैं।

राजकीय उद्यमो की तरह सामूहिक फार्मों म भी प्रत्येक किसान को उसके श्रम की मात्रा और किस्म के अनुसार मजूरी मिलती है। श्रम के अनुसार वितरण का आर्थिक नियम सामूहिक फार्मों म काय दिवस की इकाई और नकद भुगतान की व्यवस्था के द्वारा लागू किया जाता है। काय दिवस इकाई फाम की सामूहिक अथव्यवस्था म किसान के योगदान का मापदण्ड है। फाम की आय म प्रत्येक सदस्य के हिस्से का निर्धारण भी इसी के द्वारा होता है।

सामूहिक फाम म किये जाने वाले प्रत्येक प्रकार के काय के लिए उत्पादन का कोटा निश्चित कर दिया जाता है। हर प्रकार के काय का मूल्याकन काय दिवस इकाइयो या नकदी के रूप म (इस बात का ख्याल रखते हुए कि काय किस हद तक जटिल और कठिन तथा सामूहिक फाम के लिए महत्वपूर्ण है) किया जाता है।

चूकि सामूहिक फाम सहकारी उद्यम होते हैं इसलिए काय दिवस की इकाइयो के अनुसार उत्पादन और मुद्रा के लिए किये जाने वाले सारे भुगतान को

राशि माल के अंत में मालूम होती है। यह राशि सभी सामूहिक फार्मों के लिए एक नहीं होती। इसलिए सामूहिक फार्म के किसानों की आय न सिर्फ उनके द्वारा लगाये जाने वाले काम की इकाइयों पर निर्भर होती है, बल्कि किसी फार्म विशेष की उपलब्ध प्रति इकाई उत्पादन और नकद राशि पर भी निर्भर होती है।

सदस्यों को हर महीने दी जाने वाली अग्रिम राशि का भी बड़ा महत्व है। इसका मतलब है कि सामूहिक फार्म के सदस्य अपने हिस्से के उत्पादन और मुद्रा राशि का एक भाग अंतिम वितरण से पूर्व भी प्राप्त कर सकते हैं। भुगतान के इस बुनियादी तरीके के अतिरिक्त अच्छी तरह किये गये काम के लिए प्रोत्साहनस्वरूप (वस्तु और नकदी दोनों रूपों में) भुगतान किया जाता है।

सामूहिक फार्मों की बढ़ती हुई लाभप्रदता इस प्रकार की आर्थिक स्थिति उत्पन्न कर देती है, जहां मासिक भुगतान सम्भव हो जाता है। नकद भुगतान एक प्रगतिशील चीज है। इसके कारण सामूहिक फार्म के किसानों के बीच उच्च श्रम उत्पादकता को प्रोत्साहन मिलता है। आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होने के साथ ही हर सामूहिक फार्म में नकद भुगतान होने लगेगा।

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम में कहा गया है कि कोल्खोज के आर्थिक विकास के फलस्वरूप पूर्ण कोलखोज आन्तरिक सम्बन्ध का स्थापित होना सम्भव हो जायगा। उत्पादन में समाजीकरण की मात्रा बढ़ेगी। श्रम का मूल्यांकन, संगठन और भुगतान राजकीय उद्यमों में लागू स्तर और भुगतान के नजदीक होंगे। काम के लिए निश्चित मासिक भुगतान किया जायेगा। सामुदायिक सेवाएं (सार्वजनिक भोजन व्यवस्था, बाल विहार और नर्सरी तथा अन्य सेवाएं) अधिक व्यापक रूप से विकसित होंगी।[1]

देश के पैमाने पर सामूहिक फार्म के किसानों के लिए पेंशन की व्यवस्था हो जाने से उनके जीवन-यापन के स्तर में सुधार हुआ है।

समग्र कृषि उत्पादन में वृद्धि और उच्च श्रम उत्पादकता के फलस्वरूप सामूहिक फार्म के किसानों की वास्तविक आय बढ़ रही है। १९१३ और १९६२ के दौरान मेहनतकश किसानों की सामूहिक कृषि और निजी खेती से वस्तु के रूप में आमदनी और नकद आय, सभी प्रकार के करों और लेवी को छोड़ कर तुलनात्मक कीमतों के आधार पर सामूहिक फार्म के हर सदस्य के लिए हिसाब लगाने पर ४.६ गुनी से अधिक बढ़ी। अगर सोवियत सरकार से प्राप्त भुगतानों और अनुदानों को भी जोड़ दें तो आय की वृद्धि करीब ६.५ गुनी से अधिक होगी।

---

१ 'कम्युनिज्म का मार्ग', पृष्ठ ८३०।

अध्याय १५

लागत-लेखा और लाभदायकता। उत्पादन लागत और कीमत

१ लागत-लेखा और लाभदायकता

समाजवादी अर्थव्यवस्था का नियोजित मार्गदर्शन सम्पूर्ण समाज के पैमाने पर भौतिक और मानव शक्ति साधनों के कुशल इस्तेमाल के लिए हर अवसर प्रदान करता है। प्रत्येक व्यक्ति पूंजीपतियों और भूस्वामियों के लिए नहीं बल्कि अपने और अपने समाज के लिए काम करता है। इसलिए वह समाज की सम्पत्ति के विवेकपूर्ण और मितव्ययितापूर्ण इस्तेमाल के लिए चिन्तित रहता है। वह अर्थव्यवस्था का संचालन कुशलतापूर्वक करता है।

कड़ी मितव्ययिता की नीति और उसका महत्व

कठोर मितव्ययिता की नीति समाजवादी प्रबंध का आधार होती है। समाजवादी प्रबंध का उद्देश्य साधना एवं श्रम के न्यूनतम व्यय से अच्छे किस्म की अधिकाधिक वस्तुओं का उत्पादन है। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम में बताया गया है कि समाज के हित में कम से कम लागत पर उच्चतम परिणामों को प्राप्त करना आर्थिक विकास का एक अटल नियम है।[१]

समाजवादी अर्थव्यवस्था के विकास की तेज दर के लिए कठोर मितव्ययिता की नीति का अनुसरण आवश्यक है।

मानव शक्ति भौतिक और मौद्रिक साधना का मितव्ययितापूर्वक उपयोग समाजवादी अर्थव्यवस्था के लिए बड़ा महत्व रखता है।

१ कम्युनिज्म का मार्ग', पृष्ठ ९३२।

उत्पादन शक्तियों के विकास, आर्थिक विकास की तेज गति और तकनीकी प्रगति के आधार पर बड़े पैमाने के आर्थिक और सांस्कृतिक निर्माण के लिए सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की २२वीं कांग्रेस में स्वीकृत शानदार कार्यक्रम के कार्यान्वयन के लिए बहुत बड़ी मात्रा में मानव शक्ति, भौतिक और मौद्रिक साधनों की आवश्यकता है। पूरे पैमाने पर कम्युनिस्ट निर्माण के दौरान कठोर मितव्ययिता की नीति का बढ़ता हुआ महत्व स्पष्ट है।

इस नीति के कार्यान्वयन पर ही योजनाओं के लक्ष्यों की (और कई बार उनसे अधिक) सफलता निर्भर है। इस नीति के फलस्वरूप श्रम का व्यय घटता है और उत्पादन लागत में कमी होती है। ऐसा होने पर ही उपभोक्ता वस्तुओं की कीमतें कम होती हैं। वर्तमान उत्पादन क्षमताओं के ठीक इस्तेमाल और कच्चे और अन्य मालों, ईंधन, विद्युत शक्ति आदि के मितव्ययितापूर्वक प्रयोग के कारण, बिना अतिरिक्त साधन लगाये उत्पादन बढ़ जाता है। राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का संचालन जितनी ही कुशलतापूर्वक होगा मानव शक्ति, भौतिक और मौद्रिक साधनों का इस्तेमाल उतना ही मितव्ययितापूर्वक होगा। फलस्वरूप राष्ट्रीय सम्पत्ति और मेहनतकश जनता के भौतिक और सांस्कृतिक स्तर भी उतनी ही तेजी से ऊंचे उठेंगे।

सोवियत अर्थव्यवस्था विशाल है। थोड़ी थोड़ी बचत करने पर भी कुल मिलाकर बड़ी बचत हो सकती है। कहावत है कि बूंद बूंद जल भरहिं तलावा। उत्पादन के हर क्षेत्र, हर कारखाने और सामूहिक फार्म में थोड़ी थोड़ी बचत भी राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के पैमाने पर बहुत बड़ा रूप धारण कर सकती है। इसीलिए वर्तमान समय में कठोर मितव्ययिता की नीति का अनुसरण अत्यन्त आवश्यक है।

मितव्ययिता की ओर अग्रसर होने का मतलब है उत्पादन बढ़ाने और लागत घटाने की अधिकाधिक सम्भावनाओं को सामने लाना, कच्चे मालों और अन्य सामानों, ईंधन, विद्युत शक्ति का मितव्ययितापूर्वक और कुशल इस्तेमाल करना तथा सभी तरह की बर्बादी और अनुत्पादक व्यय रोकना।

पूर्ण मितव्ययिता लागू करने के लिए लागत लेखा एक महत्वपूर्ण साधन है। लागत लेखा का शाब्दिक अर्थ अर्थव्यवस्था का हिसाब लगाया जा सकता है।

लागत लेखा	पूंजीवादी तरीके से हिसाब लगाने का मतलब जनता के शोषण द्वारा पूंजीपतियों की व्यक्तिगत समृद्धि और निजी फायदे के लिए काम करना है।

समाजवाद के अन्तर्गत लागत लेखा पूंजीवादी लागत लेखा से बिल्कुल भिन्न होती है। समाजवाद के अन्तर्गत लोगों का व्यक्तिगत स्वार्थ निर्धारक तत्व के रूप में काम नहीं करता। वहां सारे समाज का हित देखा जाता है। समाजवाद

के अंतर्गत हर उद्यम में लागत-लेखा तैयार किया जाता है। यहां मुख्य उद्देश्य सम्पूर्ण समाजवादी अर्थव्यवस्था के प्रबंध के क्षेत्र में न्यूनतम व्यय के साथ उत्तम परिणाम प्राप्त करना है।

समाजवादी उद्यमों के नियोजित आर्थिक प्रबंध के लिए लागत-लेखा महत्वपूर्ण है। इसके अंतर्गत मौद्रिक रूप में उत्पादन व्यय और आर्थिक क्रियाओं के परिणामों की तुलना की जाती है। इसके द्वारा उद्यम अपनी आय से अपने व्यय को पूरा करते हैं और इस विधि से उत्पादन की लाभदायकता निश्चित हो जाती है। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम का लक्ष्य उद्यमों में लागत लेखा की व्यवस्था को प्रोत्साहन देना, पूर्ण मितव्ययिता और बचत करना, घाटे और लागत को कम करना तथा लाभदायकता को बढ़ाना है।[1]

उत्पादन को मापने वर्तमान और विगत श्रम का नियोजन और नियंत्रण उत्पादन लागतों का नियंत्रण तथा प्रत्येक उद्यम की कीमत और लाभप्रदता की माप मुद्रा के कारण सम्भव है। हम लागत-लेखा द्वारा उद्यमों की वित्तीय आर्थिक स्थिति का उनकी क्रियाओं के परिणामों के ऊपर अवलम्बन प्रत्यक्ष रूप से देख सकते हैं।

समाजवादी राज्य लागत लेखा को एक आर्थिक यंत्र के रूप में उद्यमों को प्रभावित करने, सब का ठीक हिसाब रखने, हर उद्यम के आर्थिक कार्यों के परिणामों को नियंत्रित करने और राजकीय योजना को पूरा करने के लिए इस्तेमाल करता है। लागत-लेखा में निहित मुनाफे की प्रवृत्ति को सुसंगत रूप से लागू करने और विकसित करने से कम्युनिस्ट निर्माण की कई महत्वपूर्ण तात्कालिक समस्याओं का हल करने में सहूलियत होती है।

लागत-लेखा का प्रयोग राजकीय और सामूहिक फार्म उद्यमों में समान रूप से होता है।

औद्योगिक उद्यमों में लागत-लेखा की व्यवस्था करने के लिए जरूरी है कि उत्पादन के अत्यन्त मितव्ययितापूर्ण प्रबंध के लिए आवश्यक परिस्थितियां जुटायी जायें। इसके अंतर्गत समाजवादी राज्य द्वारा किये जाने वाले नियोजित मार्गदर्शन और आर्थिक संचालन के मामले में हर उद्यम की स्वतंत्रता में उचित समन्वय किया जाय।

राज्य प्रत्येक राजकीय उद्यम और संगठन को योजना की पूर्ति के लिए आवश्यक भौतिक और वित्तीय साधन प्रदान करता है। ये राजकीय उद्यम और संगठन लागत-लेखा व्यवस्था के अनुसार काम करते हैं।

१ "कम्युनिज्म का मार्ग", पृष्ठ ५३८।

आपसी सम्बधो की दृष्टि से ये उद्यम स्वतत्र, न्यायिक और आर्थिक इकाइया है। उनको अपने कर्मचारियो के चुनाव, अपने श्रमिको को उच्च प्रशिक्षण देने और काम के लिए कोई भी भुगतान व्यवस्था लागू करने का अधिकार प्राप्त है।

लागत-लेखा व्यवस्था के आधार पर काम करने वाले उद्यम स्वतत्र पक्का चिट्ठा प्रकाशित करते है। इनसे उनकी आर्थिक कार्यवाहियो के बुनियादी सूचकाक प्राप्त होते हैं। स्टेट बैंक मे उद्यमो का चालू खाता होता है। वहा वे अपने पैसे जमा करते हैं और स्टेट बैंक के माध्यम से अन्य उद्यमो तथा सगठनो से लेन-देन करते हैं।

इन सबके फलस्वरूप राजकीय उद्यमो और आर्थिक सगठनो के व्यवस्थापक उत्पादन व्यवस्था के दौरान उठने वाले प्रश्नो पर शीघ्र निर्णय करने मे समर्थ होते है। वे अपने उत्पादन और वित्तीय साधनो के विषय मे आर्थिक पहल और लोच पूर्ण रुख अपनाते है। न्यूनतम (सम्भव) व्यय से वे योजना को पूरा कर लेते हैं।

राजकीय योजना द्वारा निर्धारित लक्ष्यो के चौखट के भीतर राजकीय उद्यम अपनी आर्थिक कार्यवाहियो के लिए स्वतत्र होते हैं। इन उद्यमो को राज्य आर्थिक कार्यवाही की स्वतत्रता प्रदान कर उन्हें अपने साधनो की सुरक्षा और सही एव अत्यन्त कुशल व्यवहार के लिए वास्तविक रूप मे जिम्मेदार बना देता है। ये उद्यम योजना की पूर्ति और राजकीय बजट पूर्तिकर्ताओ और ग्राहको के प्रति जिम्मेदारी के निर्वाह के लिए उत्तरदायी होते है।

उच्चतर एजेंसियो द्वारा योजना मे निर्धारित मुख्य लक्ष्यो को पूरा करना प्रत्येक उद्यम के लिए अत्यन्त आवश्यक है। उद्यमो के व्यवस्थापक अपने उद्यमो के सारे आर्थिक कार्यों के लिए जिम्मेदार होते हैं।

उद्यमो मे आपसी आर्थिक सम्बन्धो का नियमन आर्थिक करार द्वारा होता है। आर्थिक करार लागत लेखा व्यवस्था की एक विशेषता है। इस व्यवस्था के अनुसार काम करने वाले उद्यम अपनी जरूरत के अनुसार उत्पादन के साधन खरीदते हैं और उत्पादन को उन ग्राहको के हाथो बेचते हैं जिनके साथ उनका करार रहता है।

उनके करार पूर्ति की शर्तों उत्पादन की मात्रा, वर्गीकरण और सप्लाई की तारीख, कीमत, भुगतान की तारीख और शर्त और करार की शर्तों के उल्लंघन पर दण्ड आदि की व्यवस्था निश्चित करते हैं।

करार का कड़ाई के साथ पालन लागत-लेखा का एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है।

लागत-लेखा का मतलब है कि उद्यमों के आर्थिक कार्यों पर निरंतर
वित्तीय नियंत्रण हो। किसी भी उद्यम का प्राप्त होने वाले वित्तीय साधन प्रत्यक्ष
रूप से उसके काम के परिणाम पर निर्भर होते हैं। उत्पादन और संचय की योजना
लक्ष्यों के पूरा न होने या योजना द्वारा निर्दिष्ट व्यय से अधिक खर्च होने पर
उद्यम के लिए पूर्तिकर्ताओं के साथ हिसाब किताब या वित्तीय और साख संस्थाओं
की राशि को अदा करने में कठिनाइयां होती हैं। फलस्वरूप आर्थिक अनुशासन
का भी प्रश्न उठ खड़ा होता है। वित्तीय नियंत्रण का कार्यान्वयन वित्तीय और
साख संस्थाओं द्वारा होता है। उद्यम विशेष की मुद्रा राशि और साख प्रदान करते
समय और दी गयी वस्तुओं के भुगतान के समय वे इस नियंत्रण को मूर्त रूप प्रदान
करते हैं।

वित्तीय नियंत्रण के कारण उद्यम कठोर मितव्ययिता की नीति के अनुसरण
से कड़ाई से काम लेते हैं और अपने साधनों के आवर्त्त को तेज करते हैं।

लागत-लेखा यह मानकर चलता है कि उद्यम और व्यवस्थापकीय कर्म-
चारियों समेत सारे मजदूर योजना के लक्ष्यों की पूर्ति और उद्यमों के मितव्ययिता
पूर्वक कुशल संचालन में वास्तविक दिलचस्पी रखते हैं।

मजदूरों की वास्तविक दिलचस्पी का कारण श्रम के अनुसार वितरण के
आर्थिक नियम के आधार पर मजूरी और बोनस की व्यवस्था है। उद्यम के कार्यों
में मजदूरों की सामूहिक और व्यक्तिगत दिलचस्पी विशेष कोषों की स्थापना से
और भी बढ़ जाती है।

मुनाफे की राशि में एक भाग लेकर समाजवादी उद्यमों में तीन प्रकार के
कोषों का निर्माण किया जाता है

१ विकास कोष का निर्माण मुनाफे की राशि का एक भाग लेने के अति-
रिक्त घिसावट की राशि में एक हिस्सा लेकर किया जाता है। उद्यम तकनीकी सुधार
और अपनी स्थिर परिसम्पत्ति के पूर्ण नवीकरण के लिए अपनी इच्छानुसार विकास
कोष का इस्तेमाल करते हैं।

२ प्रोत्साहन कोष की राशि से व्यक्तिगत सफलताओं और उत्तम
उत्पादन परिणामों के लिए मजदूरों को लाभांश दिया जाता है। इस कोष से कार-
खाने एवं दफ्तरों के कर्मचारियों को हर साल उत्पादन के लक्ष्य प्राप्त करने के लिए
बोनस दिया जाता है। उद्यमों में काम की निरन्तर अवधि को देखते हुए विशेष
पुरस्कार दिया जाता है।

३ सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आवास कोष की राशि आवास निर्माण
(आवास के लिए केंद्रीय व्यवस्था के अलावा) बाल-संस्थाओं किंडरगार्टन पायनियर

शिविरों, अवकाश गृहों और स्वास्थ्य गृहों के निर्माण तथा देखरेख एवं अन्य सामाजिक सांस्कृतिक सेवाओं पर खर्च की जाती है।

परिणामस्वरूप लागत-लेखा की व्यवस्था में सम्पूर्ण उद्यम और प्रत्येक मजदूर योजना के लक्ष्यों की पूर्ति और उससे अधिक उत्पादन में दिलचस्पी लेता है। उसकी दिलचस्पी उद्यम के कुशल सचालन और उसे लाभदायक बनाने में रहती है।

उद्यम की लाभदायकता

लागत-लेखा समाजवादी उद्यमों को ऐसी स्थिति में रख देता है जहां उन्हें साधनों के इस्तेमाल में अधिकतम सम्भव मितव्ययिता प्राप्त करना जरूरी हो जाता है और उसका लाभ के साथ सचालन आवश्यक हो जाता है।

उद्यम की लाभदायकता का मतलब यह है कि उत्पादन की बिक्री से प्राप्त राशि से न सिर्फ लागत ही निकले बल्कि मुनाफा भी प्राप्त हो।

अगर उद्यम सामाजिक तौर पर आवश्यक लागत से अधिक राशि उत्पादन पर व्यय करते हैं, तब वे व्यय की राशि भी उत्पादन की बिक्री से नहीं पा सकते। उन्हें घाटा सहना पड़ेगा। जो उद्यम सामाजिक तौर पर आवश्यक लागत के बराबर या उससे कम व्यय करते हैं उन्हें मुनाफा होता है। राज्य आर्थिक क्रियाएं नियोजित करते समय यह मानकर चलता है कि सभी उद्यमों और उद्योग की सभी शाखाओं में लाभ होना चाहिए।

समाजवाद के अन्तर्गत कुछ उद्यमों की लाभदायकता में वृद्धि होने से अन्य उद्यमों के हितों को किसी भी प्रकार धक्का नहीं पहुंचता। इसके विपरीत राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के भावी तेज विकास के लिए अनुकूल स्थितियां उत्पन्न हो जाती हैं। समाजवादी उद्यमों की लाभदायकता का कीमतों के स्वतः आकस्मिक उतार चढ़ाव या कोई भय नहीं रहता। अर्थव्यवस्था के नियोजित सचालन के फलस्वरूप उत्पादन की बिक्री निश्चित नियोजित कीमतों पर होती है।

२ लागत-लेखा व्यवस्था के अन्तर्गत उद्यमों की परिसम्पत्ति

उत्पादन प्रक्रिया के लिए श्रम-शक्ति और उत्पादन के साधनों की आवश्यकता होती है। इनके अन्तर्गत श्रम के उपकरण (मशीन साज-सामान, कारखाने की इमारतें आदि) और श्रम के विषय (कच्चा माल और अन्य सामान, ईंधन अर्द्ध तैयार वस्तुएं आदि) आते हैं।

उत्पादन के साधनों को उत्पादन परिसम्पत्ति भी कहते हैं। समाजवादी उद्यमों की उत्पादन परिसम्पत्ति को दो भागों—स्थिर परिसम्पत्ति और आवर्ती परिसम्पत्ति—में बांटते हैं। यह विभाजन परिधि (सर्किट) के स्वरूप पर निर्भर होता है।

स्थिर परसम्पत्ति के अन्तर्गत उत्पादन प्रक्रिया में दीर्घकालीन उपयोग वाले उत्पादन के साधन आते हैं। अपने घिसने के साथ वे

स्थिर परिसम्पत्ति — अपना मूल्य अंशों के रूप में तैयार माल को हस्तान्तरित कर देते हैं।

सोवियत वर्गीकरण के अनुसार स्थिर उत्पादन परिसम्पत्ति के अन्तर्गत उत्पादन के लिए प्रयुक्त होने वाली इमारतें और संस्थापन, विद्युत शक्ति मशीनें और मशीनें, औपरेटस संचार गियर, परिवहन सुविधाएं उपकरण और औजार (जिनका कार्यशील जीवन १ वर्ष से अधिक और उनका मूल्य ५० रूबल से अधिक होता है), पाईपिंग व्यवस्था सड़क और सड़क का समतल बनाने की व्यवस्था बांध जलपूर्ति व्यवस्था, सिंचाई और भूमि की उन्नति के आवश्यक संस्थापन भारवाही और उत्पादक मवेशी आदि आते हैं।

स्थिर उत्पादन परिसम्पत्ति समाजवादी समाज का उत्पादक आधार है।

लागत-लेखा व्यवस्था के अनुसार काम करने वाले उद्यमों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे स्थिर परिसम्पत्ति का मितव्ययितापूर्ण इस्तेमाल करेंगे। स्थिर परिसम्पत्ति के प्रयोग में सुधार होने से बिना अतिरिक्त पूंजी विनियोग किये उत्पादन में वृद्धि होती है और उत्पादन लागत घटता है।

उत्पादन प्रक्रिया में इस्तेमाल से स्थिर परिसम्पत्ति धीरे धीरे घिसती है। घिसावट दो प्रकार की होती है

भौतिक घिसावट से हमारा मतलब उत्पादन प्रक्रिया के दौरान भौतिक या रासायनिक क्रिया या प्राकृतिक कारणों के प्रभाव से स्थिर परिसम्पत्ति की घिसावट से है।

नैतिक घिसावट तकनीकी प्रगति का परिणाम होती है। टेक्नालाजी के विकास के साथ पुरानी मशीनों के स्थान पर नयी अधिक उत्पादक और सस्ती मशीनों का इस्तेमाल लाभदायक होता है। फलस्वरूप स्थिर परिसम्पत्ति में शामिल पुरानी मशीनें और अन्य कई चीजें भौतिक रूप से घिसने के पूर्व ही बेकार हो जाती हैं। इसलिए स्थिर परिसम्पत्ति की नैतिक घिसावट के कारण होने वाले घाटे को कम करने के लिए आवश्यक है कि साज सामानों का आधुनिकीकरण नियोजित तौर पर हो और उनकी पूरी क्षमता का इस्तेमाल बिना किसी ठहराव आदि के किया जाये।

जैसे जैसे स्थिर परिसम्पत्ति घिसती जाती है उसे घिसावट कोषों द्वारा पुनर्स्थापित करते जाते हैं। घिसावट कोषों का निर्माण तैयार माल के मूल्य में घिसे हुए पुर्जों और साज सामानों के सम्मिलित किये गये मूल्य से होता है। राजकीय उद्यमों के घिसावट कोषों के एक भाग का प्रयोग राज्य स्थिर परिसम्पत्ति के

पुनर्स्थापन के लिए करता है। उद्यम दूसरे भाग का इस्तेमाल काम आने वाली स्थिर परिसम्पत्ति की सफाई और मरम्मती के लिए करता है।

राजकीय उद्यमों की स्थिर परिसम्पत्ति का निर्माण राष्ट्रीय आय के संचित हिस्से से होता है। सोवियत संघ में १९२८-१९६७ के दौरान स्थिर परिसम्पत्ति करीब दस गुनी से अधिक बढ़ी और औद्योगिक एवं इमारती उद्यमों की स्थिर परिसम्पत्ति में करीब ४६ गुनी से अधिक वृद्धि हुई।

सोवियत अर्थव्यवस्था में स्थिर उत्पादक परिसम्पत्ति के अतिरिक्त स्थिर गैर-उत्पादक परिसम्पत्ति भी है। समाजवादी राज्य या सामूहिक फार्मों और सहकारी समितियों की वह सम्पत्ति जिसका इस्तेमाल वर्षों तक गैर उत्पादक सार्वजनिक उपभोग के लिए होता है स्थिर गैर उत्पादक परिसम्पत्ति कही जाती है। इसके अंतर्गत आवास स्थान, इमारतें, शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाएं, सामुदायिक सेवाएं, प्रशासन, संस्कृति आदि से सम्बद्ध संस्थाओं और संगठनों की इमारतें और साज सामान आदि आते हैं।

आवर्त्त के दौरान पायी जाने वाली परिसम्पत्ति उत्पादन के साधनों का वह भाग है जिसका एक ही उत्पादन काल के दौरान पूर्ण उपयोग हो जाता है और उसका पूरा मूल्य तैयार माल में सम्मिलित हो जाता है।

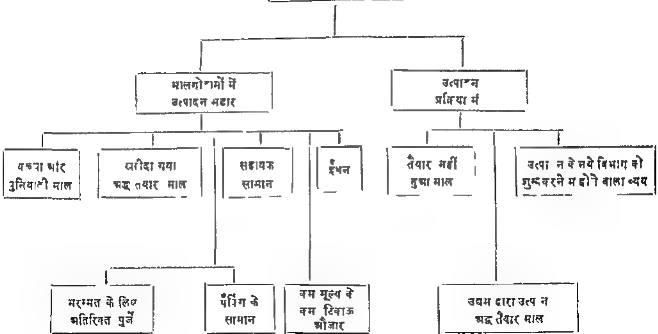
आवर्त्त के दौरान परिसम्पत्ति

इसके अन्तर्गत भौतिक रूप में १) माल गोदामों में रहने वाले उत्पादन भण्डार—कच्चे माल, बुनियादी और सहायक सामान, ईंधन, उत्पादन प्रक्रिया में इस्तेमाल के लिए खरीदे गये अर्द्ध तैयार माल, मरम्मती के लिए अतिरिक्त पुर्जे कम मूल्य के कम टिकाऊ औजार आदि और २) तैयार नहीं हुए माल, अर्द्ध तैयार माल और बाद के वर्षों की लागत (उत्पादन के नये विभाग का प्रारम्भ करने में होने वाला व्यय, दीर्घकाल तक चलने वाले तैयारी कार्य और अन्य काम) आते हैं। उपर्युक्त विवरण को हम पृष्ठ ३०८ पर दी गयी स्कीम से स्पष्ट कर सकते हैं।

स्थिर परिसम्पत्ति और आवर्त्त के अंतर्गत रहने वाली परिसम्पत्ति के अंतर्गत समाजवादी उद्यमों को अतिरिक्त साधनों की आवश्यकता होती है जिससे उनका काम प्रचलन के क्षेत्र में हो सके। समाजवादी

परिचलन परिसम्पत्ति

उद्यमों के उत्पादन को योजना के अनुसार बेचा जाता है और उद्यमों को विनिमय में मुद्रा राशि प्राप्त होती है। इससे स्पष्ट है कि लागत लेखा व्यवस्था के अनुसार काम करने वाले उद्यमों के पास किसी भी निश्चित समय में स्थिर परिसम्पत्ति और आवर्त्त के अंतर्गत रहने वाली परिसम्पत्ति के अलावा बिक्री के लिए तैयार माल की एक निश्चित मात्रा



उद्यमों के आवर्त के अन्तर्गत परिसम्पत्ति
मालगोदामों में उत्पादन भंडार
उत्पादन प्रक्रिया में
कच्चा और बुनियादी माल
खरीदा गया अर्द्ध तैयार माल
सहायक सामान
ईंधन
तैयार नहीं हुआ माल
उत्पादन के नये विभाग को शुरू करने में होने वाला व्यय
मरम्मत के लिए अतिरिक्त पुर्जे
पैकिंग के सामान
कम मूल्य के कम टिकाऊ औजार
उद्यम द्वारा उत्पन्न अर्द्ध तैयार माल

और उत्पादन की अवधि तक की बिक्री से प्राप्त मुद्रा राशि होती है। बिक्री के लिए रखा हुआ उत्पादन भंडार और कच्चा माल, ईंधन, आदि की खरीद के लिए उद्यम के लिए आवश्यक वित्तीय साधनों का एक भाग उपलब्ध परिसम्पत्ति कहलाते हैं।

आवर्त में रहने वाली और उपलब्ध परिसम्पत्ति मौद्रिक रूप में उद्यम विभाग की परिचलन परिसम्पत्ति कहलाती है। परिचलन के साधनों के ये दो तत्व पुनरुत्पादन की प्रक्रिया में भिन्न रूपों में काम करते हैं। आवर्त में अन्तर्गत रहने वाली परिसम्पत्ति उत्पादन की प्रक्रिया में काम करती है और उपलब्ध परिसम्पत्ति परिचलन के क्षेत्र में काम करती है किन्तु दोनों उद्यम के साधनों के आवर्त के सर्किट में काम करती हैं।

समाजवादी उद्यमों की परिचलन परिसम्पत्ति दो भागों में विभाजित होती है: उद्यम की अपनी परिसम्पत्ति और उधार लिए गए साधन।

राज्य प्रत्येक राजकीय उद्यम को उसकी परिचलन परिसम्पत्ति सौंप देता है। यह परिसम्पत्ति उत्पादन योजना के लक्ष्यों की पूर्ति के लिए न्यूनतम जरूरतों को ध्यान में रखकर दी जाती है। साल के दूसरे समय में कच्चे मालों और ईंधन की खरीद करनी होती है। कभी-कभी वस्तुएं परिवहन के कारण पड़ी रहती हैं। इनके लिए आवश्यक मुद्रा राशि स्टेट बैंक से उधार के रूप में ली जाती है। स्टेट बैंक से ली गयी ऋण राशि को एक निश्चित समय (जो सम्भवतः एक साल से अधिक नहीं होता) के भीतर ब्याज सहित चुका दिया जाता है।

राज्य उद्यमों को न्यूनतम साधन ही देता है जिससे वे मितव्ययितापूर्वक इस्तेमाल करें और उनका उत्पादन और बिक्री भी बढ़े।

परिचलन परिसम्पत्ति के आवर्त की गति

परिचलन परिसम्पत्ति के आवर्त की गति उद्यमों और आर्थिक संगठनों की क्रियाओं की एक खास में विशेषता है। परिचलन परिसम्पत्ति निरन्तर गतिमान रहती है और तीन क्रमिक चरणों से होकर गुजरती है। इस निरन्तर वेग को परिचलन परिसम्पत्ति का आवर्त कहते हैं।

आवर्त के प्रथम चरण में राजकीय उद्यम की परिचलन परिसम्पत्ति अपने मौद्रिक रूप से उत्पादन भंडार के रूप में परिवर्तित होती है यानी वह उत्पादन के लिए आवश्यक उत्पादन के साधनों का रूप ग्रहण करती है।

आवर्त के दूसरे चरण में उत्पादन भंडार इस्तेमाल में आ जाते हैं और तैयार माल का रूप ले लेते हैं। उस अवस्था में परिचलन परिसम्पत्ति उत्पादक उपभोग के क्षेत्र में आ जाती है।

आवर्त के तीसरे चरण में उद्यम द्वारा उत्पन्न वस्तुएं बेची जाती हैं और परिचलन परिसम्पत्ति मौद्रिक रूप ले लेती है। यह मुद्रा राशि उत्पादन भंडार

आदि प्राप्त करने के लिए खच की जाती है और इस प्रकार सम्पूण आवत्त फिर से दुहराया जाता है।

इन क्रमिक चरणो से गुजरने म परिचलन परिसम्पत्ति को जो समय लगता है उसे उसके आवत्त का सम्पूण काल कहते हैं।

परिचलन परिसम्पत्ति के आवत्त को तेज कर लागत लेखा व्यवस्था के अ तगत उद्यम उत्पादन मे इस्तेमाल होने वाले कच्चे माल और अ य भौतिक मूल्यो के भडार को कम करता है। इस तरह उस उद्यम मे उत्पादन के विस्तार या राष्ट्रीय अथ यवस्था की अ य शाखाओ म उपयोग के लिए परिचलन परिसम्पत्ति का एक भाग उपल ध हो जाता है।

किसी भी उद्यम के साधनो के आवत्त की गति उत्पादन और परिचलन (बिक्री के लिए प्रस्तुत भडार आदि के रूप म) म लगाये गये समय पर निभर होती है। इसलिए परिचलन परिसम्पत्ति के आवत्त को त्वरित करने वाले तत्वो म उत्पादन एव परिचलन पर यय किये गये समय मे कमी और आवश्यक मात्रा से अधिक भडार को समाप्त करना मुख्य हैं। परिचलन परिसम्पत्ति क आवत्त को तेज करना राष्ट्रीय अथ यवस्था के लिए काफी महत्व रखता है।

३ उत्पादन लागत और तयार वस्तुओ की कीमतें

समाजवादी अर्थ व्यवस्था मे लागत और उसकी सरचना

समाजवादी समाज मे वस्तु का मूल्य तीन भागो म बाटा जा सकता है १) काम मे लाये गये उत्पादन के साधनो का मूल्य २) आवश्यक श्रम द्वारा उत्प न मूल्य ३) अधिशेष श्रम द्वारा उत्प न मूल्य।

प्रथम दो भाग समाजवादी उद्यमो की उत्पादन लागत म शामिल होते हैं। मूल्य का तीसरा भाग समाज की शुद्ध आय होता है।

उद्योग म कारखाने की लागत और पूण लागत म अ तर करना आवश्यक है। कारखाने की लागत के अ तगत उद्यम द्वारा वस्तुओ क उत्पादन म लगायी गयी लागत आती है। पूण लागत म कारखाने की लागत के अतिरिक्त वस्तुओ की बिक्री पर और अ य दिशाओ (परिवहन, पकिंग टस्टो एव सयोजना के प्रशासन, कमचारियो के प्रशिक्षण एव तकनीकी प्रचार पर किया गया यय और शोध सस्थानो को दी गयी राशि आती है) म होने वाले व्यय शामिल हैं।

औद्योगिक उत्पादन की उत्पादन लागत का ढाचा क्या है ?

उद्यम वस्तुओ के उत्पादन पर जो कुछ भी खच करता है उसे निम्न लिखित समरूप कोटियो म आर्थिक विशेषताओ और उत्पादन के बुनियादी तत्वो की बनावट के आधार पर बाटा जा सकता है

१ मजूरी और मजूरी के आधार पर निर्धारित अतिरिक्त व्यय।

२ कच्चे माल और अन्य सामानों, ईंधन एवं विद्युत शक्ति पर होने वाला व्यय।

३ प्रयुक्त उत्पादन के साधनों के मूल्य के बराबर घिसावट कोष की व्यवस्था।

४ उत्पादन के प्रबन्ध एवं व्यवस्था के ऊपर उद्यम और उसके विभागों का व्यय।

उत्पादन लागत में विभिन्न तत्वों का अनुपात उद्योग की शाखा विशेष की विशिष्ट स्थितियों और विशेषताओं और उसके तकनीकी साज सामानों के स्तर तथा उत्पादन और श्रम के संगठन के अनुसार परिवर्तित होता रहता है।

राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की सभी शाखाओं में सामाजिक श्रम के व्यय में मितव्ययिता लाने के लिए उत्पादन लागत में कमी करना आवश्यक होता है। उत्पादन लागत में कमी करने के लिए आवश्यक है कि काम पर नियुक्त मजदूरों की उत्पादनता बढ़े, प्रति इकाई उत्पादन पर ईंधन और विद्युत शक्ति का होने वाला व्यय घटे और प्रशासकीय खर्च में कटौती हो।

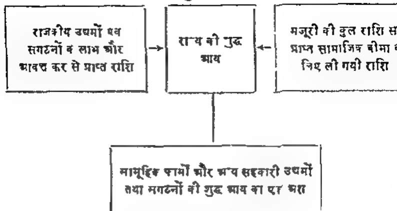
उत्पादन लागत में कटौती एक महत्वपूर्ण चीज है क्योंकि इस पर सिर्फ उस उद्यम विशेष की ही लाभदायकता निर्भर नहीं है बल्कि संचय भी अवलम्बित है। उत्तरोत्तर संचय के द्वारा ही समाजवादी पुनरुत्पादन का क्षेत्र बढ़ता है और लोगों का भौतिक एवं सांस्कृतिक स्तर ऊंचा उठता है। उत्पादन लागत में कमी करने का आन्दोलन काफी महत्वपूर्ण है। दो दशकों (१९६१-८०) के दौरान औद्योगिक उत्पादन लागत में कटौती के फलस्वरूप १,४००-१,५०० अरब रूबल की बचत होगी। यह राशि राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के कुल विनियोग का ३/४ है।

शुद्ध आय और उसके दो रूप

सम्पूर्ण समाजवादी समाज में अधिशेष श्रम द्वारा उत्पन्न अधिशेष उत्पादन के मूल्य का मौद्रिक रूप ही शुद्ध आय है।

सम्पूर्ण राष्ट्रीय आय के समान ही समाज की शुद्ध आय भौतिक उत्पादन की शाखाओं में उत्पन्न की जाती है। राजकीय उद्यमों में उत्पन्न शुद्ध आय के एक भाग का वितरण स्वयं उद्यम (मुनाफे के रूप में) करते हैं। शुद्ध आय का दूसरा भाग राज्य को प्राप्त होता है। शुद्ध आय का उत्पादन सामूहिक फार्मों में भी होता है। इसका एक भाग सामूहिक फार्मों के पास रहता है और शेष कीमतों और आय कर द्वारा राज्य के पास चला जाता है।

राज्य की केंद्रित शुद्ध आय कसे प्राप्त होती है



शुद्ध आय दो रूपा म होती है राज्य के पास केंद्रित शुद्ध आय अ राजकीय उद्यम (तथा सामूहिक फाम) की शुद्ध आय।

राज्य क पास केंद्रित शुद्ध आय समाजवादी समाज के अधिशेष उत्पा क मूल्य का वह हिस्सा है जो सम्पूण जनता की आवश्यकताओ पर व्यय करन लिए राज्य क हाथो म केंद्रित होता है।

राजकीय बजट म यह आय आवत्त कर मुनाफे से ली गयी राशि मज बिल के आधार पर लिये गये सामाजिक बीमा शुल्क, सहकारी उद्यमा से लिय आय-कर आदि क रूप मे होती है।

राज्य को प्राप्त होन वाली शुद्ध आय सब लोगो की आवश्यकताओ पूर्ति करने पूजीगत निर्माण कार्यों को वित्तीय साधन देने और प्रतिरक्षा स जनिक शिक्षा स्वास्थ्य सेवाओ पेंशन प्रशासन इत्यादि पर राज्य के होने व यय को पूरा करने क लिए इस्तेमाल म लायी जाती है।

राजकीय उद्यम की शुद्ध आय से हमारा तात्पय अधिशेष उत्पादन मूल्य के उस भाग स है जो उद्यम क पास रहता है। शुद्ध आय की मात्रा इस निभर है कि कहा तक उद्यम योजना के लक्ष्यो को पूरा करता है और किस हद उत्पादन लागत म कटौती होती है। उद्यम जितनी ही अच्छी तरह काम क उत्पादन लागत उतनी ही कम और शुद्ध आय उतनी ही अधिक होगी। व्यवस्था के फलस्वरूप उत्पादन की लाभदायकता बढाने म उद्यम के सभी मज वास्तविक दिलचस्पी दिखाते हैं।

राजकीय उद्यमो की शुद्ध आय का इस्तेमाल प्राविधिक प्रक्रियाओं सा जिक-सास्कृतिक सुविधाओ एव भवन निर्माण के लिए कोष निर्माण और सम

वादी उद्यमों में मजदूरों को प्रोत्साहन देने के वास्ते एक कोष स्थापित करने के लिए नियोजित रूप से होता है। उद्यमों की शुद्ध आय (मुनाफा) का एक भाग लाभांश के रूप में राजकीय बजट में रखा जाना है।

उद्यम की शुद्ध आय (मुनाफा) का एक भाग राजकीय बजट में ले लिया जाता है।

समाजवादी उद्यमों की शुद्ध आय निरंतर बढ़ रही है। १९४० में सोवियत संघ के उद्यमों एवं आर्थिक संगठनों की शुद्ध आय ३२७ करोड़ रूबल और १९६४ में ९६० करोड़ रूबल थी।

राजकीय क्षेत्र में कीमत

समाजवादी उद्योग का उत्पादन पहले से तय की गयी कीमतों पर बेचा जाता है। समाजवाद के अन्तर्गत कीमत निर्धारण उत्पादन की सामाजिक लागत से होता है या यों कहें कि कीमत निर्धारण का मुख्य आधार वस्तु का मूल्य होता है। समाजवादी समाज में कीमतें मूल्य से भिन्न होती हैं। किन्तु ये विचलन अपने आप नहीं होते बल्कि इनका निर्धारण राज्य द्वारा देश की अर्थव्यवस्था का विकास करने और जनसाधारण जनता की खुशहाली बढ़ाने के लिए होता है। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम में बताया गया है कि कीमतों को एक हद तक सामाजिक तौर पर आवश्यक श्रम के व्यय को जाहिर करना चाहिए और उत्पादन एवं परिवहन लागत के अतिरिक्त एक निश्चित मुनाफा सभी सामान्य तौर पर काम करने वाले उद्यम को मिलनी चाहिए।[1]

समाजवादी अर्थव्यवस्था में उद्यम एवं उद्योग की थोक कीमतें, राजकीय फार्मों की कृषिजन्य वस्तुओं की कीमतें, सामूहिक फार्मों द्वारा राज्य को बेची जाने वाली कृषिजन्य वस्तुओं की मूल कीमतें और काम के बदले [illegible] उत्पादन की बिक्री [illegible] कीमतें, राजकीय एवं सहकारी व्यापार की खुदरा कीमतें और [illegible] बाजार की खुदरा कीमतों के बीच भेद किया जाता है।

सोवियत संघ में थोक कीमतों में पूर्ण लागत, औद्योगिक उद्यम का मुनाफा और बिक्री, संगठन की लागत और मुनाफा शामिल होता है। अगर वस्तु पर [illegible] कर लगता है तो उसे भी थोक कीमत में शामिल कर लेते हैं।

[illegible]

[1] [illegible] पृ० ३१२।

आय का एक हिस्सा आवर्त-कर के द्वारा हल्के उद्योग द्वारा उत्पन्न वस्तुओं की कीमतों में वसूल लिया जाता है।

थोक कीमतें निर्धारित करते समय राज्य वस्तुओं के उत्पादन पर उद्यमों के नियोजित व्यय को पूरा करने और लाभदायकता को बनाये रखने की आवश्यकताओं पर विशेष रूप से ध्यान देता है।

कीमतों की व्यवस्था द्वारा राज्य उद्यमों के लाभप्रद परिचालन को प्रोत्साहित करता है, उत्पादन लागत में कमी करने और जरूरी वस्तुओं के उत्पादन को बढ़ाने के लिए प्रेरित करता है। समाजवादी उत्पादन का निरंतर विकास और उन्नति थोक कीमतों में कटौतियों का आधार हैं। इस प्रकार व खुदरा कीमतों में कटौती लाते हैं। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम में बताया गया है कि श्रम उत्पादकता की वृद्धि और उत्पादन लागत में कटौती के आधार पर कीमतों में व्यवस्थित एवं आर्थिक दृष्टि से उचित कमी कम्युनिस्ट निर्माण के काल में दाम नीति की मुख्य प्रवृत्ति होती है।[1]

४ सामूहिक फार्मों में लागत लेखा

लागत लेखा के सिद्धान्त बुनियादी रूप से सामूहिक फार्मों पर भी लागू होते हैं। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम के अनुसार सामूहिक फार्मों में कृषि व्यवस्था लागत लेखा के सिद्धान्तों पर आधारित होनी चाहिए।[2] किन्तु सामूहिक फार्मों में सहकारी और सामूहिक फार्म सम्पत्ति की खास विशेषताओं के कारण लागत लेखा का राजकीय उद्यमों की तुलना में भिन्न स्वरूप होना है।

लागत लेखा के लिए आवश्यक है कि सामूहिक फार्म के समग्र उत्पादन (सामूहिक फार्म में एक वर्ष के दौरान किये गये उत्पादन) का सही हिसाब मौद्रिक रूप में रखा जाय। इस उत्पादन का एक बड़ा हिस्सा बिकाऊ उत्पादन के रूप में बेच दिया जाता है। इस बिकाऊ उत्पादन का अधिकांश राज्य को निश्चित बुनियादी खरीद कीमतों पर बेच दिया जाता है।

सोवियत संघ में कीमतें हर किस्म के उत्पादन के लिए अलग अलग क्षेत्रों में क्षेत्रीय उत्पादन परिस्थितियों के अनुसार निश्चित की जाती हैं। उदाहरण के लिए खाद्यान्न की राजकीय खरीद कीमत उक्राइन की अपेक्षा यूराल में अधिक है क्योंकि उक्राइन में प्रति सेंटनर अन्न के उत्पादन में यूराल की अपेक्षा कम श्रम लगता है।

---

१ 'कम्युनिज्म का मार्ग", पृष्ठ ५३०।

२ वही पृष्ठ ५२६।

सामूहिक फाम उत्पादन की लाभप्रायता मालूम करने के लिए उत्पादन लागत जानना आवश्यक है। उत्पादन लागत जानने के माग म अनक कठिनाइयां हैं। उदाहरण के लिए, सामूहिक फाम अपने उत्पादन क कुछ साधन (जसे, बीज चारा) नही खरीदत। व उनकी कमी को अपने आप उनका उत्पादन कर पूरा करत हैं। सामूहिक फाम पर श्रम के लिए वस्तु और मुद्रा दोना म भुगतान किया जाता है। इसलिए सामूहिक फाम पर उत्पादन लागत का हिसाब लगाना कठिन हो जाता है। अगर ठीक स हिसाब लगाया जाय लखा जोखा व्यवस्थित रूप स रखा जाय और श्रम एव सामानो का उचित मूल्याकन किया जाय, तो इन कठिनाइयो का हल निकल सकता है।

वतमान काल म सामूहिक फाम की उत्पादन लागत का हिसाब यो लगाया जाता है फाम म उत्पन्न बीज चारा और अन्य सामानो का मूल्याकन उनकी उत्पादन लागत के आधार पर किया जाता है तथा खरीदे गय सामानो का मूल्याकन उनकी बाजार कीमत के आधार पर होता है। स्थिर उत्पादन परिसम्पत्ति (ट्रैक्टरो मोटरगाड़ियो फाम मशीनरी आदि) की घिसावट का हिसाब राजकीय फार्मों क लिए स्वीकृत दरो पर किया जाता है। सामूहिक फाम के सदस्यो का वस्तु क रूप म किये जाने वाले भुगतान का मुद्रा के रूप म बदला जाता है क्योकि ऐसा होने पर लागत लेखा व्यवस्था का काम म लाना आसान हो जाता है।

सामूहिक फाम बडे पमाने का एक आर्थिक उद्यम है। किसानो के पूवजो द्वारा काम मे लाये जाने वाले पुराने तरीको को अब नही अपनाया जा सकता। आधुनिक सामूहिक फाम की दृष्टि से उत्पादन पर होने वाले व्यय का हिसाब मुद्रा के रूप म रखना जरूरी हो गया है। सामूहिक फार्मों का यह कत य है कि वे उत्पादन लागत मे कटौती करें। इसके लिए उन्हे सबसे पहले श्रम की उत्पादकता बढानी होगी। सघन खेती (यानी रसायनो सिंचाई की सुविधाओ के प्रयोग व्यापक यन्त्रीकरण और विद्युतीकरण) से श्रम उत्पादकता म तेजी से वृद्धि होगी। सघन खेती स उपज बढगी और मवेशियो की उत्पादकता म वृद्धि होगी।

कृषि उत्पादन की राजकीय खरीद कीमतो और खुदरा कीमतो को घटाने के लिए उत्पादन म वृद्धि और उत्पादन लागत म कटौती आवश्यक है।

राजकीय खरीद कीमतो का इस तरह निर्धारित किया जाता है कि सामूहिक फाम अपने उत्पादन का बेचकर उत्पादन लागत को पूरा कर सकें और शुद्ध आय यानी मुनाफे (खरीद कीमत और उत्पादन लागत का अन्तर) की एक राशि प्राप्त कर सकें।

सामूहिक फाम की शुद्ध आय उसके समग्र उत्पादन के मूल्य का वह भाग होती है जो उत्पादन मे हुए हर प्रकार क व्यय (उत्पादन लागत) को पूरा करन

के बाद बच जाता है। उत्पादन लागत और प्राप्त आय की तुलना कर हम यह निश्चित कर सकते हैं कि किस फसल को उपजाना लाभदायक है। इस प्रकार सम्पूर्ण सामूहिक फार्म के आर्थिक कार्यों के परिणामों का मूल्यांकन किया जा सकता है।

सामूहिक फार्म की शुद्ध आय का एक भाग अन्तरीय लगान होता है क्योंकि कृषि उत्पादन के लिए जमीन अनिवार्य है। भूखण्डों में उर्वरता और स्थिति की भिन्नता के कारण अन्तर होता है। बेहतर प्राकृतिक उर्वरता और बेहतर स्थिति के कारण कुछ सामूहिक फार्मों में श्रम-उत्पादकता ऊंची होती है या प्रति इकाई उत्पादन में श्रम की कम मात्रा व्यय होती है।

इसलिए बेहतर या औसत भूखण्डों या बाजार के नजदीक के भूखण्डों पर खेती करने वालों को अन्य लोगों की अपेक्षा अधिक शुद्ध आय प्राप्त होती है। शुद्ध आय के इस भाग को अन्तरीय लगान १ कहते हैं।

सामूहिक फार्मों में अन्तरीय लगान २ भी प्राप्त होता है। अग्रणी फार्मों की आधुनिक टेक्नालाजी, खाद और खेती के तरीकों, आदि के द्वारा जमीन का अच्छी तरह इस्तेमाल करने के फलस्वरूप जो शुद्ध आय की राशि मिलती है उसे ही अन्तरीय लगान २ कहते हैं।

अन्तरीय लगान का एक भाग सामूहिक फार्मों के पास ही रह जाता है। दूसरा भाग राज्य को कीमतों और आय-कर की व्यवस्था के द्वारा राजकीय बजट को प्राप्त होता है।

प्रति इकाई उत्पादन पर लागत कम करने के लिए सामूहिक फार्मों को काफी अवसर प्राप्त हैं। श्रम उत्पादकता बढ़ाकर व्यय कम करने से सामूहिक फार्मों की शुद्ध आय की अधिक राशि प्राप्त होती है और सामूहिक फार्म पर काम करने वाले किसानों की खुशहाली बढ़ती है।

अध्याय १६

समाजवादी पुनरुत्पादन—समाजवाद के अन्तर्गत राष्ट्रीय आय और वित्त एव साख व्यवस्था

१ समाजवादी पुनरुत्पादन

समाजवादी पुनरुत्पादन का स्वरूप

पुनरुत्पादन का मतलब है उत्पादन वितरण और उपभोग की प्रक्रिया की निरन्तर पुनरावृत्ति। इस प्रक्रिया म उत्पादन ही अन्य सभी चीजो का निर्धारित करता है क्योकि जो कुछ उत्पादन होगा उसी का वितरण और इस्तेमाल होगा।

पुनरुत्पादन साधारण या विस्तारित किसी भी प्रकार का हो सकता है। समाजवाद क अ तगत उत्पादन का पमाना प्रतिवष निर्बाध रूप से बढता है। स क्षेप म कहे तो समाजवाद के अ तगत विस्तारित पुनरुत्पादन होता है। पुनरुत्पादन की प्रक्रिया का अथ स्थायी भौतिक धन और श्रम शक्ति स कुछ अधिक है। इसके अ तगत उत्पादन के सम्बध भी शामिल होते है।

पूरे पमाने के कम्युनिस्ट निर्माण की अवधि म समाजवादी उत्पादन सम्बधो के पुनरुत्पादन से समाज की समाजवादी सम्पत्ति दो रूपो म विकसित और सुदृढ होती है। राजकीय और सहकारी एव सामूहिक फाम की सम्पत्ति एक दूसरे के निकट आती है और भविष्य म उनका विलयन हो जाता है। वे धीरे धीरे एक कम्युनिस्ट सम्पत्ति क रूप म बदल जाती हैं। मेहनतकश जनता के बीच मत्रीपूण सहयोग और पारस्परिक सहायता की भावना बढती है। श्रम के प्रति कम्युनिस्ट दृष्टिकोण का विकास होता है तथा जीवन की अच्छी चीजो के वितरण की कम्युनिस्ट व्यवस्था शन शन विकसित होती है।

पूजीवादी पुनरुत्पादन की तुलना मे समाजवादी पुनरुत्पादन की मुख्य विशेषता यह है कि वह लोगो की आवश्यकताओ को सतुष्ट करता है। पूजीवाद के अतगत ध्येय कुछ और ही होता है। पूजीवादी पुनरुत्पादन का मुख्य उद्देश्य पूजीपतियो के एक छोटे समूह की समद्धि बढाना है। समाजवादी पुनरुत्पादन का विकास सम्पूर्ण समाज के हित म होता है। इसके अतगत उद्यमो और उद्योगो के *बीच प्रतिद्वदिता अधिक उत्पादन के सकट और बेराजगारी के जन्म लेने की कोई* सम्भावना नही रहती।

समाजवादी पुनरुत्पादन की एक और विशेषता उत्पादन की निरन्तर वद्धि है। सोवियत सघ का उत्पादन निरतर बढता जा रहा है जबकि पूजीवादी विश्व के प्रमुख देश अमरीका म उत्पादन की वद्धि मे युद्ध के बाद बार बार सकटो के कारण रुकावटें आयी हैं।

समाजवादी पुनरुत्पादन नियोजित रूप से चलता है। इसका मतलब यह है कि अथव्यवस्था की हर शाखा और सम्पूर्ण सामाजिक उत्पादन का विकास एक पूवनिर्धारित योजना के अनुसार होता है।

आर्थिक विकास की उच्च दर उत्पादक शक्तियो का निरतर विकास और कम्युनिज्म के भौतिक और तकनीकी आधार का निर्माण समाजवादी पुनरुत्पादन की प्रमुख विशेषताए हैं।

सामान्य तौर पर पुनरुत्पादन की प्रक्रिया उत्पादक शक्तियो और उत्पादन के सम्बधो की पुनरावत्ति करती है किन्तु *भौतिक उत्पादन की दष्टि से यह* समग्र सामाजिक उत्पादन के निर्माण की प्रक्रिया है।

समाजवादी पुनरुत्पादन के फलस्वरूप समग्र सामाजिक उत्पादन होता है और समाज का धन बढता है। समाज का धन समाज को प्राप्त भौतिक मूल्यो का कुल योग है। ये भौतिक मूल्य किसी खास पीढी और उसकी पिछली पीढियो की उत्पादक क्रियाओ के फल हैं।

समग्र सामाजिक उत्पादन और उसका ढाचा

एक निश्चित अवधि साधारणतया एक साल के दौरान समाज द्वारा उत्पन्न भौतिक धन की सम्पूर्ण मात्रा को समग्र सामाजिक उत्पादन कहते हैं। भौतिक उत्पादन के क्षेत्र (उद्योग, कृषि परिवहन, सचार) म लगे लोगो और व्यापार के क्षेत्र म काम करने वाले लोगो के श्रम के द्वारा ही समग्र सामाजिक उत्पादन प्राप्त किया जाता है। व्यापार का क्षेत्र (पकिंग भडार और परिवहन) भी उत्पादन प्रक्रिया म शामिल है।

भौतिक उत्पादन म काय के अतिरिक्त राजकीय प्रशासन सास्कृतिक काय तथा जनता को म्युनिसिपल और चिकित्सा सेवाए प्रदान करने वाले क्षेत्र म भी

काम होता है। इन क्षेत्रो म काम करन वाले लोगो का समग्र सामाजिक उत्पादन की उत्पत्ति स कोई सीधा सम्बध नही है, किन्तु उनका श्रम सामाजिक दृष्टि स महत्वपूर्ण है। व अप्रत्यक्ष रूप से समग्र सामाजिक उत्पादन की उत्पत्ति म योग देते हैं।

समाजवादी समाज मे समग्र सामाजिक उत्पादन निरन्तर नियोजित रूप से बढता है। विकास की तेज दर इसकी एक खास विशेषता है। बीस वर्षों (१९६१ ८०) के दौरान सोवियत सघ का समग्र सामाजिक उत्पादन करीब ५ गुना बढेगा।

निम्नलिखित तत्वो के कारण समाजवाद मे उत्पादन का द्रुत गति से विकास होता है।

सबस महत्वपूर्ण तत्व श्रम उत्पादकता की वृद्धि है। समाजवाद के अन्तगत श्रम उत्पादकता की वद्धि के फलस्वरूप समग्र सामाजिक उत्पादन को बढाने की असीमित सम्भावनाए हैं।

भौतिक उत्पादन मे लगे लोगो की सख्या मे वद्धि दूसरा तत्व है।

समग्र सामाजिक उत्पादन को भौतिक और मूल्य दोनो रूपो म पुनरुत्पन्न किया जाता है।

भौतिक रूप मे समग्र सामाजिक उत्पादन क मुख्य तत्व य हैं

१ उत्पादन के लिए आवश्यक वस्तुए या उत्पादन के साधन (मशीन, कच्चा माल और अन्य सामान इधन आदि),

२ व्यक्तिगत उपभोग की वस्तुए (कपडा जूता भोजन, घरेलू वस्तुए, सास्कृतिक इस्तेमाल की वस्तुए आदि)।

उत्पादन के लिए अपेक्षित वस्तुओ द्वारा उत्पादन के लिए इस्तेमाल किये गये साधनो की कमी को पूरा किया जाता है और उत्पादन का विस्तार होता है।

व्यक्तिगत उपभोग की वस्तुओ का इस्तेमाल मजदूरो की व्यक्तिगत जरूरतो को पूरा करने राजकीय भडार बनाने और उत्पादन म काम करने वाले अन्य समूहो को उपभोक्ता वस्तुए प्रदान करने के लिए होता है।

इसलिए समग्र सामाजिक उत्पादन म सम्मिलित वस्तुओ को उनके इस्तेमाल के अनुसार दो मुख्य भागो—उत्पादन के साधनों की उत्पत्ति (विभाग १) और उपभोक्ता वस्तुओ का उत्पादन (विभाग २)—म बाटा जाता है।

मूल्य की दृष्टि से समग्र सामाजिक उत्पादन क तीन भाग हैं १) उत्पादन के उन साधनो का मूल्य जिनका उत्पादन की प्रक्रिया म इस्तमाल हो चुका है (यानी उत्पादन के साधनो के मूल्य का वह भाग जो तयार माल म हस्तान्तरित हो चुका है) २) नव उत्पादित मूल्य जिसकी जरूरत मजदूरो के व्यक्तिगत उपभोग

के लिए होनी है ३) वह नव उत्पादित मूल्य जिसका इस्तेमाल उत्पादन और सार्वजनिक उपभोग भंडार के प्रसार के लिए होता है।

पुनरुत्पादन की प्रक्रिया में प्रत्येक एक विशेष भूमिका अदा करता है। पहला हिस्सा काम में लाये गये उत्पादन के साधनों के मूल्य की कमी को पूरा करता है। इस तरह वह इमारतों, मशीनों औजारों, संस्थानों मशीनों और यंत्रों की घिसावट को पूरा करता है और काम में लाये गये कच्चे मालों, ईंधन, विद्युत शक्ति और उत्पादन में प्रयुक्त अन्य तत्वों की कमी को पुनर्स्थापित करता है।

समग्र सामाजिक उत्पादन का दूसरा हिस्सा व्यय की गयी श्रम शक्ति के मूल्य के बराबर होता है यानी उत्पादन करने वाले मजदूरों द्वारा इस्तेमाल की गयी वस्तुओं के मूल्य के बराबर होता है।

समग्र सामाजिक उत्पादन का तीसरा भाग अधिशेष उत्पादन के मूल्य के बराबर होता है। इसका इस्तेमाल गैर उत्पादक क्षेत्र के व्यय को पूरा करने और उत्पादन के विस्तार के लिए साधन जुटाने (संचय कोष के रूप में) के लिए होता है।

समग्र सामाजिक उत्पादन के मूल्य की प्राप्ति

वार्षिक सामाजिक उत्पादन के मूल्य की प्राप्ति एक योजना के अनुसार होती है। विभाग १ और विभाग २ के पारस्परिक और प्रत्येक विभाग के भीतरी विनिमय के द्वारा ही यह कार्य होता है।

सबसे पहले हम यह देखें कि विभाग १ के उद्यमों के बीच किस प्रकार विनिमय होता है।

विभाग १ में उत्पादन प्रक्रिया के निरंतर नवीनीकरण के लिए आवश्यक है कि उत्पादन की प्रक्रिया में इस्तेमाल किये गये उत्पादन के साधनों की कमी को पूरा किया जाय।

विभाग १ की विभिन्न शाखाओं के पारस्परिक विनिमय द्वारा यह कार्य होता है। उदाहरण के लिए लौह अयस्क और कोयला उद्योग से धातु उद्योग को कच्चा माल और ईंधन मिलता है। इस्पात उद्योग इंजीनियरिंग उद्योग को धातुएं देता है और बदले में मशीन और साज-सामान आदि प्राप्त करता है। विभाग १ की शाखाओं में परस्पर उत्पादन के साधनों का नियोजित विनिमय होता है। इस विनिमय से ही उत्पादन की प्रक्रियाएं विभिन्न शाखाओं में चलती रहती हैं। इस प्रकार विभाग १ के उत्पादन का एक हिस्सा खप जाता है।

विभाग १ के उत्पादन के दूसरे भाग द्वारा विभाग २ में इस्तेमाल किये गये उत्पादन के साधनों को पुनर्स्थापित किया जाता है। तीसरे भाग में अधिशेष

श्रम निहित होता है। इसका उपभोग विभाग १ और विभाग २ में उत्पादन के विस्तार के लिए किया जाता है।

विभाग २ के उत्पादन के एक हिस्से का मूल्य भी इस विभाग के भीतर विभिन्न शाखाओं के पारस्परिक विनिमय द्वारा प्राप्त किया जाता है। इस हिस्से का इस्तेमाल इस विभाग में सक्रिय लोगों के पारस्परिक उपभोग के लिए होता है। दूसरे भाग को विभाग १ के मजदूरों के उपभोग के लिए रखा जाता है। विभाग २ के उत्पादन के एक भाग का इस्तेमाल उत्पादन में अतिरिक्त मजदूरों को लगाने के लिए होता है।

विभाग १ और विभाग २ में उत्पादनों का पारस्परिक विनिमय होता है। विभाग १ से विभाग २ के उद्यमों को मशीनें, औजार, मशीन और यंत्र, ईंधन, सामान इत्यादि मिलते हैं। इनके द्वारा उत्पादन में प्रयुक्त साधनों की कमी को पूरा किया जाता है और उत्पादन का विस्तार किया जाता है। विभाग १ में काम करने वाले मजदूरों को विभाग २ में व्यक्तिगत उपभोग की वस्तुएं मिलती हैं और उपभोग भंडार का विस्तार होता है क्योंकि उपभोग में लगातार वृद्धि होती है और विभाग १ में उत्पादन की सभी शाखाओं का विस्तार होता है तथा अतिरिक्त मजदूरों को काम मिलता है।

इस तरह भौतिक और मौद्रिक दोनों रूपों में समग्र सामाजिक उत्पादन के अवयवों का पारस्परिक विनिमय होता रहता है।

समाजवादी विस्तारित पुनरुत्पादन की निर्बाध प्रक्रिया के लिए निम्नलिखित स्थितियों की आवश्यकता होती है

प्रथम विभाग १ (जो उत्पादन के साधनों को उत्पन्न करता है) का वार्षिक उत्पादन मूल्य और भौतिक रूप की दृष्टि से इतना होना चाहिए कि क) मूल्य और भौतिक रूप की दृष्टि से विभाग १ और विभाग २ में समग्र सामाजिक उत्पादन की सृष्टि के दौरान इस्तेमाल किये गये साधनों को पुनर्स्थापित किया जा सके ख) सामाजिक आवश्यकताओं की वृद्धि के अनुकूल ही विभाग १ और २ की उत्पादन परिसम्पत्ति में वृद्धि हो सके (यानी उत्पादन के पैमाने में वृद्धि के लिए उत्पादन के आवश्यक साधनों का संचय हो सके) और ग) उत्पादन परिसम्पत्ति के सामाजिक तौर पर आवश्यक भंडार और सुरक्षित कोष बन सकें।

द्वितीय विभाग २ (जो उपभोक्ता वस्तुओं को उत्पन्न करता है) का वार्षिक उत्पादन भौतिक रूप एवं मूल्य की दृष्टि से इतना होना चाहिए कि क) दोनों विभागों के मजदूरों और उत्पादन में लगाये गये अतिरिक्त मजदूरों को "प्रत्येक को उसके श्रम के अनुसार भुगतान" के सिद्धांत के अनुसार उपभोक्ता वस्तुएं प्राप्त हों ख) इसी सिद्धांत के अनुसार गैर उत्पादक क्षेत्रों (प्रशासन

शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाए, आदि) में लगे मजदूरों को उपभोक्ता वस्तुए मिल सकें और ग) सामाजिक तौर पर उपभोक्ता वस्तुओं के आवश्यक भंडार और सुरक्षित कोष बन सकें।

इन शर्तों के पूरा होने पर ही समग्र सामाजिक उत्पादन की निर्बाध विस्तारित पुनरुत्पत्ति हो सकती है।

उत्पादन के साधनों के उत्पादन की प्राथमिकता

समाजवादी विस्तारित पुनरुत्पादन के लिए सबसे आवश्यक शर्त यह है कि उत्पादन के साधनों के उत्पादन को उपभोक्ता वस्तुओं के उत्पादन की तुलना में प्राथमिकता दी जाय (यानी उत्पादन के साधनों का उत्पादन अपेक्षाकृत तेजी से हो)। उत्पादन के विस्तार के लिए आवश्यक है कि सर्वप्रथम उत्पादन के साधन उत्पन्न किये जायें और इनका उत्पादन इतनी मात्रा में हो कि उत्पादन के दौरान काम में लाये गये साधनों की कमी को ही पूरा न किया जा सके बल्कि राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की सभी शाखाओं में उत्पादन बढे।

लेनिन ने उपभोक्ता वस्तुओं के उत्पादन के ऊपर उत्पादन के साधनों के उत्पादन को प्राथमिकता देने की बात को विस्तारित पुनरुत्पादन का एक आर्थिक नियम बताया।

इस नियम को जरा हम अच्छी तरह देखें।

सामाजिक उत्पादन में विगत श्रम के हिस्से के बढने और जीवित श्रम के हिस्से के घटने के साथ समाज की उत्पादक शक्तियों का विकास और तकनीकी प्रगति साथ-साथ होती है। शारीरिक श्रम का स्थान मशीनी श्रम लेता जाता है। मशीनों से श्रम-उत्पादकता बढती है और फलस्वरूप उत्पादन की मात्रा और उत्पादन के पैमाने में वृद्धि होती है। उत्पादन के साधनों के विकास के कारण शारीरिक श्रम का स्थान मशीनी श्रम ले लेता है और मशीन उद्योग की आम प्रगति होती है।

तकनीकी प्रगति के आधार पर विस्तारित पुनरुत्पादन के लिए उत्पादन के साधनों का विकास आवश्यक है।

पूंजीवाद के विपरीत समाजवाद में पूंजीगत वस्तुओं के विकास की प्राथमिकता गुणात्मक रूप से भिन्न होती है। यह विकास अपने आप नहीं होता और न ही चक्रीय होता है। यह विकास जानबूझ कर किया जाता है। इस विकास का उद्देश्य पूंजीपतियों को समृद्ध करना नहीं है। यह विकास नियोजित होता है। इसके फलस्वरूप समस्त जनता का हित-साधन होता है।

समाजवाद की स्थापना के लिए उत्पादन के साधनों के विकास को प्राथमिकता देना आवश्यक है उपभोक्ता वस्तुओं के लिए लोगों की माग पूरा करने वाले खाद्य उद्योगों और कृषि का विकास तभी हो सकता है जब भारी उद्योग उन्हे विभिन्न प्रकार की मशीनें आवश्यक मात्रा म दें और विद्युत शक्ति और कच्चा माल प्रदान करें। सक्षेप म, अर्थव्यवस्था की इन शाखाओ म तकनीकी प्रगति का विस्तार आवश्यक है। उदाहरण के लिए, कपडे के उत्पादन को बढाने के लिए सर्वप्रथम अत्यन्त कुशल करघे और अन्य मशीनें आवश्यक हैं।

जब पूरे पैमाने पर कम्युनिस्ट निर्माण-कार्य होने लगता है उस समय भारी उद्योग अधिकाधिक मात्रा में प्रत्यक्षत उपभोक्ताओ की आवश्यकताओ की वस्तुए उत्पन्न करने लगते हैं। देश के आर्थिक विकास एव प्रतिरक्षा की आवश्यकताओं को पूरा करने के साथ ही भारी उद्योग पहले से अधिक मात्रा म फार्मों, हलके एव खाद्य उद्योगों तथा उपभोक्ता उत्पादन की अन्य शाखाओ को उत्पादन के साधन देते हैं। फलस्वरूप उपभोक्ता वस्तुओ के उत्पादन के क्षेत्र में भी विकास की दर बढाकर पूजीगत वस्तुओं के उत्पादन के विकास की दर के बराबर करना सम्भव हो जाता है।

इसका मतलब यह नही है कि उत्पादन के साधनों के उत्पादन के विकास की प्राथमिकता का नियम अब सही नही है। भारी उद्योग सदा ही समाजवादी आर्थिक विकास का आधार रहा है और अब भी है। भारी उद्योगो की बदौलत ही समाज उत्पादक शक्तियो के विकास, तकनीकी प्रगति और जीवन-यापन के स्तर म सुधार की दृष्टि से बहुत आगे बढा है।

२ राष्ट्रीय आय और समाजवाद के अन्तर्गत उसका वितरण

राष्ट्रीय आय

समाजवादी अर्थव्यवस्था म राष्ट्रीय आय समग्र सामाजिक उत्पादन का वह हिस्सा है जो काम म लाये गये उत्पादन के साधनों के मूल्य को पूरा करने के बाद बच जाता है। राष्ट्रीय आय म व्यय किया गया अतिरिक्त श्रम भी शामिल होता है।

अपने भौतिक या वस्तुगत रूप मे राष्ट्रीय आय के अन्तर्गत देश मे उत्पन्न नये उत्पादन के साधन और उपभोक्ता वस्तुए होती हैं। राष्ट्रीय आय का इस्तेमाल सचय, उत्पादन के विस्तार, जनसख्या के व्यक्तिगत उपभोग और अन्य गैर-उत्पादक उपभोगों के लिए होता है। चूकि समाजवाद के अन्तर्गत वस्तु उत्पादन होता है इसलिए राष्ट्रीय आय मूल्य के रूप म होती है और मुद्रा के द्वारा मापी जाती है।

समाजवादी समाज की राष्ट्रीय आय पूजीवादी समाज की राष्ट्रीय आय से बिल्कुल भिन्न होती है। उसका आर्थिक स्वरूप अलग होता है और उसके स्रोत भी भिन्न होते हैं। उसके वितरण के सिद्धान्त और इस्तेमाल के रूप अलग होते हैं।

पूजीवाद के अन्तर्गत राष्ट्रीय आय की प्राप्ति मेहनतकश जनता के शोषण द्वारा होती है और उसका इस्तेमाल शोषक वर्ग करते हैं। उसके बहुत बडे भाग का इस्तेमाल स्वय पूजीपति और भूस्वामी करते हैं। उसका सिर्फ एक छोटा-सा हिस्सा मेहनतकश जनता को मिल पाता है।

समाजवाद के अन्तर्गत शोषणमुक्त मेहनतकश जनता राष्ट्रीय आय का निर्माण करती है और वही उसकी स्वामी होती है। वहा राष्ट्रीय आय की निर्बाध और द्रुत प्राप्ति की सभी स्थितिया रहती हैं।

१९५४ से १९६१ के बीच सोवियत सघ की राष्ट्रीय आय में १३० प्रतिशत और प्रति व्यक्ति उत्पादन में ६५ प्रतिशत की वृद्धि हुई। १९८० तक सोवियत सघ की राष्ट्रीय आय में पाच गुनी वृद्धि हो जायगी और वह ७२ ००० या ७५ ००० करोड रूबल के पास पहुच जायगी।

समाजवाद के अन्तर्गत राष्ट्रीय आय की वृद्धि का मुख्य कारण श्रम उत्पादकता में वृद्धि है। विज्ञान और सस्कृति सचित अनुभव और मेहनतकश जनता के तकनीकी ज्ञान की वृद्धि का इस दृष्टि से बहुत महत्व है।

सोवियत सघ की राष्ट्रीय आय में अधिकाश वृद्धि श्रम-उत्पादकता के बढ़ने के फलस्वरूप होती है। राष्ट्रीय आय की वृद्धि में यह तत्व काफी महत्वपूर्ण है। १९६१ ८० के दौरान राष्ट्रीय आय की वृद्धि के ९/१० के लिए श्रम उत्पादकता की वृद्धि जिम्मेदार होगी। श्रम उत्पादकता जितनी ही अधिक होगी समग्र सामाजिक उत्पादन की मात्रा और फलस्वरूप राष्ट्रीय आय उतनी ही अधिक होगी।

समाजवादी समाज में राष्ट्रीय आय की वृद्धि भौतिक उत्पादन के क्षेत्र में लगे लोगों की सख्या में वृद्धि के कारण भी होती है।

साथ ही विज्ञान सार्वजनिक स्वास्थ्य और सस्कृति के क्षेत्र में काम करने वाले लोगों की सख्या में भी वृद्धि होती है। १९६१ ८० के दौरान इन क्षेत्रों में लगे लोगों की सख्या ४० प्रतिशत बढ जायगी।

समाजवादी अर्थव्यवस्था में समाज की मानव शक्ति का अत्यन्त कुशलता-पूर्वक इस्तेमाल होता है, क्योंकि समाजवाद के अन्तर्गत बेरोजगारी के खत्म हो जाने के कारण समाज की जरूरतों को ध्यान में रखकर श्रम-शक्ति का नियोजित इस्तेमाल सम्भव हो जाता है।

अन्त मे, उत्पादन के साधनों की मितव्ययिता के कारण भी राष्ट्रीय आय बढती है। प्रति इकाई उत्पादन, ईधन कच्चे माल और अन्य सामानो के व्यय को घटाने और उपलब्ध मशीनो तथा उत्पादन के क्षेत्र के कुशलतापूर्वक उपयोग के द्वारा उत्पादन की मात्रा बढती है तथा राष्ट्रीय आय म इसी के अनुकूल वद्धि होती है।

राष्ट्रीय आय का वितरण

समाजवाद के अन्तगत राष्ट्रीय आय का वितरण समाजवादी पुनरुत्पादन के प्रसार और जन कल्याण म वद्धि के उद्दश्य स नियोजित ढग से होता है।

राष्ट्रीय आय के दो भाग होते हैं। पहले हिस्से को आवश्यक उत्पादन या अपने लिए उत्पादन कहते हैं। भौतिक उत्पादन म लगे लोगो के बीच इसका वितरण श्रम की मात्रा और कोटि के अनुसार होता है। यह उत्पादन राजकीय उद्यमो म औद्योगिक और अन्य कमचारियो की मजूरी तथा सामूहिक फार्मों मे वस्तु और मौद्रिक भुगतान के रूप म होता है।

राष्ट्रीय उत्पादन के दूसरे हिस्से का इस्तेमाल उत्पादन के विस्तार, भडार के निर्माण, सास्कृतिक और कल्याणकारी उद्देश्यो की पूर्ति सावजनिक उपभोग भडार के निर्माण तथा अन्य सामाजिक आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए होता है।

समाजवादी राज्य शहरी क्षेत्र मे समाजवादी उत्पादन के विस्तार और समाज की आवश्यकताओ की सतुष्टि के लिए बजट के जरिए राष्ट्रीय आय का पुनर्वितरण करता है। गैर उत्पादक क्षेत्र म काम करने वाले लोग राष्ट्रीय आय के पुनर्वितरण द्वारा अपने काम के लिए पारिश्रमिक प्राप्त करते हैं।

समाजवादी समाज की सम्पूर्ण राष्ट्रीय आय को दो भागो उपभोग भडार और सचय भडार के रूप मे बाटा जा सकता है।

उपभोग भडार राष्ट्रीय आय का वह हिस्सा है जिसका इस्तेमाल जनता के लिए खाद्य पदार्थो वस्त्र जूता, घरेलू वस्तुओ और सास्कृतिक आवश्यकता की वस्तुओ एव सावजनिक आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए होता है। सोवियत सघ म राष्ट्रीय आय का ७५ प्रतिशत इसी तरह इस्तेमाल होता है।

उपभोग भडार का निमाण आवश्यक श्रम द्वारा उत्पन्न वस्तुओ और अधिशेष उत्पादन के उस हिस्से से होता है जिसका इस्तेमाल सामाजिक सास्कृतिक और अन्य सावजनिक जरूरतो की पूर्ति के लिए होता है।

समाजवाद के अन्तगत उपभोग भडार को दो भागो मे बाटा जा सकता है। यह विभाजन उसके इस्तेमाल की दृष्टि से होगा। उपभोग भडार के एक हिस्से का इस्तेमाल भौतिक उत्पादन मे सलग्न लोगो को मजूरी देने और दूसरे भाग का इस्तेमाल सावजनिक उपभोग के लिए होता है। सावजनिक उपभोग भडार का

उपयोग सामाजिक एव सास्कृतिक आवश्यकताओ (यानी विनान सावजनिक शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा कला, इत्यादि की आवश्यकताओ) की सतुष्टि, सामाजिक सुरक्षा (बडे परिवारो की माताओ और अविवाहित माताओ की सहायता, पेंशन, इत्यादि) तथा प्रशासन और प्रतिरक्षा (राजकीय यत्र, सशस्त्र सेना, इत्यादि की देखभाल) के लिए होना है। जन-कल्याण को बढान की दृष्टि से सावजनिक उपभोग भडार का काफी महत्व है। सोवियत जनता के उपभोग के अधिकाधिक हिस्से की व्यवस्था सावजनिक भडार से होती है।

सचय कोष (या भडार) का निर्माण अधिशेष उत्पादन से होता है। भौतिक दृष्टि से इस भडार म मुख्यत विभाग १ के उत्पादन होते हैं। विभाग २ के उत्पादन का एक निश्चित भाग भी सचित किया जाता है। यह उत्पादन भडार उत्पादन म लग लोगो के बीच वितरण हेतु सचित उपभोक्ता वस्तुओं इत्यादि के रूप म होता है। सचय भडार म मौद्रिक दृष्टि से राजकीय बजट, राज्य, सहकारी और सामूहिक फाम उद्यमो के सचित साधन होते हैं। राष्ट्रीय आय का लगभग २५ प्रतिशत सचय भडार म शामिल होता है।

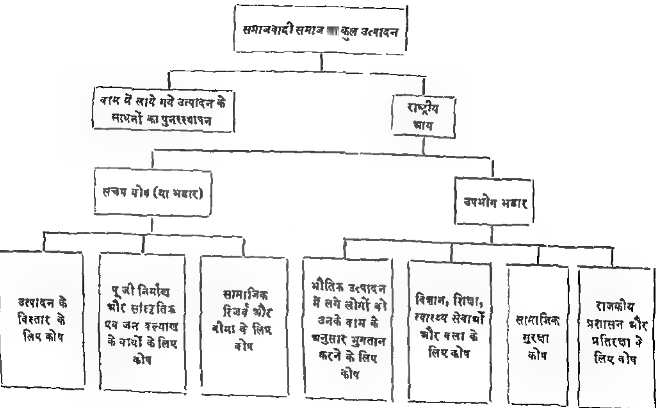
इस्तेमाल की दृष्टि से सचय भडार को तीन भागो म बाटा जा सकता है। एक भाग का इस्तेमाल उत्पादन के विस्तार दूसरे हिस्से का उपयोग सास्कृतिक और कल्याणकारी उद्देश्यों (स्कूलो अस्पतालों आवास इत्यादि के निमाण और सचालन) की पूर्ति तथा तीसरे भाग का इस्तेमाल आरक्षित या बीमा कोष के निमाण के लिए होना है।

समग्र सामाजिक उत्पादन और राष्ट्रीय आय के वितरण को हम पृष्ठ ३२४ पर दी गयी स्कीम से स्पष्ट कर सकते हैं।

समाजवाद के अन्तगत उत्पादन और उपभोग, या उपभोग और सचय के बीच कोई विरोध नहीं रहता। समाजवादी समाज यह कोशिश करता है कि उपभोग और सचय के बीच ऐसा सतुलन स्थापित किया जाय जिसस विस्तारित पुनरुत्पादन का विकास तेजी स हो और समाजवादी समाज की जरूरतों को पूरी तरह सतुष्ट किया जा सके।

समाजवादी सचय

उपभोग और सचय के पारस्परिक सम्बध का निर्धारण राष्ट्रीय अथ व्यवस्था के नियोजित, सानुपातिक विकास के नियम के आधार पर समाजवादी निमाण के वतमान कार्यों को देखते हुए किया जाता है। उपभोग और सचय के पारस्परिक अनुपात अपरिवतनशील नहीं होते। वे परिवर्तित होते रहते हैं और प्रत्येक अवधि विशेष के लिए उनका निर्धारण होता है।


समाजवादी समाज कुल उत्पादन
काम में लाये गये उत्पादन के साधनों का पुनरस्थापन
राष्ट्रीय आय
संचय कोष (या भंडार)
उपभोग भंडार
उत्पादन के विस्तार के लिए कोष
पूंजी निर्माण और सांस्कृतिक एवं जन कल्याण के कार्यों के लिए कोष
सामाजिक रिजर्व और बीमा के लिए कोष
भौतिक उत्पादन में लगे लोगों को उनके काम के अनुसार भुगतान करने के लिए कोष
विज्ञान, शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाओं और कला के लिए कोष
सामाजिक सुरक्षा कोष
राजकीय प्रशासन और प्रतिरक्षा के लिए कोष

समाजवादी सचय विस्तारित समाजवादी पुनरुत्पादन का स्रोत है। समाजवादी सचय के परिणामस्वरूप समाज के धन मे निरतर वृद्धि होती है। अधिशेष उत्पादन के एक भाग का इस्तेमाल उत्पादन के निर्बाध विस्तार के लिए होता है। अधिशेष उत्पादन के इस हिस्से के द्वारा उत्पादक और गैर उत्पादक कोषो का निर्माण होता है। समाजवादी सचय के फलस्वरूप ये कोष बढते हैं। इन सबका उद्देश्य जन कल्याण को बढाना होता है।

राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था मे पूजी विनियोग हर वर्ष बढता जाता है। इसी के फलस्वरूप समाजवादी सचय होता है। उदाहरण के लिए सोवियत सघ मे प्रथम पचवर्षीय योजना के दौरान कुल राजकीय पूजी विनियोग ६७,००० लाख रूबल था जो पाचवी पचवर्षीय योजना के दौरान (१९५१ ५५) ६ ७२ ००० लाख रूबल हो गया। सप्तवर्षीय योजना (१९५९ ६५) के दौरान पूजी विनियोग २० हजार करोड रूबल हुआ।

३ समाजवाद के अन्तर्गत वित्त और साख व्यवस्था

समाजवादी पुनरुत्पादन की दृष्टि से वित्त और साख का बहुत महत्व है। वित्त और साख व्यवस्था द्वारा सामाजिक उत्पादन का उत्पादन वितरण विनिमय, सचय और उपभोग होता है। सामाजिक उत्पादन (राष्ट्रीय आय) के अधिकाश के वितरण और इस्तेमाल के लिए वित्त और साख की जरूरत होती है। वित्त और साख द्वारा समाजवादी राज्य प्रत्येक उद्यम की आर्थिक क्रियाओ को प्रभावित करता है और साधनो के सुरक्षित भडार का पूर्णतम उपयोग करता है। इसके द्वारा ही उपलब्ध साधनो का मितव्ययितापूर्ण उपयोग हो पाता है।

राजकीय बजट

राष्ट्रीय आय का निर्माण जैसा कि हम जानते है, भौतिक उत्पादन के क्षेत्र मे (समाजवादी उद्यमो मे) होता है। इसका एक महत्वपूर्ण भाग सचय भडार के निर्माण के लिए उपयोग मे लाया जाता है (यानी उत्पादन के विस्तार के लिए काम मे लाया जाता है)।

किन्तु अगर उद्यम अपने-आप राष्ट्रीय आय के इस हिस्से का इस्तेमाल अपने उत्पादन के विस्तार के लिए करें तो अलग अलग उद्यमो और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की शाखाओं के बीच सही सतुलन बनाये रखना मुश्किल होगा। इसीलिए समाजवादी अर्थव्यवस्था मे एक केन्द्रीय सचय भडार का निर्माण किया जाता है। इस सचय भडार का इस्तेमाल पूजीगत निर्माण और पुनर्निर्माण एव तत्कालीन उद्यमो के विस्तार के लिए किया जाता है।

केन्द्रीय सचय भडार राजकीय बजट म शामिल होना है। यह समाजवादी राज्य की वित्तीय व्यवस्था म एक महत्वपूण कडी होता है। राजकीय बजट देश की बुनियादी वित्तीय योजना है। इसके द्वारा राष्ट्रीय आय के एक बडे हिस्से को एक जगह इक्ट्ठा किया जाता है और उसका इस्तेमाल सामाजिक आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए होता है। इसका निर्माण हर साल चालू आर्थिक योजना के अनुसार हाता है।

राजकीय बजट को दो भागो आय (राजस्व) और व्यय म बाटा जाता है।

राजकीय बजट के आय पक्ष म समाजवादी उद्यमो स प्राप्त आमदनी शामिल की जाती है। इस आमदनी म आवर्त्त कर, राजकीय उद्यमो और आर्थिक सगठनो के मुनाफे का हिस्सा सहकारी सगठनो और सामूहिक फार्मों से प्राप्त आय कर की राशि लकडी स प्राप्त आय[1] इत्यादि शामिल होते हैं। आय का ९/१० भाग समाजवादी उद्यमा से आता है। सामाजिक बीमा कोष भी राजकीय बजट के आय पक्ष म शामिल होता है, क्योकि राजकीय सगठन और उद्यम इस कोष म मजूरी के बिल के आधार पर निर्धारित विशेष हिस्से के रूप मे एक निश्चित पमाने पर अपना योगदान करते है।

सोवियत राजकीय बजट की एक खास विशेपता यह है कि जनता से सीधे प्राप्त आय का राजकीय आय मे बहुत कम हिस्सा होता है। १९६५ मे सोवियत सघ की आय का सिफ ७ २ प्रतिशत जनता स कर के रूप म प्राप्त हुआ था।

राजकीय बजट के व्यय पक्ष मे राष्ट्रीय अथव्यवस्था सामाजिक और सास्कृतिक कायक्रमा राजकीय प्रशासन के विभागा के सचालन पर होने वाले व्यय तथा देश की प्रतिरक्षा पर हाने वाला खच शामिल होते हैं।

सोवियत सघ के राजकीय बजट के राजस्व का अधिकाश (७५ प्रतिशत तक) राष्ट्रीय अथव्यवस्था और सामाजिक एव सास्कृतिक कायक्रमो पर खच होता है। राजकीय यत्र पर होने वाला खच आनुपातिक दृष्टि स कम होता जा रहा है।

सोवियत सघ निरन्तर शान्ति की नीति पर चल रहा है। इसीलिए बजट का अपेक्षाकृत कम हिस्सा प्रतिरक्षा व्यय के रूप मे होता है।

---

१ लकडी से प्राप्त आय में पेड़ों की बिक्री वन उद्यान से (सस्थाओं एव व्यक्ति विशेष के हाथों नये पेड़ों एव बीज की बिक्री से) प्राप्त आय, आदि शामिल होती है। राजकीय जगलों मे प्राप्त आय का आधा भाग सघीय बजट और शेष स्थानीय बजट में शामिल होता है।

समाजवादी ममाज मे राजकीय बजट सम्पूण राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के विकास के आधार पर सदा व्यवस्थित रूप स बढता जाता है। सोवियत सघ म राजस्व का व्यय की तुलना मे अधिक महत्व होना है।

मोवियत सत्ता के प्रत्येक अग (सोवियत सघ की सुप्रीम सोवियत से लेकर ग्राम सोवियत तक) का अपना अलग बजट होता है। फलस्वरूप राजकीय योज नाओ के कार्यान्वयन के दौरान स्थानीय परिस्थितिया पर हर क्षेत्र म ध्यान दिया जाता है।

समाजवाद के अन्तगत साख और बक व्यवस्था

समाजवाद के अ तगत साख अस्थायी तौर पर बकार पडे मौद्रिक साधनो को काम म लगाने का एक रूप है और राजकीय अथव्यवस्था की आवश्यकताओ को पूरा करने के लिए वेकार पडे साधनो का नियोजित इस्तेमाल साख की व्यवस्था क द्वारा होता है।

साख का समाजवादी उद्यमो के साधना क आवत्त के साथ घनिष्ठ सम्बध है। इस आवत्त के दौरान उद्यमो के पास अस्थायी रूप स बेकार साधन रहते हैं। इसका कारण यह है कि उत्पादन की बिक्री स प्राप्त मुद्रा राशि का तत्काल उत्पादन की जरूरता पर व्यय नही होना। उत्पादन को बचकर उद्यम और आर्थिक सगठन स्टेट बक म अपने खातो म मुद्रा राशि जमा करते हैं। इस मुद्रा राशि की आवश्यकता कुछ समय बाद व्यय के लिए पडती है। महनतकश जनता की आय म वद्धि होने के कारण भी अस्थायी तौर पर उसक बचत खाते म जमा राशि बढ जाती है।

कुछ उद्यमा और आर्थिक सगठनो क पास मुद्रा राशि बेकार पडी रह सकती है और कुछ अन्य लोगा का अतिरिक्त मुद्रा राशि की जरूरत पड सकती है। उनको कच्चे माल की खरीद उत्पादन भडार के निर्माण, उत्पादन और परि वहन इत्यादि पर व्यय के लिए मुद्रा राशि की आवश्यकता हा सकती है।

बको मे राष्ट्रीय अथव्यवस्था के अ तगत अस्थायी तौर पर बेकार पडे सभी मौद्रिक साधन जमा रहत हैं। इन्ही म मे बक जरूरतमद आर्थिक सगठना और उद्यमा को ऋण देते है।

साख अल्पकालीन या दीघकालीन हाते हैं।

अल्पकालीन साख साधारणतया एक वप स कम की अवधि के लिए दिये जाते हैं। सोवियत सघ म स्टेट बक अल्पकालीन साख का मुख्य केन्द्र है। अल्प-कालीन साख उद्यमो और आर्थिक सगठना को परिचलन के अतिरिक्त साधनो की अस्थायी जरूरता का पूरा करने के लिए दिया जाता है।

दीर्घकालीन साख लम्बी अवधि के लिए दिया जाता है। इसका इस्तेमाल मुख्यतया पूंजीगत निर्माण के लिए होता है। आजकल दीर्घकालीन साख आल यूनियन बैंक फार फाइनेंसिंग कैपिटल इन्वेस्टमेंटस (ही यू एस एस आर स्त्रोईबैंक) द्वारा लिया जाता है। दीर्घकालीन साख पूंजीगत निर्माण कार्यक्रमों, मवेशियों की नस्ल के विकास, निजी आवास निर्माण उपभोक्ता वस्तुओं का उत्पादन बढ़ाने, कल्याण सेवाओं में प्रसार आदि के लिए दिया जाता है। स्टेट बैंक भी राजकीय उद्यमों में पूंजी विनियोग के लिए साख की व्यवस्था करता है। वह पूंजी विनियोगों के लिए ऋण देता है। यह ऋण अल्पावधि में चुका दिया जाता है। यह ऋण नये तकनीक को व्यवहार में लाने और उपभोक्ता वस्तुओं के उत्पादन के संगठन और विस्तार के लिए दिया जाता है। सोवियत संघ का स्टेट बैंक विदेशी राज्यों, मुख्यत जनवादी जनतन्त्रों को अनुकूल एवं पारस्परिक लाभ की दृष्टि से अच्छी शर्तों पर दीर्घकालीन ऋण देता है।

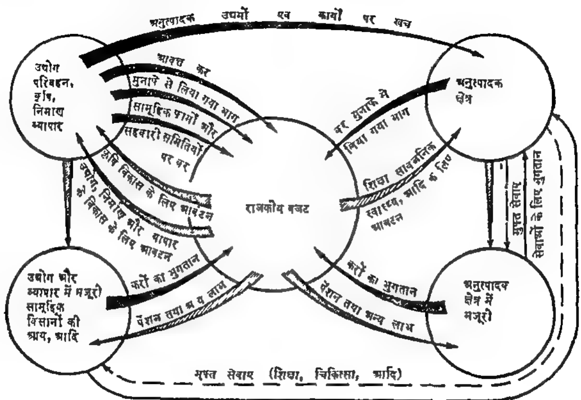
ऋण देने वाली संस्थाएं ऋण राशि पर एक निश्चित ब्याज लेती हैं और जमा राशि पर एक निश्चित ब्याज देती हैं। ब्याज की प्राप्त राशि और भुगतान की गयी राशि का अन्तर बैंक का मुनाफा होता है। बैंक का मुनाफा समाज की शुद्ध आय का एक हिस्सा होता है।

समाजवाद के अन्तर्गत साख द्वारा उद्यमों को अपने साधनों के कुशल प्रयोग में प्रोत्साहन मिलता है। इससे समाजवादी उत्पादन और लाभप्रदता बढ़ती है।

समाजवादी अर्थव्यवस्था की विभिन्न शाखाओं और उद्यमों के बीच अस्थायी तौर पर बेकार पड़े साधनों का अत्यन्त विकसित साख और बैंक व्यवस्था के द्वारा पुनर्वितरण होता है।

सोवियत साख और बैंक व्यवस्था के अन्तर्गत १) स्टेट बैंक २) दी आल यूनियन बैंक फार फाइनेंसिंग कैपिटल इन्वेस्मेंटस और ३) राजकीय बचत बैंक शामिल हैं।

इस व्यवस्था में स्टेट बैंक का प्रमुख स्थान है। वह राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को अल्पकालीन साख प्रदान करता है। स्टेट बैंक के द्वारा लेन देन होता है और भुगतान किये जाते हैं। राजकीय आय इसी के जरिए प्राप्त होती है और इसके ही द्वारा आर्थिक संगठनों और उद्यमों तथा जनता एवं संगठनों या संस्थाओं के आपसी लेन देन होते हैं। स्टेट बैंक करेंसी जारी करने वाली एकमात्र संस्था है। परिचलन में मुद्रा राशि भेजने और मुद्रा के परिचलन के नियोजन एवं नियमन के लिए वह उत्तरदायी है। अन्त में, देश में स्टेट बैंक ही एक संस्था है जिसके पास विदेशी मुद्रा का भंडार रहता है और जो सभी अन्तर्राष्ट्रीय लेन देन की व्यवस्था करती है।



अनुत्पादक उद्यमों एवं कार्यों पर खर्च
उद्योग परिवहन, कृषि, निर्माण व्यापार
आवर्त कर
मुनाफे से लिया गया भाग
सामूहिक फार्मों और सहकारी समितियों पर कर
कृषि विकास के लिए आवंटन
उद्योग, निर्माण और व्यापार के विकास के लिए आवंटन
राजकोषीय बजट
अनुत्पादक क्षेत्र
कर मुनाफे से लिया गया भाग
शिक्षा सार्वजनिक स्वास्थ्य, आदि के लिए आवंटन
उद्योग और व्यापार में मजूरी सामूहिक किसानों की आय, आदि
करों का भुगतान
पेंशन तथा अन्य लाभ
अनुत्पादक क्षेत्र में मजूरी
मुफ्त सेवाएं
सेवाओं के लिए भुगतान
मुफ्त सेवाएं (शिक्षा, चिकित्सा, आदि)
सेवाओं (थियेटर, नाइयों की दुकानों और नाइयों आदि) के लिए भुगतान

सोवियत संघ का स्टेट बैंक दुनिया का सबसे बड़ा बैंक है। इसकी करीब ६००० शाखाएं (संघीय, राष्ट्रीय, प्रादेशिक और शहरी कार्यालय, जिला शाखाएं और स्थानीय म्युनिसिपल बैंक) हैं। इनके द्वारा लेन देन और साख परिचालन की व्यवस्था बहुत बड़े पैमाने पर होती है।

वी आल यूनियन बैंक फार फाइनेंसिंग कैपिटल इन्वेस्टमेंट्स विभिन्न उद्यमों का पूंजीगत निर्माण के लिए वित्तीय साधन और दीर्घकालीन ऋण प्रदान करता है। यह इमारत बनाने वाले संगठनों को अल्पकालीन ऋण देता है साथ ही ग्राहकों और ठेकेदारों में आपसी लेन देन की व्यवस्था करता है।

स्टेट बैंक की तरह ही वी यू एस एस आर स्त्रोईबैंक निर्माण कार्य की योजना की पूर्ति, साधनों के उचित उपयोग और निर्माण लागत में कमी के लिए प्रयत्नशील रहता है।

सोवियत संघ का फारेन ट्रेड बैंक सोवियत संघ के विदेश व्यापार के लिए साख का प्रबन्ध करता है और करेन्सी सम्बन्धी कार्य करता है। यह आयात-निर्यात एवं सेवाओं के अतिरिक्त अन्य कार्यों के लिए भी भुगतान सम्बन्धी हिसाब-किताब करता है। यह सोवियत संघ एवं अन्य देशों के बीच व्यावसायिक एवं अन्य आर्थिक सम्बन्धों को बढ़ाता है तथा वस्तुओं के आयात निर्यात से सम्बद्ध घरेलू व्यापार एवं उद्योगों को विकसित करता है।

बचत बैंक भी साख संस्थाएं हैं। उनमें जनता सामूहिक फार्म और गैर-सरकारी संस्थाएं अपनी बचत राशि जमा करते हैं। वे राजकीय ऋण की व्यवस्था और साखपत्रों एवं अन्य मौद्रिक व्यवस्थाओं द्वारा जनता की सेवा करते हैं।

समाजवादी समाज में महत्तत्वपूर्ण जनता द्वारा बचत बैंकों में जमा की गयी मुद्रा राशि (जिसका वह तत्काल इस्तेमाल नहीं करती है) का उपयोग समाजवादी निर्माण के लिए वित्तीय साधन प्रदान करने के वास्ते होता है। बचत बैंक जमा कर्ताओं को उनकी बचत के उपयोग के लिए ब्याज देते हैं।

समाजवादी समाज में लोगों के भौतिक कल्याण में निरन्तर वृद्धि के फलस्वरूप काफी बचत होती है। उदाहरण के लिए, १९६४ में बचत बैंकों में जनता द्वारा जमा की गयी कुल मुद्रा राशि १ ५७,००० लाख रूबल थी जबकि १९४० में जमा की गयी कुल मुद्रा राशि सिर्फ ७,००० लाख रूबल थी।

अध्याय १७

विश्व समाजवादी व्यवस्था

१ विश्व समाजवादी व्यवस्था का उदय और विकास

रूस की महान अक्तूबर समाजवादी क्रान्ति ने पूंजीवाद के अखण्ड राज्य को खत्म कर दिया।

मानव इतिहास मे एक नया युग, पूंजीवाद के पतन का युग शुरू हुआ। अब पूंजीवादी आर्थिक व्यवस्था एकमात्र सर्वव्यापी व्यवस्था नही रही। समाजवादी आर्थिक व्यवस्था का उदय हुआ और वह भी उसके साथ विकसित होने लगी।

सोवियत संघ मे समाजवादी आर्थिक व्यवस्था के उदय का बहुत बडा अन्तर्राष्ट्रीय महत्व था। उसने विश्व विकास की धारा को निश्चित तौर पर प्रभावित किया है।

कतिपय यूरोपीय एवं एशियाई देशो की समाजवादी क्रान्तियो ने रूस की महान अक्तूबर समाजवादी क्रान्ति की परम्परा को आगे बढाया। द्वितीय विश्वयुद्ध मे सोवियत संघ की जीत का इन देशो मे समाजवाद की विजय के लिए निर्णायक महत्व था।

समाजवादी क्रान्तियो की विजय के कारण कई देश पूंजीवादी व्यवस्था से टूटकर अलग हो गये। फलस्वरूप विश्व समाजवादी व्यवस्था का उदय हुआ। विश्व समाजवादी व्यवस्था का निर्माण वर्तमान युग मे समाज के प्रगतिशील विकास का मुख्य परिणाम है।

विश्व समाजवादी व्यवस्था पूंजीवादी व्यवस्था से अलग हुए राज्यो का समूह मात्र नही है बल्कि समाजवाद और कम्युनिज्म के रास्ते पर आगे बढने वाले स्वतंत्र सार्वभौम राष्ट्रो का सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक समूह है।

उनके बीच हितों और रूपों की समानता के कारण एकता होती है और वे अंतर्राष्ट्रीय समाजवादी एकता के सूत्र में घनिष्ठ रूप से आबद्ध होते हैं।

विश्व समाजवादी व्यवस्था के देश यूरोप, एशिया और लैटिन अमरीका (जहां क्यूबा के लोग सफलतापूर्वक समाजवाद का निर्माण कर रहे हैं) में फैले हुए हैं। कई अमीरी देश विकास के गैर पूंजीवादी मार्ग पर आगे बढ़ रहे हैं।

उत्पादन के साधनों पर समाज का सामूहिक स्वामित्व विश्व समाजवादी व्यवस्था का आर्थिक आधार है। सामाजिक स्वामित्व के दो रूप हैं राजकीय स्वामित्व और सहकारी स्वामित्व। सोवियत संघ और बहुसंख्यक जनवादी जनतंत्रों में समाजवादी स्वामित्व का ही बोलबाला है। विश्व समाजवादी व्यवस्था के सभी देशों में समाजवादी उत्पादन के विकास का मुख्य उद्देश्य जनता की भौतिक और सांस्कृतिक आवश्यकताओं की अधिकाधिक पूर्ति करना है।

जनवादित का मजदूर वर्ग द्वारा नेतृत्व विश्व समाजवादी व्यवस्था का राजनीतिक आधार है। सभी समाजवादी देशों में कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियां ही नेतृत्व और मार्ग-दर्शन करती हैं।

सभी समाजवादी देशों का एक ही उद्देश्य है—अपनी क्रांतिकारी उपलब्धियों और स्वतंत्रता को साम्राज्यवादियों की क्रूर दृष्टि से रक्षा करना।

विश्व समाजवादी व्यवस्था की एक ही विचारधारा है—मार्क्सवाद लेनिनवाद।

विश्व समाजवादी और पूंजीवादी व्यवस्थाएं परस्पर विरोधी नियमों के अनुसार विकसित होती हैं। पूंजीवादी विश्व व्यवस्था का उदय और विकास उसके राज्यों के पारस्परिक संघर्ष के दौरान हुआ। इसमें से ताकतवर राज्यों ने कमजोर राज्यों को अधीन करने और गुलाम बनाने की कोशिश की। किन्तु विश्व समाजवादी व्यवस्था का उदय और विकास सार्वभौमिकता और स्वैच्छिक सहयोग के सिद्धान्त के आधार पर सभी समाजवादी देशों की मेहनतकश जनता के बुनियादी हितों के अनुकूल होता है।

असम आर्थिक और राजनीतिक विकास का नियम विश्व पूंजीवादी व्यवस्था की एक खास विशेषता है। इस नियम के फलस्वरूप राज्यों के बीच टकराव होते हैं। किन्तु विश्व समाजवादी व्यवस्था के नियम बिल्कुल भिन्न होते हैं। इन नियमों के फलस्वरूप सभी सदस्य राष्ट्रों की अर्थव्यवस्थाओं का निरंतर नियोजित विकास होता है। इस तरह सम्पूर्ण विश्व समाजवादी व्यवस्था का चतुर्दिक विकास होता है और वह शक्तिशाली बनती जाती है।

विश्व पूंजीवादी व्यवस्था मंद गति से विकसित होती है। उसे संकटों और उतार चढ़ाव का सामना करना पड़ता है। विश्व समाजवादी व्यवस्था निरंतर

द्रुत गति से आगे बढ़ती है। सभी समाजवादी देशों की अर्थव्यवस्थाओं की प्रगति समान रूप से निरन्तर होती रहती है।

समाजवादी देशों में जनशक्ति का स्थायित्व सिद्ध हो चुका है। जनवादी जनतंत्रों की अर्थव्यवस्थाओं में सर्वप्रमुख भूमिका उत्पादन के समाजवादी सम्बंधों की है।

जनवादी जनतंत्र जिनमें से बहुतेरे पहले पिछड़े हुए थे, अब उन्नत समाजवादी राज्य बन गये हैं। बहुत कम समय में उन्होंने अपने पिछड़ेपन पर विजय प्राप्त कर ली और एक आधुनिक उद्योग खड़ा कर लिया।

समाजवादी देशों की नियोजित अर्थव्यवस्था पूंजीवादी राज्यों की अर्थव्यवस्था की अपेक्षा अधिक दर्जों के साथ विकसित होती है।

युद्ध-पूर्व के उत्पादन की तुलना में समाजवादी देशों का औद्योगिक उत्पादन १९६३ में करीब = गुना अधिक था। सोवियत संघ का औद्योगिक उत्पादन युद्ध पूर्व के उत्पादन की तुलना में १९६३ में ६ ८ गुना अधिक था। पोलैंड का औद्योगिक उत्पादन ८ ६ गुना बढ़ा। चेकोस्लोवाकिया जर्मन जनवादी जनतंत्र हंगरी रूमानिया, बुल्गारिया और मंगोलिया जनवादी जनतंत्र में उत्पादन क्रमशः ४ ६ ३ ८ ५ ४ ७ ४ १७ और ११ १ गुना बढ़ा।

जनवादी जनतंत्रों में समाजवादी निर्माण की अत्यन्त कठिन समस्या (छोटी और व्यक्तिगत कृषि से किसानों की स्वेच्छापूर्वक बड़े पैमाने की यन्त्रीकृत खेती की ओर प्रवृत्त करना) का समाधान या तो हो चुका है या सफलतापूर्वक हो रहा है। इस तरह समाजवादी उत्पादन सम्बन्धों की कामयाबी के फलस्वरूप मजदूरों और किसानों के बीच अटूट बंधुत्वपूर्ण सहयोग न सिर्फ गांवों में बल्कि शहरों में भी स्थापित हुआ है। आज समाजवादी देशों में ९० प्रतिशत जोत लायक जमीन समाजवादी क्षेत्र के अन्तर्गत आ चुकी है।

समाजवादी देशों की अत्यन्त विकसित अर्थव्यवस्था के कारण आम जनता के भौतिक और सांस्कृतिक स्तर ऊंचे उठे हैं। समाजवादी देशों में राष्ट्रीय आय तेजी से बढ़ रही है। इस आय के तकरीबन तीन चौथाई का इस्तेमाल मेहनतकश जनता की बढ़ती हुई आवश्यकताओं की संतुष्टि के लिए किया जाता है।

विश्व समाजवादी व्यवस्था ने विकास के एक नये चरण में प्रवेश किया है। सोवियत संघ बड़े पैमाने पर कम्युनिस्ट समाज का निर्माण कर रहा है और तेजी से कम्युनिज्म का भौतिक और तकनीकी आधार बना रहा है। समाजवादी शिविर के अन्य देश सफलतापूर्वक समाजवाद की बुनियाद डाल रहे हैं। कुछ देशों ने पूर्ण विकसित समाजवादी समाज का निर्माण कार्य शुरू कर दिया है।

विश्व समाजवादी व्यवस्था मानव समाज के विकास में निर्णायक तत्व बन रही है। हमारे युग में विश्व विकास के मुख्य तत्व, प्रवृत्ति एवं लक्षणों का निर्धारण विश्व समाजवादी व्यवस्था, साम्राज्यवाद के विरुद्ध संघर्षरत शक्तियाँ और समाज के समाजवादी पुनर्निर्माण की शक्तियाँ करती हैं।

विश्व समाजवादी व्यवस्था विश्व क्रांतिकारी प्रक्रिया में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही है। इसका सबूत यह है कि समाजवादी देशों की मेहनतकश जनता उत्पीड़न और शोषण से रहित एक नये समाज की रचना कर रही है। वह समाजवाद और कम्युनिज्म का भौतिक एवं तकनीकी आधार निर्मित कर सामाजिक कार्यकलाप के निर्णायक क्षेत्र—भौतिक उत्पादन के क्षेत्र में साम्राज्यवाद को सदा के लिए रास्ता कर रही है। जब पूँजीवादी देशों की मेहनतकश जनता समाजवादी राज्यों में आर्थिक निर्माण कार्य की सफलता, जीवन यापन के स्तर में सुधार, जनतंत्र का विकास और सरकार चलाने में आम जनता का बढ़ता हुआ सहयोग देखेगी तब महसूस करेगी कि मेहनतकश जनता की आवश्यकताओं को पूर्ण रूप से समाजवाद और कम्युनिज्म ही संतुष्ट कर सकता है। इस तरह जनता में क्रांतिकारी विचार फैलते हैं और पूँजीवादी उत्पीड़न के खिलाफ सामाजिक और राष्ट्रीय मुक्ति के लिए सक्रिय संघर्ष करने के लिए प्रोत्साहन मिलता है।

समय के साथ साथ साम्राज्यवाद की आक्रामक कारवाइयों की विरोधी शक्ति के रूप में समाजवादी राज्यों की भूमिका बढ़ गयी है। अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिक्रियावाद और आक्रमण की मुख्य शक्तियों की लगाम लगाने में सोवियत संघ एवं सम्पूर्ण समाजवादी राष्ट्र जितना ही समर्थ होते जाते हैं उपनिवेशों की जनता को साम्राज्यवाद और घरेलू प्रतिक्रियावाद के विरुद्ध लड़ने के लिए उतने ही अनुकूल अवसर मिलते जाते हैं। पूँजीवादी देशों में क्रांतिकारी संघर्षों की सफलता, राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन की विजय और विश्व समाजवादी व्यवस्था की शक्ति के बीच बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध है।

विश्व समाजवादी व्यवस्था का निर्माण और उसकी बढ़ती हुई एकता और मैत्री एक नये प्रकार के अन्तर्राष्ट्रीय और राजनीतिक सम्बन्धों के सूचक हैं।

२ विश्व समाजवादी व्यवस्था के देशों के बीच पारस्परिक आर्थिक सम्बन्धों के आधार के रूप में सहयोग और आपसी सहायता

विश्व समाजवादी व्यवस्था के देश अत्यन्त प्रगतिशील राजनीतिक, आर्थिक और सैद्धांतिक आधार पर एकजुट हैं। इसके फलस्वरूप एक नये प्रकार के आर्थिक और राजनीतिक सम्बन्ध राष्ट्रों के बीच पनपे हैं। ये सम्बन्ध इतिहास

की दृष्टि से सर्वथा नवीन हैं। समाजवादी देशों के पारस्परिक सम्बंध पूर्ण समानता, प्रादेशिक अखण्डता, राजकीय स्वतंत्रता और सार्वभौमिकता एवं आन्तरिक मामलों में अहस्तक्षेप के सिद्धान्तों पर आधारित हैं। समाजवादी देशों के पारस्परिक सम्बंधों की एक अभिन्न विशेषता मैत्रीपूर्ण पारस्परिक सहायता है। यह सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयतावाद का ही एक रूप है।

नये प्रकार के आर्थिक और राजनीतिक सम्बंध

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम में बताया गया है कि 'सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयतावाद के आधार पर विश्व समाजवादी व्यवस्था की एकता को दृढ़ करना सदस्य देशों के भावी विकास के लिए अत्यन्त जरूरी है।'[1]

लेनिन ने १९१३ में ही लिखा था पुरानी दुनिया—राष्ट्रीय उत्पीड़न राष्ट्रीय कटुता और राष्ट्रीय अलगाव की दुनिया—के मुकाबले मजदूर एक नयी दुनिया—सब राष्ट्रों की मेहनतकश जनता की एकता की दुनिया—प्रस्तुत करते हैं जहां किसी प्रकार की अनुचित सुविधा या मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण के लिए बिल्कुल स्थान नहीं है।[2] विश्व समाजवादी व्यवस्था ऐसी ही दुनिया है जहां मेहनतकश जनता के बीच एकता है और समाजवादी देशों में बन्धुत्वपूर्ण पारस्परिक सहयोग है।

प्रत्येक समाजवादी देश (छोटा हो या बड़ा) को अन्य समाजवादी देशों का पूर्ण सहयोग अपेक्षित है। आज जब दुनिया दो व्यवस्थाओं के बीच बटी हुई है समाजवादी देशों का अस्तित्व और उनकी प्रगति समाजवादी शिविर की उपस्थिति के कारण ही सुरक्षित है। ये समाजवादी शिविर की आर्थिक शक्ति और राजनीतिक एकता पर निर्भर रह सकते हैं। मैत्रीपूर्ण बहुपक्षीय सहयोग द्वारा समाजवादी देश विश्व समाजवादी व्यवस्था से लाभ उठा रहे हैं और अपने देश की उत्पादक शक्तियों का विकास त्वरित कर रहे हैं। इस प्रकार सम्पूर्ण समाजवादी शिविर की आर्थिक ताकत भी मजबूत हो रही है।

नये प्रकार के आर्थिक और राजनीतिक सम्बंध एक स्वाभाविक घटना के रूप में आये हैं। इनका दृढ़ सामाजिक-आर्थिक एवं सैद्धांतिक आधार है। इन सम्बंधों का स्रोत समाजवादी व्यवस्था (यानी समाजवादी उत्पादन-सम्बंध) है। इस कारण आर्थिक विस्तार आधिपत्य और दासता के लिए समाजवादी देशों के आपसी सम्बंधों में कोई गुंजाइश नहीं है।

---

१ 'कम्युनिज्म का मार्ग" पृष्ठ ४६८।

२ लेनिन "संग्रहीत रचनाएं", खंड १९, पृष्ठ ९२।

विश्व समाजवादी व्यवस्था में राष्ट्रों के आर्थिक सम्बन्ध समाजवाद के आर्थिक नियमों के अनुसार बनते हैं। इन सबका मुख्य लक्ष्य जनता की खुशहाली बढ़ाने के लिए विकसित टेक्नालाजी के आधार पर उत्पादन का निरन्तर विस्तार करना है।

समाजवादी अन्तर्राष्ट्रीय श्रम विभाजन के आधार पर समाजवादी देशों का पारस्परिक सहयोग विकसित और मजबूत होता है। यह श्रम विभाजन विश्व पूंजीवादी व्यवस्था में पाये जाने वाले श्रम विभाजन से बिल्कुल भिन्न होता है। पूंजीवादी अन्तर्राष्ट्रीय श्रम-विभाजन का जन्म स्थान मुनाफे के लिए भयंकर प्रतिद्वंद्विता के दौरान होता है। समाजवादी अन्तर्राष्ट्रीय श्रम विभाजन राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के नियोजित, सानुपातिक विकास के नियम के आधार पर एक योजना के अनुसार चलता है।

समाजवादी अन्तर्राष्ट्रीय श्रम-विभाजन

समाजवाद पहली बार समानता और पारस्परिक लाभ के आधार पर बड़े और छोटे राष्ट्रों के बीच सहयोग के लिए स्थितियां उत्पन्न करता है। वह विश्व समाजवादी व्यवस्था के सभी सदस्य राष्ट्रों की आर्थिक स्वतंत्रता को मजबूत करता है। समाजवादी देश एक दूसरे से मित्रतापूर्ण सहयोग करते हैं। वे इस तरह आर्थिक साधनों और शक्तियों का मितव्ययितापूर्ण उपयोग करते हैं। फलस्वरूप उनकी उत्पादक शक्तियों के विकास को प्रोत्साहन मिलता है। प्रत्येक देश न सिर्फ अपने साधनों का उपयोग करता है बल्कि विश्व समाजवादी व्यवस्था के अन्य सदस्य-देशों के साधनों का भी इस्तेमाल करता है। इस तरह विश्व समाजवादी व्यवस्था के सभी साधनों के कुशल प्रयोग द्वारा आर्थिक विकास की दर तेज की जाती है और लोगों की खुशहाली बढ़ायी जाती है।

समाजवादी अन्तर्राष्ट्रीय श्रम विभाजन के फलस्वरूप प्रत्येक देश के लिए सामाजिक उत्पादन की उन शाखाओं को विकसित करने का पूरा अवसर मिल जाता है जिनके लिए अत्यन्त अनुकूल स्थितियां (प्राकृतिक और भौतिक साधन, उत्पादन का आधार, औद्योगिक मजदूर, इंजीनियर और तकनीकी जानकार इत्यादि) उपलब्ध हैं।

समाजवादी अन्तर्राष्ट्रीय श्रम विभाजन प्रत्येक देश की राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के विकास का सम्पूर्ण विश्व समाजवादी व्यवस्था के विकास के साथ मेल बढ़ाता है।

समाजवादी देशों के बीच श्रम विभाजन का मतलब समाजवादी शिविर के देशों के उत्पादन में विशेषीकरण और सहयोग लाना है। उत्पादन में विशेषीकरण का मतलब उत्पादन की उन शाखाओं के विकास को प्राथमिकता देना है

जा कम म कम श्रम व्यय कर उत्पादन कर सकते हैं। उत्पादन मे सहयोग परस्पर पूरक विशेषीकृत उद्योगो के पारस्परिक सहयोग का रूप लेता है। इसका उद्देश्य कतिपय वस्तुओ के उत्पादन म अधिकतम आर्थिक परिणाम प्राप्त करना होता है।

उत्पादन म विशेषीकरण और सहयोग का अलग-अलग समाजवादी देशा के विशेष और सामान्य हितो को ध्यान मे रखकर ही बढावा दिया जाता है। विशेषीकरण और सहयोग से समाजवादी देशो को अपनी उत्पादक शक्तिया विकसित करने, उत्पादन लागत घटाने और उत्पादन की किस्म को उन्नत करने का मौका मिलता है।

आर्थिक सहयोग और उत्पादन म विशेषीकरण को बढावा देने की प्रक्रिया के दौरान अलग अलग समाजवादी देशा की अपनी औद्योगिक रूपरेखा बनती है और समाजवादी आर्थिक व्यवस्था म उनका स्थान निर्धारित होता है।

उदाहरण के लिए पोलैंड अत्यन्त विकसित इजीनियरिंग, कोयला खनन और रासायनिक उद्योगो तथा अलौह धातुओ के उद्योगो वाला देश हो गया है। चेकोस्लोवाकिया म भारी मशीन निर्माण और इलेक्ट्रिकल इजीनियरिंग तथा हलके उद्योग की कुछ शाखाओ को प्राथमिकता दी गयी है। जमन जनवादी जनतन्त्र म भारी शक्ति सयत्र परिशुद्धि यन्त्र प्रकाशीय साज सामान और रसायनो के उत्पादन म विशेषीकरण पर जोर दिया जा रहा है। रूमानिया मे तैल शोधन और तैल उद्योग के लिए आवश्यक मशीन उद्योग का काफी विकास हुआ है।

समाजवादी शिविर के अधिकाश देश विशेष प्रकार के उत्पादन म विशेषीकरण कर रहे हैं किन्तु सोवियत सघ अपने विशाल क्षेत्रफल विविध प्राकृतिक साधनो और बडी जनसख्या के कारण अर्थव्यवस्था की सभी मुख्य शाखाओ का विकास कर रहा है। किन्तु इसका मतलब यह नही है कि सोवियत सघ समाजवादी अन्तराष्ट्रीय श्रम विभाजन म विस्तृत पमाने पर भाग नही ले सकता। इसके विपरीत विश्व समाजवादी व्यवस्था के उत्पादन म विशेषीकरण और सहयोग के विकास के लिए वह अनुकूल परिस्थितिया उत्पन्न कर रहा है।

विश्व पूजीवादी अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत अन्तराष्ट्रीय श्रम विभाजन ने एक ओर विकसित साम्राज्यवादी राज्यो को और दूसरी ओर पिछडे हुए कृषि प्रधान देशो को जन्म दिया। इसके विपरीत विश्व समाजवादी व्यवस्था के अन्तर्गत अन्तराष्ट्रीय श्रम विभाजन समाजवादी देशा के बीच उत्पादन के नियोजित और विवेकपूर्ण वितरण को जन्म देता है।

समाजवादी अन्तर्राष्ट्रीय श्रम विभाजन समाजवादी देशों के बीच आर्थिक विकास के स्तर मे समानता लाने म मदद करता है।

सवप्रथम वह महत्वपूण औद्योगिक एव कृषिजन्य वस्तुओ के प्रति व्यक्ति उत्पादन म धीरे धीरे समानता लाता है।

उत्पादन के तकनीकी स्तर की विषमता, मेहनतकश जनता के सास्कृतिक एव तकनीकी स्तर मे विषमता और फलस्वरूप सामाजिक श्रम की उत्पादकता के स्तर म होने वाली असमानता को दूर करता है।

अन्ततोगत्वा वह मेहनतकश जनता के जीवन-यापन के स्तर को धीरे धीरे समान बनाता है।

३ आर्थिक सहयोग के रूप

समाजवादी देशो के बीच आर्थिक सम्बध समाजवादी अन्तर्राष्ट्रीय श्रम विभाजन की प्रक्रिया म अनुभव के पारस्परिक आदान प्रदान का रूप धारण करते हैं।

विश्व समाजवादी व्यवस्था के देशो के पारस्परिक आर्थिक सहयोग के य रूप है राष्ट्रीय अथ यवस्था की उनकी योजनाओ म तालमेल विदेश व्यापार, ऋण की व्यवस्था, वज्ञानिक और तकनीकी सहायता और आर्थिक निर्माण के दौरान अनुभवो का आदान प्रदान तथा कमचारियो के प्रशिक्षण म सहायता।

समाजवादी अन्तर्राष्ट्रीय श्रम विभाजन और समाजवादी राज्यो के बीच उत्पादन म विशेषीकरण और सहयोग का मतलब इन देशो के आपसी नियोजित आर्थिक सम्बधो से है। राष्ट्रीय अथव्यवस्था के नियोजित सानुपातिक विकास के नियम के अनुसार समाजवादी शिविर के देशो के बीच आर्थिक सहयोग राष्ट्रीय अथव्यवस्था की परस्पर समन्वित योजनाओ के आधार पर विकसित होता है।

राष्ट्रीय अथव्यवस्था की योजनाओ का समन्वय

अपनी अथव्यवस्था का नियोजन करते समय प्रत्येक देश अपने विकास का अन्य समाजवादी देशो की अथव्यवस्थाओ के साथ तालमेल बठाता है। इस प्रकार समाजवादी देशो के बीच चतुर्दिक आर्थिक सहयोग के लिए आधार तयार होता है, जिस पर प्रत्येक राज्य और सम्पूण विश्व समाजवादी व्यवस्था की अथ यवस्था प्रगति करती है।

राष्ट्रीय अथव्यवस्थाओ की योजनाओ के समन्वय के द्वारा समाजवादी देश उत्पादन की विभिन्न शाखाओ के बीच न सिफ अलग अलग देशो के भीतर वल्कि उनके बीच सही अनुपात स्थापित करते हैं। इस प्रकार मत्रीपूण व्यवस्था और समान रूप स पारस्परिक लाभ के समझौतो द्वारा उचित अनुपात स्थापित किय जाते हैं।

आर्थिक योजनाओं का समन्वय करते समय प्रत्येक राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था और जनता के हितों, उत्पादन क्षमताओं और जरूरतों, देश की आर्थिक शक्ति बढ़ाने और स्वतंत्रता को मजबूत करने तथा मेहनतकश जनता के भौतिक और सांस्कृतिक स्तर ऊंचा उठाने की आवश्यकता पर ध्यान दिया जाता है।

अपने संयुक्त प्रयास में समाजवादी देश औद्योगिक एवं परिवहन उद्यमों, सम्बद्ध विद्युत शक्ति प्रणालियों इत्यादि का निर्माण कर रहे हैं। इसीलिए पोलैंड चेकोस्लोवाकिया हंगरी, सोवियत संघ के पश्चिमी भाग, जर्मन जनवादी जनतंत्र और रूमानिया की विद्युत शक्ति प्रणालियों को परस्पर सम्बद्ध करने के लिए विद्युत शक्ति संचार लाइनें बनायी गयी हैं। सोवियत संघ, पोलैंड चेकोस्लोवाकिया जर्मन जनवादी जनतंत्र और हंगरी सोवियत संघ से तेल बाहर ले जाने के लिए संयुक्त रूप से द्रुज्बा (मैत्री) तेल पाइपलाइन का निर्माण कर रहे हैं।

समाजवादी देशों के बीच नियोजित आर्थिक सहयोग के संगठन के लिए १६४६ में सभी सदस्य राष्ट्रों ने पूर्ण समानता के सिद्धान्तों के आधार पर पारस्परिक आर्थिक सहायता परिषद की स्थापना की। यह परिषद समाजवादी देशों का एक अन्तर सरकारी आर्थिक संगठन है। इसका काम आर्थिक और तकनीकी अनुभव के विनिमय, कच्चे माल खाद्य पदार्थ, मशीन और साज सामान की व्यवस्था करना और एक विवेकपूर्ण श्रम विभाजन के आधार पर समाजवादी देशों के आर्थिक विकास में नियोजित अन्तस्सम्बंध और समन्वय स्थापित करना है।

समाजवादी देशों के आर्थिक विकास का नियोजित समन्वय समाजवाद की प्रकृतिगत आवश्यकता है। इससे विश्व समाजवादी व्यवस्था के देशों की मेहनतकश जनता के महत्वपूर्ण हितों की सिद्धि होती है।

समाजवादी देशों के बीच व्यापार काफी व्यापक रूप से होता है। यह व्यापार योजना के आधार पर चलता है। इसमें उत्पादन की अराजकता प्रतिद्वन्द्विता, कीमतों के अपने-आप उतार चढ़ाव एकतरफा विनिमय और कुछ देशों का अन्य देशों द्वारा शोषण और लूट के लिए कोई जगह नहीं है।

विदेश व्यापार

समाजवादी देशों के बीच व्यापार पारस्परिक लाभ की दृष्टि से चलता है। व्यापार का उद्देश्य प्रत्येक देश की अर्थव्यवस्था का विकास करना है। व्यापार उचित और स्थायी कीमतों के आधार पर होता है। ये कीमतें विश्व कीमतों के आधार पर दीर्घकालीन स्वच्छिक समझौतों द्वारा निश्चित की जाती हैं। सहयोग और मैत्रीपूर्ण सहायता विश्व समाजवादी बाजार के विशेष व्यापार की विशेषताएं हैं।

विश्व समाजवादी बाजार में माल की बिक्री में किसी भी कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ता। समस्त समाजवादी राज्यों में उत्पादन के निरन्तर विकास और महान जनता के भौतिक और सांस्कृतिक स्तर में वृद्धि के फलस्वरूप विश्व समाजवादी बाजार की क्षमता बराबर बढ़ती जाती है।

समाजवादी देशों के आपसी व्यापार सम्बंध वस्तुओं की पारस्परिक पूर्ति के लिए दीर्घकालीन समझौतों से निर्धारित होते हैं।

समाजवादी देशों की राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में निरन्तर विकास के फलस्वरूप उनके निर्यात और आयात के ढांचे में परिवर्तन होता है। युद्ध के पहले सभी जनवादी जनतन्त्र (चेकोस्लोवाकिया और जर्मन जनवादी जनतंत्र को छोड़कर) मुख्यतः कच्चा माल और खाद्य पदार्थों का निर्यात करते थे। आज स्थिति भिन्न है। लड़ाई के पहले बुल्गारिया मुख्य रूप से कृषि उत्पादन का निर्यात करता था, किन्तु १६६० में उसके निर्यात का अधिकांश तैयार माल था।

ऋण की व्यवस्था समाजवादी देशों के पारस्परिक आर्थिक सहयोग और सहायता का मुख्य रूप है। समाजवाद का निर्माण करते समय सोवियत संघ को अपने भौतिक और वित्तीय साधनों पर निर्भर रहना पड़ा, किन्तु जनवादी जनतन्त्र यही कार्य बिलकुल भिन्न परिस्थितियों में कर रहे हैं। वे सोवियत संघ की मैत्रीपूर्ण और निःस्वार्थ सहायता और समस्त समाजवादी देशों के सहयोग और पारस्परिक सहायता पर निर्भर करते हैं।

ऋण (साख) की व्यवस्था

युद्धोत्तर काल में सोवियत संघ ने समाजवादी देशों को करीब ८० ००० लाख रूबल का ऋण दिया है। ऋण अत्यन्त अनुकूल शर्तों पर दिये गये हैं। पूंजीवादी देश अपने ऋण पर बहुत अधिक ब्याज (३ ५ प्रतिशत से ६ प्रतिशत प्रतिवर्ष) लेते हैं तथा आर्थिक और राजनीतिक शर्तें लगा देते हैं। समाजवादी देशों के ऋण पर साधारणतया १ २ प्रतिशत ब्याज देना पड़ता है। विशेष स्थितियों में ब्याजमुक्त ऋण भी दिये जाते हैं। ऋण समझौतों में कोई प्रतिकूल आर्थिक या राजनीतिक शर्तें ऋण के प्रयोग के सम्बंध में नहीं होतीं। ऋण और ब्याज का भुगतान सामान्यतया उस देश द्वारा निर्यात की जाने वाली वस्तुओं के रूप में होता है।

पूंजीवादी विश्व का मुख्य सिद्धान्त है मनुष्य मनुष्य के लिए भेड़िया है। निम्न पूंजीवादी देशों की प्रतिद्वंद्वी फर्में और कम्पनियां तकनीकी सुधार और वैज्ञानिक आविष्कारों को छिपाने की कोशिशें करती हैं। *साथ ही अपने प्रतिद्वंद्वियों का भेद लेने के लिए वे* घूस देने और हथकण्डा इस्तेमाल करने से लेकर कोई भी कुकृत्य कर सकती हैं।

वैज्ञानिक और तकनीकी सहयोग

पूजीवाद के विपरीत विश्व समाजवादी व्यवस्था के देश काफी व्यापक पैमाने पर वैज्ञानिक और तकनीकी उपलब्धियों तथा उन्नत उत्पादन के अनुभवों के सम्बंध में सूचनाओं का आदान प्रदान कर सकते हैं। दोस्तों के बीच कोई दुराव तो होता नहीं। समाजवादी देशों के वैज्ञानिक अत्यंत महत्वपूर्ण वैज्ञानिक और तकनीकी समस्याओं के हल के लिए पारस्परिक सहयोग से काम करते हैं।

विभिन्न कायकमों और तकनीकी समस्याओं से सम्बंधित दस्तावेजों और साहित्य के आदान प्रदान, डिजाइन तैयार करने और भूगर्भ सर्वेक्षण करने में समाजवादी देश परस्पर सहयोग करते हैं। वे एक दूसरे को प्रयोगों और अनुभव के आदान प्रदान तथा कर्मचारियों के प्रशिक्षण के द्वारा सहयोग देते हैं।

समाजवादी देशों के बीच वैज्ञानिक और तकनीकी सहयोग की व्यवस्था स्थापित करने में सोवियत संघ की प्रमुख भूमिका रही है। १६४८ ६० के दौरान सोवियत संघ ने समाजवादी देशों को विभिन्न प्रकार की २६ ००० तकनीकी दस्तावेजें दीं। तत्कालीन समझौतों के अनुसार ये दस्तावेजें मुफ्त प्रदान की गयी थी।

सोवियत संघ अन्य समाजवादी देशों की उपलब्धियों का अपनी अर्थव्यवस्था में अधिकाधिक प्रयोग कर रहा है। १६४८ १६६० के दौरान सोवियत संघ को अन्य समाजवादी देशों से ७ ००० वैज्ञानिक और तकनीकी दस्तावेजें मिलीं।

वैज्ञानिक और तकनीकी सहयोग के फलस्वरूप प्रत्येक समाजवादी राज्य समय शक्ति और साधनों की बचत कर सकता है। जिन वैज्ञानिक और तकनीकी समस्याओं का अन्य मित्र देशों ने सफल हल निकाल लिया है उन पर दूसरों को समय शक्ति और साधन व्यय करने की आवश्यकता नहीं है।

कर्मचारियों के प्रशिक्षण में सहायता वैज्ञानिक और तकनीकी सहयोग का मुख्य पहलू है। मित्र देशों के नवयुवक बहुत बड़ी संख्या में सोवियत संघ, चेकोस्लोवाकिया पोलैंड और अन्य देशों की उच्च शिक्षा संस्थाओं में व्यवस्थित रूप से प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे हैं।

सफल आर्थिक सहयोग और समाजवादी शिविर की दिनोदिन बढ़ती हुई शक्ति इस बात का सूचक हैं कि आर्थिक प्रतियोगिता में पूजीवाद के मुकाबले समाजवाद विजयी होगा।

४ दो विश्व व्यवस्थाओं के बीच शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व और आर्थिक प्रतियोगिता

समाजवाद और पूजीवाद के बीच शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व और आर्थिक प्रतियोगिता के प्रश्न को सर्वप्रथम लेनिन ने सैद्धान्तिक रूप से पुष्ट किया। उसके

शान्तिपूर्ण सह अस्तित्व का क्या मतलब है?

अनुसार समाजवादी क्रांति एक साथ सभी देशों में विजयी नहीं हो सकती। इसलिए कमोवेश लम्बे समय तक एक समाजवादी देश या समाजवादी देशों के समूह को अपना विकास एक विशेष परिस्थिति में करना होगा। पूंजीवादी व्यवस्था अन्य देशों में वर्तमान रहेगी।

दो व्यवस्थाओं (समाजवादी और पूंजीवादी) की साथ साथ उपस्थिति के कारण उनमें परस्पर शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व अवश्यम्भावी हो जाता है।

शांतिपूर्ण सह अस्तित्व का मतलब वर्ग संघर्ष से इनकार करना नहीं है। भिन्न आर्थिक व्यवस्थाओं वाले देशों के बीच सह-अस्तित्व समाजवाद और पूंजीवाद के पारस्परिक वर्ग संघर्ष का एक विशेष रूप है। शान्तिपूर्ण सह अस्तित्व का अर्थ दो विचारधाराओं (समाजवादी और पूंजीवादी) के बीच समन्वय नहीं है। इसके विपरीत इसका मतलब यह है कि सर्वहारा वर्ग और उसकी पार्टी समाजवादी और कम्युनिस्ट विचारों की विजय के लिए पुरजोर संघर्ष करें।

सोवियत जनता और अन्य समाजवादी देशों की जनता पूंजीवादी व्यवस्था को पसन्द नहीं करती। पूंजीवादी देशों का शासक वर्ग भी समाजवादी व्यवस्था को पसन्द नहीं करता। किन्तु प्रत्येक राज्य की जनता ही यह फैसला कर सकती है कि कौन-सी व्यवस्था स्थापित की जाये। इसलिए दो परस्पर विरोधी सामाजिक आर्थिक व्यवस्थाओं के सम्बंध शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व पर आधारित होने चाहिए।

वर्तमान युग में जब एटम और हाइड्रोजन बम जैसे बड़े पैमाने पर विध्वंस करने वाले हथियार बन चुके हैं तब युद्ध का राष्ट्रों की जिन्दगी से अलग ही रखना चाहिए। ऐसा करने के लिए एक ही रास्ता—समाजवाद और पूंजीवाद के बीच शान्तिपूर्ण सह अस्तित्व और शान्तिपूर्ण होड़ का रास्ता है। वर्तमान काल में शांतिपूर्ण सह अस्तित्व के सिद्धान्त को मान्यता और उसका दृढ़तापूर्वक कार्यान्वयन शांति और अन्तर्राष्ट्रीय सुरक्षा सुदृढ़ करने और बनाये रखने के लिए जरूरी शर्त है।

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम में बताया गया है कि समाजवादी और पूंजीवादी देशों का शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व मानव समाज के विकास की वस्तुगत आवश्यकता है। अन्तर्राष्ट्रीय झगड़ों के निपटारे के लिए युद्ध न तो कोई साधन हो सकता है और न उसे होना ही चाहिए। इतिहास ने आज हमारे सामने दो ही रास्ते रखे हैं शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व या विध्वंसकारी युद्ध।[1]

---

१ 'कम्युनिज्म का मार्ग' पृष्ठ ५०६।

शान्तिपूर्ण सह अस्तित्व क्या है ?

शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व का तात्पर्य राज्यो के पारस्परिक विवादो के निपटारे म युद्ध के तरीके का त्याग करना है। इन विवादो का हल आपसी बातचीत के जरिए निकालना होगा। शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व का सिर्फ इतना ही मतलब नही है। अनाक्रमण के अतिरिक्त यह भी जरूरी है कि सभी राज्य किसी भी तरह और किसी भी बहाने एक दूसरे की प्रादेशिक अखण्डता और प्रभुसत्ता को धक्का नहीं पहुचायें। शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व का यह मतलब है कि कोई भी देश दूसरे देश के आन्तरिक मामलो म हस्तक्षेप न करे। अन्य देशो की राज्य व्यवस्था या जीवन पद्धति को बदलने के लिए या किसी भी अन्य कारण स उनके आन्तरिक मामलो मे दखल देना अनुचित है। प्रत्येक राष्ट्र स्वतन्त्र रूप से अपने विकास की समस्याओ को हल कर सकता है। इस अधिकार को सभी अन्य राष्ट्रो को मानना होगा।

शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व का मतलब राज्यो के बीच पारस्परिक समझदारी और विश्वास और एक दूसरे के हितो की मान्यता है। देशो के पारस्परिक राजनीतिक और आर्थिक सम्बध सम्बद्ध राष्ट्रो की पूर्ण समानता और उनके पारस्परिक लाभ पर आधारित हैं।

सोवियत सघ ने इस नीति का निरन्तर समर्थन किया है और भविष्य म भी वह ऐसा ही करता रहेगा।

शान्ति की नीति समाजवाद की प्रकृति म ही निहित है। यह नीति न सिर्फ समाजवादी जनगण के हितो के अनुकूल है बल्कि ससार के सभी जनगण के लिए लाभप्रद है। मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टिया शान्ति और ताप-नाभिकीय युद्ध स राष्ट्रो को विनष्ट होने से बचाने के लिए सघर्ष को न सिर्फ अपना ऐतिहासिक लक्ष्य मानती हैं बल्कि समाजवाद और कम्युनिज्म के निर्माण, पूजीवादी देशो म सर्वहारा का क्रान्तिकारी सघर्ष फैलाने और साम्राज्यवादियो द्वारा शोषित जनगण के मुक्ति आन्दोलन को बढ़ाने के लिए महत्वपूर्ण शर्त मानती हैं।

वर्तमान विश्व परिस्थिति की यह विशेषता है कि शान्ति को बनाये रखने और मजबूत बनाने वाली अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग की हामी और अन्तर्राष्ट्रीय तनाव को कम करने वाली शक्तिया सैन्यवाद, आक्रमण और युद्ध की शक्तियों की अपेक्षा काफी मजबूत हैं।

शक्तिशाली सोवियत सघ और सम्पूर्ण समाजवादी शिविर शान्ति को बनाये हुए हैं। दुनिया की एक तिहाई से ज्यादा जनसख्या का प्रतिनिधित्व करने वाले युद्ध म दिलचस्पी न रखने वाले गैर-समाजवादी देश शान्ति के लिए समाजवादी देशो के साथ काम कर रहे हैं। साम्राज्यवादी सैनिक खेमो में शामिल होने

म बहुत स स्तरों का सामना करना पड़ता है। इन सभी में शान्ति के हामी और तटस्थ राष्ट्रों की संख्या निरन्तर बढ़ रही है।

आज जनगण सक्रिय रूप से युद्ध और शान्ति के निर्णय को अपने हाथ में ले रहे हैं। शांति के संघर्ष में आम जनता के युद्ध विरोधी आन्दोलन का प्रमुख स्थान है। आज अन्तर्राष्ट्रीय मजदूर वर्ग शान्ति के लिए संघर्ष में मुख्य संचालक शक्ति है।

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम में बताया गया है "शक्तिशाली समाजवादी शिविर, शान्तिप्रेमी गैर समाजवादी देशों, अन्तर्राष्ट्रीय मजदूर वर्ग और शांति की इच्छुक समस्त शक्तियों के संयुक्त प्रयास से विश्वयुद्ध रोका जा सकता है। पृथ्वी पर समाजवाद की पूर्ण विजय के पूर्व दुनिया के एक हिस्से में पूंजीवाद के रहते हुए, साम्राज्यवादी शक्तियों की तुलना में समाजवादी शक्तियों की बढ़ती हुई ताकत और युद्ध की शक्तियों की अपेक्षा शान्ति की शक्तियों की श्रेष्ठता के फलस्वरूप सामाजिक जीवन से युद्ध का वास्तविक उन्मूलन सम्भव हो जायेगा।"[1]

युद्ध अपने आप नहीं रोका जा सकता। शान्तिप्रिय शक्तियों को शान्ति के लिए जोरदार संघर्ष करना चाहिए और शांति के शत्रुओं के सब षड्यन्त्रों पर नजर रखनी चाहिए। युद्ध की रोकथाम समाजवादी देशों की नीति, प्रतिरक्षा की उनकी सामर्थ्य और शांतिपूर्ण सह अस्तित्व के शक्तिवादी सिद्धान्त के कार्यान्वयन पर निर्भर है। किन्तु इससे साम्राज्यवाद की आक्रामक प्रकृति नहीं बदलती। अगर इस पर भी साम्राज्यवाद युद्ध शुरू करता है तो इसका मतलब है कि वह अपनी मृत्यु को निमन्त्रण दे रहा है। अब जनगण ऐसी व्यवस्था को बर्दाश्त नहीं कर सकते जो उन्हें युद्ध की आग में झोंक दे। वे साम्राज्यवाद को उखाड़ कर सदा के लिए दफ़ना देंगे।

समाजवाद और पूंजीवाद के बीच आर्थिक प्रतियोगिता

शान्तिपूर्ण सह अस्तित्व का सिर्फ यही अर्थ नहीं है कि भिन्न समाज व्यवस्थाओं वाले देश साथ साथ रहें, बल्कि दोनों व्यवस्थाओं के बीच आर्थिक प्रतियोगिता चले। इस प्रतियोगिता के दौरान समाजवाद को अधिकाधिक सफलता मिलेगी। शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व की नीति पर चलते हुए समाजवादी देश पूंजीवाद के साथ प्रतियोगिता में विश्व समाजवादी व्यवस्था की स्थिति मजबूत बना रहे हैं।

अन्ततोगत्वा विजय उसी व्यवस्था को मिलेगी जो राष्ट्रों को उनका भौतिक और आध्यात्मिक कल्याण बढ़ाने के लिए अधिकतम अवसर प्रदान करेगी। ऐसी

१ "कम्युनिज्म का मार्ग", पृष्ठ ५०५।

व्यवस्था समाजवाद ही होगी। समाजवाद ही आम जनता म अपार सजनात्मक उत्साह की सम्भावनाए उत्पन करता है। विज्ञान और संस्कृति का वास्तविक विकास करने, दरिद्रता और बेरोजगारी से रहित खुशहाली लाने के मानवजाति के स्वप्न को मूत रूप देन, आनदमय बालपन और शातिपूण बुढापे, मनुष्य की साहसपूण योजनाओ की पूर्ति और काम करने तथा सच्ची आजादी के साथ निर्माण करने के अवसर समाजवाद ही प्रदान करता है।

समाजवाद की विजय पूजीवादी देशो के आतरिक मामलो म हस्तक्षेप कर नही प्राप्त की जायेगी। कम्युनिज्म की विजय म सोवियत जनता की आस्था भिन्न प्रकार की है। यह आस्था समाज विकास के नियमो के ज्ञान और समाजवादी अथ व्यवस्था की श्रेष्ठता पर आधारित है। जिस प्रकार किसी समय पूजीवाद न सामतवाद की जगह ली, उसी प्रकार एक अत्यत प्रगतिशील और उचित समाज व्यवस्था—कम्युनिज्म—सारे विश्व के पमाने पर अवश्यम्भावी रूप स पूजीवाद को हटाकर उसका स्थान ग्रहण करेगी।

समाजवाद और पूजीवाद के बीच शान्तिपूण आर्थिक होड पूजीवादी देशो की जनता को न तो हाथ पर हाथ रखकर बठे रहने के लिए बाध्य कर देती है और न ही वग सघष और राष्ट्रीय मुक्ति सघष की आवश्यकता को समाप्त कर देती है। इसके विपरीत पूजीवाद के साथ शातिपूण होड मे समाजवाद की जीत मेहनत कश जनता के वग सघष को तेज करती है और मुक्ति के लिए सचेत लडाकू जनता के रूप म बदल देती है। साम्राज्यवादी इस अच्छी तरह जानते है। व समाजवादी देशो द्वारा विकास के क्षेत्र म हासिल की गयी सफलताओ स डरते हैं और उनकी प्रगति को मन्द करने के लिए प्रयत्न करते है।

सोवियत सत्ता का अस्तित्व ५० वर्षों से भी कम पुराना है। इस दौरान सोवियत सघ ने दो अत्यत भयकर लडाइया लडी हैं। उसको दबोचने के लिए जिन शत्रुओ ने उस पर आक्रमण किया था उनको उसने परास्त कर दिया। अमरीका म डेढ शताब्दी से भी अधिक दिनो से पूजीवाद है। इसके अतिरिक्त कभी भी किसी शत्रु ने अमरीका पर आक्रमण नही किया। इसके बावजूद आज सोवियत सघ विश्व के सबसे शक्तिशाली पूजीवादी देश को आर्थिक प्रतियोगिता के लिए ललकार रहा है।

समाजवाद और पूजीवाद के बीच आर्थिक प्रतियोगिता का मतलब मुख्य रूप से प्रति व्यक्ति अधिक औद्योगिक और कृषि उत्पादन प्राप्त करना और जनता को जीवन-यापन का उच्चतम स्तर प्रदान करना है। इस प्रतियोगिता म स्पष्ट रूप से सोवियत सघ और समाजवाद का पलडा भारी है। सोवियत सघ और अमरीका के आर्थिक विकास की तुलनात्मक दरो से यह बात साफ हो जाती है।

सोवियत संघ और अमरीका की अर्थव्यवस्थाओ मे खाई काफी कम हो गयी है।

१९१३ म रूस का औद्योगिक उत्पादन अमरीका की अपेक्षा ८ गुना कम था किन्तु १९५३, १९५७ और १९६४ मे अमरीकी उत्पादन का क्रमश ३३ प्रतिशत, ४७ प्रतिशत और ६५ प्रतिशत था। ४५ वर्षों (१९१८ ६२) के दौरान सोवियत सघ का औद्योगिक उत्पादन १० १ प्रतिशत की दर से बढा है और इसी दौरान अमरीका का औद्योगिक उत्पादन ३ ४ प्रतिशत की दर से बढा। १९५४-६२ के दौरान सोवियत सघ के औद्योगिक विकास की औसत वार्षिक वद्धि दर १० ७ प्रतिशत और अमरीका की २ ६ प्रतिशत रही है।

हाल के वर्षों मे सोवियत सघ अपने आर्थिक विकास की ऊची दर के फलस्वरूप कई महत्वपूर्ण वस्तुओ के उत्पादन म अमरीका से मात्रा की दृष्टि से आगे बढ गया है। अब कई वस्तुओ और तैयार माल की दृष्टि से सोवियत सघ दुनिया म पहला स्थान प्राप्त कर रहा है।

कोयला और लौह अयस्क निष्कषण कोक उत्पादन मुख्य माग पर चलने वाले विद्युत और डिजेल रेल इजिनो, धातु काटने के औजारो ट्रक्टरो (कुल शक्ति के रूप म) पूव निर्मित प्रबलित कक्रीट, चीरी गयी लकडी, ऊनी कपडो चीनी, मवेशियो की चर्बी मछली और अन्य वस्तुओ और तैयार मालो की कुल मात्रा की दष्टि से सोवियत सघ अमरीका स आगे निकल गया है।

सोवियत सघ और अमरीका के बीच आर्थिक होड के परिणाम के सम्बध म सोवियत सघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कायक्रम मे प्रकाश डाला गया है। कायक्रम म कहा गया है कि जसे जसे सोवियत सघ कम्युनिज्म का भौतिक एव तकनीकी आधार तयार करता जायेगा, वसे वैसे वह अमरीका से प्रति व्यक्ति औद्योगिक एव कृषि उत्पादन तथा कुल उत्पादन की दष्टि से आगे निकलता जायेगा।

सोवियत सघ अन्य समाजवादी देशो के साथ मिलकर पूजीवादी देशो के साथ प्रतियोगिता के क्षेत्र मे आर्थिक विजय के लिए काय कर रहा है। समाजवादी देशो की कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टिया का यह अन्तर्राष्ट्रीय कतव्य है कि वे अपनी अथव्यवस्थाओ का विकास उनकी पूरी क्षमता के अनुसार तेजी स करें। वे आर्थिक प्रतियोगिता के क्षेत्र मे पूजीवाद के ऊपर सक्षिप्त समय म पूण विजय प्राप्त करने के लिए सयुक्त रूप से प्रयास करें और समाजवादी व्यवस्था के लाभो तथा प्रत्येक देश के आन्तरिक साधनो का इस्तेमाल करें।

ख समाजवाद का शनै शनै कम्युनिज्म के रूप मे विकास

अध्याय १८

कम्युनिस्ट समाज का उच्चतर दौर और समाजवाद के कम्युनिज्म के रूप मे विकसित होने के नियम

सोवियत सघ की कम्युनिस्ट पार्टी की २२वी कांग्रेस ने सुन्दरतम समाज—कम्युनिज्म—की ओर विजय-अभियान की स्पष्ट उज्ज्वल सम्भावनाए सामने रखी। कांग्रेस द्वारा स्वीकृत कार्यक्रम को २०वी सदी का कम्युनिस्ट घोषणापत्र कहना एकदम सही है। इस घोषणापत्र म समाजवादी समाज के विकास के सभी पहलुओ की विवेचना की गयी है और समाजवाद से कम्युनिज्म की ओर सक्रमण के मार्ग का वैज्ञानिक तौर पर पुष्ट और प्रशस्त किया गया है।

सोवियत सघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम म बताया गया है "कम्युनिज्म एक वर्गविहीन समाज व्यवस्था है। उसमे उत्पादन के साधनों के सार्वजनिक स्वामित्व का एक ही स्वरूप होता है और समाज मे पूर्ण सामाजिक समानता होती है। उसके अन्तर्गत जनता के सर्वांगीण विकास के साथ ही, विज्ञान और टेक्नालाजी की निरन्तर प्रगति के परिणामस्वरूप उत्पादक शक्तिया विकसित होती है। सामूहिक सम्पत्ति के सभी स्रोत उन्मुक्त हो जाते है और विपुलता आ जाती है। 'प्रत्येक व्यक्ति से उसकी योग्यता के अनुसार काम लिया जाये और उसे उसकी आवश्यकता के अनुसार हिस्सा दिया जाये', इस महान सिद्धान्त को मूर्त रूप दिया जाता है। कम्युनिज्म स्वतत्र सामाजिक तौर पर चेतन मेहनतकश जनता का अत्यन्त सगठित समाज है। उस समाज मे सार्वजनिक

स्वराज्य स्थापित होता है। समाज-कल्याण के लिए किया जाने वाला श्रम प्रमुख एव प्रत्येक व्यक्ति के लिए आवश्यक हो जाता है। उस श्रम की आवश्यकता को सभी महसूस करते हैं और इस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति की क्षमता का अधिकतम जन-कल्याण के लिए उपयोग होता है।'[१]

कम्युनिज्म समाजवाद के प्रत्यक्ष विकास के क्रम में आता है। कम्युनिस्ट सामाजिक आर्थिक सरचना के विकास के दो चरणो के रूप मे समाजवाद और कम्युनिज्म आते हैं। इसलिए इनकी कई समान विशेषताए हैं और इनके बीच कई महत्वपूर्ण अन्तर भी हैं।

१ समाजवाद और कम्युनिज्म की समान आर्थिक विशेषताए और उनकी भिन्नताए

समाजवाद और कम्युनिज्म की समान विशेषताए

उत्पादन के साधनों का सामाजिक स्वामित्व समाजवाद और कम्युनिज्म का आर्थिक आधार है। इसका मतलब है कि भूमि, खनिज सम्पत्ति कारखानो बिजलीघरो परिवहन सुविधाओ सचार व्यवस्था और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के उत्पादनो का समाजीकरण हो जाता है और वे सारे समाज की सम्पत्ति होते हैं।

सरचनाओ के दोनो दौरो मे उत्पादन के सम्बध उत्पादक शक्तियों के अनुकूल होते हैं अर्थात उत्पादन के साधनो के सामाजिक स्वामित्व और उत्पादन के सामाजिक स्वरूप मे सामजस्य होता है। भौतिक सम्पत्ति का उपयोग सारे समाज के हित मे होता है।

समाजवाद और कम्युनिज्म मे न कोई शोषक वर्ग होते हैं और न मनुष्य का मनुष्य के द्वारा शोषण ही। जातीय या राष्ट्रीय उत्पीडन का समाजवाद और कम्युनिज्म मे नामोनिशान भी नहीं रहता है। कम्युनिस्ट समाज के प्रथम और उच्चतर दोनो चरणो के उत्पादन सम्बधो की प्रमुख विशेषता शोषणमुक्त लोगो के बीच मैत्रीपूर्ण सहयोग और पारस्परिक सहायता है।

समाजवाद और कम्युनिज्म की यह विशेषता है कि समाज के सभी सदस्यो की भौतिक और सास्कृतिक आवश्यकताओ की पूर्ण सतुष्टि के लिए विज्ञान और टेक्नालाजी की द्रुत प्रगति के आधार पर सामाजिक उत्पादन का निरन्तर विकास होता है। समाजवाद और कम्युनिज्म मे भौतिक और आध्यात्मिक मूल्यो के सृजनकर्ता मनुष्य को और उसकी भौतिक और सास्कृतिक आवश्यकताओ को पहला स्थान दिया जाता है।

१ 'कम्युनिज्म का मार्ग" पृष्ठ ५०६।

राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का नियोजित विकास तेज होता है। समाज के भौतिक और मानव शक्ति साधनो का विवेकपूर्ण प्रयोग तथा श्रम-उत्पादकता मे निरंतर वृद्धि कम्युनिस्ट समाज के दोनो दौरो की प्रमुख विशेषताए हैं।

समाजवाद और कम्युनिज्म के अतगत ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों तथा मानसिक एव शारीरिक श्रम के बीच कोई विरोध नहीं होता है।

कम्युनिस्ट सरचना के दोना चरणो म श्रम नि शुल्क और सृजनात्मक होता है। दोना दौरो की यह समान विशेषता है कि समाज के सभी सदस्य अपनी योग्यता के अनुसार काम करते हैं।

समाजवाद और कम्युनिज्म म एक ही मार्क्सवादी-लेनिनवादी विचारधारा का बोलबाला होता है।

उपर्युक्त मुख्य विशेषताए एकसमान समाजवाद और कम्युनिज्म दोनो म वर्तमान रहती हैं।

समाजवाद और कम्युनिज्म के कई समान लक्षणो के होने का मतलब यह नही है कि उनम कोई अतर होता ही नही।

कम्युनिज्म और समाजवाद मे बुनियादी अतर

कम्युनिस्ट समाज के निम्नतर और उच्चतर चरणो मे आर्थिक एव सास्कृतिक परिपक्वता अलग अलग होती है। इसी के फलस्वरूप कम्युनिज्म और समाजवाद मे बुनियादी अतर होते हैं।

कम्युनिज्म म उत्पादक शक्तिया अतुलनीय रूप से विकास के स्तर पर होती हैं। कम्युनिज्म का भौतिक और तकनीकी आधार अत्यन्त शक्तिशाली और उन्नत होता है जिससे श्रम उत्पादकता मे काफी वृद्धि होती है और विपुल मात्रा मे भौतिक एव अभौतिक सम्पत्ति प्राप्त होती है। कम्युनिज्म के अतगत सम्पूर्ण सामाजिक अर्थव्यवस्था के नियोजित सगठन का स्तर अत्यन्त ऊचा होता है। समाज के सभी सदस्यो की बढती हुई आवश्यकताओ की सतुष्टि के लिए भौतिक सम्पत्ति एव मानव शक्ति का कुशल एव विवेकपूर्ण इस्तमाल होता है।

कम्युनिज्म के अतगत उत्पादन के सम्बध अत्यत परिपक्व होते हैं। उदाहरण के लिए समाजवाद के अन्तगत सामाजिक सम्पत्ति के दो स्वरूप होते हैं राजकीय सम्पत्ति एव सहकारी तथा सामूहिक फाम की सम्पत्ति। किन्तु कम्युनिज्म के अन्तगत एक ही प्रकार की सम्पत्ति—कम्युनिस्ट सम्पत्ति होती है जिस पर सम्पूर्ण जनता का अधिकार होता है। समाजवाद के अन्तगत दो वर्ग—मजदूर वर्ग और सहकारी किसान वर्ग—होते हैं, क्योंकि सामाजिक सम्पत्ति के दो रूप होते हैं। एकमात्र कम्युनिस्ट स्वामित्व की स्थापना स वर्गों और वर्ग भिन्न

ताओं के आर्थिक आधार नहीं रहेंगे तथा ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के पारस्परिक सामाजिक आर्थिक, कल्याणात्मक और सांस्कृतिक विभेद खत्म हो जायेंगे।

उत्पादन तकनीकी और मेहनतकश जनता की शिक्षा एवं तकनीकी दक्षता के स्तर के उन्नत होने से जनता की उत्पादक क्रिया में मानसिक और शारीरिक कार्यों का समेकन हो जायेगा।

कम्युनिस्ट समाज में काम का असली स्वरूप ही बदल जायेगा। समाजवाद के अन्तर्गत काम अब भी जीवन की प्रमुख आवश्यकता नहीं है। कम्युनिज्म के अन्तर्गत सम्पूर्ण समाज के लिए निःशुल्क, सृजनात्मक काम जीवन की प्रमुख आवश्यकता होता है। काम से लोगों को सृजन के आनन्द और महान सुख की उपलब्धि होती है। किन्तु कम्युनिज्म समाज के सदस्यों को काम करने की जिम्मेदारी से मुक्त नहीं करता। आलस और परजीविता का कम्युनिज्म से कोई मेल नहीं है। काम करने में सक्षम प्रत्येक व्यक्ति सामाजिक श्रम में शामिल होगा और इस प्रकार समाज की भौतिक और सांस्कृतिक समृद्धि बढ़ायेगा।

समाजवाद से कम्युनिज्म में संक्रमण के दौरान समाज के सदस्यों के बीच भौतिक एवं सांस्कृतिक समृद्धि के वितरण के रूप और ज्यादा विकसित होंगे।

कम्युनिज्म के अन्तर्गत विपुल समृद्धि हो जाने और काम के जीवन की प्रमुख आवश्यकता बन जाने के बाद यह सम्भव हो जायेगा कि "प्रत्येक से उसकी योग्यता के अनुसार काम लेने और उसे उसके काम के अनुसार हिस्सा देने" के बदले "प्रत्येक से उसकी योग्यता के अनुसार काम लिया जाये और उसको उसकी आवश्यकता के अनुसार हिस्सा दिया जाये।

अगर उत्पादन के साधनों और काम की दृष्टि से सबकी स्थिति एकसमान हो तो भौतिक सम्पत्ति के वितरण की दृष्टि से भी सबकी स्थिति एक-सी होगी। सांस्कृतिक तौर पर विकसित मनुष्य की विवेकपूर्ण जरूरतों का ध्यान में रखकर ही वितरण होगा। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम में बताया गया है "कम्युनिस्ट उत्पादन का उद्देश्य समाज की निर्बाध प्रगति और सभी सदस्यों को उनकी बढ़ती हुई आवश्यकताओं, व्यक्तिगत जरूरतों एवं रुचियों के अनुसार भौतिक एवं सांस्कृतिक सहूलियतें देना है।"[1]

कम्युनिस्ट समाज में वस्तु उत्पादन और उससे विशिष्ट आर्थिक कोटियां—वस्तु मुद्रा कीमत, मजूरी लागत रकम, साख और वित्त व्यवस्था—नहीं रहेंगी।

कम्युनिज्म सार्वजनिक जीवन के संगठन का उच्चतम रूप है। कम्युनिज्म की ओर संक्रमण और समाजवादी उत्पादन-सम्बन्धों के विकास और उन्नति के

---
१ कम्युनिज्म के मार्ग, पृष्ठ ५११।

साथ-साथ उपरि सरचना मे भी अनुकूल परिवर्तन होगे। राजनीतिक एव न्यायिक सस्थाओ के क्षेत्र मे तब्दीलिया होंगी और सामाजिक चेतना बदलेगी।

कम्युनिस्ट समाज के उच्चतर चरण म न तो कोई वग होंगे और न वग विभेद और न ही वहा श्रम की मात्रा और उपभोग की दर मापने की आवश्यकता होगी तथा साथ ही वहा साम्राज्यवादी देशो की ओर स आक्रमण की भी कोई आशका न होगी। फलस्वरूप समाज के राजनीतिक सगठन के रूप मे राज्य धीरे धीरे खत्म हो जायेगा। समाजवादी राज्य तत्र कम्युनिस्ट सामाजिक प्रशासन के रूप मे बदल जायगा।

कम्युनिज्म की ओर सक्रमण के फलस्वरूप समान राजनीतिक, आर्थिक और आध्यात्मिक हितो सौहार्दपूण मित्रता और सहयोग के आधार पर राष्ट्र एक दूसरे के नजदीक आयेंगे।

कम्युनिज्म और समाजवाद के बीच विभेद होने पर भी समाज विकास के इन दो दौरा को बाटने वाली कोई दीवार नही है। यह कहा जा सकता है कि कम्युनिज्म का पौधा समाजवाद मे ही पुष्पित एव पल्लवित होता है। इस तरह काम करने के कम्युनिस्ट तरीके और उत्पादन का कम्युनिस्ट सगठन, मेहनतकश जनता की आवश्यकताओ को सतुष्ट करने के सामूहिक तरीके (सावजनिक भोजन-व्यवस्था बोर्डिंग स्कूल, किंडरगार्टेन बाल विहार इत्यादि) समाजवादी समाज मे ही जन्म लेते और विकसित होते हैं। इसी चरण मे कम्युनिज्म के कई स्पष्ट लक्षण लक्षित और विकसित होते हैं।

२ समाजवाद के कम्युनिज्म मे विकसित होने के वास्तविक नियम

किस प्रकार समाजवाद कम्युनिज्म के रूप मे विकसित होता है ?

इस दुनिया मे कम्युनिस्ट समाज ही अत्यन्त न्यायोचित एव अत्यन्त पूण समाज है। कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियों का अन्तिम उद्देश्य कम्युनिज्म का निमाण करना है।

समाजवाद का कम्युनिज्म के रूप मे विकास वास्तविक नियमों पर आधारित एक ऐतिहासिक प्रक्रिया है। इन नियमो को न तो मनमाने ढग से तोडा मरोडा जा सकता है और न ही नजरअन्दाज किया जा सकता है।

पूजीवाद से समाजवाद म सक्रमण वग सघष की स्थितियो मे होता है। इसके लिए तत्कालीन सामाजिक सम्बधो का जड स उखाड फेंकना होगा और एक बडी सामाजिक क्रान्ति द्वारा सवहारा अधिनायकत्व कायम करना होगा।

समाजवाद से कम्युनिज्म की ओर सक्रमण की बात कुछ और है। समाजवाद कम्युनिज्म के रूप म बिना किसी क्रान्ति के विकसित होता है क्योकि समाज

वाद और कम्युनिज्म दोनों एक ही कम्युनिस्ट सामाजिक आर्थिक संरचना के दो दौर है। कम्युनिज्म की ओर संक्रमण के दौरान कोई शोषक वर्ग नही होते और समाज के सभी सदस्यो—मजदूरो किसानो और बुद्धिजीवियो—की दिलचस्पी कम्युनिज्म के निर्माण म होती है।

यद्यपि कतिपय एतिहासिक परिस्थितियो म ऐसी सम्भावना थी और अब भी है कि कोई देश बिना पूजीवादी दौर स गुजरे समाजवाद म पहुच जाये, किन्तु कोइ भी देश बिना समाजवाद स्थापित किये कम्युनिज्म की स्थापना नही कर सकता। समाजवाद का निर्माण करने के बाद ही कम्युनिस्ट समाज की स्थापना हो सकती है।

समाजवाद स कम्युनिज्म की ओर सक्रमण धीरे धीरे और लगातार होता है। कम्युनिज्म एकाएक नही आ जाता।

समाजवाद से कम्युनिज्म की ओर सक्रमण के दौरान कम्युनिस्ट समाज के दूसरे दौर के लिए आवश्यक भौतिक और आध्यात्मिक पूवस्थितिया धीरे धीरे तयार की जाती हैं।

समाजवाद से कम्युनिज्म की ओर सक्रमण की मुख्य स्थितिया है कम्युनिज्म के भौतिक और तकनीकी आधार का निर्माण जिससे भौतिक समद्धि की प्रचुरता समाजवादी सम्पत्ति क दोनो रूपो का मिलकर एक कम्युनिस्ट सम्पत्ति का रूप धारण कर लेना श्रम का मनुष्य के जीवन की मुख्य आवश्यकता के रूप म विकसित होना शहर और देहात तथा मानसिक और शारीरिक श्रम के बीच बुनियादी फक का खात्मा समाजवादी समाज के वर्गों के बीच सामाजिक-आर्थिक विभेद का मिटना और वगविहीन समाज की ओर सक्रमण, समाज के सभी सदस्यो का सर्वांगीण भौतिक और आध्यात्मिक विकास और सावजनिक सम्पत्ति एव श्रम के प्रति कम्युनिस्ट दृष्टिकोण का विकास।

बिना आवश्यक स्थितिया तयार किये कम्युनिज्म के उच्चतर चरण की ओर सक्रमण नही हो सकता। जरूरी है कि विपुल भौतिक समद्धि लायी जाये और जनता कम्युनिस्ट दृष्टिकोण से काम करने और जिन्दगी बिताने के लिए तयार रहे।

सोवियत सघ की कम्युनिस्ट पार्टी की २२वी कांग्रेस के एक प्रस्ताव मे कहा गया है 'कम्युनिज्म के पूरे पैमाने पर निर्माण के दौरान पार्टी की आन्तरिक नीति को इन महत्वपूर्ण कामो को सम्पन्न करना होगा कम्युनिज्म के भौतिक और तकनीकी आधार का निर्माण, समाजवादी सम्बधों का विकास और कम्युनिस्ट समाज के व्यक्ति की रचना।"[1]

---

[1] "कम्युनिज्म का माग", पृष्ठ ४३।

समाजवाद से कम्युनिज्म की ओर क्रमिक सक्रमण का मतलब मन्द गति से विकास नही है। इसके विपरीत यह सक्रमण अत्यत द्रुत और अभूतपूर्व गति से होता है। उत्पादक शक्तियो और सस्कृति का द्रुत विकास और विज्ञान एव टेक्नालाजी के क्षेत्र मे क्रान्तिकारी छलागें इसकी प्रमुख विशेषताए हैं। कम्युनिस्ट निर्माण के काल म आधुनिक उद्योग बडे पमाने की यत्रीकृत कृषि एव सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था और सस्कृति का बडी तेजी से विकास होता है। लाखो सक्रिय महनतकश इसमें हिस्सा लेते हैं।

तेज वैज्ञानिक एव तकनीकी प्रगति क आधार पर मजदूरो के ऊचे तकनीकी ज्ञान और कम्युनिज्म के निर्माण के सघष मे मेहनतकश जनता की सक्रियता और बढी हुई समपणशीलता के आधार पर सामाजिक उत्पादन निरन्तर बढता है।

कम्युनिस्ट निर्माण एक स्वत स्फूर्त प्रक्रिया नही है, बल्कि आम मेहनतकश जनता के सृजनात्मक काय, उसकी चेतना और सामाजिक उत्पादन के विकास मे उसके सक्रिय सहयोग विज्ञान और सस्कृति का परिणाम है।

कम्युनिज्म का शीघ्र निर्माण वस्तुगत नियमो के ज्ञान और प्रयोग पर निभर है। इन्हीं नियमो के आधार पर समाजवादी समाज कम्युनिस्ट रूपान्तरण के सबसे छोटे और अत्यन्त कुशल रास्ते और तरीके चुनता है।

सोवियत सघ म कम्युनिस्ट समाज के प्रथम चरण—समाजवाद—का निर्माण हो चुका है। सोवियत सघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कायक्रम मे कहा गया है समाजवाद का धीरे धीरे कम्युनिज्म के रूप म विकसित होना एक वस्तुगत नियम है। यह स्थिति पिछले काल म सोवियत समाजवादी समाज के विकसित होने के कारण आयी है।"[1]

सोवियत सघ के आर्थिक एव सामाजिक राजनीतिक जीवन के सभी क्षेत्रो म समाजवाद की महान विजय के परिणामस्वरूप देश पूरे पमाने पर कम्युनिस्ट निर्माण का काय कर रहा है।

सोवियत सघ पूर्ण पमाने पर कम्युनिस्ट निर्माण के दौर में

समाजवाद की पूर्ण और अतिम विजय, अत्यन्त विकसित उत्पादक शक्तियो और उत्पादन के सामाजिक सम्बधो और विज्ञान एव सस्कृति के पल्लवित पुष्पित होने के कारण एसी स्थिति पदा हो गयी है जिसमे कम्युनिस्ट समाज का पौधा दिन व दिन सोवियत सघ म विकसित और पुष्ट होता जा रहा है। सोवियत सघ म कम्युनिस्ट निर्माण मे प्रत्यक सोवियत मजदूर की दिलचस्पी है। यही मूल एव तात्कालिक काय है। कम्युनिस्ट निर्माण क काय एक के बाद एक पूरे किये जाते हैं।

१ "कम्युनिज्म का माग" पृष्ठ ९।

कम्युनिज्म का भौतिक और तकनीकी आधार (जिससे सम्पूर्ण जनसंख्या को विपुल भौतिक एवं सांस्कृतिक समृद्धि प्राप्त होगी) दो दशकों (१९६१-८०) के दौरान निर्मित होगा। सोवियत समाज ऐसी स्थिति में आ जायेगा जहां आवश्यकता के अनुसार वितरण का सिद्धान्त व्यवहार रूप में परिणत होगा और धीरे-धीरे सम्पूर्ण जनता का एकमात्र कम्युनिस्ट स्वामित्व कायम हो जायेगा।

कम्युनिस्ट समाज के निर्माण की प्रक्रिया में वर्ग विभेद खत्म हो जायेंगे और कम्युनिस्ट मेहनतकश जनता का एक वर्गविहीन समाज स्थापित होगा। शहर और गांव तथा मानसिक और शारीरिक श्रम का पारस्परिक विभेद खत्म हो जायेगा। राष्ट्रों का आर्थिक और सैद्धान्तिक दृष्टि से एक बड़ा समुदाय बनेगा। *कम्युनिस्ट समाज का "मानव" जन्म लेगा। उस मानव में विचारधारा की ईमानदारी* और दृढ़ता, उच्च शिक्षा, नैतिक दृढ़ता और शारीरिक पूर्णता का अपूर्व समन्वय होगा। सभी नागरिक सार्वजनिक प्रशासन में हाथ बटायेंगे। समाजवादी जनवाद के व्यापक विकास के परिणामस्वरूप समाज कम्युनिस्ट स्वराज्य के कार्यान्वयन की तैयारी करेगा।

इस तरह अगले बीस वर्षों में सोवियत संघ में कम्युनिस्ट समाज का मुख्य निर्माण-कार्य समाप्त हो जायगा, किन्तु कम्युनिस्ट समाज का पूर्ण निर्माण आगे आने वाली अवधि में होगा।

सोवियत संघ में कम्युनिज्म के निर्माण-कार्य का अन्तर्राष्ट्रीय महत्व है। समाजवाद की ओर सबसे पहले अग्रसर होने वाला सोवियत संघ मानवजाति को कम्युनिज्म की ओर ले जा रहा है। सोवियत संघ में कम्युनिज्म के निर्माण के फलस्वरूप उत्पादक शक्तियों में वृद्धि होगी और देश की आर्थिक शक्ति बढ़ेगी। इस तरह पूंजीवाद के साथ प्रतियोगिता में विश्व समाजवादी व्यवस्था की स्थिति सुदृढ़ होगी। किसी भी पूंजीवादी देश से सोवियत संघ में जीवन-यापन का स्तर ऊंचा होगा। पूंजीवादी देशों के मजदूर वर्ग के क्रान्तिकारी संघर्ष के लिए इसका बड़ा महत्व है।

समाजवादी देशों में कम्युनिज्म की ओर कमोबेश एक साथ संक्रमण

समाजवाद के निर्माण में संलग्न सभी देशों में कम्युनिज्म की ओर संक्रमण अवश्यम्भावी है। सोवियत संघ में कम्युनिज्म की स्थापना का कार्य विश्व समाजवादी व्यवस्था के राष्ट्रों द्वारा कम्युनिस्ट समाज की स्थापना के लक्ष्य का ही एक अंग है।

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी का कार्यक्रम बताता है "चूंकि सामाजिक शक्तियां—मजदूर वर्ग, सहकारी फार्मों में काम करने वाला किसान और जनवादी बुद्धिजीवी—और अर्थव्यवस्था के सामाजिक स्वरूप (समाजवादी सम्पत्ति

के दो रूपो पर आधारित उद्यम) सोवियत सघ एव अन्य समाजवादी देशो मे एक-से ही हैं प्रत्येक देश की ऐतिहासिक और राष्ट्रीय विशिष्टताओ के कारण भिन्नताए होते हुए भी सोवियत सघ और अन्य समाजवादी देशो मे कम्युनिज्म के निर्माण के बुनियादी वस्तुगत नियम समान होगे।"[1]

आज समाजवादी देश विकास के अलग अलग चरणो मे हैं। सोवियत सघ ने कम्युनिज्म का पूरे पमाने पर निर्माण करना प्रारम्भ कर दिया है। अन्य मित्र देश समाजवाद के मुख्य निर्माण काय को पूरा कर रहे हैं या पूरा कर चुके हैं। फलस्वरूप विश्व समाजवादी व्यवस्था के देश विकास के समान स्तर पर नही हैं वे समाजवादी परिपक्वता के अलग-अलग चरणो से गुजर रहे हैं। इस सदभ मे प्रश्न उठता है कि समाजवादी देश कम्युनिज्म की ओर किस प्रकार उन्मुख होगे। क्या ऐसी स्थिति उत्पन्न हो सकती है जब एक समाजवादी देश कम्युनिस्ट समाज का निर्माण कर ले और अन्य देश इस लक्ष्य से कोसो दूर या प्रारम्भिक दौर मे रहे ? नही, ऐसा नही हो सकता।

सभी समाजवादी देश विश्व समाजवादी व्यवस्था के सदस्य हैं और वे इस व्यवस्था के फायदो का इस्तेमाल कर रहे हैं। इस कारण वे समाजवाद की स्थापना म लगने वाले समय म कटौती कर सकेंगे। ऐसी सम्भावना है कि एक ही ऐतिहासिक युग मे कम्युनिज्म की ओर सक्रमण कमोबेश एक साथ होगा।

पूजीवाद क अन्तगत (विशेषकर साम्राज्यवादी दौर म) देशो का असम आर्थिक और राजनीतिक विकास भयकर रूप धारण कर लेता है किन्तु विश्व समाजवादी व्यवस्था के अन्तगत सभी देशो के आर्थिक और सास्कृतिक विकास को क्रमिक रूप से एक स्तर पर लाया जाता है। ऐसा देश भी जो काफी पिछडा हुआ हो अन्य समाजवादी दशा के सहयोग, पारस्परिक सहायता और अनुभवो के द्वारा कम समय मे अपनी अथ व्यवस्था एव सस्कृति को अग्रणी समाजवादी देशो के स्तर पर ला सकता है।

हर देश की जनता के सजनात्मक श्रम द्वारा कम्युनिज्म के लिए भौतिक पूवस्थितियो का निर्माण समाजवादी व्यवस्था को शक्तिशाली बनाने के लिए सभी देशो का योगदान और समाजवादी देशो के सहयोग और पारस्परिक सहायता की दृढीकरण समाजवादी देशो के कम्युनिज्म की ओर कमोवेश एक साथ एक ही ऐतिहासिक काल म सक्रमण का आर्थिक आधार है।

कम्युनिज्म की ओर सबसे पहले सक्रमण करने वाला देश कम्युनिज्म की ओर अन्य समाजवादी देशो के अभियान को तेज करता है और उसका माग प्रशस्त

१ "कम्युनिज्म का मार्ग", पृष्ठ ५७९ ८०।

करता है। कम्युनिज्म के निर्माण द्वारा सोवियत संघ के जनगण सम्पूर्ण मानवजाति के लिए अज्ञात मार्गों को दिखा रहे हैं, अपने अनुभवों से इन मार्गों के औचित्य की परीक्षा कर रहे हैं कठिनाइयों का पता लगाकर उनको दूर करने के लिए साधन खोज रहे हैं और कम्युनिज्म के निर्माण के लिए उचित विधियां और तरीके ढूंढ रहे हैं।

कम्युनिज्म मानवजाति का युगों पुराना स्वप्न है। विश्व समाजवादी व्यवस्था के सभी देशों के लिए यह सपना साकार हो रहा है। अन्ततोगत्वा समस्त मानवजाति कम्युनिज्म की स्थापना करेगी। यही समाज विकास की अवश्यम्भावी प्रवृत्ति होगी।

अध्याय १६

कम्युनिज्म के भौतिक और तकनीकी आधार का निर्माण

कम्युनिज्म और समाजवाद के बीच अन्तर है। कम्युनिज्म म समाजवाद की अपेक्षा उत्पादक शक्तियां अधिक विकसित होती हैं।

समाजवाद से कम्युनिज्म की ओर जाने के लिए आवश्यक है कि कम्युनिज्म का भौतिक एव तकनीकी आधार तयार किया जाये। इसके लिए समाज की उत्पादक शक्तियो को इतना विकसित करना होगा कि भौतिक और सास्कृतिक समृद्धि विपुल मात्रा मे उपलब्ध हो तथा कम्युनिस्ट सम्बधो की स्थापना हो सके।

१ कम्युनिज्म के भौतिक एव तकनीकी आधार के निर्माण के तरीके

कम्युनिज्म के भौतिक और तकनीकी आधार का अथ क्या है?

सोवियत सघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कायक्रम म बताया गया है कि "पार्टी और सोवियत जनता का मुख्य आर्थिक काय दो दशको के भीतर कम्युनिज्म के भौतिक एव तकनीकी आधार का निर्माण करना है।"[1]

कम्युनिज्म के भौतिक एव तकनीकी आधार पर ही कम्युनिस्ट समाज की इमारत खडी हो सकती है। इसके निर्माण के द्वारा ही कम्युनिस्ट निर्माण के सभी काय पूरे किय जा सकते हैं।

कम्युनिज्म के भौतिक और तकनीकी आधार से हमारा स्पष्ट तात्पय राष्ट्रीय अथव्यवस्था की सभी शाखाओ म मशीनो और यत्रो की अत्यन्त विकसित

१ 'कम्युनिज्म का मार्ग', पृष्ठ ५१३।

प्रणाली की प्रधानता से है। इसके विस्तार और तकनीकी स्तर के ऊंचे होने से श्रम उत्पादकता बढ़ती है और भौतिक मूल्यों की विपुलता और आवश्यकता के अनुसार वितरण के सिद्धान्त के कार्यान्वयन की ओर धीरे धीरे संक्रमण की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

पैमाने और तकनीकी स्तर की दृष्टि से कम्युनिज्म का भौतिक एवं तकनीकी आधार समाजवाद से श्रेष्ठ होता है। इस आधार के तत्व समाजवाद में ही जन्म लेते हैं। इसके बाद जरूरत है कि द्रुत तकनीकी प्रगति द्वारा उनके विकास के लिए व्यापक अवसर प्रदान किये जायें।

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम में बताया गया है कम्युनिज्म के भौतिक एवं तकनीकी आधार के निर्माण का मतलब है कि 'सम्पूर्ण देश का विद्युतीकरण किया जाये और इस आधार पर राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रों में सामाजिक उत्पादन के तकनीक टेक्नालाजी और संगठन को पूर्ण किया जाये। उत्पादन प्रक्रियाओं का व्यापक यन्त्रीकरण और उनमें स्वयंचालन का प्रवेश, राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था में रसायनशास्त्र का बड़े पैमाने पर प्रयोग उत्पादन की नयी एवं आर्थिक दृष्टि से कुशल शाखाओं, नये प्रकार की शक्ति और नये पदार्थों का जोर शोर से विकास, प्राकृतिक भौतिक और श्रम के साधनों का हर तरह से और विवेकपूर्ण इस्तेमाल विज्ञान और उत्पादन का पूर्ण सम्मिलन और द्रुत वैज्ञानिक और तकनीकी प्रगति एवं मेहनतकश जनता के लिए उच्च सांस्कृतिक एवं तकनीकी स्तर कम्युनिज्म के भौतिक और तकनीकी आधार के निर्माण के लिए अपरिहार्य हैं। इनके अतिरिक्त पूंजीवादी देशों की तुलना में श्रम उत्पादकता अधिक होनी चाहिए यह कम्युनिस्ट व्यवस्था की विजय के लिए एक अनिवार्य पूर्वस्थिति है।'[१]

इनके फलस्वरूप सोवियत संघ के पास विशाल मात्रा में उत्पादक शक्तियां हो जायेंगी। तकनीकी स्तर की दृष्टि से वह अत्यन्त विकसित पूंजीवादी देशों से भी आगे निकल जायेगा तथा प्रति व्यक्ति उत्पादन की दृष्टि से उसका स्थान विश्व में पहला होगा।

कम्युनिज्म के भौतिक एवं तकनीकी आधार के निर्माण के लिए भारी उद्योगों का और भी विकास आवश्यक है। इसी आधार पर राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की अन्य शाखाएं—कृषि उपभोक्ता वस्तुओं को उत्पन्न करने वाले उद्योग, भवन निर्माण परिवहन एवं संचार और सार्वजनिक सेवा से सम्बंधित शाखाएं (व्यापार सार्वजनिक भोजन व्यवस्था स्वास्थ्य, आवास और कल्याण सेवाएं)—तकनीकी रूप से पुनर्सज्जित हो जायेंगी।

१ 'कम्युनिज्म का मार्ग'', पृष्ठ ५१३।

१९६० की तुलना म समग्र औद्योगिक उत्पादन १९८० मे ६ २ ६ ४ गुना बढेगा। इसी प्रकार उत्पादन के साधनो की पैदावार ६ ८ ७ गुना उपभोक्ता वस्तुओ का उत्पादन ५ ५ २ गुना तथा समग्र कृषि उत्पादन ३ ५ गुना बढेगा।

बीस वर्षीय विकास योजना के परिणामस्वरूप १९८० मे सोवियत सघ गर-समाजवादी विश्व के कुल वतमान औद्योगिक उत्पादन का दुगुना पैदा करेगा।

कम्युनिज्म के भौतिक एव तकनीकी आधार के पूण होने पर सोवियत सघ के पास अभूतपूव मात्रा मे उत्पादक शक्तिया हो जायेंगी।

कम्युनिज्म के भौतिक और तकनीकी आधार के निर्माण के तरीके कम्युनिज्म के भौतिक और तकनीकी आधार के निर्माण के अत्यन्त महत्वपूण तरीको मे सम्पूण देश का विद्युतीकरण एक है।

सोवियत सघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कायक्रम मे बताया गया है "कम्युनिस्ट समाज के निमाण के दौरान जिन कार्यों को सम्पन्न करना है उनकी रूपरेखा निर्धारित करने मे पार्टी का पथ प्रदशन लेनिन के इस महान सूत्र—'कम्युनिज्म = सोवियत सत्ता + पूरे देश का विद्युतीकरण'—से होता है।"[१]

विद्युतीकरण कम्युनिस्ट समाज के निर्माण की रीढ है। आधुनिक वज्ञानिक एव तकनीकी प्रगति म विद्युतीकरण की प्रमुख भूमिका है। पूण विद्युतीकरण के फलस्वरूप उद्योग एव कृषि की सभी शाखाओ म महत्वपूण परिवतन होग। उद्योग, कृषि, परिवहन और अन्य शाखाए उच्चतर तकनीकी आधार पर पहुच जायेंगी।

सस्ती विद्युत शक्ति के कारण शक्ति-सचालित उद्योगो का व्यापक विकास होगा और परिवहन कृषि तथा शहरी एव ग्रामीण सावजनिक सेवाओ का बडे पैमाने पर विद्युतीकरण होगा। १९८० तक सोवियत सघ के विद्युतीकरण का काम मोटे तौर पर समाप्त हो जायेगा।

१९८० तक विद्युत शक्ति का वार्षिक उत्पादन २ ७०० ३ ००० अरब किलोवाट घट हो जायगा। उत्पादन की इस मात्रा पर पहुचने के लिए बडे-बडे बिजलीघर बनाने पडेंगे और सचालन-गृहो (आपरेटिंग स्टेशनो) का विस्तार करना होगा। १८० बडे पन बिजलीघर ३० लाख किलोवाट की क्षमता वाले २०० क्षत्रीय ताप बिजलीघर और २६० अन्य प्रकार के बिजलीघर २० वर्षों म बनाये जाने की योजना है। इसके अतिरिक्त अणु बिजलीघर, खासकर उन क्षेत्रो म जहा शक्ति के स्रोत बहुत कम हैं, बनाये जाने वाले हैं।

इन बीस वर्षों के दौरान समस्त सोवियत सघ के लिए एक एकीकृत विद्युत शक्ति प्रणाली की स्थापना होगी जिसस पूर्वी जिलो स देश के यूरोपीय हिस्से को

---

१ 'कम्युनिज्म का मार्ग', पृष्ठ ५१२।

विद्युत शक्ति भी जा सकेगी। इस विद्युत शक्ति प्रणाली को अन्य समाजवादी देशों की विद्युत शक्ति प्रणालियों से सम्बद्ध किया जायगा।

मशीन निर्माण का विकास कम्युनिज्म के भौतिक एवं तकनीकी आधार की स्थापना के लिए अत्यन्त महत्व का है। स्वयचालित लाइनों और मशीनों आदि मेल्टिंग टेक्नोलॉजी और इलेक्ट्रानिक विधियों तथा परिशुद्धि उपकरणों का विकास भी आवश्यक है।

बीस वर्षों में लगभग २८०० नये द्रुतीनियंत्रित और मल्ल कटिंग संयन्त्र सोवियत संघ में बनेंगे और १६०० पुराने संयन्त्रों की मरम्मत होगी। परिणाम स्वरूप मशीन निर्माण और मल्ल कटिंग उद्योगों का उत्पादन १०-११ गुना बढ़ेगा। इसमें स्वयचालित और अर्द्ध-स्वयचालित लाइनों में होने वाली ६० गुनी वृद्धि भी शामिल होगी।

उद्योग, कृषि, भवन निर्माण, परिवहन, माल लादने और उतारने की प्रक्रियाओं तथा सार्वजनिक सेवाओं में व्यापक यन्त्रीकरण का प्रवेश होगा। उत्पादन के सभी चरणों और प्रक्रियाओं का यन्त्रीकरण होगा। बुनियादी और सहायक दोनों प्रकार के कामों में हाथ से काम करना बन्द हो जायगा।

व्यापक यन्त्रीकरण उद्योग में स्वयचालन लायेगा।

समाजवाद के भौतिक एवं तकनीकी आधार में स्वयचालन के सिर्फ तत्व निहित होते हैं किन्तु कम्युनिज्म के भौतिक एवं तकनीकी आधार के निर्माण के दौरान मशीनों की स्वयचालित प्रणालियां प्रमुख हो जाती हैं। बीस वर्षों (१९६१-८०) के दौरान उद्योगों में चौतरफा यन्त्रीकरण पर आधारित व्यापक स्वयचालन का प्रवेश होगा। उच्चतर तकनीकी एवं आर्थिक कुशलता से सम्पन्न अधिकाधिक खाने एवं कारखाने बनेंगे। साइबरनेटिक्स, इलेक्ट्रानिक संगणकों एवं नियन्त्रण विधियों का उद्योग भवन निर्माण और परिवहन, शोध नियोजन डिजाइन बनाने लेखा सांख्यिकी और प्रबन्ध में व्यापक प्रयोग होगा।

स्वयचालन एवं व्यापक यन्त्रीकरण समाजवादी श्रम के कम्युनिस्ट श्रम के रूप में विकसित होने के लिए भौतिक आधार हैं। स्वयचालन के परिणामस्वरूप श्रम का चरित्र आमूल रूप से बदल जाता है, मजदूरों की कुशलता और तकनीकी दक्षता का स्तर ऊंचा उठता है और मानसिक एवं शारीरिक श्रम के बीच की बुनियादी खाइयां दूर हो जाती हैं।

उत्पादन प्रक्रियाओं का व्यापक यन्त्रीकरण और स्वयचालन राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था में वैज्ञानिक एवं तकनीकी प्रगति को प्रोत्साहित करता है।

कम्युनिज्म के भौतिक और तकनीकी आधार के निर्माण के लिए अर्थ व्यवस्था का रसायनीकरण आवश्यक है।

अभी ही रसायन उद्योग अर्थव्यवस्था की मुख्य शाखाओं में से एक हो गया है। इसमें बने पदार्थों का इस्तेमाल उत्पादन की सभी शाखाओं में और घरेलू आवश्यकताओं के लिए हो रहा है। संश्लिष्ट पदार्थों का उत्पादन रसायन उद्योग की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है।

तरह-तरह की मशीनों और साधनों के निर्माण में संश्लिष्ट पदार्थों का अधिकाधिक प्रयोग हो रहा है। रासायनिक टक्नालाजी के कारण सामानों और श्रम शक्ति की बड़ी बचत हो रही है।

इसलिए यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम ने रसायन उद्योग के त्वरित विकास और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की सभी शाखाओं में आधुनिक रसायनशास्त्र की उपलब्धियों के पूर्ण विकास पर जोर दिया है क्योंकि इससे सार्वजनिक सम्पत्ति बढ़ती है तथा उत्पादन के नये उन्नत और सस्ते साधनों और उपभोक्ता वस्तुओं का उत्पादन बढ़ता है। धातु लकड़ी और अन्य इमारती सामानों के बदले सस्ते व्यावहारिक और हल्के संश्लिष्ट पदार्थों का इस्तेमाल होगा।

२० वर्षों में रसायन उद्योग का कुल उत्पादन १७ गुना बढ़ जायगा और मानवनिर्मित और संश्लिष्ट रेशों का उत्पादन १५ गुना तथा प्लास्टिक एवं रेक्सीन का उत्पादन ६० गुना बढ़ जायगा।

रासायनिक एवं संश्लिष्ट पदार्थों के प्रयोग से भौतिक उत्पादन के मुख्य क्षेत्रों में आमूल गुणात्मक परिवर्तन के लिए मार्ग प्रशस्त हो जाता है। इन परिवर्तनों के फलस्वरूप उत्पादन में तेजी से वृद्धि होती है, उत्पादन की किस्म उन्नत होती है और पूंजीगत व्यय में बचत होती है तथा उत्पादन लागत में कमी आती है।

रसायन उद्योग का त्वरित विकास खनिज उर्वरक और कीटाणुनाशक रसायनों के उत्पादन में तेजी से वृद्धि कृषि के विकास में सहायक होती है। रासायनिक वस्तुओं के बिना न तो सघन खेती हो सकती है और न बुनियादी फसलों तथा गोश्त, दूध एवं अन्य चीजों का उत्पादन ही बढ़ सकता है।

रसायनीकरण के आर्थिक प्रभाव के फलस्वरूप अन्य चीजों के अतिरिक्त उद्योग और कृषि का आम वैज्ञानिक एवं टक्नालाजिकल स्तर उन्नत होता है और श्रम की कार्यकुशलता ऊंची होती है। इस तरह के परिणाम आंकड़ों के रूप में अभिव्यक्त नहीं किये जा सकते लेकिन इससे वे कम मूर्त और प्रभावपूर्ण नहीं हो जाते।

धातुओं और ईंधन का अत्यधिक उत्पादन आधुनिक उद्योग की रीढ़ है और कम्युनिज्म के भौतिक एवं तकनीकी आधार के निर्माण में उसका बड़ा महत्व है। हल्की, अलौह और विरल धातुओं का उत्पादन काफी तेज होगा और

अलुमिनियम का उत्पादन भी काफी बढ़ेगा। आने वाले वर्षों में तेल एवं गैस निष्कषण के विकास को प्राथमिकता दी जायगी। इनका प्रयोग कच्चे माल के रूप में रसायन उद्योग में होगा। कोयला, गैस और तेल को राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का सभी जरूरतों को पूरा करना चाहिए। बीस वर्षों में सोवियत संघ का कोयला उत्पादन २ ३ २ ४ गुना, तेल उत्पादन ४ ७ ४ ८ गुना हो जायगा।

उत्पादन, विशेषीकरण और सहयोग की व्यवस्था में सुधार और सम्बद्ध उद्यमों में समुचित सामंजस्य का कम्युनिज्म के भौतिक एवं तकनीकी आधार के निर्माण में काफी महत्त्व है।

कम्युनिज्म के भौतिक एवं तकनीकी आधार के लिए कृषि के क्षेत्र में विज्ञान एवं टेक्नालाजी की उपलब्धियों तथा प्रगतिशील अनुभवों का बड़े पैमाने पर इस्तेमाल आवश्यक है। कम्युनिज्म के निर्माण के लिए सुदृढ़ उद्योग के साथ ही उन्नत बहुमुखी और अत्यन्त उत्पादक कृषि की आवश्यकता है।

कृषि की उत्पादक शक्तियों के तेज विकास के परिणामस्वरूप दो बुनियादी कार्य होंगे। ये कार्य एक दूसरे से घनिष्ठ रूप में सम्बद्ध होंगे क) जनता के लिए उच्च कोटि के खाद्य पदार्थों एवं उद्योगों के लिए कच्चे मालों का विपुल मात्रा में उत्पादन तथा ख) देहात में सामाजिक सम्बन्धों का क्रमिक रूप से कम्युनिस्ट सम्बन्धों में रूपान्तरण और शहर एवं गाँव के बीच बुनियादी भेद का खात्मा।

रासायनिक प्रक्रियाओं और वस्तुओं का कृषि के क्षेत्र में इस्तेमाल खेती और उसके सघन तरीकों के विकास की दृष्टि से एक क्रान्तिकारी कदम है। रसायनीकरण के फलस्वरूप फसलों के अधिक उत्पादन मवेशियों की उच्च उत्पादकता और श्रम की ऊँची कार्यकुशलता के लिए आधार तैयार हो जाता है। सघन खेती और सिंचित कृषि में परस्पर बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध है। बड़े पैमाने पर सिंचाई व्यवस्था के फलस्वरूप अनाज का उत्पादन बढ़ेगा जिससे सुरक्षा निधि बढ़ेगी तथा देश में अनाज की मात्रा में वृद्धि होगी।

व्यापक यंत्रीकरण और विद्युतीकरण के बिना सघन कृषि का विकास असम्भव है। यंत्रीकरण और विद्युतीकरण के व्यापक होने के परिणामस्वरूप फसलों की खेती और पशुपालन का तेजी से विकास होगा और श्रम की कार्यकुशलता को ऊँचे स्तर पर पहुँचाने में मदद मिलेगी।

कृषि क्षेत्र में उत्पादक शक्तियों के जोर शोर से विकास के फलस्वरूप तकनीकी साधनों और संगठन की दृष्टि से कृषि उद्योग के स्तर पर पहुँच जायेगी। प्रकृति पर कृषि की निर्भरता कम होगी और अन्त में न्यूनतम हो जायेगी।

कम्युनिज्म के भौतिक और तकनीकी आधार के निर्माण में विज्ञान की अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। वैज्ञानिक और तकनीकी प्रगति के द्वारा

प्राकृतिक सम्पत्ति और शक्तियों का पूर्ण प्रयोग सार्वजनिक हित में नये प्रकार की शक्ति के अन्वेषण और नये पदार्थों के निर्माण तथा जलवायु को प्रभावित करने और वाह्य अन्तरिक्ष की गवेषणा के तरीकों के अन्वेषण के लिए होगा। समाज की उत्पादक शक्तियों के अपार विकास में विज्ञान अधिकाधिक निर्णायक भूमिका अदा कर रहा है। मार्क्स की भविष्यवाणी के अनुकूल ही विज्ञान समाज की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण उत्पादक शक्ति हो गया है।

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम में बताया गया है "कम्युनिस्ट समाज के निर्माण में विज्ञान की भूमिका बढ़ाने के लिए पार्टी हर उपाय करेगी उत्पादक शक्तियों के विकास की नयी सम्भावनाओं का ढूंढ़ना और नवीनतम वैज्ञानिक और तकनीकी उपलब्धियों के तेज और व्यापक प्रयोग के लिए अनुसंधान और शोध को प्रोत्साहन देगी, उद्यमों में शोध सहित सभी प्रयोगात्मक कार्यों को निश्चित रूप से आगे बढ़ाने और वैज्ञानिक एवं तकनीकी सूचना सम्बंधी कार्यों का कुशल रूप में संगठित करने तथा प्रगतिशील सोवियत और विदेशी तरीकों के अध्ययन और प्रसारण की पूरी व्यवस्था के विकास के लिए प्रोत्साहन देगी।"[1]

वैज्ञानिक और तकनीकी प्रगति का भविष्य मुख्य रूप से प्राकृतिक विज्ञान की मुख्य शाखाओं की उपलब्धियों पर निर्भर है। गणित, भौतिकी, रसायनशास्त्र और प्राणिशास्त्र के क्षेत्र में ज्ञान का ऊंचा स्तर तकनीकी, चिकित्सा, कृषि एवं अन्य विज्ञानों के क्षेत्र में प्रगति के लिए आवश्यक है।

विज्ञान का विकास और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में वैज्ञानिक उपलब्धियों का प्रयोग कम्युनिस्ट पार्टी और समाजवादी राज्य की जिम्मेदारी है।

श्रम-उत्पादकता में निरन्तर तेज वृद्धि कम्युनिस्ट समाज के निर्माण के लिए काफी महत्वपूर्ण है। लेनिन ने लिखा है "कम्युनिज्म उन्नत तकनीकों का *प्रयोग करने वाले सामाजिक रूप से जागरूक संगठित स्वेच्छा से काम करने वाले* मजदूरों की उच्चतर श्रम उत्पादकता (पूंजीवाद की तुलना में) का ही दूसरा नाम है।"[2]

राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की सभी शाखाओं में विज्ञान और टेक्नालाजी की प्रगति मजदूरों का उच्च सांस्कृतिक स्तर और तकनीकी दक्षता तथा उत्पादन एवं श्रम के उन्नत संगठन के परिणामस्वरूप श्रम उत्पादकता में अपार वृद्धि होती है। बीस वर्षों में औद्योगिक क्षेत्र में श्रम उत्पादकता ४ ४ २ गुनी और कृषि के क्षेत्र में ५ ६ गुनी बढ़ेगी। तब श्रम उत्पादकता की दृष्टि से सोवियत संघ का विश्व में पहला स्थान हो जायगा।

---

[1] "कम्युनिज्म का मार्ग" पृष्ठ ५२ २१।

[2] लेनिन "संकलित रचनाएं" खंड ३, पृष्ठ २५३।

कम्युनिज्म के भौतिक एव तक्नीकी आधार के निर्माण क लिए अपार साधना की आवश्यकता है। १९६१ ८० के दौरान राष्ट्रीय अथ व्यवस्था म पूजी विनियोग करीब २,००० अरब रूबल होगा। यह विनियोग राशि सोवियत राज सत्ता के जीवन काल में हुए कुल पूजी विनियोग के सात गुने स भी अधिक होगी।

कम्युनिज्म के भौतिक एव तक्नीकी आधार के निर्माण के परिणाम कम्युनिज्म के भौतिक और तक्नीकी आधार के निर्माण के फलस्वरूप निम्नलिखित काय होगे पहला—अभूत क्षमता वाली उत्पादक शक्तिया पदा होगी और सोवियत सघ प्रति व्यक्ति उत्पादन की दृष्टि से विश्व मे पहला स्थान प्राप्त करेगा।

दूसरा—श्रम उत्पादकता अधिक होगी सोवियत जनता अत्यन्त आधुनिक तक्नीकी से सम्पन्न होगी और श्रम आनन्द प्रोत्साहन एव सजनात्मक शक्ति के स्रोत के रूप म बदल जायेगा।

तीसरा—भौतिक सम्पत्ति के उत्पादन की वद्धि के फलस्वरूप सोवियत जनता की सभी जरूरतो की पूर्ति होगी, उसको उच्चतम जीवन यापन का स्तर प्राप्त होगा और आवश्यकता के अनुसार वितरण के सिद्धान्त को अपनाने के लिए परिस्थितिया उत्पन्न होगी।

चौथा—समाजवादी उत्पादन सम्बधो का स्थान धीरे धीरे कम्युनिस्ट उत्पादन सम्बध ले लेंगे वगविहीन समाज का निर्माण होगा और शहर एव गाव तथा मानसिक एव शारीरिक श्रम के बीच की बुनियादी खाई दूर होगी।

पाचवा—समाजवाद आर्थिक प्रतियोगिता म पूजीवाद को परास्त करेगा और देश की प्रतिरक्षा शक्ति को इतना मजबूत बनायेगा कि सोवियत सघ या सम्पूर्ण समाजवादी खेमे के ऊपर हाथ उठाने वाले प्रत्येक दुश्मन का करारा जवाब दिया जायेगा।

क्या इन दो दशको म कम्युनिज्म क भौतिक एव तक्नीकी आधार के निर्माण के लिए आवश्यक उपादान उपलब्ध है? हा सोवियत सघ का हर आवश्यक उपादान उपलब्ध हैं। सोवियत सघ म विश्व की सबसे विकसित समाज व्यवस्था है राज्य की बागडोर मेहनतकश जनता क हाथा म है। मजदूरो किसानो और बुद्धिजीवियो क बीच अटूट मत्री है और सोवियत सघ की विभिन्न कौम मत्री-सूत्र म बधी हैं। माक्सवादी लनिनवादी सिद्धान्त और समाज विकास क नियमो क ज्ञान से सम्पन्न कम्युनिस्ट पार्टी सोवियत समाज की पथ प्रदशक शक्ति है।

सोवियत सघ क समान विशाल देश दुनिया म कोई नहीं है। इसका क्षेत्र फल अमरीका क क्षेत्रफल का तिगुना और सभी पश्चिमी यूरोपीय देशो क कुल क्षेत्रफल का करीब चार गुना है। जनसख्या की दृष्टि स सोवियत सघ का विश्व

मे चीन और भारत के बाद तीसरा स्थान है। सोवियत संघ के पास प्राकृतिक साधनों का अक्षय भंडार है। लौह और मैंगनीज अयस्क, तांबा, सीसा, निकल, टंगस्टन, बाक्साइट, पोटैशियम साल्ट, फास्फेट, पीट, कोयला और तेल के ज्ञात भंडार की दृष्टि से सोवियत संघ का विश्व में पहला स्थान है। सोवियत भूगर्भ शास्त्रियों ने प्राकृतिक गैस, हीरे, विरल धातुओं, नाभिकीय कच्चे मालों और अन्य खनिजों का बहुत बड़ी मात्रा में पता लगाया है। सोवियत संघ की नदियाँ और झीलें सस्ती बिजली के अक्षय स्रोत और आवागमन के बढ़िया साधन हैं। सोवियत संघ के पास लकड़ी का बहुत बड़ा भंडार और खेती करने के लिए बहुत बड़ा क्षेत्रफल है। इस तरह राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की सभी शाखाओं के तेज विकास के लिए कच्चे माल उपलब्ध हैं।

समाजवादी निर्माण काल में सोवियत जनता ने आधुनिक मशीनों से सम्पन्न शक्तिशाली उद्योग बनाया है और विश्व में अत्यन्त उन्नत विज्ञान की स्थापना की है। इसके अतिरिक्त आधुनिक प्राविधिक ज्ञान के प्रयोग में दक्ष और उसे उन्नत करने में सक्षम प्रशिक्षित लोगों का एक समूह तैयार किया गया है।

इन सबके परिणामस्वरूप सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम द्वारा निश्चित समय के भीतर कम्युनिज्म के भौतिक एवं तकनीकी आधार के निर्माण के लिए उपयुक्त परिस्थितियाँ पैदा हो गयी हैं और अवसर प्रस्तुत हैं। इसका अर्थ है समाज की मुख्य उत्पादक शक्ति—मनुष्य का और विकास।

२ समाज की मुख्य उत्पादक शक्ति—मनुष्य का विकास

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम में बताया गया है कि कम्युनिज्म के भौतिक और तकनीकी आधार के निर्माण का अर्थ मेहनतकश जनता के लिए उच्च सांस्कृतिक और तकनीकी स्तर प्राप्त करना है जिसके फलस्वरूप मजदूरों की सृजनात्मक पहल को प्रोत्साहन मिलेगा तथा उनके श्रम का चरित्र बदल जायेगा।

इस आधार के निर्माण के लिए सामाजिक उत्पादन को उन्नत करने और विकसित करने में सक्षम अत्यन्त प्रशिक्षित विशेषज्ञों की जरूरत है। इस आधार का निर्माण मेहनतकश जनता के चतुर्दिक विकास की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

समाजवाद के अन्तर्गत मेहनतकश जनता की सांस्कृतिक, शैक्षणिक और काम सम्बन्धी दक्षता का स्तर काफी ऊँचा रहता है। विशेषज्ञों के प्रशिक्षण और शिक्षा की दृष्टि से सोवियत संघ का विश्व में आज पहला स्थान है। १९१४ में वहाँ सिर्फ २८९ वैज्ञानिक संस्थान और १०,२०० शोधकर्ता थे किन्तु १९६३ के प्रारम्भ तक सोवियत संघ में ४,४७६ वैज्ञानिक संस्थान और ३,५४,००० से अधिक

लोपकर्मी हो गये। १९६३ में करीब ९० लाख लोग उच्चतर और विशेषीकृत माध्यमिक स्कूलों में पढ़ रहे थे। उनमें से करीब ३३ लाख उच्चतर शैक्षिक संस्थानों में थे।

स्कूलों, माध्यमिक स्कूलों और उच्चतर शिक्षा संस्थानों के अतिरिक्त तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा के विस्तार के लिए स्कूल में पाठ्यक्रम परिवर्तित किये गये हैं और शाम द्वारा पढ़ाई और पत्राचार द्वारा पाठ्यक्रमों का काफी विस्तार होगा। आज सोवियत संघ में हर तीसरा व्यक्ति किसी न किसी कक्षा में पढ़ रहा है। सांस्कृतिक शिक्षा सर्वमुख व्यापक हो गया है। शिक्षा का स्तर ऊंचा उठने के साथ साथ मेहनतकश जनता का आम सांस्कृतिक स्तर भी ऊंचा उठता है।

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी जनता के सांस्कृतिक स्तर की उन्नति को कम्युनिज्म निर्माण की समस्या का सार मानती है।

आगामी बीस वर्षों में सोवियत संघ की विशाल जनसंख्या का पूर्ण माध्यमिक या उच्चतर शिक्षा प्राप्त होगी। १९८० तक उच्चतर शिक्षा संस्थानों में पढ़ने वाले लोगों की संख्या ८० लाख (१९६० में पढ़ने वालों की संख्या की तिगुनी) हो जायगी। मेहनतकश जनता की व्यावसायिक दक्षता बढ़ाने के लिए विभिन्न विधियों का बड़े पैमाने पर प्रयोग होगा।

उत्पादन के व्यापक मशीनीकरण और स्वयचालन के परिणामस्वरूप मशीनों की स्वयचालित प्रणाली के नियंत्रण, देखरेख, समायोजन और उन्नति का ही काम मुख्य रूप से मजदूरों के लिए रह जायगा। इसके लिए समर्पित ढंग से विकसित और अत्यन्त दक्ष लोगों की जरूरत होगी, जो राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की सभी शाखाओं में काम कर सकेंगे।

कम्युनिज्म के अन्तर्गत तकनीक न सिर्फ मनुष्य की दक्षता में ही परिवर्तन लायगी, बल्कि उसके बौद्धिक दृष्टिकोण को भी बदल देगी। क्षमताओं और प्रतिभाओं के सर्वतोमुखी विकास और प्रत्येक को एक उन्नत बौद्धिक जीवन प्रदान करने के लिए आवश्यक भौतिक परिस्थितियों का निर्माण होगा। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम में बताया गया है, "कम्युनिज्म की ओर संक्रमण का मतलब उस प्रशिक्षण से है जो लोगों को कम्युनिस्ट मना और अत्यन्त सुसंस्कृत बना देता है। लोग शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकार के श्रम के लिए तथा विभिन्न सामाजिक, सरकारी, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में सक्रिय भूमिका अदा करने के लिए तैयार होते हैं।"[१]

---

१ 'कम्युनिज्म का मार्ग', पृष्ठ ५६६।

अध्याय २०

समाजवादी उत्पादन-सम्बधो का कम्युनिस्ट उत्पादन-सम्बधो मे विकास

समाजवाद स कम्युनिज्म की ओर सक्रमण के दौरान उत्पादन के सम्बध (जो उत्पादक शक्तियों से घनिष्ठ रूप मे सम्बद्ध हैं और उनसे प्रभावित होते हैं) उत्पादक शक्तियों के विकास क साथ विकसित और उन्नत होते हैं। उत्पादक शक्तियों के विकास पर आधारित समाजवादी उत्पादन सम्बध कम्युनिस्ट उत्पादन सम्बधो के रूप म क्रमश विकसित होते हैं।

१ समाजवादी स्वामित्व से कम्युनिस्ट स्वामित्व की ओर

समाजवाद के अन्तगत उत्पादन क सम्बध समाजवादी स्वामित्व पर आधारित होते हैं। समाजवादी स्वामित्व दो प्रकार का होता है राजकीय स्वामित्व (सम्पूर्ण जनता का स्वामित्व) और सहकारी स्वामित्व।

कम्युनिज्म की ओर सक्रमण के साथ साथ दोनो प्रकार के समाजवादी स्वामित्व—राजकीय और सहकारी—एक दूसरे के नजदीक आते जाते हैं और अन्ततोगत्वा मिलकर एक कम्युनिस्ट स्वामित्व (सम्पूर्ण जनता का स्वामित्व) को जन्म देते हैं।

कम्युनिस्ट स्वामित्व का उदय राजकीय और सहकारी एव सामूहिक फाम स्वामित्व के व्यापक विकास एव उन्नति के कारण होता है।

कम्युनिज्म की ओर सक्रमण के दौरान राजकीय सम्पत्ति

समाजवादी सम्पत्ति के कम्युनिस्ट सम्पत्ति के रूप म विकसित होने के साथ ही राजकीय सम्पत्ति अधिकाधिक परिपक्व होती है और राष्ट्रीय अथव्यवस्था म उसकी भूमिका और भी महत्वपूर्ण होती जाती है।

नये उद्यमों के निर्माण और औद्योगिक, कृषि एवं परिवहन सम्बन्धी वर्तमान संगठनों के विस्तार के फलस्वरूप सम्पूर्ण राजकीय सम्पत्ति आकार की दृष्टि से बढ़ती जाती है। कम्युनिज्म की ओर प्रगति के फलस्वरूप उत्पादन का पैमाना बढ़ेगा और साथ ही उसकी कुशलता भी बढ़ेगी।

राजकीय सम्पत्ति में गुणात्मक परिवर्तन भी होता है। ये गुणात्मक परिवर्तन समाजीकरण के स्तर में निरन्तर वृद्धि से सम्बन्धित हैं। कम्युनिज्म के विकास के साथ साथ उत्पादन का संकेन्द्रण भी होता जायगा। बड़े, पूर्णरूपेण स्वयंचालित उद्यम बनेंगे। एक एकीकृत विद्युत ग्रिड स्थापित होगा। देश के विभिन्न क्षेत्रों के बीच आर्थिक सम्बन्ध विस्तृत और मजबूत होंगे। श्रम का सामाजिक विभाजन, विशेषीकरण, सहयोग और उद्यमों का संयोजन अभूतपूर्व रूप से विकसित होगा।

राजकीय सम्पत्ति के बढ़ने के साथ उद्यम उन्नत होंगे और कम्युनिस्ट समाज के उद्यमों के रूप में परिवर्तित होंगे। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम के अनुसार इस प्रक्रिया के विशिष्ट सूचक होंगे नयी मशीनें, उत्पादन प्रक्रियाओं और प्रबन्ध एवं नियन्त्रण में स्वयंचालन के अधिकाधिक प्रयोग के फलस्वरूप उत्पादन संगठन और कुशलता के उच्च स्तर, श्रमिकों के सांस्कृतिक एवं तकनीकी स्तर में उन्नति, शारीरिक और मानसिक श्रम में अधिकाधिक ऐक्य और प्रत्येक औद्योगिक उद्यम में इंजीनियरों और तकनीकी विशेषज्ञों की बढ़ती हुई संख्या, शोध का विस्तार और उद्यमों एवं शोध संस्थानों में घनिष्ठ सम्बन्ध, एक दूसरे से बेहतर काम करने का बढ़ता हुआ आन्दोलन, विज्ञान की उपलब्धियों, श्रम संगठन के श्रेष्ठतम रूप और श्रम उत्पादकता बढ़ाने के श्रेष्ठतम तरीकों का प्रयोग, उद्यमों के प्रबन्ध में मजदूर समूहों का हिस्सा और श्रम के कम्युनिस्ट रूपों का प्रसार।

विज्ञान, संस्कृति, सार्वजनिक स्वास्थ्य और सामुदायिक सेवाओं के क्षेत्र में राजकीय सम्पत्ति प्रमुख हो जायगी। कम्युनिस्ट निर्माण की प्रक्रिया में राजकीय स्वामित्व का प्रभाव क्षेत्र निरन्तर विस्तृत होता जायगा। इसके अन्तर्गत श्रम के संगठन के सामाजिक रूप और जीवन यापन की स्थितियाँ आती जायेंगी।

कम्युनिस्ट संक्रमण काल में सामूहिक फार्म की सम्पत्ति और सहकारी सम्पत्ति

कम्युनिज्म की ओर संक्रमण का अर्थ है सामूहिक फार्म की सम्पत्ति और सहकारी सम्पत्ति का पूर्ण विकास और उनकी उन्नति। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम में बताया गया है ... [illegible] व्यवस्था की आर्थिक प्रगति क्रमिक पुनर्गठन और अन्ततोगत्वा ... [illegible] राज सम्पत्ति एवं सम्पूर्ण जनता की सम्पत्ति में

एक कम्युनिस्ट सम्पत्ति के रूप में परिवर्तित होने के लिए स्थितियां पैदा करती है।"[1]

समाजवाद से कम्युनिज्म की ओर संक्रमण के दौरान सामूहिक फार्म के उत्पादन का समाजीकरण उच्चतर स्तर पर पहुंच जायेगा। निम्नलिखित तथ्य इसके सबूत हैं। सामूहिक फार्मों की वितरित न होने वाली कुल परिसम्पत्ति में निरंतर वृद्धि हो रही है। इसके आधार पर सामूहिक फार्म के उत्पादन में और भी वृद्धि होगी। १ जनवरी, १९६३ को उनकी परिसम्पत्ति १९३२ की तुलना में ६० गुना से भी अधिक थी यानी वह ४७०० लाख रूबल से बढ़कर २,८४००० लाख रूबल हो गयी थी।

इसके साथ सामूहिक फार्म की सम्पत्ति और सहकारी सम्पत्ति का गुणात्मक पहलू भी बदलेगा। समूहीकरण के आरम्भिक चरणों में फार्मों ने सिर्फ कृषक सम्पत्ति—घोड़ा, हल, मवेशी और फार्म सम्बन्धी छोटे घर का समाजीकरण कर ही अपनी सम्पत्ति बढ़ायी। आज सामूहिक फार्म की सम्पत्ति में आधुनिक मशीनें—ट्रैक्टर, कम्बाइन हारवेस्टर, लारी इत्यादि हैं। इनका निर्माण किसानों, मजदूरों, इंजीनियरों और वैज्ञानिकों के सामूहिक श्रम द्वारा हुआ है।

सोवियत सरकार कृषि कर्मचारियों के प्रशिक्षण पर करोड़ों रूबल खर्च करती है। बीज, खाद्य पदार्थ, अन्य सामान और करोड़ों रूबल उधार दिये जाते हैं। स्पष्ट है कि सामूहिक फार्म सम्पूर्ण सोवियत जनता और अपने सदस्यों के सहयोग से होने वाले कार्य के परिणामस्वरूप ही सम्पत्ति प्राप्त करते हैं।

कोल्खोज व्यवस्था के भावी विकास का समाजवादी राजकीय नीति का सामूहिक फार्म की सम्पत्ति और सहकारी सम्पत्ति के समाजीकरण के वर्तमान स्तर को ऊंचा उठाने में बड़ा योगदान है। अंततोगत्वा सामूहिक फार्म की सम्पत्ति और सहकारी सम्पत्ति सम्पूर्ण जनता की समाजीकृत सम्पत्ति हो जायगी। कृषक सहकारी समितियों को मशीनें देकर वितरित न होने वाली उनकी सम्पत्ति के विकास को प्रोत्साहित किया जाता है और इस तरह संरचना और सामाजिक चरित्र की दृष्टि से वे उत्पादन के सार्वजनिक साधनों के समान हो जाती हैं।

सामूहिक फार्म उत्पादन का अधिकाधिक विकास हो रहा है। खाद्यान्न और औद्योगिक फसलों के सामूहिक फार्म उत्पादन का बहुत अच्छी तरह समाजीकरण हो गया है। पशु प्रजनन और साग-सब्जी उत्पादन जैसी शाखाओं का कम समाजीकरण हुआ है। वे अब भी सामूहिक फार्म के किसानों के व्यक्तिगत लघु फार्मों में मुख्य रूप से केन्द्रित हैं। कृषि उत्पादन के पर्याप्त रूप से विकसित होने पर ताकि सामूहिक कृषकों की सभी आवश्यकताएं पूरी की जा सकें निजी छोटे

१ 'कम्युनिज्म का मार्ग' पृष्ठ ५२४।

फार्मों का कोई महत्व नहीं रह जायेगा। वे कोई आर्थिक लाभ नहीं प्रदान करेंगे और इस तरह वे लुप्त हो जायेंगे।

उत्पादक शक्तियों के विकास के साथ सामूहिक फार्मों के पारस्परिक सम्बंध भी बढ़ेंगे और उत्पादन का समाजीकरण सामूहिक फार्म विशेष की सीमाओं को पार कर जायेगा। कई सामूहिक फार्मों के साधनों का एकीकरण होगा और संयुक्त उद्यम, सांस्कृतिक और कल्याणकारी संस्थान स्थापित होंगे। फार्म उत्पादन की प्रारम्भिक प्रोसेसिंग तथा भंडार बनाने और उनको एक जगह से दूसरी जगह ले जाने, इमारती सामान बनाने के विभिन्न कारखानों के निर्माण, इत्यादि के लिए राजकीय कोल्खोज बिजलीघर और उद्यम बनेंगे।

जब इस प्रकार की सम्पत्ति पर बहुत से सामूहिक फार्मों का संयुक्त अधिकार हो जाता है तो यह सम्पत्ति बहुत कुछ सार्वजनिक सम्पत्ति के समान हो जाती है।

कृषि के विद्युतीकरण और उत्पादन के यंत्रीकरण तथा स्वयंचालन के विकास के साथ सामूहिक फार्मों के उत्पादन के साधनों और उत्पादन के सार्वजनिक साधनों का एकीकरण होता जा रहा है। उदाहरण के लिए अभी ही मिश्रित राजकीय एवं कोल्खोज उद्यम—बिजलीघर, सिंचाई व्यवस्था, इत्यादि हैं। इनका जन्म राजकीय और सामूहिक फार्मों के साधनों के एकीकरण से हुआ है।

सार्वजनिक परिसम्पत्ति में वृद्धि होने के साथ सार्वजनिक उद्यमों और सांस्कृतिक एवं कल्याणकारी संस्थाओं (बोर्डिंग स्कूल, क्लब, अस्पताल, अवकाश गृह इत्यादि) के निर्माण में सामूहिक फार्मों की भूमिका भी बढ़ती जा रही है।

सामूहिक फार्म ज्यों ज्यों विकसित होंगे, उनके उत्पादन-सम्बंध परस्पर और स्थानीय औद्योगिक उद्यमों के साथ मजबूत होते जायेंगे। विभिन्न उद्यमों को संयुक्त रूप से संगठित करने की व्यवस्था का विस्तार होगा। तब जहां भी आर्थिक दृष्टि से आवश्यक समझा जायेगा कृषि औद्योगिक संगठन बनेंगे। इनके द्वारा कृषि और उसके उत्पादन की औद्योगिक प्रासेसिंग साथ साथ होगी। परिणामस्वरूप कृषि और औद्योगिक उद्यमों में उचित सहयोग और विशेषीकरण होगा और पूरे सालभर श्रम शक्ति एवं उत्पादन के साधनों का पूर्ण और समरूप प्रयोग होगा। इन सबके फलस्वरूप सामूहिक फार्म की सम्पत्ति और सहकारी सम्पत्ति का चरित्र सार्वजनिक सम्पत्ति के समान हो जायेगा।

जब सामूहिक फार्म की सम्पत्ति और सहकारी सम्पत्ति का समाजीकरण सार्वजनिक सम्पत्ति के स्तर पर पहुंच जायगा तब सामूहिक फार्म और सार्वजनिक कृषि उद्यम एक स्तर पर आ जायेंगे। वे अत्यन्त विकसित यंत्रीकृत फार्मों के रूप में परिवर्तित हो जायेंगे। उच्च श्रम उत्पादकता के फलस्वरूप सामूहिक फार्म

आर्थिक दृष्टि से शक्तिशाली हो जायेंगे, उनके सदस्यों की जरूरतों की पूर्ति समाजीकृत सामूहिक सेवाओं से होगी। सबको भोजनालय, बेकरी, लौन्ड्री, बाल विहार, और नर्सरी, क्लब, पुस्तकालय और क्रीड़ा की सुविधाएं मिलेंगी। सामूहिक फार्म के सदस्यों को राष्ट्रीयकृत उद्यमों के मजदूरों की भुगतान दर के अनुसार ही पारिश्रमिक दिया जायगा। सामूहिक फार्म के किसानों को सब तरह की सामाजिक सुरक्षा (पेंशन, छुट्टी, इत्यादि) प्राप्त होगी।

कम्युनिज्म की ओर संक्रमण के साथ मेहनतकश जनता की निजी सम्पत्ति का चरित्र भी बदलेगा। कम्युनिस्ट समाज में प्रत्येक व्यक्ति से उसकी क्षमता के अनुसार काम लिया जायेगा और उसे उसकी आवश्यकता के अनुसार हिस्सा मिलेगा। स्पष्ट है कि तब व्यक्तिगत बचत, निजी मकान, निजी फार्म और इस तरह की अन्य चीजों का महत्व खत्म हो जायगा और वे लुप्त हो जायेंगी। कम्युनिज्म में व्यक्तिगत सम्पत्ति के अन्तर्गत सिर्फ व्यक्तिगत उपयोग की वस्तुएं ही रहेंगी।

अत्यन्त विकसित उत्पादक शक्तियों के आधार पर कम्युनिज्म की ओर संक्रमण के दौरान समाज में सामाजिक-आर्थिक विभेद भी समाप्त हो जायेंगे।

२ सामाजिक-आर्थिक विभेदों का निराकरण

समाजवाद शहर और देहात के परस्पर विरोध को खत्म कर देता है।

शहरी क्षेत्र और ग्रामीण क्षेत्र के बीच विभेद की समाप्ति

बंधुत्वपूर्ण सहयोग और शोषणमुक्त श्रमिकों की पारस्परिक सहायता के आधार पर शहर और देहात के बीच सम्बंध कायम होते हैं। अब शहर और देहात के हित एक-से हैं और एक ही लक्ष्य—कम्युनिज्म के निर्माण से सम्बद्ध हैं।

समाजवाद के अन्तर्गत भी शहर और गांव के बीच विभेद रहता है। इस बुनियादी विभेद का कारण यह है कि शहर में उत्पादन के साधनों पर राजकीय (सार्वजनिक) स्वामित्व रहता है जबकि गांव में उत्पादन के साधनों पर सामूहिक फार्म और सहकारी समितियों का अधिकार रहता है। औद्योगिक उद्यमों की तुलना में तकनीकी साज सामान और श्रम-उत्पादकता सामूहिक फार्मों में कम होती है। गांव की अपेक्षा शहर में सांस्कृतिक और जीवन-यापन का स्तर ऊंचा होता है।

राजकीय और सामूहिक फार्म एवं सहकारी सम्पत्ति के बीच की खाई पटने तथा उनके सम्भावित संयोग के फलस्वरूप शहर और गांव के बीच के विभेद के निराकरण के लिए स्थितियां उत्पन्न हो जाती हैं। जिन तरीकों से राजकीय

और बोल्शाज एवं सहकारी सम्पत्ति में बीच की खाई खत्म होती है उन्हीं तरीकों से शहर और गांव का पारस्परिक विभेद भी खत्म होना है।

उत्पादन शक्तियों के निरंतर विकास और कृषि में मशीनों के अधिकाधिक प्रयोग द्वारा ही शहर और गांव का आपसी विभेद खत्म होगा।

कृषि का तकनीकी रूप से पुनर्सज्जित करने के कारण ग्रामीण जनता की काय कुशलता और तकनीकी स्तर में वृद्धि होगी। आधुनिक कृषि मशीनों का प्रयोग करने वाले सामूहिक फार्म के किसानों का श्रम राजकीय औद्योगिक उद्यमों में लगे मजदूरों के श्रम के समान हो जायगा। कम्युनिज्म के अंतगत कृषि श्रम औद्योगिक श्रम का ही एक रूप होगा।

कम्युनिज्म की ओर क्रमिक संक्रमण के दौरान ग्रामीण क्षेत्र में और भी सांस्कृतिक विकास होगा और जीवन-यापन का स्तर ऊंचा उठेगा। कम्युनिस्ट रूपांतरणों के फलस्वरूप शहरी क्षेत्र की भी रूपरेखा बदलेगी।

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम में बताया गया है "शहरी और ग्रामीण क्षेत्र के पारस्परिक सामाजिक-आर्थिक और सांस्कृतिक विभेदों एवं जीवन-यापन के स्तर की विषमताओं का निराकरण कम्युनिस्ट निर्माण की एक महान उपलब्धि होगा।"[1]

समाजवाद शारीरिक और मानसिक श्रम के परस्पर विलोम को समाप्त कर देता है। समाजवादी समाज में मानसिक और शारीरिक दोनों प्रकार के श्रम करने वालों के हित समान होते हैं। वे एक प्रकार के काम करते हैं तथा सम्पूर्ण जनता के हित के लिए काम करते हैं। दोनों प्रकार के श्रमिकों के बीच घनिष्ठ बंधुत्वपूर्ण सहयोग और पारस्परिक सहायता की भावना समाजवाद की एक खास विशेषता है। मजदूर, किसान और बुद्धिजीवी, सभी उत्पादन के निरंतर विकास और उन्नति में दिलचस्पी रखते हैं।

मानसिक और शारीरिक श्रम के पारस्परिक विभेद का अंत

समाजवाद के अंतर्गत भी मानसिक और शारीरिक श्रम के बीच बुनियादी अंतर होते हैं। सामान्यतः मजदूर और किसान शारीरिक श्रम करते हैं तथा बुद्धिजीवी मानसिक श्रम। बुद्धिजीवियों की अपेक्षा शारीरिक श्रम करने वाले लोगों की शिक्षा और संस्कृति का स्तर नीचा होता है।

कम्युनिज्म की ओर क्रमिक संक्रमण के दौरान मानसिक और शारीरिक श्रम का पारस्परिक बुनियादी अंतर समाप्त हो जायेगा। यह कार्य यंत्रीकरण और स्वयंचालन के द्वारा आधुनिक उत्पादन के विकास के आधार पर होगा।

1 "कम्युनिज्म का मार्ग" पृष्ठ ५३२।

कठिन काय मशीनों द्वारा होगे। मेहनतकश जनता का आम शैक्षणिक और वैज्ञानिक एवं तकनीकी ज्ञान इंजीनियरों तथा कृषिशास्त्रियों के ज्ञान के बराबर हो जायेगा।

मानसिक एवं शारीरिक श्रम के बीच बुनियादी विभेद खत्म हो जाने से प्रत्येक काय मे दोनों प्रकार के श्रम का संयुक्त रूप से प्रयोग होगा। कम्युनिस्ट समाज मे काय करने वाला प्रत्येक व्यक्ति जैसा कि मार्क्स ने कहा था अपनी योग्यताओं का बिना ख्याल किये ऐसा काय करेगा जिसमे मानसिक और शारीरिक दोनों प्रकार के श्रम का प्रयोग होगा।

कम्युनिस्ट समाज मे मेहनतकश जनता का श्रम अत्यन्त यन्त्रीकृत होगा। मजदूर कम्युनिज्म के तकनीक के नियन्त्रण का काय दक्षतापूर्वक सम्पादित करेंगे। उनके काम मे मानसिक श्रम का ही अधिक प्रयोग होगा। शारीरिक श्रम से हमारा मतलब उत्तरोत्तर मशीनों के काय के नियन्त्रण और समजन से होगा। कहने का सार यह है कि व्यापक यन्त्रीकरण और स्वयचालन के प्रयोग से शारीरिक श्रम इंजीनियरों और तकनीकी विशेषज्ञों के श्रम की ही एक किस्म के रूप मे परिणत हो जायेगा।

शारीरिक श्रम के निराकरण को सरल रूप मे नहीं समझना चाहिए। किसी भी प्रकार का श्रम बिना शारीरिक प्रयास के नहीं किया जा सकता। किन्तु मानसिक श्रम प्रधान हो जायेगा और शारीरिक प्रयास के तत्त्व न्यूनतम हो जायेंगे। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कायक्रम मे बताया गया है कम्युनिज्म की विजय के फलस्वरूप "जनता का उत्पादक क्रिया मे मानसिक एवं शारीरिक श्रम का संयोग होगा। बुद्धिजीवी एक भिन्न सामाजिक समुदाय के रूप मे न रहेंगे। हाथ से काम करने वाले मजदूर सांस्कृतिक और टेक्नालाजिकल स्तर की दृष्टि से मानसिक श्रम करने वाले लोगों की बराबरी मे आ जायेंगे।"[1]

वर्ग विभेदों की समाप्ति

कम्युनिस्ट निर्माण के फलस्वरूप वर्गों के बीच विभाजक रेखाएं समाप्त हो जायेंगी और सामाजिक दृष्टि से समरूप समाज बनेगा।

शहर और गांव तथा मानसिक एवं शारीरिक श्रम के बीच विभेद मिट जाने पर समाजवादी समाज के दो मित्र वर्गों—मजदूर वर्ग और कृषक वर्ग—तथा उनकी सामाजिक कोटि—बुद्धिजीवी—के पारस्परिक अन्तर समाप्त हो जायेंगे।

कम्युनिज्म वर्गों एवं सामाजिक कोटियों के बीच समाज का विभाजन खत्म कर देगा। कम्युनिज्म के अन्तगत जनता के बीच न कोई वर्ग रहेंगे और न वर्ग विभेद और सामाजिक विभेद होंगे।

---

१ 'कम्युनिज्म का मार्ग," पृष्ठ ५१०।

कम्युनिज्म जनता में परस्पर समानता लायेगा। कम्युनिज्म के अन्तर्गत समाज में सभी लोगों की समान स्थिति रहेगी और उत्पादन के साधनों की दृष्टि से वे एक ही स्तर पर होंगे। सबको काम और वितरण की दृष्टि से समान सहूलियत होगी। वे सार्वजनिक कार्यों के प्रबन्ध में सक्रिय हिस्सा लेंगे। सार्वजनिक और व्यक्तिगत हितों में समानता होने के कारण व्यक्ति और समाज के बीच मैत्रीपूर्ण सहयोग के सम्बन्ध होंगे।

वर्गों और वर्ग विभेदों के उन्मूलन के बाद जातियों के बीच सम्बन्ध पनपेंगे। वर्ग विभेदों की समाप्ति और कम्युनिस्ट सामाजिक सम्बन्धों के विकास से जातियों के बीच सामाजिक समरूपता आती है और संस्कृति, नैतिक मूल्यों एवं जीवन यापन के तौर तरीकों में समान कम्युनिस्ट विशेषताओं के विकास को प्रोत्साहन मिलता है और पारस्परिक विश्वास और मित्रता बढ़ती है।

जातिगत सम्बन्धों का विकास

समाजवाद के अन्तर्गत जातियां विकसित होती हैं और एक-दूसरे के नजदीक आती हैं। सभी जनगण और राष्ट्र समान मूल हितों से बंधकर एक परिवार का रूप धारण कर लेते हैं तथा एकमात्र लक्ष्य—कम्युनिज्म की ओर बढ़ते हैं।

कम्युनिज्म के निर्माण के साथ जातियों के बीच भौतिक एवं आध्यात्मिक सम्पत्ति का विनिमय उत्तरोत्तर बढ़ता है और प्रत्येक सोवियत जनतन्त्र का कम्युनिस्ट निर्माण के समान लक्ष्य की पूर्ति में योगदान बढ़ता जाता है।

कम्युनिज्म की विजय होते ही सोवियत संघ की विभिन्न जातियां परस्पर और भी नजदीक आयेंगी और उनकी आर्थिक एवं विचारधारा सम्बन्धी समानता बढ़ेगी तथा उनकी आध्यात्मिक संरचना में कम्युनिस्ट विशेषताओं का समावेश होगा। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम में बताया गया है कि "जातिगत विभेदों और खासकर भाषागत विभेदों का उन्मूलन वर्ग विभेदों के उन्मूलन की अपेक्षा लम्बी प्रक्रिया है।"[1]

३ मनुष्य जीवन की प्रमुख आवश्यकता के रूप में श्रम का परिवर्तन

जब मजदूर तकनीकी साज सामान से सम्पन्न हो शारीरिक और मानसिक श्रम के बीच की दुनियादी खाई मिट जाय और लोगों का श्रम के प्रति कम्युनिस्ट दृष्टिकोण हो तब प्रत्येक व्यक्ति का श्रम उसके जीवन की प्रमुख आव

श्रम—मनुष्य जीवन की प्रमुख आवश्यकता

१ कम्युनिज्म का मार्ग', पृष्ठ ५६०।

श्यकता बन जायेगा। श्रम एक स्वस्थ जीवन की क्रियाओं की स्वाभाविक अभिव्यक्ति होगा।

सम्पूर्ण समाज के कल्याण के लिए किया जाने वाला निःशुल्क सृजनात्मक श्रम प्रत्येक व्यक्ति को सुख और आनन्द देगा।

कम्युनिज्म के अन्तर्गत प्रत्येक व्यक्ति को अपनी क्षमता और प्रतिभा के पूर्ण विकास के लिए उचित अवसर मिलेगा। प्रत्येक व्यक्ति निजी और सामाजिक हित को ध्यान में रखकर अपने काम का चुनाव करेगा।

एंगल्स ने लिखा: "कम्युनिज्म के अन्तर्गत ... उत्पादन का इस तरह का सगठन होना चाहिए, जिसमें एक ओर तो कोई व्यक्ति उत्पादक श्रम का—जो मानव अस्तित्व की एक अनिवार्य शर्त है—अपना हिस्सा दूसरों के सिर पर नहीं डाल पायेगा और दूसरी ओर उत्पादक श्रम मनुष्यों को पराधीन बनाने का साधन नहीं रहेगा, बल्कि वह प्रत्येक व्यक्ति को अपनी समस्त शारीरिक एवं मानसिक क्षमताओं का चौमुखी विकास करने तथा पूर्ण प्रयोग करने का अवसर देगा तथा इस प्रकार मनुष्य की मुक्ति का साधन बन जायेगा और इसलिए उसमें उत्पादक श्रम मनुष्य का भार नहीं प्रतीत होगा बल्कि उसके लिए आनन्द का स्रोत बन जायेगा।"[1]

कम्युनिस्ट समाज में हर काम करने वाला व्यक्ति इंजीनियर और मजदूर दोनों का कार्य करेगा। साथ ही समाज का हर स्वस्थ सदस्य राजनीतिक कार्यों में सक्रिय हिस्सा लेगा। मनुष्य की योग्यताएं और प्रतिभाएं पुष्पित होंगी और जीवन के सभी क्षेत्रों में उनका इस्तेमाल होगा। सामान्यतया श्रम का आदर सम्मान किया जायगा और यही मनुष्य की योग्यता का मापदण्ड होगा।

समाजवाद के अन्तर्गत हर मेहनतकश द्वारा अपने कर्त्तव्य का निर्वाह—अपनी पूरी योग्यता के साथ कार्य का सम्पादन—भौतिक और नैतिक प्रोत्साहनों द्वारा होता है। किन्तु कम्युनिस्ट समाज में सदस्यों को उनकी चेतना ही काम करने के लिए प्रोत्साहित करेगी। कम्युनिस्ट समाज में किसी भी व्यक्ति के लिए काम न करना असम्भव है। जनमत और उसकी अपनी चेतना उसे काम करने के लिए प्रोत्साहित करेगी। अपनी योग्यता के अनुसार काम करना आदत बन जायगा। समाज के हर सदस्य के लिए मुख्य आवश्यकता बन जायेगा।

श्रम के जीवन की प्रमुख आवश्यकता बन जाने पर श्रम के प्रति एक नवीन कम्युनिस्ट दृष्टिकोण उत्पन्न होता है। कम्युनिज्म के अन्तर्गत श्रम की चर्चा करते हुए लेनिन ने लिखा: "संकुचित और ठीक अर्थ की दृष्टि से कम्युनिस्ट श्रम का मतलब समाज की भलाई के लिए किया गया निःशुल्क श्रम है। यह श्रम किसी

[1] फ्रेडरिक एंगल्स—"ड्यूहरिंग मत खण्डन", पृष्ठ ४०८।

निश्चित दायित्व के रूप में और किन्ही खास वस्तुओं की प्राप्ति के लिए नही होता और न ही परम्परागत और कानूनी तौर पर निश्चित दर से होता है। यह श्रम बिना किसी निश्चित दर के और बिना किसी पुरस्कार की आशा और प्रलोभन के स्वेच्छा से किया जाता है। यह श्रम सामूहिक कल्याण के लिए काम करने की आदत और चेतना इच्छा का परिणाम होता है। *यह श्रम स्वस्थ जीवन के लिए* आवश्यक होता है।'[1]

श्रम के प्रति नवीन कम्युनिस्ट दृष्टिकोण समाजवादी समाज में ही उत्पन्न होने लगता है। भावी कम्युनिस्ट समाज का मानव कम्युनिज्म के लिए संघर्ष के दौरान श्रम और सामाजिक क्रियाकलाप की प्रक्रिया में उत्पन्न होता है। कम्युनिज्म का निर्माण करोड़ो मजदूर अपने सृजनात्मक कार्य के द्वारा करते हैं। उनकी चेतना जितनी ही ऊंची और उनकी क्रिया जितनी ही पूर्ण और व्यापक होगी, कम्युनिज्म के भौतिक और तकनीकी आधार का निर्माण उतनी ही तेजी से होगा। कम्युनिज्म और श्रम अभिन्न हैं। सिर्फ काम के द्वारा ही मानवजाति के उज्ज्वल भविष्य—कम्युनिज्म का निर्माण हो सकता है। इसलिए यह महत्वपूर्ण हो जाता है कि लोगों को इस प्रकार प्रशिक्षित किया जाय कि वे श्रम को जीवन की प्रमुख आवश्यकता के रूप में देखें और उसकी इज्जत करें।

कम्युनिस्ट तरीके से काम करना और जीवन बिताना सीखना

पूरे पैमाने पर कम्युनिस्ट निर्माण कार्य के दौरान श्रम के प्रति कम्युनिस्ट दृष्टिकोण का पनपना अत्यन्त आवश्यक है। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम में बताया गया है *समाज के सभी सदस्यों में श्रम के प्रति कम्युनिस्ट दृष्टिकोण पैदा करना पार्टी का मुख्य शैक्षणिक कार्य है। समाज के हित के लिए श्रम करना सबका पुनीत कर्तव्य है।*[2]

सोवियत संघ में श्रम के प्रति कम्युनिस्ट दृष्टिकोण पैदा करने में ट्रेड यूनियनों, तरुण कम्युनिस्ट लीग और विद्यालयों की प्रमुख भूमिका होती है।

लेनिन के अनुसार ट्रेड यूनियनें कम्युनिज्म की पाठशाला हैं। ये औद्योगिक अनुशासन को मजबूत करती हैं और समाजवादी अनुकरण आन्दोलन को प्रोत्साहित करती हैं, श्रम के उन्नत तरीकों के प्रयोग को प्रोत्साहन देती हैं और मेहनतकश जनता के बीच व्यापक सांस्कृतिक कार्य करती हैं।

तरुणों में श्रम के प्रति कम्युनिस्ट दृष्टिकोण को बढ़ावा देने में तरुण कम्युनिस्ट लीग की बहुत बड़ी भूमिका होती है। तरुण कम्युनिस्ट लीग श्रम की कठिन

---

[1] लेनिन 'संकलित रचनाएं', खंड ३, पृष्ठ ३६८।

[2] 'कम्युनिज्म का मार्ग', पृष्ठ ५६५।

रामातें दिमान के लिए तरुणों का आह्वान करती है। वह कम्युनिज्म के तरुण निर्माताओं में समाज के प्रति कर्तव्य भावना का ममावेश करती है।

श्रम के प्रति कम्युनिस्ट दृष्टिकोण पैदा करने में स्कूल का बड़ा हाथ होता है। यह विविध ज्ञान-सम्पन्न लोगों काम करने और भौतिक सम्पत्ति उत्पन्न करने में सक्षम लोगों को शिक्षित करना है।

श्रम के प्रति कम्युनिस्ट दृष्टिकोण आर्थिक योजनाओं को पूरा करने या लक्ष्य से आगे निकल जाने के लिए चलने वाले निस्वार्थ संघर्ष में अभिव्यक्त होता है। यह दृष्टिकोण समाजवादी प्रतियोगिता खास तौर से तूफानी मजदूर' और कम्युनिस्ट वर्क कलेक्टिव की उपाधि पाने के लिए होने वाली प्रतियोगिता में तथा परती और बेकार जमीन को जोतने आदि के लिए सोवियत जनता के देशभक्तिपूर्ण आन्दोलनों में अभिव्यक्त होता है।

कम्युनिस्ट श्रम को व्यवहार में लाने के लिए एक जन आन्दोलन सारे देश में फैल गया है। सैकड़ों-हजारों सामूहिक सस्थाएं टीम विभाग क्षेत्र और उद्यम इस आन्दोलन में हिस्सा ले रहे हैं।

कुछ ही वर्षों में २६० लाख लोग इस आन्दोलन में शामिल हो गये हैं। प्रत्येक दूसरा या तीसरा मजदूर कम्युनिस्ट श्रम के तूफानी मजदूर की उपाधि प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील है। सब सदस्य इस नारे पर चलते हैं कम्युनिस्ट तौर-तरीके से काम करना और जीवन बिताना सीखो।'

अपने काम में दक्ष होते हुए कम्युनिस्ट वर्क कलेक्टिव और तूफानी मजदूर अपनी सफलताओं से सन्तुष्ट नहीं हो जाते। वे रूढ़िवाद के खिलाफ दृढ़ता पूर्वक संघर्ष करते हैं और विकसित तकनीकों मशीनों और श्रम संगठन को व्यवहार में लाने के लिए प्रयत्न करते हैं। अपने क्षेत्रों को अग्रणी बनाने के बाद उनमें से सबसे अच्छे लोग पिछड़े और कठिन क्षेत्रों के अपने साथियों की मदद करने के लिए उन्मुख होते हैं।

कम्युनिस्ट वर्क कलेक्टिव और तूफानी मजदूर' परिवार के भीतर दूसरे लोगों के साथ मानवीय सम्बंध कायम करना चाहते हैं जो कम्युनिस्ट नैतिकता के मानदण्डों के अनुकूल हो।

कम्युनिज्म का निर्माता उच्च विचारों और नैतिक सिद्धान्तों वाला व्यक्ति होता है। इस कम्युनिज्म के निर्माता की नैतिक संहिता में स्पष्ट रूप से रखा गया है। इस संहिता में निम्नलिखित सिद्धान्त हैं

कम्युनिस्ट आदर्श के प्रति निष्ठा समाजवादी मातृभूमि एवं अन्य समाजवादी देशों के लिए प्रेम भाव

गमाज की भलाई के लिए निष्ठापूर्वक श्रम—जो काम नहीं करेगा, वह खायेगा भी नहीं,

सार्वजनिक स्वास्थ्य बनाये रखने और उसके विकास के लिए प्रत्येक के मन में चिंता

सार्वजनिक कर्तव्य की भावना से ओतप्रोत होना सार्वजनिक हित के लिए घातक कार्यों का सहन नहीं करना

सामूहिकता की भावना और बंधुत्वपूर्ण पारस्परिक सहयोग—प्रत्येक व्यक्ति सबके लिए और सब प्रत्येक के लिए,

व्यक्तियों के बीच मानवीय सम्बन्ध और परस्पर प्रतिष्ठा का भाव—हर व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के लिए मित्र साथी और भाई है

ईमानदारी और सच्चाई नैतिक शुद्धता विनम्रता और सामाजिक एवं निजी जीवन में दिखावापन न होना

अन्याय, परजीविता बेईमानी पदलोलुपता और धन बटोरने की भावना के प्रति समझौता न करने का दृष्टिकोण

सोवियत संघ के सभी जनगण के बीच मित्रता और भाईचारे का भाव जाति और रंगभेद पर आधारित घृणा का सहन न करना

कम्युनिज्म शान्ति और राष्ट्रों की स्वतंत्रता के शत्रुओं से समझौता न करना,

सभी देशों के मेहनतकशों और जनगण से बंधुत्वपूर्ण ऐक्य भाव।

श्रम के प्रति नया कम्युनिस्ट दृष्टिकोण पनपने और श्रम का जीवन की मुख्य आवश्यकता बन जाने तथा साथ ही सामाजिक आर्थिक विभेदों के खत्म हो जाने पर भौतिक समृद्धि के वितरण की व्यवस्था में सुधार को प्रोत्साहन मिलेगा।

४ वितरण के कम्युनिस्ट सिद्धान्त की ओर संक्रमण

कम्युनिस्ट निर्माण के दौरान उत्पादन के समाजवादी सम्बधों के विकसित और उन्नत होने का मतलब है भौतिक और आध्यात्मिक सम्पत्ति के वितरण के रूपों का विकास।

कम्युनिज्म की ओर संक्रमण के फलस्वरूप वितरण के समाजवादी सिद्धान्त—'प्रत्येक से उसकी क्षमता के अनुसार काम लिया जाय और प्रत्येक को उसके काम के अनुसार हिस्सा दिया जाय"—के स्थान पर वितरण का कम्युनिस्ट सिद्धान्त— 'प्रत्येक से उसकी क्षमता के अनुसार काम लिया जाय और प्रत्येक को उसकी आवश्यकता के अनुसार हिस्सा दिया जाये' —आ जायेगा।

मार्क्स ने लिखा है "व्यक्ति को श्रम विभाजन के प्रति दासता और उसके साथ ही मानसिक और शारीरिक श्रम की परस्पर विषमता के समाप्त हो जाने, जीवन के एक साधन के रूप में नहीं बल्कि जीवन की एक प्रमुख आवश्यकता के रूप में श्रम के परिवर्तित हो जाने, व्यक्ति के सर्वांगीण विकास के साथ ही उत्पादक शक्तियों में अपार वृद्धि हो जाने और सहकारी सम्पत्ति के अनन्त स्रोत के मुक्त हो जाने के बाद ही समाज अपने पताके पर लिखेगा : प्रत्येक व्यक्ति से उसकी क्षमता के अनुसार काम लिया जाये और प्रत्येक को उसकी आवश्यकता के अनुसार हिस्सा दिया जाये।"[1]

वितरण के कम्युनिस्ट सिद्धान्त की ओर संक्रमण के लिए सर्वप्रथम यह जरूरी है कि इतना उत्पादन हो कि समाज को विपुल मात्रा में भौतिक एवं सांस्कृतिक सम्पत्ति उपलब्ध हो और प्रत्येक व्यक्ति को हर प्रकार की चीजें उपभोक्ता वस्तुएं—खाद्य पदार्थ, वस्त्र, जूता और सांस्कृतिक एवं कल्याणकारी चीजें—स्कूल, नाट्यशाला, सिनेमा, रेडियो, परिवहन, घर इत्यादि पर्याप्त मात्रा में प्राप्त हों।

वितरण के कम्युनिस्ट सिद्धान्त की ओर संक्रमण के लिए क्या जरूरी है ?

जीवन की अनिवार्य वस्तुओं की विपुलता हो जाने और 'प्रत्येक को उसकी आवश्यकता के अनुसार हिस्सा देने' के सिद्धान्त के व्यवहार में आने का मतलब है कि प्रत्येक व्यक्ति को (समाज में उसकी स्थिति और उसके काम की मात्रा और किस्म जो भी हो) समाज में अपनी आवश्यकतानुसार हर चीज प्राप्त होगी। आवश्यकता के अनुसार वितरण के कम्युनिस्ट सिद्धान्त की व्याख्या पूंजीवादी भाड़ दृष्टिकोण में नहीं की जा सकती कि हर आदमी को हर चीज उसकी इच्छानुसार मात्रा में मिले। आवश्यकता के अनुसार वितरण का मतलब है कि कम्युनिज्म के अन्तर्गत सामूहिक जीवन के नियमों को मानने वाले सुशिक्षित एवं सुसंस्कृत मनुष्य की उचित आवश्यकताओं की पूर्ति हो। इसके फलस्वरूप मनुष्य अपने और अपने परिवार के लिए जीवन की अनिवार्य वस्तुएं जुटाने की चिन्ता से मुक्त हो जायेगा।

जब तक समाज के प्रत्येक सदस्य में कम्युनिस्ट चेतना नहीं आती और वह श्रम के प्रति कम्युनिस्ट दृष्टिकोण नहीं अपनाता, तब तक जीवन यापन के लिए आवश्यक वस्तुओं का कम्युनिस्ट सिद्धान्त के अनुसार वितरण नहीं हो सकता। यह आवश्यक है कि लोग अपनी क्षमता के अनुसार काम करने की आदत डालें।

जब तक वितरण के कम्युनिस्ट सिद्धान्त को अपनाने के लिए आवश्यक परिस्थितियां नहीं उत्पन्न हो जाती तब तक समाज श्रम और उपभोग की मात्रा

[1] मार्क्स और एंगेल्स, 'संकलित रचनाएं", खण्ड २ मास्को, पृष्ठ २४।

पर बड़ा नियंत्रण रखेगा और उत्पादन का वितरण काम की मात्रा और किस्म के अनुसार करेगा।

श्रम की मात्रा के अनुसार वितरण श्रम उत्पादकता मजदूरों की ऊंची दक्षता तथा उत्पादन तकनीक के विकास को बढ़ाता है और लोगों की अपनी योग्यता के अनुसार काम करने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करता है तथा कम्युनिज्म की ओर प्रगति को बढ़ावा देता है।

वितरण का समाजवादी सिद्धान्त वितरण के कम्युनिस्ट रूपों के विकास में बाधा नहीं डालता, बल्कि उसे पूरी तरह प्रोत्साहित करता है। वितरण के कम्युनिस्ट रूप एकाएक पूर्ण विकसित होकर नहीं प्रकट होंगे बल्कि श्रम के अनुसार वितरण के समाजवादी तरीकों के साथ साथ विकसित होंगे। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की २२वीं कांग्रेस ने बताया कि श्रम के अनुसार वितरण के कम्युनिस्ट सिद्धान्त की ओर

सार्वजनिक कोष कम्युनिस्ट वितरण का मार्ग

संक्रमण क्रमिक रूप में होगा। २२वीं कांग्रेस ने दोनों सिद्धान्तों को संयुक्त रूप से अपनाने पर जोर दिया, क्योंकि जब तक भौतिक सम्पत्ति का उत्पादन विपुल मात्रा में नहीं होगा तब तक श्रम के अनुसार वितरण के सिद्धान्त का परित्याग नहीं होगा। इस सिद्धान्त के परित्याग का मतलब होगा कि सम्पूर्ण संचित साधन खत्म हो जायेंगे और आर्थिक विकास के मार्ग में बाधा पड़ेगी। फलस्वरूप कम्युनिस्ट समाज का निर्माण नहीं हो सकेगा। दोनों सिद्धान्तों को संयुक्त रूप से अपनाने पर समाजवाद से कम्युनिज्म की ओर संक्रमण के दौरान भौतिक और सांस्कृतिक सम्पत्ति का अधिकाधिक भाग सार्वजनिक उपभोग कोष से, काम की मात्रा और किस्म का बिना विचार किये समाज के सदस्यों में निःशुल्क वितरित होगा।

सोवियत संघ की मेहनतकश जनता को सार्वजनिक कोष से अभी ही एक बड़ी राशि प्राप्त हो रही है।

सोवियत संघ में ३६० लाख से अधिक पेंशनयाफ्ता लोगों का भरण पोषण सार्वजनिक कोष से होता है। करीब ४० लाख से अधिक विद्यार्थियों को राजकीय छात्रवृत्ति और छात्रावास की सुविधाएं प्राप्त हैं। १२० लाख से अधिक मेहनतकश लोग और उनके बच्चे अपनी वार्षिक छुट्टियां आरोग्य गृहों, अवकाश गृहों और तरुण पायनियर शिविरों में सामाजिक बीमे और सामूहिक फार्मों के खर्च से बिताते हैं।

१९६४ में सार्वजनिक उपभोग कोष की राशि ३,६६ ००० लाख रूबल थी जो १९४० की कुल राजकीय बजट राशि की दुगुनी थी। १९८० में इस मद पर २५ ५० ०००—२६ ५० ००० लाख रूबल खर्च होंगे।

कम्युनिज्म की ओर सक्रमण के साथ समाज प्रत्येक व्यक्ति का बचपन से लेकर बुढ़ापे तक अधिक ख्याल करने लगेगा। हर तरह की विशेष चिकित्सा का प्रबंध किया जायगा। बच्चों के लिए आवश्यक सस्थाओं का काफी विस्तार होगा जिससे प्रत्येक परिवार अगर चाहे तो अपने हर उम्र के बच्चों को शिक्षा सस्थाओं मे भेज सकेगा। राज्य, ट्रेड यूनियनें और सामूहिक फार्म अपंग या बूढ़ा होने के कारण काम करने में अक्षम लोगों का ध्यान रखें।

बीस वर्षों (१९६१-१९८०) के बाद सार्वजनिक उपभोग कोष की राशि वास्तविक राष्ट्रीय आय के करीब आधे के बराबर होगी। सोवियत सघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम के अनुसार तब सार्वजनिक व्यय से निम्नलिखित काम हो सकेंगे

बाल सस्थानों और बोर्डिंग स्कूलों में बच्चों का नि शुल्क भरण पोषण (अगर अभिभावक चाहें तो),

सभी शैक्षणिक सस्थाओं में विद्यार्थियों को नि शुल्क शिक्षा

सभी नागरिकों को मुफ्त चिकित्सा सेवा स्वास्थ्य-गृहों में रुग्ण व्यक्तियों को नि शुल्क दवा और चिकित्सा

मुफ्त मकान और नि शुल्क सामुदायिक सेवाएं

नि शुल्क म्युनिसिपल परिवहन सुविधाएं

कतिपय सार्वजनिक सेवाएं मुफ्त प्रदान करना

अवकाश गृहों बोर्डिंगहाउसों पर्यटक शिविरों और खेलकूद की सुविधाओं के शुल्क में निरंतर कमी और आंशिक तौर पर उनका नि शुल्क उपयोग

जनता को अधिकाधिक फायदे सुविधाएं और छात्रवृत्तियां (अविवाहित माताओं बहुसंख्य बच्चों वाली माताओं को अनुदान और छात्रों को छात्रवृत्तियां)

उद्यमों और सस्थाओं में तथा सामूहिक फार्म के किसानों के लिए नि शुल्क सार्वजनिक भोजनालय (दोपहर का खाना) की धीरे धीरे व्यवस्था।

इन लक्ष्यों की पूर्ति के परिणामस्वरूप सोवियत सघ वितरण के कम्युनिस्ट सिद्धान्त की कार्यान्विति की ओर जोर शोर से अग्रसर होगा।

कम्युनिज्म की ओर सक्रमण के फलस्वरूप उत्पादन-सम्बंध विकसित और उन्नत होंगे और उपरि-सरचना में महत्वपूर्ण परिवर्तन होंगे।

५ समाजवाद से कम्युनिज्म की ओर सक्रमण के दौरान समाज का राजनीतिक सगठन, राजकीय सरचना और प्रशासन

सर्वहारा अधिनायकत्व से सम्पूर्ण जनता के राज्य की ओर

मार्क्सवाद-लेनिनवाद के अनुसार राजसत्ता आर्थिक आधार पर खड़ी राजनीतिक उपरि-सरचना का एक भाग होती है। आर्थिक आधार में परिवर्तन होने पर उपरि-सरचना भी बदलती है।

पर कड़ा नियंत्रण रखेगा और उत्पादन का वितरण काम की मात्रा और किस्म के अनुसार करेगा।

श्रम की मात्रा के अनुसार वितरण श्रम उत्पादकता मजदूरों की ऊंची दक्षता तथा उत्पादन तकनीकों के विकास को बढ़ाता है और लोगों की अपनी योग्यता के अनुसार काम करने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करता है तथा कम्युनिज्म की ओर प्रगति को बढ़ावा देता है।

वितरण का समाजवादी सिद्धान्त वितरण के कम्युनिस्ट रूपों के विकास में बाधा नहीं डालता बल्कि उसे पूरी तरह प्रोत्साहित करता है। वितरण के कम्युनिस्ट रूप एकाएक पूर्ण विकसित होकर नहीं प्रकट होंगे बल्कि श्रम के अनुसार वितरण के समाजवादी तरीकों के साथ साथ विकसित होंगे। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की २२वीं कांग्रेस ने बताया कि श्रम के अनुसार वितरण के कम्युनिस्ट सिद्धांत की ओर संक्रमण क्रमिक रूप में होगा। २२वीं कांग्रेस ने दोनों सिद्धान्तों को संयुक्त रूप से अपनाने पर जोर दिया क्योंकि जब तक भौतिक सम्पत्ति का उत्पादन विपुल मात्रा में नहीं होगा तब तक श्रम के अनुसार वितरण के सिद्धांत का परित्याग नहीं होगा। इस सिद्धांत के परित्याग का मतलब होगा कि सम्पूर्ण संचित साधन खत्म हो जायेंगे और आर्थिक विकास के मार्ग में बाधा पड़ेगी। फलस्वरूप कम्युनिस्ट समाज का निर्माण नहीं हो सकेगा। दोनों सिद्धान्तों को संयुक्त रूप से अपनाने पर समाजवाद से कम्युनिज्म की ओर संक्रमण के दौरान भौतिक और सांस्कृतिक सम्पत्ति का अधिकाधिक भाग सार्वजनिक उपभोग कोष से काम की मात्रा और किस्म का बिना विचार किये समाज के सदस्यों में निःशुल्क वितरित होगा।

सार्वजनिक कोष कम्युनिस्ट वितरण का मार्ग

सोवियत संघ की मेहनतकश जनता को सार्वजनिक कोष से अभी से एक बड़ी राशि प्राप्त हो रही है।

सोवियत संघ में ३६० लाख से अधिक पेंशनयाफ्ता लोगों का भरण-पोषण सार्वजनिक कोष से होता है। करीब ५० लाख से अधिक विद्यार्थियों को राजकीय छात्रवृत्ति और छात्रावास की सुविधाएं प्राप्त हैं। १७० लाख से अधिक मेहनतकश लोग और उनके बच्चे अपना वार्षिक छुट्टियां आरोग्य-गृहों, अवकाश गृहों और तरुण पायनियर शिविरों में सामाजिक बीमा और सामूहिक फार्मों के कोष से बिताते हैं।

१९६४ में सार्वजनिक उपभोग कोष की राशि 3,६६ ००० लाख रूबल थी जो १९४० की कुल राजकीय बजट राशि की दुगुना थी। १९८० में इस मद पर २४ ५० ०००— ६ ५० ००० लाख रूबल खर्च होंगे।

कम्युनिज्म की ओर सक्रमण के साथ समाज प्रत्येक व्यक्ति का बचपन से लेकर बुढ़ापे तक अधिक ख्याल करने लगेगा। हर तरह की विशेष चिकित्सा का प्रबंध किया जायगा। बच्चों के लिए आवश्यक संस्थाओं का काफी विस्तार होगा जिनसे प्रत्येक परिवार अगर चाहे तो अपने हर उम्र के बच्चों को शिक्षा संस्थाओं में भेज सकेगा। राज्य ट्रेड यूनियनें और सामूहिक फार्म अपंग या बूढ़ा होने के कारण काम करने में अक्षम लोगों का ध्यान रखें।

बीस वर्षों (१९६१ ८०) के बाद सार्वजनिक उपभोग कोष की राशि वास्तविक राष्ट्रीय आय के करीब आधे के बराबर होगी। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम के अनुसार तब सार्वजनिक व्यय में निम्नलिखित कार्य हो सकेंगे

बाल संस्थाओं और बोर्डिंग स्कूलों में बच्चों का निःशुल्क भरण पोषण (अगर अभिभावक चाहें तो)

सभी शैक्षणिक संस्थाओं में विद्यार्थियों को निःशुल्क शिक्षा

सभी नागरिकों को मुफ्त चिकित्सा सेवा स्वास्थ्य-गृहों में रुग्ण व्यक्तियों को निःशुल्क दवा और चिकित्सा

मुफ्त मकान और निःशुल्क सामुदायिक सेवाएं

निःशुल्क म्युनिसिपल परिवहन सुविधाएं,

कतिपय सार्वजनिक सेवाएं मुफ्त प्रदान करना,

अवकाश-गृहों बोर्डिंगहाउसों पर्यटक शिविरों और खेलकूद की सुविधाओं के शुल्क में निरन्तर कमी और आंशिक तौर पर उनका निःशुल्क उपयोग

जनता को अधिकाधिक फायदे सुविधाएं और छात्रवृत्तियां (अविवाहित माताओं, बहुत-से बच्चों वाली माताओं को अनुदान और छात्रों को छात्रवृत्तियां)

उद्यमों और संस्थाओं में तथा सामूहिक फार्म के किसानों के लिए निःशुल्क सार्वजनिक भोजनालय (दोपहर का खाना) की धीरे धीरे व्यवस्था।

इन लक्ष्यों की पूर्ति के परिणामस्वरूप सोवियत संघ वितरण के कम्युनिस्ट सिद्धान्त की कार्यान्विति की ओर जोर शोर से अग्रसर होगा।

कम्युनिज्म की ओर संक्रमण के फलस्वरूप उत्पादन-सम्बंध विकसित और उन्नत होंगे और उपरि-संरचना में महत्वपूर्ण परिवर्तन होंगे।

५ समाजवाद से कम्युनिज्म की ओर संक्रमण के दौरान समाज का राजनीतिक संगठन, राजकीय संरचना और प्रशासन

सर्वहारा अधिनायकत्व से सम्पूर्ण जनता के राज्य की ओर

मार्क्सवाद-लेनिनवाद के अनुसार राजसत्ता आर्थिक आधार पर खड़ी राजनीतिक उपरि-संरचना का एक भाग होती है। आर्थिक आधार में परिवर्तन होने पर उपरि-संरचना भी बदलती है।

सोवियत संघ में समाजवाद की स्थापना के फलस्वरूप देश के जीवन में और सोवियत समाज की वर्गीय संरचना में गहरे राजनीतिक परिवर्तन हुए। शोषक वर्गों का उन्मूलन कर दिया गया और सोवियत जनता की राजनीतिक और विचारधारा सम्बंधी एकता कायम हुई। फलस्वरूप सोवियत राज्य के कार्यों में परिवर्तन हो गये।

पूंजीवाद से समाजवाद की ओर संक्रमण के दौरान सोवियत संघ में सर्वहारा वर्गों के शत्रुतापूर्ण कार्यों को दबाना सोवियत राज्य का एक मुख्य कार्य था। किन्तु इन वर्गों के उन्मूलन के बाद उत्पादन के समाजवादी सम्बंधों की जड़ें गहरी हो गयी और सोवियत राज्य का यह कार्य धीरे धीरे खत्म हो गया।

आर्थिक निर्माण और संगठन, सांस्कृतिक विकास और शिक्षा, देश की रक्षा और समाजवादी सम्पत्ति की सुरक्षा समाजवादी राज्य के मुख्य कार्य हो गये हैं। सोवियत विदेश नीति का मुख्य उद्देश्य समाजवाद और कम्युनिज्म के निर्माण के लिए शान्ति की स्थिति बनाये रखना है। सोवियत संघ समाजवादी देशों की एकता और घनिष्ठता को मजबूत करने के लिए काम कर रहा है। वह मुक्ति एवं शान्तिकारी आन्दोलनों को सहायता दे रहा है, एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमरीका के देशों के साथ एकता और सहयोग कायम कर रहा है, भिन्न समाज व्यवस्थाओं वाले राज्यों के बीच शान्तिपूर्ण सह अस्तित्व के सिद्धान्त को व्यवहार में परिणत कर रहा है और साम्राज्यवादी आक्रामकों की योजनाओं को नाकाम बना रहा तथा नये विश्वयुद्ध के खतरे का उन्मूलन कर रहा है।

भविष्य में राज्य कैसे विकसित होगा? इस प्रश्न पर सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की बाईसवीं कांग्रेस में गम्भीरतापूर्वक विचार किया गया।

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम में बताया गया है कि सर्वहारा अधिनायकत्व जिसकी स्थापना महान अक्तूबर समाजवादी क्रान्ति के परिणामस्वरूप हुई थी, शोषक वर्गों का उन्मूलन करने, समाजवाद को पूरा करने और अंतिम तौर पर विजयी बनाने तथा सोवियत समाज को पूरे पैमाने के कम्युनिस्ट निर्माण के मार्ग पर अग्रसर करने के बाद आन्तरिक विकास के कार्यों की दृष्टि से आवश्यक नहीं रह गया है। मजदूर वर्ग के ऐतिहासिक मिशन—कम्युनिज्म की स्थापना—में अब सम्पूर्ण जनता सम्मिलित हो गयी है। सोवियत समाजवादी राज्य जिसकी स्थापना सर्वहारा अधिनायकत्व के रूप में हुई आज सम्पूर्ण जनता का राज्य है। इसके माध्यम से सम्पूर्ण जनता की इच्छा अभिव्यक्त होती है।

समाजवाद की पूर्ण और अंतिम विजय के बाद सर्वहारा अधिनायकत्व के जरिए मजदूर वर्ग को पथ प्रदर्शक की भूमिका अदा करने की जरूरत नहीं रह जाती है। इसकी नेतृत्वकारी भूमिका इसकी आर्थिक स्थिति और इसके प्रत्यक्षत

समाजवादी सम्पत्ति के ऊचे रूप से सम्बद्ध होने के माथ ही कई दशको क वग सघप मे भाग लेने से आन वाली दढना और अपार क्रातिकारी अनुभव क कारण है। कठमुल्ला के सिवाय और का इस बात से इनकार नही कर सकता कि सव हारा अधिनायकत्व का राज्य अन्ततोगत्वा सम्पूण जनता क राज्य म वदल जाना है क्योकि कठमुल्ल सावियत समाज की एकता के आर्थिक स्तम्भा का नही समय पात तथा इस बात को समझने म असमथ होत हैं कि मजदूर वग सामूहिक फाम के किसानों और बुद्धिजीविया (जो हितों की समानता मार्क्सवादी-लेनिनवादी विचारधारा और समान लक्ष्य—कम्युनिज्म के निर्माण—द्वारा एक सूत्र म बधे हाते हैं) के जीवन म उनको विभाजित करने वाल नहीं, बल्कि उन्हें एकता क सूत्र म बाधन वाल तत्व मुख्य और निणायक होत हैं।

कम्युनिस्ट सामाजिक प्रशासन की ओर जाने म यह एक महत्वपूण मजिल है।

सम्पूण जनता का समाजवादी राज्य जिसम मजदूर वग की पथ प्रदशक भूमिका हाती है, उन्ही कार्यों का पूरा करता है जिन्हें सवहारा अधिनायकत्व प्रारम्भ करता है।

कम्युनिज्म की ओर सक्रमण क दौरान सम्पूण जनता के राज्य का काय कम्युनिज्म क भौतिक और तकनीकी आधार का निर्माण करना और यह देखना हाना है कि समाजवादी सम्बध कम्युनिस्ट सम्बधा के रूप म बदल जायें। समाज वादी राज्य का काम और उपभाग की मात्रा पर नियत्रण रखना होना है। उसका काय जन-कल्याण का बढाना सावियत नागरिकों क अधिकारा और स्वतत्रताओ की रक्षा करना समाजवादी कानून और व्यवस्था बनाय रखना जनता में समाज वादी अनुशासन और श्रम क प्रति कम्युनिस्ट दृष्टिकाण पदा करना हाता है। समाजवादी राज्य का मुख्य काय देश की प्रतिरक्षा व्यवस्था का सुदढ करना समाजवादी देशा के साथ मत्रीपूण सहयोग बढाना, विश्व म शान्ति बनाये रखना और सामाजिक आर्थिक व्यवस्थाओ का विना ख्याल किय सभी देशा स सामान्य सम्बध बनाय रखना है।

वतमान परिस्थितिया म समाजवादी राज्य तत्र निम्नलिखित दिशाओं म विकसित हो रहा है समाजवादी जनवाद का चतुर्दिक विस्तार और उसम उत्तनि राजकीय प्रशासन और आर्थिक एव सास्कृतिक विकास क प्रबन्ध म सभी नागरिको की सक्रिय शिरकत राजकीय यत्र क काय म सुधार और उसकी कारवाइया पर जनता का अधिकाधिक नियत्रण।

पूर्णाधिवेशन में पार्टी एवं राजकीय नियंत्रण के मुख्य माध्यमों को सार्वजनिक नियंत्रण के माध्यमों के रूप में परिवर्तित करने के लिए निर्णय लिये गये थे। राजकीय कार्यों के प्रशासन में अधिकाधिक लोगों को शामिल करने, पार्टी और सरकार के निर्देशनों की लगातार प्रशासनिक आर्थिक और अन्य संगठनों द्वारा व्यवस्थित रूप से जांच करने, राजकीय अनुशासन दृढ़ करने तथा समाजवादी कानून के पालन की व्यवस्था करने के लिए कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत सरकार के हाथों में ये प्रभावकारी साधन होंगे।

जन संगठनों की दिनों दिन बढ़ती भूमिका

पूरे पैमाने पर कम्युनिस्ट निर्माण के दौरान जन संगठनों की भूमिका काफी महत्त्वपूर्ण हो जाती है। अभी राजकीय विभागों द्वारा किये जाने वाले बहुत-से कार्यों के सम्पादन के लिए वे उत्तरदायी हो जायेंगे।

अभी ही मेहनतकश जनता के सबसे बड़े संगठन के रूप में ट्रेड यूनियनों के अधिकार, महत्त्व और उनकी भूमिका काफी बढ़ गयी है। उदाहरण के लिए वे उत्पादन सम्बन्धी समस्याओं का सुलझान (जैसे काम और मजूरी की दर का निर्धारण, उद्योग में मजदूरों की सुरक्षा और स्वास्थ्य सेवाएं प्रदान करना, औद्योगिक व्यावसायिक एवं अन्य मजदूरों के विश्राम और मन बहलाव का इन्तजाम, आदि) में अधिक संलग्न हैं। उन्होंने पर्याप्त संख्या में सांस्कृतिक संस्थानों, स्वास्थ्य विहारों, स्वास्थ्य-गृहों, अवकाश गृहों तथा अनगिनत क्रीड़ा संस्थाओं का निर्माण किया है।

ट्रेड यूनियनों के माध्यम से औद्योगिक दफ्तर के और व्यावसायिक कर्मचारी आर्थिक क्रियाओं को अधिकाधिक प्रभावित कर रहे हैं। वे औद्योगिक उद्यमों के काम में सुधार लाने और उत्पादन को नियंत्रित करने में सहायता दे रहे हैं।

यह आवश्यक है कि जन संगठनों को शहरों और औद्योगिक एवं कृषि क्षेत्रों में शान्ति और व्यवस्था बनाये रखने और गुण्डागर्दी, अपराध तथा समाज विरोधी तत्वों के खिलाफ कारवाई करने के लिए अधिकार मिलें।

जन संगठनों को उत्तरोत्तर बड़ी भूमिका अदा करनी है। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम ने सांस्कृतिक एवं स्वास्थ्य संस्थानों के प्रबन्ध में उन्हें अधिकाधिक हिस्सा देने की बात कही है। कार्यक्रम ने कहा है कि अगले कुछ वर्षों में नाट्यगृह, सिनेमा, संगीत गोष्ठी भवन, क्लब, पुस्तकालय और अन्य सांस्कृतिक एवं शैक्षणिक संस्थाओं (जो अभी राज्य के नियंत्रण में हैं) का प्रबन्ध उन्हें सौंप दिया जाय। शान्ति और व्यवस्था (खासकर जन स्वयंसेवक दलों तथा मैत्रीपूर्ण न्यायालयों द्वारा) बनाये रखने के लिए उन्हें अधिकार प्रदान किये जायें।

सोवियत संघ में समाजवादी जनवाद मेहनतकश जनता का वास्तविक जनवादी शासन है। इसका हर साल विस्तार और

सोवियत और सरकार के जनवादी सिद्धांतों का विकास

विकास हो रहा है। हाल के वर्षों में कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत सरकार ने कई महत्वपूर्ण कदम उठाये हैं। ये कदम समाजवादी जनवाद की महान प्रगति के सूचक हैं।

संघ जनतंत्रों को आर्थिक और सांस्कृतिक विकास के लिए काफी अधिकार दिये गये हैं। सोवियत संघ के आर्थिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में नेतृत्व की अत्यधिक केंद्रीयता को दूर किया गया है। स्थानीय पहल को अधिकतम प्रोत्साहन दिया गया है। स्थानीय सोवियतों को अतिरिक्त अधिकार दिये गये हैं। समाजवादी वैधानिकता के उल्लंघन को खत्म कर दिया गया है। सामूहिक फार्मों को पहल और उनके सदस्यों को प्रोत्साहित करने तथा कृषि उत्पादन के नियोजन की प्रक्रिया में सुधार करने के लिए पार्टी ने महत्वपूर्ण कदम उठाये हैं।

समाजवाद से कम्युनिज्म की ओर संक्रमण के दौरान राजकीय कार्यों में मेहनतकश जनता का सक्रिय सहयोग बढ़ता जायेगा। सोवियतों से आशा की जाती है कि वे महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेंगी। हम जानते हैं कि जनता के हितों की रक्षा और प्रतिनिधित्व सोवियतें करती हैं।

सोवियतों में शहरों और गांवों की सम्पूर्ण मेहनतकश जनता शामिल होती है। वे जनता के व्यापक संगठन और उनकी एकता के प्रतीक हैं। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम में बताया गया है कि कम्युनिज्म के निर्माण के दौरान सोवियतों की भूमिका और भी महत्वपूर्ण हो जायेगी। सोवियतों में राज्य और सामाजिक संरचना की विशेषताएं संयुक्त रूप से समन्वित हैं किन्तु वे सार्वजनिक संगठनों के रूप में ही कार्य करेंगी। आम जनता का उनके कार्यों में व्यापक और प्रत्यक्ष सहयोग होगा।

पूरे पैमाने पर कम्युनिस्ट निर्माण-कार्य प्रारम्भ होने पर अर्थव्यवस्था और संस्कृति के मामले में राजकीय प्रशासन संगठनों का विशेष महत्व हो जाता है। उनका भविष्य व्यापक है। किन्तु कम्युनिज्म के अंतर्गत उनका राजनीतिक स्वरूप खत्म हो जायगा। वे आर्थिक और सांस्कृतिक जीवन की व्यापक और बहुविध प्रक्रियाओं का निर्देशन करने वाले स्वयंशासित सार्वजनिक संगठन बन जायेंगे।

राजकाज में मेहनतकश जनता के सक्रिय हिस्सा लेने और उनके अधिकाधिक नियंत्रण के फलस्वरूप राजकीय और आर्थिक संस्थाओं के कार्यों में सुधार होता है। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय समिति के सितम्बर १९६५ के

पूर्णाधिवशन मे पार्टी एव राजकीय नियत्रण के मुख्य माध्यमो को सावजनिक नियत्रणा क माध्यमो के रूप मे परिवर्तित करन के लिए निणय लिये गय थे। राजकीय कार्यों के प्रशासन मे अधिकाधिक लोगा का शामिल करने पार्टी और सरकार क निर्देशनो की लगातार प्रशासनिक, आर्थिक और अय सगठना द्वारा व्यवस्थित रूप स जाच करने राजकीय अनुशासन दृढ करने तथा समाजवादी कानून क पालन की व्यवस्था करने के लिए कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत सरकार के हाथों म य प्रभावकारी साधन होग।

जन सगठनो की दिनो दिन बढती भूमिका

पूरे पैमाने पर कम्युनिस्ट निर्माण के दौरान जन सगठनो की भूमिका काफी महत्वपूण हो जाती है। अभी राजकीय विभागा द्वारा किये जाने वाल बहुत स कार्यों के सम्पादन के लिए व उत्तरदायी हो जायेंगे।

अभी ही मेहनतकश जनता के सबस बडे सगठन के रूप म ट्रेड यूनियना क अधिकार, महत्व और उनकी भूमिका काफी बढ गयी है। उदाहरण के लिए व उत्पादन सम्बधी समस्याओ का सुलझान (जसे काम और मजूरी की दर का निर्धारण उद्योग मे मजदूरो को सुरक्षा और स्वास्थ्य सेवाए प्रदान करना औद्योगिक व्यावसायिक एव अय मजदूरा के विश्राम और मन बहलाव का इतजाम आदि) म अधिक सम्पन्न हैं। उन्होने पर्याप्त सख्या मे सास्कृतिक सस्थाना [स्वास्थ्य विहारा स्वास्थ्य-गृहा अवकाश गहो तथा अनगिनत क्रीडा सस्थाओ का निमाण किया है।

टड यूनियना के माध्यम से औद्योगिक दफ्तर क और व्यावसायिक कम चारा आर्थिक क्रियाओ को अधिकाधिक प्रभावित कर रहे है। व औद्योगिक उद्यमा के काम म सुधार लान और उत्पादन का नियत्रित करन म सहायता द रह है।

यह आवश्यक है कि जन सगठना को शहरा और औद्योगिक एव कृषि के क्षेत्रो म शान्ति और व्यवस्था बनाये रखन और गुण्डागर्दी अपराध तथा समाज विरोधी तत्वा क खिलाफ कारवाई करन क लिए अधिकार मिलें।

जन सगठनो का उत्तरोत्तर बडी भूमिका अदा करनी है। सोवियत सघ की कम्युनिस्ट पार्टी क कायक्रम न सास्कृतिक एव स्वास्थ्य सस्थाना क प्रबन्ध म उन्ह अधिकाधिक हिस्सा दने की बात कही है। कायक्रम ने कहा है कि अगल कुछ वर्षो म नाटयगृह सिनमा सगीत गोष्ठी भवन क्लब पुस्तकालय और अय सास्कृतिक एव शक्षणिक सस्थाओ (जो अभी राज्य क नियत्रण म हैं) का प्रबन्ध उन्ह सौंप दिया जाय। शान्ति और व्यवस्था (खासकर जन स्वयसेवक दला तथा मत्रीपूण न्यायालया द्वारा) बनाय रखन के लिए उन्ह अधिकार प्रदान किय जायें।

समाजवादी जनवाद के चतुर्दिक विकास और उन्नति के फलस्वरूप बहुत बडी सख्या म मेहनतकश जनता समाजवादी उत्पादन के प्रबन्ध म हिस्सा लेगी।

सभी राजकीय उद्यमो और समस्त निर्माण स्थलो पर स्थायी उत्पादन सम्मेलनो और समितियो की स्थापना की गयी है। वे लोगो को उत्पादन प्रबन्ध की ओर आकर्षित करती है। इसके फलस्वरूप एक व्यक्ति के प्रबन्ध" के सिद्धात को नीचे से जन नियत्रण' के साथ जोड दिया जाता है। इस तरह प्रबन्धक मेहनतकश जनता के अनुभवो से लाभ उठाते हैं। उनकी सुदृढता इस बात म निहित है कि उनका काम औद्योगिक एव आफिस कमचारियो इजीनियरो और तकनीशियनो और प्रशासन पार्टी तथा तरुण कम्युनिस्ट लीग के प्रतिनिधियो के पूण सहयोग द्वारा चलता है।

इसी तरह पूरे पैमाने पर कम्युनिस्ट निर्माण काय के दौरान समाजवादी राज्य तत्र के निरन्तर विकास के लिए अत्यन्त अनुकूल स्थितिया पदा होती है।

कम्युनिजम और राजसत्ता

समाजवादी राज्य-तत्र अपने श्रमिक विकास के फलस्वरूप कम्युनिस्ट सामाजिक प्रशासन म बदल जायेगा। इसके अन्तगत तब सोवियतें, ट्रेड यूनियनें सहकारी समितिया और मजदूर वग के अन्य जन सगठन शामिल होग।

जहा तक आर्थिक और सास्कृतिक प्रबन्ध का प्रश्न है कम्युनिजम म भी वे सावजनिक काय रहगे जिन्हे अभी राज्य करता है किन्तु समाज के विकास के साथ-साथ उनमे परिवतन होगा और पूणता आयेगी। कार्यों का चरित्र और उनको सम्पादित करने के तरीके कम्युनिस्ट समाज म भिन्न होगे। वतमान समय म नियोजन लेखा आर्थिक प्रबन्ध और सास्कृतिक विकास के कार्यों के लिए सरकारी विभाग जिम्मेदार हैं। कम्युनिस्ट समाज म इनका राजनीतिक पक्ष खत्म हो जायगा और वे सामाजिक प्रशासन के अग बन जायेंगे। इस तरह राज्य के मुरझा जाने का मतलब उसका पूरी तरह लुप्त हो जाना नही है बल्कि राज्य के अगो का कम्युनिस्ट सामाजिक प्रशासन के रूप म द्वन्द्वात्मक विकास है।

पूण विकसित कम्युनिस्ट समाज की स्थापना के बाद आन्तरिक स्थितियो को देखते हुए राज्य आवश्यक नही रह जायगा किन्तु बाहरी स्थितियो को देखते हुए राज्य तभी लुप्त होगा जब कम्युनिज्म सारे विश्व के पमाने पर विजयी होगा। जब तक साम्राज्यवाद और साम्राज्यवादी देश हैं हथियारबन्द फौज जसे राज्य के अग को पूरी तरह मजबूत बनाना होगा। इसलिए कम्युनिजम के अन्तगत भी राज्य तब तक बना रहेगा जब तक साम्राज्यवादी आक्रमण का खतरा रहेगा। स्पष्ट है कि राज्य के पूरा तरह लुप्त हो जाने के लिए आन्तरिक स्थितियाँ यानी

कम्युनिस्ट समाज का निर्माण और समुचित बाह्य स्थितियाँ यानी पूरे विश्व में समाजवाद की विजय और सुदृढ़ता दोनों आवश्यक हैं।

कम्युनिज्म की विजय के पहले चरण के बहुत दिनों बाद तक राज्य वर्तमान रहेगा। उसके लुप्त होने की प्रक्रिया बड़ी लम्बी होगी। उसके लुप्त होने में एक पूरा ऐतिहासिक युग लगेगा और वह प्रक्रिया तभी खत्म होगी जब समाज स्वयं शासन के लिए पूरी तरह परिपक्व न हो जाय। कुछ समय तक राजकीय प्रशासन और सार्वजनिक स्वयंशासन के लक्षण मिले जुले रूप में परिलक्षित होंगे। वास्तविक रूप में पूर्ण विकसित कम्युनिस्ट समाज की स्थापना और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर समाजवाद के विजयी और सुदृढ़ होने के बाद ही राज्य की आवश्यकता खत्म होगी

और समन्वित क्रिया को सुनिश्चित बनाता है, इसलिए सिर्फ पार्टी ही इन सभी संगठनों के प्रयासों को संयुक्त रूप से एकमात्र लक्ष्य की पूर्ति के लिए लगा सकती है।

कम्युनिस्ट पार्टी समाज विकास के नियमों के अपने ज्ञान के द्वारा पूरे कम्युनिस्ट निर्माण काल में उचित नेतृत्व प्रदान करती है और इस बात की कोशिश करती है कि काम का संचालन और नियोजन वैज्ञानिक आधार पर हो।



कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में सोवियत जनता अपने उज्ज्वल भविष्य—कम्युनिज्म का निर्माण कर रही है।

कोई सौ वर्ष से अधिक हुए सर्वहारा वर्ग के महान शिक्षकों, मार्क्स और एंगेल्स ने कम्युनिस्ट घोषणापत्र में लिखा था "एक हौआ—कम्युनिज्म का हौआ—यूरोप को आतंकित कर रहा है।" सभी देशों की मेहनतकश जनता के वीरतापूर्ण, निःस्वार्थ संघर्ष ने समस्त मानवजाति को कम्युनिज्म के नजदीक ला दिया है। कम्युनिज्म तक आने के लिए एक लम्बे और जनता के सुख के लिए संघर्ष करने वाले बहादुरों के रक्त से सने मार्ग को तय करना पड़ा है। कम्युनिज्म का पुराना सपना आज सबसे बड़ा शक्ति बन गया है। आज एक विशाल भूभाग पर कम्युनिस्ट समाज का निर्माण हो रहा है।

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी ने अपनी २२वीं कांग्रेस में हर्ष के साथ घोषणा की "सोवियत जनता की वर्तमान पीढ़ी कम्युनिज्म के अंतर्गत जीवन यापन करेगी!" सोवियत संघ में कम्युनिज्म का पूर्ण निर्माण मानवजाति के इतिहास में उसकी महानतम उपलब्धि होगा।

कम्युनिज्म की ओर सोवियत जनता का हर लम्बा डग पूंजीवादी देशों में सामाजिक और राष्ट्रीय उत्पीड़न के खिलाफ संघर्ष करने वाली मेहनतकश जनता को प्रेरणा देता है और सारे विश्व के पैमाने पर मार्क्सवाद-लेनिनवाद के कम्युनिज्म के विचारों की विजय को नजदीक लाता है।

कम्युनिज्म का मार्ग विश्व के जनगण का मार्ग है। पूंजीवाद से कम्युनिज्म की ओर आगे बढ़ने का यह मार्ग मानवीय प्रगति का मार्ग है।